आधुनिक संस्कृत बालसाहित्य : एक समीक्षात्मक अध्ययन

ADHUNIK SANSKRIT BALSAHITYA : EK SAMIKSHATMAK ADHYAYAN

कोटा विश्वविद्यालय, कोटा

की

पीएच. डी. (संस्कृत) उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध–प्रबन्ध

कला–संकाय

शोधार्थी

हेमराज सैनी

शोध पर्यवेक्षक

डॉ. पूर्णचन्द्र उपाध्याय
सह–आचार्य एवं विभागाध्यक्ष

संस्कृत–विभाग

राजकीय महाविद्यालय, बून्दी (राज.)

कोटा विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)

2021

CERTIFICATE

I feel great pleasure in certifying that the Thesis entitled **"आधुनिक संस्कृत बालसाहित्य : एक समीक्षात्मक अध्ययन"** by **Hemraj Saini** under my guidance. He has completed the following requirements as per Ph.D regulations of the University.

(a) Course work as per the university rules.

(b) Residential requirements of the university (200 days)

(c) Regularly submitted annual progress report.

(d) Presented his work in the departmental committee.

(e) Published/accepted minimum of one research paper in a referred research journal.

I recommend the submission of thesis.

Date :

(Dr. Purnachandra Upadhyaya)
Associate Professor & HOD
Department of Sanskrit
Govt. College, Bundi (Raj.)

ANTI-PLAGIARISM CERTIFICATE

It is certified that Ph.D. Thesis Titled **"आधुनिक संस्कृत बालसाहित्य : एक समीक्षात्मक अध्ययन"** by **Hemraj Saini** has been examined by us with the following anti-plagiarism tools. We undertake the follows:

a. Thesis has significant new work/knowledge as compared already published or are under consideration to be published elsewhere. No sentence, equation, diagram, table, paragraph or section has been copied verbatim from previous work unless it is placed under quotation marks and duly referenced.

b. The work presented is original and own work of the author (i.e. there is no plagiarism). No ideas, processes, results or words of others have been presented as author's own work.

c. There is no fabrication of data or results which have been compiled and analyzed.

d. There is no falsification by manipulating research materials, equipment of processes, or changing or omitting data or results such that the research is not accurately represented inthe research record.

e. The Thesis has been checked using Plagiarism checker **URKUND** and found within limits as per HEC plagiarism Policy and instructions issued from time to time.

(Name & Signature of Research Scholar)

Hemraj Saini

Place :

Date :

(Name & Signature and Seal)

Dr. Purnachandra Upadhyaya

Research Supervisor

Place :

Date :

शोध–सार

"आधुनिक संस्कृत बालसाहित्य : एक समीक्षात्मक अध्ययन" शीर्षकाधारित इस शोध–प्रबन्ध के अन्तर्गत अर्वाचीन संस्कृत साहित्य में स्वतन्त्र विधा के रूप में आविर्भूत बालसाहित्य विधा की काव्यात्मक कृतियों, अनूदित रचनाओं एवं संस्कृत बाल–साहित्य आधारित पत्र–पत्रिकाओं की समीक्षा को समालोचना का विषय बनाया गया है। आज संस्कृत साहित्य के प्रत्येक मूर्धन्य विद्वान्, लेखक एवं रचनाकार अथवा लघु–लघु बालक भी समान रूप से लेखनी चला कर संस्कृत बालसाहित्य के कलेवर में श्रीवृद्धि कर रहे हैं।

प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध में आधुनिक संस्कृत बाल–साहित्य में प्रणीत बाल काव्यों की समीक्षा के विविध पक्षों के आधार पर समीक्षात्मक आलोडन करने का प्रयास किया गया है, जिसका संक्षिप्त शोध–सार निम्न प्रकार है–

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध भूमिका एवं उपसंहार सहित आठ अध्यायों में विभक्त है। भूमिका भाग के अन्तर्गत संस्कृत साहित्य का परिचय, बाल साहित्य का अर्थ एवं परिभाषा, बाल साहित्य की उपादेयता एवं मौलिकता पर विंहगम दृष्टिपात किया गया है।

प्रथम अध्याय में संस्कृत साहित्य के प्राचीन वैदिक साहित्य, रामायण, महाभारत, पुराण इत्यादि काव्य एवं नीतिशास्त्रों में उल्लेखित बाल साहित्य के विविध पक्षों का परिचयात्मक विवेचन किया गया है।

द्वितीय अध्याय में अर्वाचीन संस्कृत बाल साहित्य में काव्य रचना करने वाले कवि एवं उनके द्वारा लिखित बाल–कृतियों के बारे में सामान्य परिचय प्रस्तुत किया गया है।

तृतीय अध्याय में संस्कृत बाल साहित्य को स्वतन्त्र विधा के रूप में स्वीकार करते हुए इसके क्रमबद्ध विकास तथा विविध विधाओं–बालगीत, बालकथा, लघुकथा, बालनाटक, एकांकी, बाल–उपन्यास, अनूदितबाल–काव्य तथा संस्कृत बाल–पत्र–पत्रिकाओं के बारे में विवेचनात्मक अध्ययन किया गया है।

चतुर्थ अध्याय में संस्कृत बाल साहित्य की समीक्षा को कला पक्ष एवं भाव पक्ष में वर्गीकृत करते हुए बालकाव्यों की समीक्षा के विभिन्न आधारों का लक्षणात्मक रूप में विवेचन किया गया है।

पंचम अध्याय में बाल साहित्य में प्राप्त विभिन्न काव्यों का बाल काव्य, बाल नाटक, बाल कथा, बाल–उपन्यास के रूप में वर्गीकरण करते हुए कथानक, भाषा शैली, संवाद एवं

वाक्य–योजना, रस–परिपाक, छन्द योजना, अलंकार–योजना, गुण–विवेचन, रीति–संघटना, सामाजिक–सांस्कृतिक–आध्यात्मिक–नैतिक–मनोरंजन–उपदेश–वैज्ञानिकता एवं रोचकता इत्यादि तत्त्वों के आधार पर समीक्षात्मक विवेचन प्रस्तुत किया गया है।

षष्ठ अध्याय में विविध भाषाओं में प्राप्त बाल काव्यों का संस्कृतबाल–साहित्य की अनूदितविधा के अन्तर्गत वर्गीकरण किया गया है।

सप्तम अध्याय में संस्कृत साहित्य की विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं में प्राप्त बाल साहित्य का अवलोकन करते हुए संक्षिप्त विवेचन प्रस्तुत किया गया है। इसके साथ ही बाल–साहित्य के क्षेत्र सम्पूर्णतया समर्पित बाल संस्कृतम्, चन्दामामा एवं सम्भाषण–सन्देशः जैसी पत्रिकाओं के योगदान को समेकित रूप में प्रस्तुत किया गया है।

अष्टम अध्याय में संस्कृत बाल साहित्य के संस्कृत साहित्य एवं समाज के प्रति योगदान को द्योतित करते हुए, वर्तमान समय में बाल–साहित्य की प्रासंगिकता को चरितार्थ किया गया है।

उपसंहार के अन्तर्गत बाल साहित्यकारों के योगदान, उपलब्धियों, निष्कर्षों एवं शोध–प्रबन्ध के प्रयोजन को समीक्षकों एवं विद्वज्जनों के समक्ष संक्षेप में प्रस्तुत किया गया है।

≈≈≈≈

CANDIDATE DECLARATION

I here by certify that the work, which is being presented in this thesis, entitled "आधुनिक संस्कृत बालसाहित्य : एक समीक्षात्मक अध्ययन" in partial fulfilment of the requirement for the award of the Degree of Doctor of philosophy, carried under the supervision of **Dr. Purnachandra Upadhyaya, Associate Professor & HOD, Department of Sanskrit, Government College, Bundi (Raj.)** and submitted to the research center University of Kota, University of Kota, Kota represents my ideas in my own words and whenever other ideas or words have been included. I have adequately cited and referenced the original sources. The work presented in this thesis has not been submitted else where for the award any other degree or diploma from any institution.

I also declare that I have adhered to all principles of academics honesty and integrity and have not misrepresented or fabricated or falsified any idea/date/fact/source in my submission. I understand that violation off the above wil be a cause for disciplinary action by the university and can also evoke penal action from the sources which have thus not been properly cited from whom proper permission has not been taken when needed.

Date : **Hemraj Saini**
Place : Research Scholar

This is to certify that the above statement made by (Mr.) **Hemraj Saini (Registration No. RS/472/17)** is correct to the best of my knowledge.

Date : **(Dr. Purnachandra Upadhyaya)**
Place : Research Supervisor

प्राक्कथन

सिद्धिबुद्धिप्रदं देवं श्रीगणेशं विनायकम्।

वाग्देवीं शारदां वन्दे शोधकार्यार्थसिद्धये।।

द्वे ब्रह्मणी वेदितव्ये शब्दब्रह्म परं च यत्।

शब्दब्रह्मणि निष्णातः परं ब्रह्माधिगच्छति।।

प्राचीन एवं अर्वाचीन संस्कृत साहित्य में परिगणित वेद–वेदाङ्ग–स्मृतिशास्त्र–पुराण–रामायण–महाभारत–काव्य–नाटक–कथा–उपन्यास इत्यादि वैदिक तथा लौकिक साहित्य में ऋषि–महर्षियों एवं विद्वानों द्वारा मनुष्य के सर्वाङ्गीण विकास हेतु आचार–व्यवहार, ज्ञान, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, आध्यात्मिक अथवा जीवनोपयोगी समस्त पक्षों का साङ्गोपांग वर्णन किया गया है। मेरे द्वारा विश्लिष्ट प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध "आधुनिक संस्कृत बालसाहित्य : एक समीक्षात्मक अध्ययन" में मानव जीवन की प्रारम्भिक अवस्थाओं–शैशवावस्था, बाल्यावस्था एवं किशोरावस्था युक्त बालकों के अवबोधार्थ प्रणीत संस्कृत बालसाहित्य की विधाओं (बालगीत, बालकथा, बालनाटक, बालउपन्यास, प्रहेलिका, हास्य कणिकाएं इत्यादि) में उपलब्ध बालकाव्यों की संक्षेपात्मक समीक्षा की गई हैं।

यथार्थतः मनुष्य के मनुष्यत्व के विकास हेतु सुगठित, परिमार्जित सुसंस्कारित एवं सुलभ्य बालसाहित्य की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। जिस तरह वृक्ष के शैशवकाल में स्थापित चिह्न उसके वार्धक्य काल में भी परिलक्षित होते हैं, वैसे ही मनुष्य के बाल्यकाल में स्थापित संस्कार ही उसके किशोरावस्था एवं युवावस्था में प्रकट होते है। वस्तुतः शैशवकाल एवं बाल्यकाल को विद्यार्जन का स्वर्णिम काल कहा जाता है। इसीलिए कविकुल कालिदास ने भी उल्लेख किया है–

"शैशवेऽभ्यस्तविद्यानाम्।" (रघुवंशम्. 1.8)

वस्तुतः बाल–साहित्य के अनुश्रवण एवं पठन–पाठन से बालकों में शुद्ध उच्चारण तथा संस्कृत भाषा के प्रति रूचि जाग्रत होती है। सम् उपसर्गपूर्वक डुकृञ् (कृ) करणे धातु से क्त प्रत्यय एवं सुडागम तथा विभक्ति कार्य करने से व्युत्पन्न 'संस्कृत' विश्व की प्राचीनतम, उत्कृष्ट एवं मधुर भाषा के लिए प्रयुक्त होता है। संस्कृत भाषा को देवभाषा भी कहा गया है जैसाकि कवि दण्डी ने काव्यादर्श में उल्लेख किया है–

संस्कृतं नाम दैवीवाग् अन्वाख्याता महर्षिभिः।। (1.32)

आधुनिक संस्कृत साहित्य में नवीन विधा के रूप में आविष्कृत बालसाहित्य बालकों के शारीरिक एवं मानसिक विकास के मार्ग का पाथेय (भोजन) है। जिस तरह सन्तुलित भोजन के अभाव में बालक का शारीरिक एवं मानसिक विकास नहीं हो सकता है, वैसे ही बाल साहित्य के बिना भी बालक का सामाजिक, सांस्कृतिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक विकास सम्भव नहीं है। बालकों में संस्कारयुक्त आचरण–विचार, ईश्वर स्तुति, राष्ट्र–प्रेम, दैनिक वाग्व्यवहार, क्रिया–कलाप, सामाजिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक इत्यादि विषयों से संयुक्त आधुनिक संस्कृत बाल–साहित्य का विश्व वाङ्मय में महत्त्वपूर्ण स्थान है। आज बाल साहित्य के बिना मानवजीवन पशु के समान असभ्य एवं अन्धकार युक्त ही है। प्रदीप के समान बालसाहित्य बालक के जीवन में अन्धकार रूपी दुर्गणों (काम, क्रोध, मोह, असत्य, ईर्ष्या, मद) को दूर करके विद्या रूपी प्रकाश का संचार करता है।

आधुनिक संस्कृत बाल साहित्य का प्राचीनतम रूप पंचतन्त्र, हितोपदेश, कथासरित सागर, वेतालपंचविंशतिका, नीतिशतक इत्यादि प्राचीन काव्यों में परलक्षित होता है। किंतु बाल साहित्य का स्वतन्त्र एवं क्रमबद्ध रूप 20वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में आचार्य वासुदेव द्विवेदी के सरल एवं मनोहारी बाल–काव्यों से माना जाता है। आज संस्कृत का प्रत्येक साहित्यकार बाल साहित्य के प्रणयन में संलग्न है। प्रो. अभिराजराजेन्द्र मिश्र, प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी, डॉ. सम्पदानन्द मिश्र प्रभृति प्रसिद्ध विद्वान् भी अन्य साहित्यिक विधाओं के साथ ही बाल–साहित्य की प्रत्येक काव्य विधा में काव्य–प्रणयन कर रहे है।

प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध "आधुनिक संस्कृत बाल सहित्य : एक समीक्षात्मक अध्ययन" के अन्तर्गत भूमिका सहित आठ अध्यायों में बाल साहित्य के प्राचीनतम स्वरूप से लेकर सम्प्रति प्रणीत बाल साहित्य का समीक्षात्मक अध्ययन किया गया है।

इस प्रकार प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध अपने परिपूर्ण रूप में बुद्धजनों के समक्ष प्रस्तुत है। जिसकी परिपूर्णता की कामना करता हूँ–

पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते।

पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते।।

कृतज्ञता निवेदन

शस्त्रास्त्रशास्त्रविज्ञानां वीराणां विदुषां पराम्।
जननीं जन्मभूमिं च वन्दे! भारतमातरम्।।

शोध–प्रबन्ध का सफल प्रणयन शोधकर्ता के तापस धर्म को अभिव्यक्त करता है। सर्वसत्य है कि शोध कार्य की चरम अवस्था तक पहुँचने की दीर्घावधि में शोधकर्ता को अनेक सहयोगियों से सहयोग की अपेक्षा होती है। कृतज्ञता प्रकट करना आर्य संस्कृति का श्रेष्ठ कार्य है। अतः इसे मात्र औपचारिक रस्म कहना इसकी गौरवपूर्ण गरिमा को कम करना होगा।

कृतज्ञता निवेदन की परम्परा में मैं सर्वप्रथम स्वेष्ट देव विघ्नहर्ता, गणनायक बाल गणेश का स्मरण करता हूँ जिनकी असीम अनुकंपा एवं परम आशीर्वाद से प्रस्तुत शोध कार्य की सफल परिणति हो सकी है। प्रस्तुत शोधयात्रा में मैं सर्वप्रथम नैकशास्त्रविशारद, सम्प्रेरक, शान्त–सुमन–जितेन्द्रिय, धर्मधनी, मेरे सफल प्रेरणास्रोत, कुशल मार्ग निदेशक, पितृतुल्य, गुरुवर, शोध पर्यवेक्षक डॉ. पूर्णचन्द्र उपाध्याय जी के प्रति सादर प्रत्यक्ष कुसुमांजलि समर्पित करता हूँ, जिनके सौहार्दपूर्ण प्रत्यक्ष मार्गदर्शन एवं अमूल्य समयोपादान से यह शोध कार्य नियत समय पर पूर्ण हो सका है। तथापि गुरुवर का वात्सल्यपूर्ण मार्गदर्शन सहयोग शब्दों की सीमा में अभिव्यक्त करने से परे है।

प्रस्तुत शोध यात्रा की प्रथम शोध पर्यवेक्षिका, गुरुवर्या डॉ. सरिता भार्गव जी के प्रति भी विशेष कृतज्ञता प्रकट करता हूँ। साथ ही शोध प्रबन्ध का शीर्षक, शोध की रूपरेखा निर्धारित करने वाले तथा बालसाहित्य विषयक सामग्री उपलब्ध करवाने वाले भ्रातृवत्, युवा बाल–साहित्यकार डॉ. कौशल तिवारी जी के प्रति भी श्रद्धावान् हूँ। बालसाहित्य के पुरोधा, गुरुवर्य डॉ. सम्पदानन्द मिश्र जी के प्रति विशेष आभार प्रकट करता हूँ, जिनके द्वारा आयोजित संस्कृत बालसाहित्य के राष्ट्रीय सम्मेलनों में मुझे आधुनिक बाल साहित्य के ख्याति प्राप्त विद्वानों तथा बाल–साहित्यकारों से निकटता से रुबरू होने का सु–अवसर प्राप्त हो सका।

आभार की परम्परा में गुरुवर्य श्री घनश्याम जी शर्मा, डॉ. महेश दाधीच, डॉ. विजयलक्ष्मी शर्मा, डॉ. कौशल किशोर गोठवाल, डॉ. हिमा गुप्ता, डॉ. अरविन्द तिवारी, डॉ. पिंकेश दाधीच, डॉ. अरूण निषाद, डॉ. महावीर प्रसाद साहू, डॉ. ललित नामा, डॉ. पवन शर्मा, प्रभृति गुरुजनों एवं अग्रजों का भी ह्रदय से आभारी हूँ, जिनका शोधकार्य में मुझे सतत सहयोग प्राप्त हुआ। साथ ही डॉ. पीयूष कुमार सालोदिया, प्राचार्य राजकीय महाविद्यालय, बिजौलिया का विशेष आभारी हूँ, जिन्होंने मुझे संस्था के कार्यों के दौरान समयात्मक सहयोग प्रदान किया। शोध यात्रा के क्रम में प्राचार्य, राजकीय महाविद्यालय, बून्दी, संस्कृत विभाग के समस्त गुरुजनों, पुस्तकालयाध्यक्ष के प्रति भी कृतज्ञता अभिव्यक्त करता हूँ जिनका सकारात्मक सहयोग मुझे प्राप्त हुआ।

शोध यात्रा में प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष सहयोग करने वाले आचार्यों, बाल–साहित्यकारों के प्रति भी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ। इसी क्रम में मेरे अनन्य सखा डॉ. तोताराम मीणा–पवन मालव–अनिल–नागर–धन्नालाल–जुगलकिशोर–लोकेश–नेमिचन्द–नरेश–राजेश–वैष्णव–मुरलीधर–अमन –अनूप–सतपाल का हृदय से आभार प्रकट करता हूँ, जिनका स्नेह एवं सहयोग शोध कार्य के अवसर पर प्राप्त हुआ।

शोध यात्रा के क्रम में प्रेरणा और मार्गदर्शन प्रदान करने वाले ज्येष्ठ सहोदर श्री रामलक्ष्मण सैनी, सहायक आचार्य और श्री मोहनलाल के प्रति भी स्नेहिल भाव हेतु हार्दिक शुभकामनाएँ एवं आभार प्रकट करता हूँ।

इसी क्रम में सहृदया, सत्यस्वरूपा, सर्वतीर्थमयी, जीवनदायिनी पूज्या माताजी श्रीमती धापू बाई तथा कठिन परिश्रमी, अनुशासन, आत्मविश्वास, संघर्ष और त्याग के पर्याय, सादा जीवन उच्च विचार भाव के पोषक पूज्य पिताजी श्री सुखदेव जी के श्रीचरणों में भी नतशिर हूँ। साथ ही उत्तम विचारों की पोषक श्रद्धेया सासु माँ श्रीमती मंजू कौशल तथा बड़ी दीदी श्रीमती प्रीति कौशल को भी नमन करता हूँ। इसी क्रम में भगिनीवत साली जी सुश्री टीना कौशल का स्मरण करता हूँ। शोध कार्य के दौरान् हर पल प्रेरणा और सहयोग प्रदान करने वाली मेरी अर्द्धांगिनी, सहधर्मिणी श्रीमती शिप्रा कौशल का भी हृदय से आभारी हूँ।

शोध–प्रबन्ध के टङ्कण कार्य में सहयोग करने वाली सङ्गणक सहायिका शबनम खान के प्रति विशेष आभार प्रकट करता हूँ, जिन्होंने पूर्ण मनोयोग के साथ प्रस्तुत शोध प्रबन्ध को तय समय में क्रमबद्ध, व्यवस्थित एवं मूर्त्त रूप प्रदान किया।

अन्त में शोधकार्य के सभी स्तरों पर मनसा, वचसा, कर्मणा, प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से सहायक सभी बन्धुजनों, विद्वानों के प्रति नतमस्तक प्रणमांजलि प्रदान करते हुए प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध बुद्धजनों की सेवा में सादर समर्पित करता हुआ आनन्द का अनुभव करता हूँ–

गुणवद्वस्तु संसर्गाद् याति स्वल्पोऽपि गौरवम्।
पुष्पमालानुषङ्गेण सूत्रं शिरसि धार्यते।।

बुधजनाश्रित

(हेमराज सैनी)

शोधार्थी

विषयानुक्रमणिका

पृष्ठ संख्या

शोध–सार i - ii

प्राक्कथन iii - vi

भूमिका vii - xv

(क) विषय परिचय

(ख) विषय की उपादेयता एवं मौलिकता

प्रथम अध्याय : प्राचीन संस्कृत में बालसाहित्य का स्वरूप 1–15

द्वितीय अध्याय : संस्कृत साहित्य में बाल–साहित्यपरक काव्य एवं काव्यकार 16–43

तृतीय अध्याय : आधुनिक संस्कृत बाल–साहित्यपरक विधा एवं ग्रन्थ परिचय 44–67

(क) बाल–साहित्यपरक : खण्डकाव्य (गीतिकाव्य)

(ख) बाल–साहित्यपरक : कथासंग्रह

(ग) बाल–साहित्यपरक : उपन्यास

(घ) बाल–साहित्यपरक : अनूदित बालसाहित्य

(ङ) बाल–साहित्यपरक : नाट्यसंग्रह

(च) बाल–साहित्यपरक : पत्र–पत्रिकाएँ

चतुर्थ अध्याय : आधुनिक संस्कृत बालसाहित्य की समीक्षा के आधार 68–119

(क) काव्य पक्ष

(i) बाल–साहित्यपरक शीर्षक

(ii) कथावस्तु प्रकार

(iii) पात्र चरित्र–चित्रण

(iv) संवाद एवं वाक्य विन्यास

(v) भाषा शैली

(vi) रस योजना

(vii) अलंकार योजना

(viii) छन्द योजना

(ix) गुण योजना

(x) देशकाल एवं परिस्थितियाँ

(xi) रोचकता

(ख) भावपक्ष

(i) सामाजिक पक्ष

(ii) नैतिक पक्ष

(iii) सांस्कृतिक पक्ष

(iv) बालमनोवैज्ञानिक पक्ष

(v) पर्यावरणीय पक्ष

(vi) आर्थिक पक्ष

(vii) राजनीतिक पक्ष

(viii) मनोरंजन पक्ष

(ix) उपदेशात्मक पक्ष

(x) काल्पनिकता एवं यथार्थता

(xii) वैज्ञानिकता

पंचम अध्याय : आधुनिक संस्कृत बाल–साहित्यपरक काव्यों की समीक्षा 120–218

(क) बालकाव्य

(ख) बालकथासाहित्य

(ग) बालनाटकम्

(घ) बाल–उपन्यास

षष्ठ अध्याय : अनूदित संस्कृत बालसाहित्य की समीक्षा **219–248**

(क) अनूदित गीतिकाव्य

(ख) अनूदित कथासंग्रह

(ग) अनूदित उपन्यास

(घ) अनूदित नाट्यसंग्रह

सप्तम अध्याय : संस्कृत पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित बालसाहित्य की समीक्षा **249–267**

अष्टम अध्याय : संस्कृत बालसाहित्य का संस्कृत साहित्य एवं समाज को योगदान **268–282**

उपसंहार **283–284**

शोध–सारांश **285–292**

सन्दर्भग्रन्थानुक्रमणिका **293–300**

♦ बालसाहित्यपरक ग्रन्थ

♦ बाल–साहित्यपरक संस्कृत पत्र–पत्रिकाएँ

♦ प्राचीन–अर्वाचीन संस्कृत साहित्यिक ग्रन्थ

♦ काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ

♦ इतिहास ग्रन्थ

♦ कोशादि ग्रन्थ

♦ सहायक हिन्दी आंग्लग्रन्थ

♦ वेबसाइट

प्रकाशित शोध–पत्र

♦ आधनिक संस्कृत बाल–साहित्य में नैतिक चिन्तन

♦ विश्व संस्कृत साहित्य में बाल–साहित्य का योगदान

भूमिका

महाकाव्य, नाटक एवं कथा साहित्य की जिस परम्परा का प्रारम्भ वेद, ब्राह्मण, आरण्यक एवं उपनिषद् इत्यादि वैदिक साहित्य में हुआ, उसका प्रस्फुटन, पोषण एवं पल्लवन कालिदास, भवभूति एवं बाणभट्ट जैसे महाकवियों की अमर लेखनी से हुआ है। यह परम्परा आज भी किसी न किसी रूप में जीवन्त बनी हुई है। परम्परा से प्राप्त हुई प्राचीन शैली एवं मूल्यों में यद्यपि आज परिवर्तन अवश्य हुआ है, किन्तु इससे रचनाधर्मिता की प्रामाणिकता पर कोई सन्देह नहीं किया जा सकता है। वस्तुतः कालधर्म के बदलते हुए इन सन्दर्भों में आज परिवर्तन आवश्यक भी है और व्यावहारिक भी। विश्व साहित्य के बदलते वातावरण के साथ–साथ आज संस्कृत साहित्य की विभिन्न विधाओं का भी विस्तार एवं परिवर्धन हुआ है, जो मानव समाज के प्रत्येक वर्ग एवं स्तर के अनुकूल है।

संस्कृत साहित्य को मुख्यतः तीन भागों में विभक्त कर सकते हैं (क) वैदिक साहित्य (ख) धार्मिक साहित्य (ग) लौकिक साहित्य। वैदिक साहित्य के अन्तर्गत चारों वेद, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद् एवं वेदाङ्ग साहित्य को सम्मिलित किया जाता है। धार्मिक साहित्य के अन्तर्गत स्मृति शास्त्र यथा–मनुस्मृति, याज्ञवल्क्य स्मृति, नारद स्मृति इत्यादि स्मृति ग्रन्थ, अष्टादश पुराण और अष्टादश उपपुराणों की गणना मुख्यतः परिलक्षित होती है। लौकिक साहित्य के अन्तर्गत मुख्यतः रामायण, महाभारत काव्य, नाटकादि साहित्य सम्मिलित है। परन्तु लौकिक साहित्य का प्रादुर्भाव आदिकवि वाल्मीकि विरचित रामायण के आदिकाव्यत्व से माना जाता है। जिसका प्रमाण हमें अधोलिखित तथ्यों के रूप में प्राप्त होता हैं। व्याध द्वारा कामक्रीडा में रत क्रौंचयुगल में से क्रौंच पक्षी के मारे जाने पर क्रौंची के विलाप को सुनकर तमसा नदी के तट पर स्नानार्थ गये करुणाद्रवित महर्षि वाल्मीकि के मुँह से छन्दोमयी वाणी स्फुरित हुयी है–

"मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः।

यत्क्रौंचमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्।।" **(रामा. 1.2.15)**

तब ब्रह्मा जी ने प्रकट होकर उन्हें आदिकवि होने का वरदान दिया–

"ऋषे, आद्यः कविरसि। आम्नायनादन्यत्र नूतनच्छन्दसामवतारः" **(उ.रा. 2 अंक)**

ध्वन्यालोककार आनन्दवर्धनाचार्य ने भी अपने निम्नलिखित उद्धरण द्वारा इसका प्रमाण दिया है–

"काव्यस्यात्मा स एवार्थस्तथा चादिकवेः पुरा।

क्रौंचद्वन्द्ववियोगोत्थः शोकः श्लोकत्वमागतः।।" (ध्वन्या. 1.5)

जिसका प्रमाण हमें भवभूति के उत्तररामचरितम् में प्राप्त होता है–

लौकिकानां हि साधूनामर्थं वागनुवर्तते।
ऋषीणां पुनराद्यानां वाचमर्थोऽनुधावति।। उत्तर– 1/10

रामायण के अनन्तर व्यास विरचित महभारत का महत्त्वपूर्ण स्थान हैं। महाभारत से ही परवर्ती सृजित सम्पूर्ण साहित्य की विधाओं का प्रादुर्भाव हुआ। महाकाव्य, नाटक, कथा, आख्यायिका जैसी प्राचीन एवं लघुकथा, दीर्घकथा, कथानिका, उपन्यास, बालसाहित्य एवं पत्रकारिता इत्यादि नवीन विधाओं का आविर्भाव इन्हीं रामायण एवं महाभारत के उपजीव्यत्व से हुआ है।

(क) विषय परिचय

संस्कृत साहित्य में शोधकार्य विषयनिष्ठ होता हैं अर्थात् यहाँ प्रत्येक शोधकर्ता काव्य के बाहरी तत्त्वों के विश्लेषण के साथ–साथ काव्य के अन्तर्निहित तत्त्वों का भी काव्यशास्त्रीय लक्षण ग्रन्थों के धरातल पर समीक्षा करता है। लाभ–हानि की चिन्ता किए बिना जो शोधकर्ता किसी काव्य ग्रन्थ का सम्यक् दृष्टि से विश्लेषण करता है वह तत्त्ववेत्ता 'समीक्षक' शब्द से सम्बोधित किया जाता है। मेरे द्वारा प्रस्तुत शोध प्रबन्ध के शीर्षक 'आधुनिक संस्कृत बाल साहित्य : एक समीक्षात्मक अध्ययन' में समीक्षा शब्द समीक्षक का परिवर्तित रूप है। काव्य जगत् में 'समीक्षक' शब्द के लिए 'आलोचक' या 'भावक' शब्द भी प्रयुक्त किया जाता है।[1] आलोचक विभिन्न गुणों से युक्त होता है यथा महाकवि भवभूति के मालतीमाधव के तृतीय अंक में उद्धृत है–

शास्त्रे प्रतिष्ठा सहजश्च बोधः प्रागल्भ्यमभ्यस्तगुणा च वाणी।
कालानुरोधः प्रतिभानवत्वमेते गुणा कामदुघा क्रियासु।। (मालतीमाधव, 3/11)

वस्तुतः आधुनिक काव्यशास्त्रियों द्वारा प्रणीत समीक्षक चतुर्विध श्रेणी में उल्लेखित विषयनिष्ठ समीक्षा ही मेरे द्वारा प्रबन्धायित शोध की समीक्षा होगी, यतोहि व्यवस्थित रूप में प्रादुर्भूत आधुनिक बाल–साहित्य की क्रमबद्ध समीक्षा अभी तक परिलक्षित नहीं है। अतः बाल–साहित्य को दोषमुक्त करके उसकी सजीवता, मौलिकता एवं उपादेयता सिद्ध करने हेतु समीक्षा अत्यावश्यक है।

मेरे द्वारा शोध प्रबन्ध के शीर्षक में प्रयुक्त 'आधुनिक' शब्द संस्कृत साहित्य में बाल साहित्य के आधुनिक काल के लिए प्रयुक्त किया गया है। बाल साहित्य में आधुनिक काल का प्रारम्भ 19वीं शताब्दी के उतरार्द्ध एवं 20वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध से माना जाता हैं। इस अवधि में संस्कृत साहित्य

1. प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी प्रणीत, अभि. का. सूत्र, पृष्ठ–27–28

में अनेक नवीन विधाओं यथा–लघुकाव्य, लघुकथा, कथानिका, बालकथा, बालोपन्यास, बालगीत, बाल पत्रिकाएँ, गीत संग्रह, एकांकी, निबन्ध, गलज्जलिका प्रभृति काव्य विधाओं का आविर्भाव हुआ, जिसमें बाल–साहित्य भी एक नवीन विधा है।

व्याकरणात्मक दृष्टि से 'आधुनिक' शब्द अधुना पद से ठञ् प्रत्यय एवं आदिवृद्धि करने पर निष्पन्न होता है। शब्दकोश के अनुसार आधुनिक शब्द का अर्थ हैं नवीन, वर्तमान, समकालीन एवं नवयुग।[1] बाल साहित्य के सन्दर्भ में आधुनिक शब्द डॉ. तन्मय भट्टाचार्य[2] के अनुसार उन्नीसवीं शताब्दी के प्रथम दशक से ही सम्बन्धित है। सर्वप्रथम 1962 ई. में भारतीय ग्रन्थागार परिषद् के प्रयास से कोलकता नगरमें भारतीय शिशु साहित्य के ग्रन्थ का प्रणयन करने का प्रस्ताव पारित किया गया। बंगाल में ईश्वरचन्द विद्यासागर द्वारा बालसाहित्य से सम्बन्धित पुस्तकों में ऋजुपाठम् (1–3), (1857 ई.), कथामाला (1865 ई.), चरितावती (1857 ई.), बोधादय : (1857 ई.) इत्यादि पुस्तकों का प्रणयन बाल मनोभावना के अनुरूप किया गया। वहीं डॉ. अरविन्द तिवारी द्वारा संस्कृत बाल साहित्य का सर्वप्रथम प्रारम्भ गुरुवर आचार्य वासुदेव दीक्षित द्वारा जनवरी 1969 ई. में आयोजित बाल सम्मेलन से माना है। आचार्य वासुदेव दीक्षित द्वारा बालकों के लिए मनोहारी भाषा शैली में बालसंस्कृतम्, बालनाटकम्, बालविनोदमाला, बालसुभाषितम्, बालकथामाला, बालकवितावलि जैसे ग्रन्थों का प्रणयन किया गया।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध के शीर्षक में प्रयुक्त 'साहित्य शब्द व्याकरण की दृष्टि से 'सहित' शब्द में 'ष्यञ्' प्रत्ययआदि वृद्धि करने पर निष्पन्न होता है। जिसका व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ है– 'हितेन सह सहितम् सहितस्य भाव इति साहित्यम्'। साहित्य ही समाज की सभी गतिविधियों को ध्वनित करता हैं। संस्कृत काव्यशास्त्रियों द्वारा 'साहित्य' शब्द को भिन्न–भिन्न अर्थों में द्योतित किया गया है। वक्रोक्तिकार कुन्तक ने 'साहित्य' को मनोहारी शब्दार्थ के रूप में गुम्फित किया है।[3] श्रीमान् नीलकण्ठ दीक्षित महोदय ने 'शिवलीलार्णवमहाकाव्य' में शब्दार्थ के विशेष विन्यास से युक्त शब्द–गुम्फन को 'साहित्य' शब्द से अभिहित किया है।[4] आलंकारिक राजशेखर ने 'साहित्य' को 'शास्त्रसम्मत' बताया है। वस्तुतः साहित्य में प्रयुक्त शब्दार्थ प्रतिक्षण रमणीयता एवं आह्लादकता उत्पन्न करने में समर्थ होते हैं। कवि अपनी नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभा से इस रमणीयता एवं सरसता को अनवरत, सहज एवं सरल रूप में बालकों के मनोरंजनार्थ प्रस्तुत करता है।

---

1. संस्कृत–हिन्दी शब्दकोष, वामन आप्टे , पृ.–36
2. Children's Literature in Sanskrit, April 2018
3. कुन्तक प्रणीत वक्रोक्तिजीवितम्, 1/7
   "साहित्यमनयोः शोभाशालितां प्रतिकाप्यसौ।
   अन्यूनानतिरिक्तत्वमनोहारिण्यवस्थितिः।।"
4. शिवलीलार्णव महाकाव्यम्। प्रथम सर्ग
   यानेव शब्दान् वयमालपामो यानेव शब्दान् वयमुल्लिख्याम।
   तैरेव विन्यासविशेषभव्यैः सम्मोहयन्ते कवयो जायन्ते।।

साहित्य सृजन की कई विधाओं में बाल–साहित्य को अत्यन्त महत्त्वपूर्ण माना जाता है। बाल्यावस्था मनुष्य की अत्युत्तम अवस्था है और इसी अवस्था में मनुष्य का व्यक्तित्व एवं स्वभाव निर्धारित होता है। रवीन्द्रनाथ टैगोर ने लिखा है– ठीक से देखने पर 'बालक' बहुत पुराना शब्द है। देश–काल–शिक्षा के अनुसार वयस्क मनुष्य में नवीन परिवर्तन घटित होते रहते हैं। लेकिन हजारों साल बच्चों को जिस रूप में स्वीकार किया जाता था, आज भी वैसा ही स्वीकार किया जा रहा है।. ....जीवन चिरन्तनता का कारण यहीं है कि शिशु या बालक प्रकृति की कृति है।

अर्वाचीन साहित्यकारों द्वारा स्वतंत्र एवं क्रमबद्ध रूप में लिखित बाल पद का क्या अर्थ है? यह विवादास्पद विषय अवश्य ही है। किन्तु मानव आयुकाल को शैशवावस्था, बाल्यावस्था, अथवा किशोरावस्था में पदासीन मनुष्य को 'बाल' पद से सम्बोधित किया गया है। व्याकरणात्मक रूप में 'बाल' पद 'बल्' धातु से अवयस्कता के अर्थ में 'ण्' प्रत्यय करने पर निष्पन होता हैं जिसका अर्थ है–बालक, शिशु, अवयस्क, अबोध इत्यादि। तर्कभाषाकार केशव मिश्र ने दर्शनशास्त्र से अनभिज्ञ, अबोध, एवं अलस गुणों से युक्त मनुष्य को 'बाल' शब्द से अभिहित किया है।[1] ब्रह्मवैवर्त पुराण के श्रीकृष्ण जन्मखण्ड के 36वें अध्याय में कहा गया है–**'अनाथबालवृद्धानां रक्षकाः सर्वदेवताः'।**

अमरकोष[2] में बालक के पर्यायवाची के रूप में 'माणवक' पद का प्रयोग किया गया है। मनुस्मृति में बालक पद के पर्यायवाची के रूप में 'बाल' पद का प्रयोग किया गया है–

'बालेन स्थविरेण वा।' 8/7

दूसरी तरफ नारदस्मृति में षोडश वर्ष से प्राक् अवस्था के लिए 'बाल' पद प्रयुक्त किया गया है–

'बाल आषोडशाद्वर्षात्'

महाकवि कालिदास ने मेघदूत में नवोदित 'मन्दार वृक्ष'[3] के लिए तथा 'लीलायुक्त कुन्दपुष्प'[4] हेतु 'बाल' पद प्रयुक्त किया है। इसी तरह रघुवंश महाकाव्य में महाकवि ने रात्रिकालीन उदित चन्द्रमा को बालक सम्मत बताया है यथा–

'बालचन्द्रमाः' (रघु 03/22)

---

1. केशव मिश्र प्रणीत तर्कभाषा के मंगलाचरण–
   "बालोऽपि यो न्यायनये प्रवेशं
   अल्पेन वांछत्यलस : श्रुतेन।"
2. अमरकोष 2/6/42/1/1
   बालस्तुस्यान्माणवको वयस्कस्तरुणो युवा।
   प्रवयाः स्थविरो वृद्धो जीनो जीर्णो जरन्नापि।।
3. कालिदास प्रणीत मेघदूत, पूर्वमेघ/15, बालमन्दार वृक्षः।
4. कालिदास प्रणीत मेघदूत, उत्तरमेघ/2, बालकुन्दानुविद्धम्।

आधुनिक बाल साहित्यकार डॉ. रामकिशोर मिश्रा ने षोडशवर्षीय कामासक्त युवक को भी 'बालक' पद से सम्बोधित किया है।[1] वस्तुतः पाश्चात्य बालमनोवैज्ञानिक भी किशोरावस्था को शैशवावस्था की पुनरावृत्ति मानते हैं। मनुस्मृतिकार ने 'बालक' को ज्ञान–शून्य जड़बुद्धि एवं अज्ञ अर्थों में प्रयुक्त किया है। यथा– **अज्ञो भवति वै बालः। मनु. 2/156**

मनुस्मृतिकार का कथन है कि 16 वर्ष तक बालक पिता के अधिकार क्षेत्र में रहकर जीवनयापन करता है, जब तक कि उसका पाणिग्रहण संस्कार नहीं हो जाता है–

बाल्ये पितुर्वशे तिष्ठेत् पाणिग्रहणस्य यौवने। (मनु. 5/146)

भाव प्रकाशन में षोडश वर्ष से कम उम्र के मनुष्य को 'बाल' पद युक्त बाल्यावस्था से सम्बोधित किया गया है–

वयस्तु त्रिविधं बाल्यं मध्यमं वार्द्धक्यन्तथा।
ऊनषोडशवर्षस्तु नरो बालो निराद्यते।। (प्रथम भाग)

व्याकरण की दृष्टि से यह कहा जा सकता है कि, "यत् यत् साहित्यं बालेभ्यः प्रणीतं तद बालसाहित्यम्।"

अवस्था के भेद से बाल–साहित्य भी भिन्न–भिन्न प्रकार का है। तन्मय भट्टाचार्य जी का मत है कि– **"जो बालक वर्णमाला से सम्यक् परिचित हो और जो सरल पुस्तक पढ़ने में सक्षम हो वह बालक है। द्वितीय कोटि का बालक वह है, जो लिपि शिक्षण से अपरिचित हो किन्तु श्रवणेन्द्रिय के द्वारा साहित्य से परिचित हो जाता है, वह भी बालक है।"**[2]

इसी तरह 1989 ई. में सम्पन्न शिशुविषयक सम्मेलन में यह निर्णय लिया गया कि– "A child means every human being below the age of 18 years unless under the law applicable to the child."

इसी तरह साहित्यशास्त्र निबन्ध ग्रन्थमाला में वेदव्यास शुक्ल कहते हैं कि– "तच्च साहित्यं शास्त्रकाठिन्यभीतान् बालान् सरलतया बोधयति, धर्मम् उपदिशति, तेषाम् अज्ञानं निवारयति, व्यवहारज्ञानं सुखेन प्रवेशयति, जडमपि विज्ञापयति, निर्बलं सबलयति, निरुत्साहितं समुत्सरयति, दुःखिनं सुखयति, निरंजनं रंजयति, निर्धनं धनयति, किमधिकं तदात्मपरितोषनं जनयति।"

इसी तरह चाणक्यनीति समीक्षा ग्रन्थ में सत्यनारायण चक्रवती महोदय बालसाहित्य को बालक का सर्वाङ्गीण विकास करने वाले ग्रन्थ के रूप में प्रतिपादित करते हैं उन्हीं के शब्दों में–

1. मिश्रा रामकिशोर, नाट्यसौरभम् अङ्गुष्ठदानम्, पृष्ठ. 6
2. डॉ. तन्मय भट्टाचार्य कृत बंगेषु विरचितं संस्कृत बालसाहित्यम् शोध पत्र से उल्लेखित

"बालसाहित्यं भवति–बालानां नेत्रोन्मिलकं, हृदयस्य विकासकं, मस्तिष्कपोषकं, दृष्टिप्रसारकं, शब्द–सम्पत्तिवर्धकं हृदयाह्लादकरं चेति।"

सर्वप्रथम साहित्यकारों ने बालमानस बुद्धि पटल को ध्यान में रखते हुए मनोरंजनार्थ सरल, सरस भाषा शैली दूसरी ओर कुछ कवियों ने स्वतन्त्र रूप से प्राचीन काव्यों की कथाओं को आधार बनाकर बालकों को शिक्षित करने के प्रयोजन से पूर्णतः बाल साहित्याधारित बालकथा ग्रन्थ, बालोपन्यास, बालनाटक एवं अनूदित बालसाहित्य की रचना की है।

किंचित् किंचित् बालसाहित्यपरक कथाग्रन्थों का प्रारम्भ 1898 ई. में पं. अम्बिकादत्त व्यास द्वारा प्रणीत 'रत्नाष्टकम्' से होता है। तदनन्तर श्री वेंकटरामशास्त्री प्रणीत 'कथाशतकम्' (भारतीय कथाओं का अनुवाद, 1898 ई.) एवं अप्पाशास्त्री राविडेकर का 'कथाकल्पद्रुम' (सन् 1900 में अरेबियन नाइट्स) इत्यादि कथासंग्रहों में भी बाल–साहित्य प्रत्यक्ष होता है। दूसरी तरफ कुछ आधुनिक विद्वानों ने स्वतंत्र रूप से अपने काव्यों को बालकाव्य का नाम दिया है।[1]

(ख) विषय की उपादेयता एवं मौलिकता

कविहृदय रहसबिहारी द्विवेदी जी का कथन है कि कवि विभिन्न प्रयोजनों को हृदयंगम करते हुए काव्य निर्माण में प्रवृत्त होता है–

"असन्तं मार्गमुत्सृज्य सन्तं गमयितुं जनम्।
हृदाह्लादिकया वाचा प्रज्ञावान् काव्यमङ्कते।।
कविकीर्तिपुरस्कारस्वान्तसुखसमीहया।
प्राक्कथावस्तुसंस्कारं सतां च चरिताङ्कनम्।।
नव्यकाव्यविधोन्मेषं व्यङ्ग्योक्तिं विकृतो तथा।
राष्ट्रभक्तिं युगौचित्यं पर्यावरणचेतनाम्।।
राष्ट्रस्वातन्त्र्यवीराणां चरितं चाराध्यमीश्वरम्।
समुद्दिश्याधुना काव्यं कुर्वन्ति कवितल्लजाः।।"

वस्तुतः काव्य अथवा साहित्य में समग्र समाज एवं राष्ट्र के मनुष्यों के जीवन का कल्याण निहित होता है। साहित्य बालसाहित्य हो अथवा अन्य साहित्य; वह जीवन को संस्कारित एवं परिमार्जित करने वाला होता है। जैसाकि यायावरीय राजशेखर ने 'काव्यमीमांसा' में कहा है–

"साहित्ये जीवनं सर्वं सर्वाङ्गीणं नवं नवम्।
प्रतिबिम्बत्वमायाति समुल्लसति वर्धते।।

---

1. देवर्षि कलानाथ शास्त्री विरचित 'कथानकवल्ली आमुखम्', पृ.–71–72

अद्भुतः प्रतिबिम्बोऽयं बिम्बमेव विभावयन्।
संस्कुर्वन् जीवनं तस्मिन् समवेतो नवायते।।
जीवने चास्ति साहित्यं साहित्ये जीवनं तथा।
परस्परकृता सिद्धिरनयोः सम्प्रवर्तते।।"

मेरे द्वारा प्रस्तुत यह शोधकार्य मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्र की वानर सेना के सेतु निर्माण कार्य में युक्त नन्ही सी गिलहरी के योगदान के सदृश अनवरत समाज एवं राष्ट्र के सकारात्मक एवं सन्तुलित विकास में अपना बहुमूल्य योगदान देगा, ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है। यह शोधकार्य न केवल बालकों अपितु सम्पूर्ण मानव समाज में 'सत्यं शिवं सुन्दरम्' की भावना को चरितार्थ करेगा।

साहित्यकार बालकाव्यों में मनोवैज्ञानिक ढंग से बालकों के व्यवहार, शारीरिक एवं मानसिक क्रिया–प्रतिक्रियाओं को प्रत्यक्ष तरीके से अवलोकन करते हैं। बालसाहित्यकारों का काव्य कोरी–कल्पनाओं की उड़ान नहीं होता है। पंचतत्र के कथामुख में सुमति सचिव का कथन है कि– यह जीवनमूल्यात्मक विषय अनित्य है, बहुत से शास्त्र भी बहुत दिनों में पढ़े जाते हैं। अतः 'क्षीरमिवाम्बुमध्यात्' रूपी बालसाहित्य ही संक्षेप शास्त्र है, जिसके निरन्तर परिशीलन से अबोध बालकों में भी नीतिशास्त्र एवं नैतिक मूल्यों का संचार किया जा सकता है। यथा–

"अनन्तपारं किल शब्दशास्त्रं स्वल्पं तथाऽऽयुर्बहवश्च विघ्नाः।
सारं ततो ग्राह्यमपास्य फल्गु, हंसैर्यथा क्षीरमिवाम्बुमध्यात्।।"

वस्तुतः नीतिशास्त्र आधारित बालसाहित्य के निरन्तर अनुशीलन से बालक कभी भी पराभव को प्राप्त नहीं होता है। इस ज्ञानमय अगाध सागर में यदि कोई मनुष्य अपने जन्मकाल से बिना स्नान किए, अज्ञानी एवं मूर्ख रहकर ही जीवनलीला समाप्त करता है तो वह मूर्ख पुत्र अपने वंश को कलंकित करने वाला होता है।

इस प्रकार बालसाहित्य से रहित एवं अनभिज्ञ बालकों में अनैतिकता, अबोधता एवं जड़ता जैसे दुर्गुणों का समावेश होना स्वाभाविक है। इस तरह की परिस्थिति हेतु बालक जिम्मेदार नहीं है। दोष है तो, इनके परिवेश का अर्थात् साहित्यकारों का जो मनुष्य जगत् में पदार्पण करने वाले अबोध एवं किशारों को उपलब्ध नहीं करवाया जाता है।

आधुनिक काल के बालसाहित्यकार, जिन्होंने बाल साहित्य लेखन में आधुनिक काल में घटित घटनाओं के बालमानस पटल में चिह्नित प्रभावों को ध्यान में रखते हुए साहित्य सृजित किया है। इस युग में लेखक बालमनोवैज्ञानिकों के समान बालकों के स्वभाव एवं व्यवहार को प्रभावित करने वाले वंशानुक्रम एवं वातावरणीय तत्त्वों को दृष्टि में रखते हुए साहित्य सृजित कर रहे हैं। महाभारत एवं रामायण में लिखित सद्गुण युक्त साहित्य को सरल एवं सरस, बालमनोवैज्ञानिक

भाषा–शैली में सृजित करने वाले आधुनिक साहित्यकारों में आचार्य वासुदेव दीक्षित, आचार्य दिगम्बर महापात्र, डॉ. केशवचन्द्र दास, प्रो. राजेन्द्र मिश्र, डॉ. रामकिशोर मिश्र, जनार्दन हेगड़े, डॉ. विश्वास, प्रो. गोपबन्धु मिश्र, प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी, हर्षदेव माधव, डॉ. संपदानन्द मिश्र, राजकुमार मिश्र, नारायण दास, बनमाली बिश्वाल, डॉ. कृष्ण लाल, भागीरथी नन्द, डॉ. पूर्णचन्द्र उपाध्याय, धर्मेन्द्र कुमार सिंहदेव, भरत भूषण रथ, डॉ. के. वरलक्ष्मी, कौशल तिवारी, प्रवीण पण्डया, तरुण मित्तल, मधुसूदन महापात्र, पूजा उपाध्याय एवं ऋषिराज जानी प्रभृति साहित्यकार हैं जो बालसाहित्य लेखन में संलग्न हैं।

डॉ. रामकिशोर मिश्र प्रणीत 'बालचरितम्' काव्य में कवि द्वारा स्वयं के शिशुवत् पुत्र राजेश के जन्म से द्वादश वर्ष पर्यन्त की शारीरिक एवं मानसिक चेष्टाओं का जो बालमनोसंवेदनात्मक वर्णन किया गया है वह संस्कृत साहित्य में बालसाहित्य विधा को उस शिखर पर प्रतिष्ठापित करता है जो स्थान पाश्चात्य जगत् में बाल–मनोविज्ञान (Babybiography) को प्राप्त हैं जैसाकि वर्णित हैं–

"क्षणं त्वङ्कं मातुस्वदनु पितुरङ्कं गतिमत्तीम्।
स्वसुः क्रोडे चेच्छां प्रतिपलमरं दर्शयति यः।
जनानामन्येषामपि स पुनरङ्कं विहरति,
यतस्ते तत्स्नेहात् जहति तमङ्कात् प्रियशिशुम्।।"[1]

आधुनिक काल के बाल साहित्यकारों द्वारा जितना बाल–साहित्य सृजित किया गया है उसमें साहित्यकारों ने बाल–अवस्था का विशेष ध्यान रखा है। मनुष्य अपने जीवन में शिशु अवस्था, बाल्यावस्था, कौमार्यावस्था, युवावस्था एवं वृद्धावस्था के रूप में जीवन–यापन करता है। इनके शैशवावस्था, बाल्यावस्था एवं किशोरावस्था का प्राणी बालमनोवृत्तियों से युक्त होता है। इस अवस्था के बालकों में नैतिकता, परिपक्वता एवं नैतिक मूल्यों का अभाव होता है। प्रो. राजेन्द्र मिश्र ने उत्तर बाल्यावस्था (8 वर्ष–11 वर्ष तक) में बाल मन में प्रादुर्भूत होने वाली विभिन्न प्रकृतिपरक जिज्ञासाओं को शान्त करने के लिए कौमारम् (द्विपंचाशत् कविताओं का संग्रह) की रचना की है।

डॉ. रामकिशोर मिश्र प्रणीत 'बालतरङ्गिणी' काव्य में बालचरितम्, बालवीरम्, बालकवितावलि एवं किशोरकथावलि इत्यादि काव्यांशों के माध्यम से बाल–अवस्थानुरूप विभिन्न संवेगों, रुचियों एवं मूलप्रवृत्तियों को सकारात्मकता प्रदान करते हुए बालसाहित्य को बाल–मनोविज्ञान की और अग्रसर किया गया है।'

समय एवं परिस्थितियों ने बाल–साहित्य के कलेवर में अनन्त परिवर्तन एवं परिवर्धन किया है। जो बालसाहित्य पंचतन्त्र एवं हितोपदेश की मनोरंजनपरक नैतिक शैली से प्रारम्भ हुआ था, वह आज विभिन्न नैतिक मूल्य एवं विषयों को बालकों में आत्मसात कराने में सक्षम है।

---

1. डॉ. रामकिशोर मिश्र, बालचरितम्।

वर्तमान उपलब्ध बालसाहित्य के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि आज साहित्यकार न केवल उपदेशात्मक एवं नैतिक बालसाहित्य के सृजन में रत है अपितु चित्रात्मक, जिज्ञासात्मक एवं वैज्ञानिक साहित्य का भी निर्माण कर रहे है। यथा प्रो. अभिराज राजेन्द्र मिश्र द्वारा 'पंचतन्त्र' को नवीन कलेवर में 'अभिनवपंचतन्त्र के रूप में प्रकट किया गया है।

≈≈≈≈

प्रथम अध्याय

प्राचीन संस्कृत साहित्य में बालसाहित्य का स्वरूप

प्रथम अध्याय

प्राचीन संस्कृत साहित्य में बालसाहित्य का स्वरूप

साहित्य समाज का दर्पण होता है। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी का कथन है कि 'ज्ञानराशेः संचितकोषस्य नाम साहित्यम्' अर्थात् हमारा मस्तिष्क समाज से जिस भावसामग्री को ग्रहण करके स्वयं का पोषण एवं विकास करता है, वही ज्ञानराशि साहित्य शब्द से बोधित होती है। साहित्य में किसी भी समाज एवं राष्ट्र के भूत, वर्तमान एवं भविष्य के सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों का सन्निवेश होता है। वस्तुतः साहित्य प्रत्येक अवस्था के मनुष्य को अपने सत्य का प्रतिबिम्ब दिखाता है।

संस्कृत वाङ्मय के प्रथम स्रोत वैदिक साहित्य में संस्कृत भाषा का प्राचीनतम रूप, पुरातन संस्कृति, प्राक्तन समाज–व्यवस्था एवं तात्कालिक सामाजिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक, राजनीतिक, आर्थिक स्थिति का वर्णन प्राप्त होता है। वेदों में विश्वविश्रुत भारतीय संस्कृति के आधार तत्त्व, त्याग–तपोवन–तपस्या, कर्त्तव्य–अकर्त्तव्य कर्म, शुभ–अशुभ कार्यों का परिणाम, मानव–जीवन के कल्याण के साधन, पुरुषार्थ चतुष्टय, वर्णाश्रम व्यवस्था तथा सम्पूर्ण चराचर सृष्टि के रहस्य का वर्णन प्राप्त होता है।

संस्कृत साहित्य में बाल साहित्य के बीज वैदिक साहित्य में प्रत्यक्ष होते हैं। ऋग्वेद में बालक के लिए **'अर्भकः'** और **'कुमारकः'** शब्द का प्रयोग किया गया है, जैसा कि द्रष्टव्य है–

नहि वो अस्त्यर्भको देवासो न कुमारकः।
विश्वे सतोमहान्त इत्।।[1]

सायण महोदय ने प्रस्तुत मंत्र में 'अर्भकः' पद का अर्थ 'शिशुरूपी बालक हेतु तथा 'कुमारकः' पद किशोर अवस्था युक्त बालक के लिए प्रयुक्त किया है। सायणाचार्य विश्वदेवता को शिशु एवं बालक के रूप में स्वीकार न करके एक तरुण के रूप में प्रतिपादित करते हैं।

उपनिषदों को संस्कृत वाङ्मय का ज्ञान भण्डार कहा जाता है। उपनिषद वेदों के ही अंग हैं तथा इनमें सम्पूर्ण सृष्टि के कल्याण के बीज निहित हैं। उपनिषदों में निहित ज्ञानप्रद एवं उपदेशपरक असंख्य कहानियाँ बालसाहित्य के प्राचीन स्वरूप को चरितार्थ करती हैं। उपनिषदों में

---

1. ऋग्वेद, 8/30/1

निहित सत्यकाम–जाबाल एवं नचिकेता की कहानी को बालसाहित्य के अन्तर्गत सम्मिलित किया जा सकता है। बृहदारण्यकोपनिषद् में शरीरस्थ शिशु को 'मध्यम प्राण' की संज्ञा देते हुए उसे सम्पूर्ण राग द्वेष से रहित बताया गया हैं–

यो ह वै शिशु साधानं सप्रत्याधानं
सस्थूणं सदामं वेद, तस्येदं फलम् किं तत्?
स एष शिशुरिव विषयोस्वितरकरणवदपटुत्वात्।
शिशुसाधानमित्युक्तम्।। बृहद. उप. 2/2/1/500

यह सत्य है कि प्राण रूपी शिशु ही मनुष्य के सम्पूर्ण भविष्य को निर्धारित करता है। उपनिषद पिता–पुत्र के मध्य विद्यमान नैसर्गिक प्रेम, स्नेह एवं कर्त्तव्य भावना को पुष्ट करते हैं। ये मनुष्य के सामाजिक–सांस्कृतिक मूल्यों को आत्मसात् करते हुये बालक–बालिकाओं के लिए समान रूप से शिक्षा–दीक्षा कराते हैं। वैदिक काल की घोषा, लोपामुद्रा, उर्वशी, कामंदकी, गार्गी, मैत्रेयी जैसी विदुषी पात्रों को आधार बनाकर भी आधुनिक साहित्यकार बालोपयोगी उपदेशात्मक साहित्य की सर्जना में अविरल रूप से संलग्न हैं।

इसी प्रकार लौकिक साहित्य में समाहित रामायण, महाभारत, पुराण, स्मृतिग्रन्थ एवं काव्य में भी बालसाहित्य के प्रारम्भिक तत्त्व दृष्टिगोचर होते हैं। मनुस्मृति में बालक को पिता से भिन्न रूप में प्रकट किया है–

"अज्ञो भवति वै बालः पिता भवति मन्त्रदः।
अज्ञं हि बालमित्याहुः पितेत्येव तु मन्त्रदम्।।"[1]

मनुस्मृति में प्रतिपादित है कि वृद्धजन एवं गुरुजनों के निरन्तर सेवाभाव से ब्रह्मचारी बालकों को शुभ फल की प्राप्ति होती है–

"अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।
चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुर्विद्या यशो बलम्।।"[2]

वस्तुतः उपनिषद् साहित्य में बालकों के लिये गुरुसेवा, ईश्वरभक्ति, सेवापरायणता, सहनशीलता, धर्माचरण, पवित्रता, जितेन्द्रियता एवं आत्मचिन्तन इत्यादि सद्गुणों का उपदेश दिया गया है।

---

1. मनुस्मृति, 2/153
2. मनुस्मृति, 2/121

वेदविज्ञ परमपुरुषोत्तम दशरथनन्दन श्रीराम के चरित्र को भूतल पर साक्षाद् अवतरित करने वाले आदिकवि विरुद विभूषित श्रीमद्–वाल्मीकि विरचित आदिकाव्य 'रामायण' में सम्पूर्ण प्रकार के काव्यों के बीज समाहित है। रामायण समस्त साहित्य का रत्नकोष है। यथा–

"रामायणं काव्यबीजं सनातनम्"[1]

रामायण समग्र काव्यविधाओं का लक्षण ग्रन्थ है। अति प्राचीन काव्यविधाओं से लेकर आधुनिक काव्यपर्यन्त बाल–साहित्य युक्त विधाओं के तत्त्वों का यह उपजीव्य ग्रन्थ है। रामायण में उल्लेखित मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम का जीवन चरित्र सम्पूर्ण मानव सृष्टि के लोककल्याण का आदर्श उदाहरण है। सम्पूर्ण बालकों के जीवन को **'सत्यं शिवं सुन्दरम्'** के सन्मार्ग पर अग्रसर करने हेतु श्रीराम एक पथप्रदर्शक हैं। श्रीराम के जीवन से बालकों को सहयोग, सदाचार, सच्चरित्र, नैतिकता, शील, साहस एवं धैर्य इत्यादि नैतिक मूल्यों की शिक्षा प्राप्त होती है।

रामायण में उल्लेखित नारद–सनत्कुमार कथा, परशुराम कथा एवं सत्यकाम–जाबाल कथाएं भी बालकों को जीवनोपयोगी सदुपदेश प्रदान करती हैं। दूसरी और श्रीराम के बालवर्णन से आधुनिक साहित्यकारों को बालगाथावर्णन सम्बन्धित कथानक भी प्राप्त होता है। रामायण में हनुमान के शैशवास्था वर्णन में एक सामान्य बालक की बालप्रकृति प्रत्यक्ष होती है–

"बालार्कभिमुखो बालो बालार्क इव मूर्तिमान्।
गृहीतकामो बालार्क पल्वतेऽम्बरमध्यगः।।"

सामान्यतया सभी बालकों में आरम्भिक अवस्था में अवबोध शक्ति का अभाव होता है। बालक प्रत्येक कार्य के सन्दर्भ में किंकर्तव्यविमूढ़ होता है। जैसा कि अमरकोषकार ने बालक के लिए 'मूर्ख' पदप्रयुक्त किया है–

'मुर्खेऽर्भकेऽपि बालः।[2]

वह सभी वस्तुओं को केवल भक्षण योग्य ही समझता है। श्रीराम एवं हनुमान के बाललीला वर्णन समान है। डॉ. रामकिशोर मिश्र ने अपने पुत्र राजेश की बाललीला विषयाधारित **'बालचरितम्'** काव्य का निर्माण किया है।

रामायण के अनन्तर बालसाहित्यात्मक उपदेशपरक एवं बाल–लीला वर्णन महाभारत में भी प्राप्त होता है। इस संदर्भ में किसी आधुनिक सहृदय कवि की कवितोक्ति प्रासङ्गिक है, 'व्यासविरचिता गणेशलिखिता'। महाभारते पुण्यकथा।। अर्थात् महाभारत की रचना यद्यपि प्रौढ़ बुद्धि

---

1. बृहद्धर्मपुराणम्, 1/30/47
2. अमरकोष, 3/3/206/1/1

सम्पन्न वेदव्यास जी ने की थी, किन्तु महाभारत के लेखन जैसा पवित्र कार्य बालस्वरूपमय, त्रिकालज्ञ, बुद्धिप्रदाता श्री गणेश जी द्वारा सम्पन्न किया गया। यदि धीरगम्भीर प्रकृति युक्त गणेश जी द्वारा महाभारत जैसा पुण्य व महान् कार्य किया गया, तो यह स्वाभाविक है कि बालसाहित्य का आविर्भाव नैसर्गिकतया होना ही था। महाभारत जैसे आर्षकाव्य में शास्त्रज्ञान के साथ ही बालसाहित्य युक्त ज्ञान प्राप्त हो, तो इसमें किंचित् भी अतिशयोक्ति नहीं है। अतएव महाभारत के सम्बन्ध में प्राप्तोक्ति है–

"धर्मे चार्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षभ।
यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्।।"[1]

महाभारत में धर्म, राजनीति, नीति, इतिहास, सदाचार, बालमनोविज्ञान इत्यादि सभी विषयों पर वेदव्यासजी ने अपना रचना कौशल अभिव्यक्त किया है। महाभारत में कौरव–पाण्डवों के बाललीला वर्णन में बालमनोविज्ञान प्रत्यक्ष होता है। बालमनोवैज्ञानिकों का मत है कि बालक बाल्यावस्था (3 वर्ष से 12 वर्ष पर्यन्त) में खेल–खेलने, केश–कर्षण करने, वृक्षारोहण, फल तोड़ने, हिंदोलों का आनन्द लेने एवं पराक्रम प्रदर्शित करने जैसी बालमनोवृत्तियों में संलग्न रहते हैं। महाभारत में पाण्डव एवं कौरवों के बालवर्णन में बाल–प्रवृत्तियां परिलक्षित होती हैं यथा–

"जवे लक्ष्याभिहरणे भोज्यं पांसुविकर्षणे।
धार्तराष्ट्रान् भीमसेनः सर्वान् च परिमर्दति।।
हर्षान् प्रक्रीडमानांस्तान् ग्रह्य राजन् निलीयते।
शिरस्सु विनिगृह्यैवान् योधयामास पाण्डवैः।
कचेषु च विनिगृह्यैवान् विनिहत्य बलात्बली।
चकर्ष क्रोशतो भूमौ धृष्ट जानुशिरोंऽसकान्।।
दर्शन् बालान् जले क्रीडन् भुजाभ्यां परिगृह्य सः।
आस्ते स्म सलिले मग्नो मृतकल्पान् विमुंचति।।
फलानि वृक्षमारुह्य विचिन्वन्ति च ते तदा।
तदा पादप्रहारेण भीमः कम्प्यते द्रुमान्।।"[2]

बालकों की स्वाभाविक प्रवृति होती है कि वह जलप्रिय होते हैं, जलक्रीड़ा उन्हें अत्यन्त रोचक लगती है।

---

1. महाभारत, आ.पु./62/53 वां श्लोक, पृ. 210
2. महाभारत/आ.पु/127 वाँ अध्याय/16–21

यद्यपि महाभारत में निबद्ध साहित्य बालसाहित्य की समासविहीन मुक्तक–चूर्णक शैली में निबद्ध नहीं है किन्तु साहित्यकारों के लिए बालसाहित्यिक विषय उपलब्ध करवाने में उपजीव्य काव्य की कोटि में अवश्य परिगणित है।

विश्वकोष महाभारत में बालमनोवृत्यात्मक साहित्य के साथ–साथ उपदेशपरक एवं शिक्षाप्रद साहित्य भी उपलब्ध होता है। महाभारत में कौरव पाण्डवों की शिक्षा प्राप्ति के प्रसङ्ग में जहाँ हमें अर्जुन में गुरुभक्ति, साहस, नैतिकता के गुण परिलक्षित होते है तो वहीं एकलव्य के चरित्र में गुरुसेवा, साहस, दृढ़कर्तव्यपरायणता, नम्रता, के गुण प्रत्यक्ष होते हैं। एकलव्य की गुरु के प्रति सच्ची सेवा उसके 'अङ्गुष्ठदान' में प्रत्यक्ष होती है–

एकलव्यस्तु तच्छ्रुत्वा वचो द्रोणस्य दारुणम्।
प्रतिज्ञामात्मनो रक्षन् सत्ये च नियतः सदा।।
तथैव ह्रस्टवदनस्तथैवादीनमानसः।
छित्त्वा विचार्य तं प्रादाद् द्रोणायाङ्गुष्ठमात्मनः।।[1]

वस्तुतः एकलव्य के समान ही भारत देश में अनेक महापुरुषों ने जन्म लिया है जिन्होंने अपने बचपन में अनेक पुण्य कर्मों का निर्वाह किया है। इनका सम्पूर्ण जीवन सर्वदा बालकों को प्रेरणा प्रदान करता रहेगा।

बालमनोविज्ञान महाभारत में सर्वत्र अविरल रूप से प्रवाहित होता है। बालक सर्वदमन (भरत) के चरित्र में साहस जैसे क्षत्रियत्व गुण उसके आनुवांशिक कारण को अभिव्यक्त करते है।[2] यथा महाभारत में उल्लेखित भरत प्रसङ्ग में बालमनोविज्ञान परिलक्षित हुआ है–

कुमारो देवगर्भाभः स तत्राशु व्यवर्धयत्।
षड्वर्ष एव बालः स कण्वाश्रमपदं प्रति।।
सिंह व्याघ्रान् वराहांश्च महिषांश्च गजांस्तथा।
बबन्धो वृक्षे बलवानाश्रमस्य समीपतः।।[3]

महाभारत के वनपर्व में मार्कण्डेय मुनि द्वारा भगवान श्रीकृष्ण के वर्णन में भी बाल–मनोवृत्तियों एवं संवेदनाओं को प्रकट किया गया है–

"अतसीपुष्पवर्णाभः श्रीवत्सकृतभूषणः।
साक्षाल्लक्ष्म्या इवावासः स तदा प्रतिभाति मे।।

---

1. महाभारत, आ.प. / 131 वां अध्याय / 57–58, पृ.–465
2. बाल मनोविज्ञान के आधार, प्रीति वर्मा, (हिन्दी ग्रंथ अकादमी)
3. महाभारत, आ.प. / 47 / 5–6, पृ.–261

ततो मामब्रवीद् बालः स पद्मनिभलोचनः।

श्रीवत्सधारी द्युतिमान् वाक्यं श्रुतिसुखावहम्।।"[1]

इसी प्रकार शिशुरूपधारी भगवान् नारायण में सम्पूर्ण सृष्टि का वास था। सम्पूर्ण पंचमहाभूत, पंचतन्मात्रा, एकादश रुद्र, चेतनाचेतन पदार्थ बालरूपधारी श्रीकृष्ण के शरीर में विद्यमान थे, फिर भी सामान्य बालकों के समान श्रीकृष्ण के मुँह पर मोद एवं प्रसन्नता का भाव आभासित हो रहा था।

महाभारत में बालकों के नैतिक चरित्रोत्थान हेतु उपदेशात्मक विषय सामग्री का भी अकूत भण्डार हैं। अतिथि सेवा का महत्त्व प्रतिपादित करते हुए बालकों में 'अतिथि देवो भव' का भाव जाग्रत किया गया है–

"पंचैव गुरवो ब्रह्मन् पुरुषस्य बभूषतः।

पिता माताग्निरात्मा च गुरुश्च द्विजसत्तमः।।

पिता माता च भगवन्नेतो मद्दैवतं परम्।

यद् देवताभ्यः कर्त्तव्यं तदेताभ्यां करोम्यहम्।।"[2]

इसी तरह बालकों को जीवन में समय की महत्ता प्रतिपादित करने हेतु युधिष्ठिर के समय प्रसङ्ग को प्रकट किया गया है–

बुद्धिशास्त्राध्ययनेन शक्यं प्राप्तुंविशेषं मनुजैरकाले।

मूर्खोऽपि चाप्नोति कदाचिदर्थान् कालो हि कार्यं प्रति निर्विशेषः।।

कालेन शीघ्राः प्रवहन्ति वाताः कालेन वृष्टिर्जलदानुपैति।

कालेन पद्मोत्पलवज्जलं च, कालेन पुष्यन्ति वनेषु वृक्षाः।।[3]

वर्तमान समाज में सर्वत्र झूठ, कपट, असत्य आदि दुर्गुण व्याप्त हैं। समाज में निवासरत बालक एवं किशोरों पर इन दुर्गुणों का दुष्प्रभाव पड़ रहा है। महाभारत में सत्य–असत्य का प्रतिफल प्रतिपादित किया गया हैं–

"सत्यस्य वचनं साधु न सत्याद् विद्यते परम्।

यत्तु लोकेषु दुर्ज्ञानं तत् प्रवक्ष्यामि भारत।।

---

1. महाभारतम्, वनपर्व / 180 / 95–96, पृ.–611
2. महाभारतम्, वनपर्व / 214 / 27–28, पृ.–706–07
3. महाभारतम्, शान्तिपर्व / 25 / 6–8, पृ. 76–77

भवेत् सत्यं न वक्तव्यं वक्तव्यमन्ततं भवेत्।

यत्रानृतं भवेत् सत्यं सत्यं वाप्यत्यन्तं भवेत्।।"[1]

इसी तरह भक्त प्रहलाद कथा के माध्यम से समस्त समाज को शील गुण का अनुकरण करने का नैतिक उपदेश दिया गया है। महाभारत में उल्लेखित 'अहिंसा परमो धर्मः' प्रस्तुत आदर्श वाक्य आज की किशोर पीढ़ी के लिए सदुपदेश है।

महाभारत में उपदेशात्मक बालसाहित्य के साथ–साथ बालजीवनी गाथा साहित्य (Baby Biography) के प्रमाण भी प्राप्त होते हैं। माता कुन्ती एवं पुत्र कर्ण के मध्य नैसर्गिक स्नेह एवं आकर्षण हैं। यद्यपि लोक भय से वह कर्ण को अपने से दूर कर देती है किंतु मातृवात्सल्य सर्वदा उसके अन्तःकरण में व्याप्त रहता है, यथा–

"चुम्बितं च प्रहर्षन्त्या मात्रा वात्सल्ययुक्तया।
लालितं स्वकराब्जाभ्याममन्दाऽऽनन्दमूढ़या।।"[2]

लौकिक साहित्य के अन्तर्गत परिगणित पुराणों में भी सम्पूर्ण काव्यों,जिसमें बालसाहित्य भी सम्मिलित है, के तत्त्व समाहित है। 'पुराण' पद का व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ है– "पुरां नवति इति पुराणम्' अर्थात् जिस शास्त्र में प्राचीन साहित्य को नवीनतम रूप में प्रस्तुत किया गया है, वह पुराण है। श्रीमद्भागवत् पुराण में बालसाहित्य की बाल–जीवनगाथात्मक विधा का समीचीन वर्णन प्राप्त होता हैं–वेदव्यासजी बालमनोविज्ञान को चरितार्थ करते हुए श्रीकृष्ण की बाललीलाओं का मनोरम वर्णन करते हैं। माता यशोदा में बालक श्रीकृष्ण के प्रति अप्रतिम एवं अविस्मरणीय पुत्र वात्सल्य परिलक्षित होता है–

"एकदार्भकमादाय स्वाङ्कमारोप्य भामिनी।
प्रस्नुतं पाययामास स्तनं स्नेहपरिप्लुता।।"[3]

वस्तुतः श्रीकृष्ण का बाललीला वर्णन अमृतसहोदरवत् मधुर एवं रमणीय है जिसका आस्वादन करके सम्पूर्ण पाठक एवं श्रोतागण आनन्दमग्न हो जाते हैं।

बाललीला वर्णन प्रसङ्ग में गर्गाचार्य राजा परीक्षित से कहते हैं कि हे राजन्! इस समय शैशवावस्था में पदासीन बलराम एवं श्रीकृष्ण सम्पूर्ण गोकूलभूमि को अपने नन्हें–नन्हें पादसंचालन से पवित्र कर रहे हैं। वह अपने मुखमण्डल में शोभायमान मन्द–मन्द मुस्कान, इठलाते मोह सदृश कलेवर से सम्पूर्ण गोकूल को मन्त्रमुग्ध किये हुए हैं यथा–

---

1. महाभारतम्, शान्तिपर्व/109/4'5, पृ.–342
2. श्रीकर्णचरितामृतम्, पाटलेन्दु गुलाबचन्द्र शर्मा, 2/30
3. श्रीमद्भागवत् पुराण, दशमस्कन्ध, 7/344, पृ.–145

तावङ्ध्रियुग्ममनुकृष्य सरीसृपन्तौ
घोषप्रघोषरुचिरं प्रजकर्दमेषु
तन्नादहृष्टमनसावनुसृत्य लोकं
मुग्धप्रभीतवदुपेयतुरन्ति मात्रोः।।
"तन्मातरौ निजसुतौ घृणया स्नुवन्त्यौ
पंचाङ्गरागरुचिरावुपगुह्य दोर्भ्याम्।
दत्त्वा स्तनं प्रपिबतोः स्म मुखं निरीक्ष्य
मुग्धस्मिताल्पदशनं ययतुः प्रमोदम्।।"
"यह्यङ्गनादर्शनीयकुमारलीला–
वन्तर्व्रजे तदबलाः प्रगृहीतपुच्छैः।
वत्सैरितस्ततउभावनुकृष्यमाणौ
प्रेक्षन्त्य उज्झितगृहा जहृषर्हसन्त्यः।।"[1]

उत्तर बाल्यावस्था में पदासीन सामान्य बालकों के समान ही श्रीकृष्ण एवं बलराम में भी शारीरिक, मानसिक एवं भाषात्मक विकास तथा परिवर्तन परिलक्षित होता है।

इसी प्रकार मार्कण्डेय पुराण में भी परमसाध्यामदालसा का गम्भीर चिन्तन प्राप्त होता है। वस्तुतः यह सत्य है कि षोडश संस्कारों में परिगणित जातकर्म संस्कार के समय से ही बालक को मनुष्य के रूप में सम्बोधित किया जाने लगता है। तत्पश्चात नामकरण संस्कार की परम्परा बालक के लौकिक व्यवहार में निपुणता प्राप्त करने से सम्बन्धित है। मदालसा बाल्यकाल से ही अपने पुत्र को निवृत्तिमार्ग से हटाकर प्रवृत्तिमार्ग की तरफ अग्रसर करने हेतु प्रेरित करती हैं–

यथा–

"शुद्धोऽसि रे तात न तेऽस्ति नाम कृतं हि ते कल्पनयाधुनैव।
पंचात्मकं देहमिदं न तेऽस्ति नैवास्य त्वं रोदिषि कस्य हेतोः।।
तातेतिकिंचित् तनयेति किंचिदम्बेति किंचिदपि तेति किंचित्।
ममेति किंचित् ममेति किंचित् त्वं भूतसङ्गं बहुमानयेषाः।।"

अतः न केवल वैदिक अथवा पौराणिक युग में बल्कि वर्तमान में भी माता अपने पुत्र को सत्कर्म में प्रवृत्त करने हेतु लोरियों का प्रयोग करती हैं अतः कहा जा सकता है कि हिन्दी बालसाहित्य में प्रचलित लौरी–बालसाहित्य का उद्भव भी संस्कृत साहित्य से ही हुआ है।

---

1. श्रीमद्भागवतपुराण, दशमस्कन्ध, श्लोक सं. 22–24

आचार्य दण्डी प्रभृति काव्यशास्त्रियों ने गद्यसाहित्य को कथा एवं आख्यायिका इन दो भागों में वर्गीकृत किया हैं। यह दोनों विधाएँ पाठकों के मानस पटल पर रोचकता एवं कौतुहल उत्पन्न करने में पूर्णतया समर्थ हैं। सर्वप्रथम चतुर्थ शताब्दी में सुबन्धु विरचित 'वासवदत्ता' कथा में कथासाहित्य की झलक नजर आती है। इसके अनन्तर छठी सदी में कवि दण्डी विरचित 'दशकुमारचरितम्' एवं बाणभट्ट विरचित 'कादम्बरी' में भी कथासाहित्य पुष्पित एवं पल्लवित हुआ हैं।

यद्यपि उपलब्ध कथासाहित्य की श्लेष प्रधान अलंकृत भाषा शैली आधुनिक बालसाहित्य की सरल–सरस भाषाशैली से बिल्कुल भिन्न है तथा इसको बालसाहित्य की कोटि में तनिक भी नहीं रखा जा सकता है किंतु इन कथाओं में उल्लेखित कल्पनात्मक एवं उपदेशात्मक प्रसङ्ग बालकों के जीवन को रोमांचित करने एवं पथ प्रदर्शित करने में बहुत योगदान रखते हैं। 'दशकुमारचरितम्' में समाहित 'विश्रुतप्रसङ्ग' जहाँ बालकों में साहस, बुद्धिकौशल, स्वदेशप्रेम, स्वामिभक्ति के गुणों को जाग्रत करने वाला है, वहीं कादम्बरी में उल्लेखित 'शुकनासोपदेश' प्रसङ्ग बालकों को किशोरावस्था में उत्पन्न दुर्गुणों से सचेत करने में अत्यन्त प्रभावी है। वस्तुतः मंत्री शुकनास का यह उपदेश बालमनोविज्ञान सम्मत है।

किशोरावस्था में बालकों में शारीरिक एवं मानसिक परिवर्तन होता है जिससे बालकों में काम, क्रोध, जिज्ञासा, आत्म प्रदर्शन जैसी संवेदनाएं जाग्रत होती है। इन संवेगों की शांति एक अच्छे बाल–साहित्य के पठन–पाठन से ही हो सकती है।[1] अतः कथासाहित्य बालकों एवं किशोरों को नीतिप्रद आचार–विचार की शिक्षा प्रदान करता है। वस्तुतः कथासाहित्य का मुख्य प्रयोजन लोककल्याण ही होता है। यथा अभिराजराजेन्द्र मिश्र जी का कथन है–

गृहीत्वा किमप्युद्देश्यम् लोकाभ्युदयकारकम्।
चित्रणेन चरित्राणां सरसयो कथानिका।।"[2]

वैदिक युग से ही भारतीय कथा–साहित्य जीवन को विवेक सम्मत बनाने में सहायक रहा है। ऋग्वेद का सरमा–पणि संवाद परोपकार एवं दान का उपदेश प्रदान करते हुए सर्वकल्याण की भावना को चरितार्थ करता है तो छान्दोग्योपनिषद में बैल, हंस तथा मृदगु नामक एक जलचर पक्षी की कथा द्वारा जाबाल पुत्र सत्यकाम को ब्रह्मविद्या का उपदेश प्रदान किया गया है। महाभारत में श्वान कथा, हस्ति–कछुआ कथा, मनु–मत्स्य कथा, चालाक धूर्त बिल्ली की कथा तथा अन्य नीतिकथाओं के माध्यम से सम्पूर्ण चराचर जगत को रोचकता पूर्वक नीतिशास्त्र एवं नैतिक मूल्यों को आत्मसात् करने की बात कही गई है।

---

1. शिक्षा के मनोवैज्ञानिक आधार, डॉ. एल.एन. वर्मा डॉ. एम.पी. शर्मा, 91–92
2. अभिराजयशोभूषणम् काव्यभेदनिरूपणम्, कारिका–112, पृ.–235

तृतीय शताब्दी के भरहूत स्तूप पर उत्कीर्ण पशु–पक्षी कथाओं एवं 380 ई.पू. के बोद्धों की जातक कथाओं के आधार पर पंचतंत्र का काल 300 ई.पू. मानना समीचीन प्रतीत होता है। पं. विष्णु शर्मा विरचित पंचतन्त्र बालकों को शीघ्र ही व्युत्पन्न बुद्धियुक्त निरंतर अनुशीलन से मूर्ख एवं जड़बुद्धि बालक भी परिपक्व बुद्धि सम्पन्न मानव सम्मत व्यवहार कुशल बन जाता हैं–

किं बहुना

"अधीते य इदं नित्यं नीतिशास्त्रं श्रृणोति च।

न पराभवमाप्नोति शक्रादपि कदाचन।।"[1]

वस्तुतः पंचतन्त्र नीतिशास्त्र परख ग्रन्थ होने के साथ ही मनोरंजक, हास–परिहास पूर्ण, ललित एवं हृदयग्रायी सरल–सरस भाषा शैली में निबद्ध भी हैं, जो बालकों को नैतिक, सामाजिक, राजनीतिक गुणों से सम्बन्धित उपदेश प्रदान करता हैं। यह ग्रन्थ मुख्यतः अबोध, अल्पज्ञ, मूढ़ बालकों को नीतिशास्त्र में प्रवीण बनाता हैं। पंचतंत्र में पशु–पक्षी जैसे निम्न श्रेणी के पात्रों के माध्यम से उच्च कुल में उत्पन्न राजकुमारों को दैनिक वाग्व्यवहार, करणीय–अकरणीय कार्यों, कर्त्तव्यपालन, मित्ररक्षा, आपद्धर्म इत्यादि गुणों को अपनाने के साथ ही स्वार्थ, अहंकार, क्रोध, मोह, काम आदि दुर्गुणों को त्यागने की शिक्षा प्रदान की गई हैं।

वस्तुतः यद्यपि पंचतन्त्र की भाषा शैली एवं संवाद, कथा साहित्य के सम्पूर्ण लक्षणों का अनुसरण करती हैं किंतु बीच–बीच में वक्त्र–अपरवक्त्र छन्दों के माध्यम से सम्पूर्ण कथा को सारगर्भिता प्रदान की गई हैं।

पंचतंत्र में पाँच तन्त्र एवं 72 उपकथायें संग्रहीत है। 'मित्रभेद' नामक प्रथम तंत्र में 'पिङ्गलक' सिंह तथा 'संजीवक' बैल के मध्य 'करभक–दमनक' सियारों के द्वारा भेद उत्पन्न किया जाता है। किन्तु लेखक का मुख्य उद्देश्य प्रस्तुत कथा के माध्यम से बालकों को लोकव्यवहार का नैतिक उपदेश प्रदान करना है। 'मित्रसंप्राप्ति' नामक द्वितीय तन्त्र में काक, कछुआ, मूषक, कबूतर और हिरण में परस्पर मैत्री करवाकर आपद्धर्म का निर्वाह किया गया हैं। मित्रता की महत्ता प्रतिपादित करते हुए कहा गया हैं–

"दयितजनविप्रयोगा वित्तवियोगाश्च केन सह्याः स्युः।
यदि सुमहौषधिकल्पो वयस्यजनसङ्गमो न स्यात्।।

1. पंचतन्त्रम्, पं. विष्णु शर्मा, कथामुख, श्लोक–10, पृ.–13

वरं प्राण परित्यागो न वियोगो भवादृशैः।
प्राणा जन्माऽन्तरे भूयो भवन्ति न भवद्विधाः।।"[1]

'काकोलूकीय' नामक तन्त्र में पं. विष्णु शर्मा द्वारा राजकुमारों को मेघवर्ण काक एवं अरिमर्दन उल्लू की कथा के माध्यम से षाड्गुण्यनीति (संधि, विग्रह, यान, आसन, द्वैधीभाव और संश्रय) एवं उपायों (साम, दाम, दण्ड, भेद) के माध्यम से शत्रुओं को नष्ट करने का नीतिपूर्ण उपदेश दिया गया है। 'लब्धप्रणाश' नामक चतुर्थ तन्त्र में लेखक के द्वारा करालमुख मगर एवं रक्तमुख वानर की बुद्धिचातुर्य युक्त कथा के माध्यम से राजकुमारों को लघु–लघु संवादों में अतिथिपूजा, धैर्य एवं सत्सङ्गति की शिक्षा दी गई है। लेखक बालकों को उपाय चतुष्टय के प्रयोग से अवगत करवाता हैं–

उत्तमं प्रणिपातेन शूरं भेदेन योजयेत्।
नीचमल्पप्रदानेन समशक्तिं पराक्रमैः।।[2]

अंतिम 'अपरीक्षितकारकम्' तन्त्र में पं. विष्णु शर्मा राजकुमारों को अच्छी तरह सोच–विचार कर कार्य करने का उपदेश देते हैं। साथ ही **'वसुधैव कुटुम्बकम्'** को चरितार्थ करने का नैतिक उपदेश भी देते है–

"अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम्।
उदारचरितानान्तु वसुधैव कुटुम्बकम्।।"[3]

डॉ. भगवानदास ने पंचतन्त्र को 'वर्ल्ड क्लासिक' ग्रंथ की संज्ञा देते हुए कहा है कि– "पंचतन्त्र ने न केवल राजकुमारों व सामान्य बालकों को ही उपकृत किया है बल्कि सम्पूर्ण विश्व को नीति एवं लोक व्यवहार के ज्ञान से पुरस्कृत करने का अदम्य साहस किया हैं।"[4] डॉ. मंगलदेव शास्त्री ने पंचतन्त्र की उपयोगिकता सिद्ध करते हुए कहा हैं कि– "यदि कोई भी मनुष्य मन लगाकर एवं सम्यक् परिशीलन पूर्वक पंचतन्त्र का अध्ययन अथवा श्रवण करता है तो वह संसार की समस्त उलझनों को सुलझाने में नैपुण्य प्राप्त कर सकता है।"[5]

लोककथा आश्रित बाल–साहित्य भी संस्कृत में वृहद् रूप से उपलब्ध है। प्रथम शताब्दी में उपलब्ध गुणाढ्य कृत 'बृहत्कथा' (पैशाची प्राकृत में निबद्ध) में भी तत्कालीन समाज की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक एवं आध्यात्मिक इत्यादि समग्र पक्षों का वर्णन मिलता है।

---

1. पंचतन्त्रम्, पं. विष्णु शर्मा, मित्रसम्प्राप्ति, 184–185, पृ.–549
2. पंचतन्त्रम्, पं. विष्णु शर्मा, लब्ध प्रणाश/70, पृ.–849
3. पंचतन्त्रम्, पं. विष्णु शर्मा, अपरीक्षीतकारकम्/38, पृ.–899
4. डॉ. भगवानदास, पंचतन्त्र पर प्राप्त सम्मतियां, शांतिसदन, सिगरा, बनारस
5. मंगलदेव शास्त्री, सन् 1952 ई.

कथासरित्सागर के विषय में पं. केदारनाथ शर्मा सारस्वत का कथन है– "इसमें अद्भूत कथाओं और उनके साहसी प्रेमियों, राजाओं और नगरों, राजतंत्र और षडयंत्र, जादू और टोने, छल–कपट, हत्या–युद्ध, रक्तपायी वेताल–पिशाच–यक्ष–प्रेम–पशु–पक्षियों की सत्य और गढ़ी हुई काल्पनिक कहानियों, भिखमङ्गे साधुओं की कहानियाँ एकत्र हो गई है। इन कहानियों में समाज के सभी वर्गों के जीवन का वर्णन है।"[1]

वस्तुतः बालकथा आधारित लोककथाएं शुद्धतम रूप में श्रोताओं का मनोरंजन करती हैं। साथ ही प्रत्यक्ष–परोक्ष रूप में ज्ञानवर्धन भी करती है। बृहत्कथामंजरी, कथासरित्सागर या बृहत्कथाश्लोकसंग्रह से स्पष्ट हो जाता है कि गुणाढ्य कृत बृहत्कथा का चरमोद्देश्य बालकों का मनोरंजन ही था।[2]

'बृहत्कथा' की नेपालीएवं काश्मीरी वाचनाओं, बृहत्कथामंजरी एवं कथासरित्सागर से ज्ञात होता है कि गुणाढ्य 'प्रतिष्ठान' नामक किसी नगर के'सुप्रतिष्ठित' नामक उप नगर के निवासी रहे हों। जे.एस. स्पेयर गुणाढ्य को कश्मीरी निवासी तथा लगभग चतुर्थ शदी ईस्वी का मानते हैं।[3] किन्तु बलदेव उपाध्याय के अनुसार 'बृहत्कथा' के अमर रचयिता गुणाढ्य सातवाहन राज्य के दरबार से सम्बन्धित कवि थे, जिनका समय प्रथम–द्वितीय शताब्दी रहा था।[4] बृहत्कथा भारतीय साहित्य में अधिक लोकप्रिय रही है। इसकी कथा को आधार बनाकर अनेक नाटक और कथाग्रन्थ सृजित किये गए हैं यथा–दशकुमारचरितम्, कादम्बरी, वासवदत्ता, तिलकमंजरी, यशस्तिलकचम्पू, मृच्छकटिकम्, स्वप्नवासवदत्तम्, विक्रमोर्वशीयम्, पंचतन्त्र एवं हितोपदेश आदि। ये साहित्य सहृदय सामाजिकों के हृदय को संस्कारित एवं परिमार्जित करते हैं।[5]

कथासरित्सागर के विषय में स्वयं कथाकार सोमदेव ने स्पष्ट कहा है कि–**'बृहत्कथायाः सारस्य संग्रह रचयाम्यहम्'।** वस्तुतः मूल बृहत्कथा के कथानक को ही इसमें संग्रहित किया गया है–

यथामूलं तथैवैतन्न मनागप्यतिक्रमः।

ग्रन्थविस्तारेणसङ्क्षेपमात्रं भाषा च भिद्यते।। (कथा. स., 1.1.10)

कथासरित्सागर में विद्यमान कथाओं के अध्ययन से पाठकों को गहन आनन्दानुभूति होती है जिसकी कथावाचन की शैली भी विचित्र है। इन कथाओं के विषय में डॉ. कीथ का कथन है कि– "सोमदेव ने सरल एवं स्वाभाविक रहते हुए आकर्षक और सुन्दर रूप में ऐसी–ऐसी कथाओं की बड़ी

---

1. कथासरित्सागर, पं. सोमदेव, प्रथमखण्ड, भूमिका, पृ.–22
2. संस्कृत में नीतिकथा का उद्गम एवं विकास, पृ.–23
3. Aphorisms and Rwvees in the Katha Saristsagar Introduction
4. संस्कृत साहित्य का इतिहास, पृ.–433
5. भारतीय साहित्य का इतिहास, डॉ. विंटरनित्सकृत, भाग तृतीय, प्रथम खण्ड, पृ. 406–07

भारी संख्या को अभिव्यक्त किया है जो नितरां विभिन्न रूपों में मनोविनोदकारक अथवा भयानक या प्रेम सम्बन्धी या जल और थल के अद्भूत दृश्यों के प्रति हममें अनुराग उत्पन्न करने के लिए आकर्षक अथवा बाल्यकाल की परिचित कहानियों का सादृश्य उपस्थित करने वाले रूपों में हमारे लिए अत्यन्त रुचिकर है।"[1]

कथासरित्सागर के विषय में विन्टरनित्स का कथन है कि– "यह एक ऐसा समुद्र हैं जिसमें कथाओं की सभी नदियों (बालकथा, लोककथा) का संगम होता है एवं नरवाहनदत्त की कथा केवल एक संचिका के रूप में आती है जिसमें सभी प्रकार के स्रोतों से निकलने वाली कथा रूपी नदियाँ एक सागर में गिर जाती हैं।"[2]

संस्कृत कथा जगत् में पचीस कथाओं का संग्रह **'वेतालपंचविंशतिका'** कथाग्रन्थभारत में ही नहीं अपितु सम्पूर्ण विश्वभर के कोने–कोने में फैली एवं जनप्रिय बन गई है। वेतालपंचविंशतिका में विक्रमादित्य एवं बेताल के मध्य प्रश्नात्मक शैली में काल्पनिक कहानियों के माध्यम से ज्ञान प्रदान किया गया है। इन कहानियों में कल्पनाशीलता, सरसता के गुण विद्यमान है जो बालकों के हृदय में आकर्षण उत्पन्न करते है। वेतालपंचविंशतिका के विषय में कथासरित्सागर[3] में वेताल कहता है कि"प्रथम जो चौबीस कथाएँ हैं वे और यह अंतिम पच्चीसवीं कथा ये सभी कथावली जगत् में 'वेतालपचीसी' के नाम से प्रसिद्धि को प्राप्त करेगी, लोग इसका आदर करेंगे और जो इसका एक भी श्लोक पढ़ेगा या सुनेगा, ऐसे दोनों प्रकार के लोग शीघ्र ही पापमुक्त हो जायेंगे। जहाँ ये कथाएं पढ़ी–लिखी सुनी जायेगी, वहाँ यक्ष–वेताल–डाकिनी–राक्षस आदि का प्रभाव भी नहीं रहेगा।"

इसी तरह 'सिंहासनद्वात्रिंशिका' भी एक मनोरंजक एवं लोकप्रिय कथा–संग्रह है। इस कथासंग्रह की अधिकांश कथाएं विक्रमादित्य के जीवन–चरित्र को प्रकट करती हैं। इसमें निबद्ध 32 कथाएं सम्पूर्ण मानवलोक को कृतार्थ करती हैं। इसी तरह 'शुकसप्तति' कथाग्रन्थ में एक सुग्गा द्वारा 70 कथाओं का वाचन करके सहृदयों को श्रवण करवाया जाता है। वस्तुतः इन कथाओं पर वर्तमान में अनेक कार्टून अथवा कॉमिक्स आधारित चलचित्रों का निर्माण किया जा रहा है जो बालकों के मनोरंजन एवं शिक्षा ग्रन्थ के प्रयोजन से निर्मित है।

12वीं शताब्दी में बंगला सम्राट धवलकीर्ति सुदर्शनदेव के मूर्ख पुत्रों को शिक्षित करने के प्रयोजन से पं. नारायण भट्ट द्वारा हितोपदेश कथाग्रन्थ का प्रणयन किया गया। नारायण पण्डित द्वारा चार भागों में निबद्ध हितोपदेश कथाग्रन्थ की प्रासङ्गिकता आज भी महसूस की जाती है। लघु–लघु वाक्यविन्यास एवं सरल–सरस शिक्षाप्रद पद्यों में निबद्ध हितोपदेश सम्पूर्ण सृष्टि–लोक को

1. संस्कृत साहित्य का इतिहास, डॉ. कीथ, पृ. 335
2. भारतीय साहित्य का इतिहास (भाग तृतीय) डॉ. विन्टर नित्स, पृ.–408
3. कथासरित्सागर, सोमदेव, 12.32, पृ.–27–29

राजनीति, व्यवहारनीति, सद्विचार एवं सद्भावना की शिक्षा प्रदान करता है। हितोपदेश के प्रस्तावना भाग में निबद्ध सद्कृतार्थ गुण आज भी बालकों एवं मानव समाज के कल्याण के लिए समर्थ है।[1] डॉ. भीमराज शर्मा ने वर्तमान परिप्रेक्ष्य में हितोपदेश की महत्ता प्रतिपादित करते हुए लिखा है कि– "हितोपदेश में कथाओं के माध्यम से बालकों में उच्च चरित्र के निर्माण के लिए शिक्षा दी गई है। इसका अध्ययन करने वाले बालक निडर और संस्कारवान् बनते हैं।"[2] नारायण पण्डित का कथन है कि बालकों की किसी भी प्रकार से उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। क्योंकि बालक दीपक के समान घर को प्रकाशित करते हैं। मनुष्य को बालक की युक्तियुक्त बातों को सहर्ष स्वीकार करना चाहिए।[3]

वस्तुतः बालसाहित्य के अन्तर्गत परिगणित नीतिकथा एवं मूल्याधारित कथायें बालकों को कान्तासम्मित नैतिक उपदेश एवं मनोरंजन प्रदान करने में पूर्णतया समर्थ है। हितोपदेश की प्रस्तावना में लिखा है कि– "विष्णु शर्मा बृहस्पति के समान नीतिशास्त्र में पारङ्गत था, उसने पटना के सुदर्शन नामक राजा के अनपढ़ एवं व्यसनी बालकों को नीति की शिक्षा प्रदान करके षण्मास में ही नीतिज्ञ बना दिया।"

यह सत्य है कि हितोपदेश के श्रवण मात्र से ही मानव वाणी में पटुता, विचित्रता, संस्कारआदि तत्त्वों का समावेश हो जाता हैं यथा–

"श्रुतो हितोपदेशोऽयं पाटवं संस्कृतोक्तिषु।

वाचां सर्वत्र वैचित्र्यं नीतिविद्यां ददाति च।।" (हितोपदेश/2)

सर्वविदित सत्य है कि अठारहवीं शदी तक जो प्राचीन साहित्य उपलब्ध है वह, बालसाहित्यपरक नहीं कहा जा सकता है किन्तु उसमें बालकों के हितार्थ, सरल–सरस भाषा शैली में शिक्षाप्रद एवं उपदेशात्मक विषय सामग्री अवश्य निहित है।

20वीं शदी के अनन्तर रचित बालसाहित्यपरक रचनाओं में बालकवियों ने समाज के बालक एवं युवावर्ग को केन्द्रबिन्दु मानकर साहित्य सर्जन किया है। 20वीं शदी में लिखित रचनाएं दो स्वरूपों में प्राप्त होती है। प्रथमतः साहित्यकारों ने अपने कथासाहित्य में कुछ कथाएं लघुकथा या कथानिका के रूप में बालमानस पटल को ध्यान में रखते हुए संग्रहित की हैं। सर्वप्रथम अत्यल्प बाल–कथाओं की रचना करने वाले लेखकों में पं. अम्बिकादत्त व्यास द्वारा 'रत्नाष्टकम्' काव्य की

---

1. हितोपदेश, नारायण पण्डित, प्रस्तावना भाग, पृ.–5–7
2. हितोपदेश, नारायण पण्डित, अनुवादक डॉ. भीमराज शर्मा, हंसा प्रकाशन
   "यन्नवे भाजने लग्नः संस्कारो नान्यथा भवेत्।
   कथाच्छलेन बालानां नीतिस्तदिह कथ्यते।।"
3. हितोपदेश, नारायण पण्डित, प्रस्तावना भाग
   "बालोऽपि गृहीतव्यं युक्तयुक्तं मनीषिभिः।
   स्वेरविषये किं न प्रदीपस्य प्रकाशनम्।।"

रचना की गई। अनन्तर वेंकेटरामशास्त्री प्रणीत **'कथाशतकम्'** (भारतीय कथाओं का अनुवादक 1898 ई.), अम्बिकादत्त व्यास प्रणीत 'कथाकुसुमकम्' (1898 ई.), अप्पाशास्त्री रावेड़कर प्रणीत 'कथाकल्पद्रुम' (1900 ई.), वेंकटरमण प्रणीत, 'कथावली नाटक' (1900 ई.), अनन्ताचार्य कोडम्बरम् प्रणीत **'कथामंजरी'** म. शामशास्त्री प्रणीत'कथासप्तति' (1904 ई.) इत्यादि कथासंग्रहों में लघु–लघु बालकथाएं प्राप्त होती हैं।[1]

किन्तु दूसरी और कुछ साहित्यकारों ने स्वातन्त्र्योत्तरकाल में स्वतंत्र रूप से बालसाहित्य का सर्जन किया है। इस काल के साहित्यकारों ने विभिन्न प्रकार की आधुनिक विधाओं यथा उपन्यास, लघुकथा, कथानिका, गीत, कविता, लघुनाटक एकांकी, बालनाटिका, कहानी एवं अनूदित तथा पत्र–पत्रिका इत्यादि विधाओं में प्रचुर मात्रा में बालसाहित्य का सर्जन किया है। स्वतंत्रता के पश्चात् बाल–साहित्य की सर्जना करने वाले लेखकों में पं. वासुदेव दीक्षित, दिगम्बर महापात्र, डॉ. केशवचन्द्र दास, प्रो. अभिराजराजेन्द्र मिश्र, डॉ. रामकिशोर मिश्र, डॉ. ओ.पी. ठाकुर, डॉ. विश्वास, प्रो. जनार्दन हेगड़े, डॉ. सम्पदानन्द मिश्र, पूजा उपाध्याय, ऋषिराज जानी प्रभृति काव्यकार परिगणित हैं।

≈≈≈≈

1. कथानकवल्ली आमुखम्, देवर्षिकलानाथ शास्त्री, पृ. 11–12

द्वितीय अध्याय

संस्कृत साहित्य में बाल–साहित्यपरक

काव्य एवं काव्यकार

(संक्षिप्त परिचय)

द्वितीय अध्याय

संस्कृत साहित्य में बाल–साहित्यपरक काव्य एवं काव्यकार

(संक्षिप्त परिचय)

अखिल ब्रह्मण्ड को अपनी ज्ञानराशि से आलोकित, आलोडित एवं अभिभूत करने वाली संस्कृत वाङ्मय की अजस्र धारा वैदिक ऋचाओं से प्रारम्भ होकर अनेक सोपानों को पार करते हुए अद्यावधि अविरल रूप से प्रवाहमान है। संस्कृत साहित्य एवं संस्कृत भाषा सम्पूर्ण विश्ववाङ्मय को अपने अन्दर समेटे हुए है। संस्कृत साहित्य के मान्य गणना काल के अनुसार आदिकाल से लेकर 16वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तक के काल को संस्कृत विद्वानों ने 'प्राचीन काल' के रूप में स्वीकार किया है। 17वीं शदी में पण्डितराज जगन्नाथ के बाद के समय से लेकर वर्तमान तक का काल 'आधुनिक संस्कृत साहित्य' के अन्तर्गत परिगणित है। यद्यपि काल–प्रवाह की दृष्टि से भले ही हम काव्य को अतीत, भविष्य एवं वर्तमान (आधुनिक) भेदों में कल्पित कर ले किंतु जो शाश्वत तत्त्व है, वह कभी बदलता नहीं है। काव्य तो कूटस्थ, शाश्वत एवं चिरन्तन होता हैं। प्रत्येक कवि अपने जीवन–काल में आधुनिक तो होता ही है। अतः बाल–साहित्य के क्षेत्र में भले ही पं. विष्णु शर्मा, नारायण पण्डित, पं. सोमदेव प्रभृति विद्वान् प्राचीनता की कसौटी में विराजित हो, किन्तु आज भी बालकों के लिए पंचतंत्र प्रभृति ग्रंथ बालकों का उपकार करने वाली कामधेनू के समान जीवन्त है।

आधुनिक काल अथवा अर्वाचीन संस्कृत के काल निर्धारण को लेकर संस्कृत विद्वानों में मत वैविध्य विद्यमान है। किन्तु काल निर्धारण करते समय यह विचार भी परमावश्यक और चिन्तनीय है कि जब विद्वानों के द्वारा हमारे प्राचीन साहित्य में ज्ञान के समस्त विषयों का प्रतिपादन किया जा चुका है तो उन्हें आज सहित्य सर्जन की आवश्यकता क्यों और कैसी? इसका उत्तर है कि प्रत्येक युग के अनुरूप साहित्य में किंचित् परिवर्तन, संशोधन, किंवा परिमार्जन की आवश्यकता हुआ करती है। अथवा उस साहित्य के विस्तार को ज्ञान संवर्धन की दृष्टि से लेखक आगे अग्रेसित करता है। इसलिए प्रत्येक युग का साहित्य एक कालावधि विशेष तक अपने युग का अधुनातन साहित्य कहलाता है।

संस्कृत–साहित्य का सर्जन काव्यों–सामाजिकों–पाठकों के रसास्वादन एवं आह्लादन हेतु किया गया है। आधुनिक–बाल–साहित्य का सर्जन बालकों के नैतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक, संवेदनात्मक एवं मानसिक विकास हेतु किया गया है। वस्तुतः आधुनिक संस्कृत बालसाहित्यकार

बालकों के **हृदयमण्डल** को सम्यक् रूप से आलोकित करने के बाद सर्वदा चिंतन मनन करने के अनन्तर ही बाल–हितार्थ मनोरंजक एवं उपदेशात्मक साहित्य सृजित करने में सक्षम हो पाया है। बाल–साहित्यकार के बालकाव्य रचना का मुख्य प्रयोजन भी कोमल बुद्धिस्थ बालकों के जीवन को संस्कारित एवं परिमार्जित करना है। वह कान्तासम्मित एवं मित्रसम्मत काव्यरचना कर्म में संलग्न होकर बालकों को आनन्दित एवं उपदेशित करता है। वर्तमान में साहित्यकारों द्वारा जो बाल–साहित्य का लेखन कार्य किया जा रहा है उसका प्रयोजन उन सामान्य बालकों को शिक्षा प्रदान करना है जो न तो राजकुमार हैं न ही विद्वज्जनपुत्र हैं। अपितु सामान्य, अबोध, निर्धन, अज्ञ बालक है जिनको अच्छा साहित्य भी पढ़ने को प्राप्त नहीं होता है।

सनातन कवि रहसबिहारी द्विवेदी ने 'काव्यालंकारकारिका' ग्रंथ में काव्यरचना का प्रयोजन प्रतिपादित किया है। जिनमें आधुनिक विषयों को लेकर काव्य रचना का महत्त्व प्रतिपादित है–

"कविकीर्तिपुरस्कारस्वान्तःसुखसमीहया।
प्राक्कथावस्तुसंस्कारं सतां च चरितार्थनम्।।
नव्यकाव्यविद्योन्मेषं व्यङ्ग्योक्तिं विकृतौ तथा।
राष्ट्रभक्तिं युगौचित्यं पर्यावरणचेतनाम्।।
राष्ट्रस्वातन्त्र्यवीराणां चरितं चाराध्यमीश्वरम्।
समुद्दिश्याधुना काव्यं कुर्वन्ति कवितल्लजाः।।"[1]

निश्चित ही आधुनिक बाल–साहित्यकारों ने उपर्युक्त तत्त्वों को अन्तश्चेतना में स्थापित करके ही बालहितार्थ काव्य–निर्माण का सुप्रयास किया है। ऐसा प्रतीत होता है कि 20वीं सदी में संस्कृत वाङ्मय में विविध नवीन काव्य विधाओं का प्रार्दुभाव हुआ है जिसमें बालसाहित्य के अन्तर्गत बालकथा, बाल–एकांकी, बालोपन्यास, बालगीत, बाल–आत्मकथा एवं बाल–प्रहेलिका इत्यादि विधाएं प्रमुख हैं। आधुनिक काल के काव्यकारों ने काव्य–निर्माण की प्राचीन लेखन पद्धति के साथ ही आधुनिक बाल–साहित्य की पद्धति का जो अनुसरण किया है, वह सर्वदा अविस्मरणीय रहेगा।

इसलिए आधुनिक बाल–साहित्य के मनीषी आचार्यों का परिचय प्राप्त करना शोध हेतु अत्यन्त आवश्यक है। दृक् पत्रिका के 27–28वें षा. मासिक अंक के अध्ययन से पता चलता है कि आधुनिक संस्कृत साहित्य में बाल–साहित्य लेखन का श्लाघनीय प्रयास सर्वप्रथम उत्कल निवासी पं. वासुदेव दीक्षित एवं दिगम्बर महापात्र द्वारा लिखित साहित्य से माना गया है। पं. वासुदेव दीक्षित द्वारा लिखित 'बालमनोरमा (1948 ई.) काव्य' बालमनोविज्ञान को मस्तिष्क में रखकर सृजित किया गया है। दिगम्बर महापात्र द्वारा प्रणीत रङ्गरुचिरम् (1983 ई. पृ. 140) एवं ललितलवङ्गम्

---

1. काव्यालंकारकारिका, रहसबिहारी द्विवेदी, काव्य प्रयोजन

बालकाव्यविविध भावपरक, सरल गीतिच्छन्दों के साथ–साथ ही विविध शब्दालंकारों से युक्त एवं बालमनोऽनुकूल तत्त्वों से युक्त है। बाल–काव्य लेखन की इस पवित्र परम्परा में त्रिवेणी कवि अभिराजराजेन्द्र मिश्र का नाम भी आदर से लिया जाता हैं। प्रो. मिश्र द्वारा 'पंचतन्त्र' को नवीन कलेवर युक्त **'अभिनवपंचतन्त्रम्'** के रूप में प्रस्तुत करने का जो साहसिक प्रयास किया गया है वह निश्चित ही बालकाव्य एवं बालकों के लिए बहुत श्लाघनीय है। अभिनवपंचतन्त्रम्' काव्य में पंचतन्त्र की कथाओं में प्रयुक्त पशु–पक्षी पात्रों के स्थान पर समाज में निवासरत निम्न श्रेणी के बालकों को कहानियों के माध्यम से नीति एवं नैतिक मूल्यों की शिक्षा दी गई है। प्रो. मिश्र जी के द्वितीय बालकाव्य 'कौमारम्' (2000 ई., 52 शिशु गीत) में सरल–सरस बालोऽनुकूल भाषा में विभिन्न प्राकृतिक दृश्यों–वन, मृदा, नदी, वर्षा का काव्यमय वर्णन उपलब्ध होता है। साथ ही चराचर जगत् को भी कविता के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है।

बालकाव्य निर्माण की इसी परम्परा में डॉ. रामकिशोर मिश्र, आचार्य पद्मशास्त्री, डॉ. केशवचन्द्रदाश, डॉ. विश्वास, प्रो. जनार्दन हेगड़े, सुकान्तकुमारसेनापति, डॉ. सम्पदानन्द मिश्र, डॉ. पूजा उपाध्याय, प्रो. गोपबन्धु मिश्र, ऋषिराज जानी, राजकुमार मिश्र, भरत भूषण रथ प्रभृति विद्वानों का नाम आदर से लिया जाता है। प्रस्तुत शोध अध्याय में बालसाहित्यकारों एवं बालकाव्यों का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया जा रहा है।

आचार्य वासुदेव दीक्षित

"देववाण्या यदा देशे ग्लानिर्भवति भारते।
अभ्युत्थानमभाषाणां तदात्मानं सृजत्ययम्।।
संस्कृतस्य विकासाय संस्कृतेः रक्षणाय च।
वासुदेवो गुरुर्धीमान् संस्कृतोद्धारमानसः।।"

लोक में स्मरणीय एवं पूजनीय गुरुवर वासुदेव दीक्षित का जन्म भारतवर्ष के उत्तरप्रदेश प्रान्त के देवरिया जनपद के भवानीछापर ग्राम में 1970 विक्रमी फाल्गुन शुक्ल पक्ष की एकादशी तिथि, रविवार (सन् 1914 ई.) को विद्वान यमुनाप्रसाद द्विवेदी की भार्या पवधारी देवी की गोद से पुत्ररत्न की प्राप्ति के रूप में हुआ था, यथा–

"देव्येषा पवधारिनामजननी या देवकीवोद्भुता।
सप्तत्युत्तर ऊनविंशतिके संवत्सरे वैक्रमे।
नक्षत्रेददभुतपुष्यके धनुषि सा शुक्ले रवौ फाल्गुनौ।
रात्रौ पुत्रमजीजनच्छुभतिथौ चैकादशीपर्वणि।।"

बाल्यकाल से ही मृदुस्वभाव युक्त गुरुदेव वासुदेव दीक्षित पिता के साथ यात्रा भ्रमण करते थे। नवोन्मेषशालिनीप्रतिभा एवं प्रत्युत्पन्न मति से युक्त दीक्षित जी सरल व्यवहार, विनम्रता, सहृय, मृदुभाषी इत्यादि गुणों से युक्त थे, जैसाकि उपन्यास **'हा हन्त'** में उल्लेखित है–

"असौ हि गुरुवासुदेवः संस्कृतभाषाप्रचारैकरसेप्सुरपि सर्वरसास्वादकुशलः कृशशरीरोऽपि गीर्वाणवाणीसमुन्नयने कनकभूधराकारशरीरः बहुभाषाज्ञोऽपि मितभाषी मुक्तकोषागारोऽपि गृहीतावश्यकवितमात्रापरकौत्सः, अकृष्णोऽपि कृष्णकान्तोपेतः,अरागोऽपि कमलारागान्वितः, भारतीनिवासस्थलोऽपि श्रीनिवासाश्रयः,कृष्णपक्षेऽपि निसचरणीकृतशरदिन्दुः, अनभिलिषितमदनार–विन्दोऽपि अरविन्दसेवासन्तुष्टः, अशैलहृदयोऽपि शैलेशगुणसमाकृष्टमानसः, श्रद्धेयो गुरुवासुदेवाद्विवेदी शास्त्री काश्याभूषणभूतः सम्मतः।।"[1]

वस्तुतः बालक व्याकरण के कठिन नियमों से सर्वथा शून्य होते हैं। वह शकुन्तपक्षी के समान मनोहर, ज्ञानप्रद एवं चमत्काराधायक बालसाहित्य के अवबोधन में ही सक्षम हो सकते हैं। बालसाहित्य के क्षेत्र में पं. वासुदेव द्विवेदी द्वारा जनवरी प्रथम, 1969 ई. को प्रथम बालसाहित्य सम्मेलन का आयोजन करवाया गया।

यह सर्वविदित है कि गुरुवर वासुदेव द्विवेदी जी ने बालकों को संस्कृत भाषा के अवबोध एवं ज्ञानार्थ हेतु **वृहत्**मात्रा में बालसाहित्य की रचना की है जो संक्षेप में है–

1. बालसंस्कृतम् – वस्तुतः इस कृति में बालकों के मानस पटल एवं कोमल बुद्धि को ध्यान में रखते हुए साहित्य सृजित किया है। इसमें सभी लकारों एवं कारकों को हिन्दी–संस्कृत वाक्यों के माध्यम से तुकबन्दी शैली में गुम्फित किया गया है। इस ग्रंथ के अध्ययन से बालक संस्कृत के क्षेत्र में प्रविष्ट हो सकेंगे।
2. बालनिबन्ध माला – इस कृति में कवि ने सरल एवं ललित शैली में मनोहारी निबन्धों का संकलन किया है।
3. बालनाटकम् – आचार्य वासुदेव द्विवेदी के दर्शनीय नाटक सम्पूर्ण जगत् का उपकार करने में समर्थ है। द्विवेदी जी ने 10 लघु एवं सरल बालचरित्र आधारित नाटकों की रचना की है जिनको पढ़कर बालक नायक बन सकते हैं। 'दधिचौर्यम्' नाटक के अंश उद्धृत है–
   "गोपी–(कुपिता भूत्वा) आः अनेन बालकेन वयं नितान्तं व्याकुलाः जाताः स्म। एकस्मिन् गेहे गत्वा क्षीरं पिबति। अन्यस्मिन् गेहे गत्वा दधि भक्षयति। अपरस्मिन् गेहे गत्वा नवनीतं गृह्णाति। अन्यस्मिन् गेहे गत्वा पायसं भुङ्क्ते। इतरस्मिन् गेहे गत्वा तक्रघटं प्रलोकते। कदाचित् शिक्यस्थितं भाण्डमवतारयति।"[2]
4. बालविनोदमाला – प्रस्तुत बालसाहित्य में बालकों के लिए मनोरंजनपूर्ण कविता उपलब्ध हैं।
5. बालसुभाषितम् – यहाँ द्विवेदी जी द्वारा बालकों के लिए प्रणीत शिक्षाप्रद श्लोक अनुवाद सहित प्राप्त होते हैं।

---

1. 'हा हन्त उपन्यासः' (तृतीयोच्छवासः) डॉ. अरविन्द कुमार तिवारी
2. बालनाटकम्

6. वर्णमालागीतावलि – यहाँ संस्कृत शब्द एवं क्रियाएँ, लयबद्ध तथा वर्णमाला के अनुसार संकलित किए गए है।

7. बालशब्दकोशः – यहाँ सूक्ष्मबुद्धि सम्पन्न गुरुजी द्वारा तुकबन्दी शैली में हिन्दी संस्कृत शब्दकोश का प्रणयन किया गया है जो बालकों के लिए रोचनीय हैं।

8. बालकथामाला – यहाँ सन्धि–समास से रहित 16 कथाएं निबद्ध हैं जो सुन्दर शकुन्तला की सौन्दर्यराशि के समान सुकवियों को आकर्षित करती हैं। भाषाशैली भी बालकों के अनुरूप सुललित हैं यथा–

   "इतः तस्मिन् एव समये श्रवणकुमारस्य मातापितरौ पिपासितौ जातौ। तदा स तयोः पिपासाशमनार्थं वारि आनेतुं तमसायाः तटं जगाम। तदा स यदा जलाभ्यन्तरे प्रविष्टः जलपात्रं भर्तुं लग्नः तदा जले बुडबुडध्वनिः समुत्पन्नः। तं ध्वनिं श्रुत्वा दशरथः ज्ञातवान् यत कश्चित् जलं पिबन् अस्ति।"[1]

9. बालकवितावलिः प्रथम भागः –'बालकवितावलि' बाल–साहित्य दो भागों में गुम्फित है, जिसका हिन्दी नाम हैं– 'हंसते खेलते संस्कृतम्'। इस बाल–साहित्य पुस्तक में आधुनिक छन्दों में निबद्ध बालकों के लिए उपयोगी एवं सरल–सरस मधुर शैली में संस्कृत कविताएं उपलब्ध हैं, जिनका पाठ सुनकर पाँच वर्ष का बालक भी प्रसन्न होकर नाचने लगता है। इस पुस्तक की प्रस्तावना में लिखा हुआ है। कि– "इयं सर्वथा नवीना चेतोहरा प्रथमा रचना वर्तते। अत्र नामानुरूपमेव विना परिश्रमं मनोरंजनेन साकं बालाः संस्कृतं जानीयुरिति धिया हंसते–खेलते संस्कृतं शिक्षेरन् इति दृष्ट्या एतादृश्यः रचनाः कृताः, यत्र पूर्व संस्कृतवाक्यानि सन्ति तदनु तेषां तथैवानुवादोऽपि वर्तते।"[2]

बालकवितावलि द्वितीय भाग –इस भाग में मनोहारी एवं नवीन बालोपयोगी लयबद्ध गीत संकलित है। यथा–

"सर् सर् सर् वहति समीरः
झर्झर्झंझाकालः।
घर् घर् वर्षति घनमाला
टप् टप् बिन्दुनिपातः।"[3]

अतः आचार्य वासुदेव द्विवेदी की दृष्टि अपूर्व है। पहले वह मनोरंजनपूर्वक बालकों को संस्कृत की शिक्षा देते हैं अनन्तर धीरे–धीरे सभी को उपदेश देते हैं।

---

1. बालकथामाला
2. बालकवितावलिः प्रथमभागस्य आवश्यकनिवेदनरूपप्रस्तावनांशः
3. बालकवितावलि द्वितीय भाग

आचार्य दिगम्बर महापात्र

उत्कल प्रदेश (उड़ीसा) में जन्मे पण्डित प्रवर आचार्य दिगम्बर महापात्र जी का काव्यजगत् में प्रायोगिक संस्कृत क्षेत्र से लगाकर शिशु साहित्य निर्माण तक में अमूल्य योगदान रहा है। आचार्य जी का जन्म ओडिशा प्रान्त की सांस्कृतिक राजधानी 'कटक' में पुराणापाणि नामक ग्राम में 5 जनवरी 1938 ई. को हुआ। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा–दीक्षा ग्राम में ही सम्पन्न हुई। उच्च शिक्षा हेतु आपने उत्कल विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया, जहां से 1968 ई. में आपने एम.ए. संस्कृत की परीक्षा उत्तीर्ण की। बाल–साहित्य के क्षेत्र में आपकी दो रचनाएं प्राप्त होती हैं– 'रङ्गरुचिरम्' एवं 'ललितलवङ्गम्'। इसमें से 'ललितलवङ्गम्' बालकाव्य हेतु आपको 2003 ई. में दिल्ली स्थित संस्कृत साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया। पं. महापात्र जी ने भारतीय दर्शन, योग आदि विषय पर भी अनेक काव्यों का निर्माण किया है।

1. **'रङ्गरुचिरम्'**– प्रस्तुत बालसाहित्य में बालोपयोगी एवं सरल–सरस शैली में 44 कविताओं का संकलन है। यह काव्य उपदेश प्रदान करने के साथ–साथ उद्बोधक गुणों से बालकों को सत्कार्यों हेतु भी प्रेरित करता है। यथा–

"सत्यं वद प्राणपणेन पुत्र! धर्मं चर त्वं भव मातृदेवः।
सम्मानयेमान्यजनानजस्रम् मुदा च सन्मार्गमनुप्रयाहि।।
हे प्रजामयि! हे पुण्यमयि! शक्तिमत्यसि भक्तिमयि धेहि।
कीर्तिमत्यसि, कीर्तिमयि धेहि, बुद्धिमत्यसि मयि धेहि।।"[1]

प्रस्तुत कविता सङ्ग्रह में बालपटलोऽनुकूल अनुरणनात्मक, गेयात्मक, अन्त्यानुप्रासयुक्त, शब्दानुकरणात्मक पदों का प्रयोग किया गया है यथा–

शकटः वदति कें कें छागो वदति में में,
ओतुर्वदति म्याऊँ म्याऊँ, बालः क्रन्दति क्याऊँ क्याऊँ।।[2]

इसी तरह व्याकरण रहित बाल–कविताएं बालकों का मनोरंजन करने के साथ–साथ शैक्षिक महत्त्व भी रखती हैं–

विडालः पिबति क्षीरम्।
बालकौ पिबतौ नारिकेलरसम्।

---

1. 'रङ्गरुचिरम्', पृ.–96
2. 'रङ्गरुचिरम्', पृ.–34

धेनवः पिबन्ति जलम्।

वानरो वसति तरौ, हरिणी वने वसतः।

भल्ला वसन्ति गिरौ।[1]

2. **ललितलवङ्गम् (2001 ई.)** –यह बालकाव्य दो परतों में विभक्त हैं। जिसमें 20+21=41 कविताओं का संकलन है। कवि ने प्रस्तुत काव्य में विविध भावसघन, सरलगीतिच्छन्दों के साथ ही विविध शब्दालंकारों से युक्त, बालक–मनोऽनुकूल भाषा का प्रयोग किया गया है। यहां ईश्वरभक्ति, राष्ट्रीय भावना, सदाचार, संस्कृत–संस्कृति–प्रीति और सुन्दर प्रकृति आदि प्रमुख वर्ण्य विषयों को प्रस्तुत किया गया है। अन्त्यानुप्रास का सरस उदाहरण उल्लेखित हैं–

"उपरि व्याप्तं नीलं गगनम्। अधस्तृणानां तल्पम्।

मध्ये स्वभावमधुरं रम्यम्। शिशोः सुहास्यं स्वल्पम्।।"

शब्दानुकरण का सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत है–

मन्दं मन्दं वर्षति जलदः कल–कल–नादैः वहन्ति नद्यः।

टर–टर–शब्दं कुरुते भेकः अथवा केन क्रियते शोकः।।[2]

अतः आचार्य दिगम्बर महापात्र जी द्वारा प्रणीत बालकाव्य वर्तमान में रसपिपासु बाल पाठकों को रसास्वादन करवाने में पूर्णतः सफल रहे हैं।

डॉ. रामकिशोर मिश्र

आधुनिक संस्कृत रचनाकारों में विद्वन्मणि आचार्य डॉ. रामकिशोर मिश्र का नाम बाल–साहित्यकार के साथ–साथ महाकाव्यकार, नाटककार, उपन्यासकार के रूप में भी लिया जाता है। डॉ. मिश्र का जन्म उत्तरप्रदेश राज्य के सोरों शूकर क्षेत्र में एटा जिले में सन् 25 फरवरी 1939 ई. को भारद्वाज ब्राह्मण गोत्र में होतीलाल–कलावती की सन्तान के रूप में हुआ।

उत्तरप्रदेश सरकार द्वारा प्रदत्त वाल्मीकि सम्मान प्राप्त आचार्य मिश्र की लेखनी बाल–साहित्य के साथ–साथ सभी विधाओं में अग्रेसित है। आचार्य मिश्र जी की बाल–साहित्य साधना में निम्नांकित काव्य है–

(क) चरित्र–चित्रण प्रधान काव्य – बालचरितम् (1981 ई.)

(ख) उपदेशात्मक बालकाव्य – बालनाट्यसौरभम् (1994 ई.)

---

1. 'रङ्गरुचिरम्', पृ.–52
2. ललितलवङ्गम्, पृ.–5

(ग) शिक्षणात्मक बालकाव्य – बालशिक्षणम्, बालवीरम्, बालकवितावलि

बालगीतम्, अष्टोक्तिशतकम् (सम्पूर्ण काव्य सन् 2001 ई. में प्रकाशित हुए है।

1. **बालचरितम् (1981 ई.)** –इस बालकाव्य में कवि द्वारा 231 पद्यों में अपने पुत्र राजेश के एकवर्षीय जीवनकाल में घटित विभिन्न संवेगात्मक, मनोवृत्यात्मक एवं विकासात्मक (शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक) परिवर्तनों को काव्यमय शैली में निबद्ध किया गया है। कवि अपने पुत्र के चरित्र वर्णन को श्रीकृष्ण जन्म वर्णन के समान चित्रित करता है–

दृष्ट्वैकवर्षदेश्यं राजेशं श्रीकृष्णसमं तनयन्।
तद्बालक्रोडाभं प्रणीतमेतद् बालचरितम्।।[1]

2. **बालतरङ्गिनी** –उल्लेखित काव्य में कवि द्वारा आत्मीय पुत्र राजेश को सर्वप्रथम वीणावादिनी सरस्वती की चरण वन्दना का फल प्रतिपादित करने के अनन्तर संस्कृत भाषा का शिक्षण रूपी ज्ञान प्रदान किया गया है। इस काव्य में छन्दोबद्ध एवं तुकबन्दी शैली में बालकों को शब्द रूप, धातु–सन्धि, वर्णमाला इत्यादि व्याकरण का ज्ञान प्रदान किया गया है।
3. **अष्टोक्तिशतकम्** –इस काव्य में कवि द्वारा बालकों को सरल–सरस एवं व्याकरण रहित पद्यात्मक शैली में आठ प्रकार के प्राणियों की वाणी से परिचित करवाया गया है। यथा–

गजोक्ति–

भ्रमतैकदा तेन विलोकितैका,
क्षितिभुक्चमूर्धावनकर्म कृत्वा।
विपिने तदा व्याकुलता च तस्मै
निजशब्दसंघैस्त्वरितं प्रदत्ता।।[2]

4. **बालनाट्यसौरभम् (बालनाटक)** –इस नाटक संग्रह में कवि द्वारा महाभारत के कथानक पर आधारित छः बालनाटकों का संकलन किया गया है। सम्पूर्ण नाटकों का मुख्य प्रयोजन सरल एवं रमणीय शैली में बालकों को परोपकार, कर्त्तव्य, ईश्वरभक्ति, मातृ–पितृ भक्ति, कीर्तिपरायणता, एवं नैतिकता के सन्मूल्यों को आत्मसात् करने हेतु प्रेरित किया गया है। वस्तुतः नाट्यग्रन्थ में संकलित अंगुष्ठदानम्, सहसा विदधित न क्रियाम्, ध्रुवम्, अभिशप्त

---

1. बालचरितम्, श्लोक–231, पृ.–64
2. अष्टोक्तिशतकम्, श्लोक 62, पृष्ठ, 14

दशरथः, चण्डप्रतिज्ञानम्, कचदेवयानीयं इत्यादि नाटकों का मुख्य उद्देश्य बालकों को सन्मार्ग पर अग्रसर करना एवं सहृदय सामाजिकों का हृदयाकर्षण करना हैं।[1]

अतः डॉ. रामकिशोर मिश्र के बालकाव्यों में सभी अवस्था युक्त बालकों की क्रीडाभिव्यक्ति होती है। **'बालकवितावलिः'** काव्य में कवि पद्यात्मक शैली में बालकों को परब्रह्म के स्वरूप का साक्षात्कार करवाता है।

अतः उपर्युक्त बालकाव्यों के संक्षिप्त परिशीलन से भी डॉ. रामकिशोर मिश्र को एक सफल बाल–साहित्यकार के रूप में सिद्ध किया जा सकता है।

प्रो. अभिराज राजेन्द्र मिश्र (त्रिवेणी कवि)

अर्वाचीन संस्कृत साहित्य में काव्य, नाटक, कथा, गीत, बालसाहित्य एवं समीक्षात्मक काव्य ग्रन्थों का सर्जन करने से साहित्यरूपी समाज में सम्मान एवं प्रतिष्ठा प्राप्त करने वाले प्रो. अभिराजराजेन्द्र मिश्र धीर–गम्भीर और सुर–भारती के पावन भवन के विलासश्री हैं। अर्वाचीन संस्कृत बाल–काव्य रसिकजनों के **हृदय** सिंहासन पर विराजमान प्रो. मिश्र जी के चिन्तन दर्शन को शब्द सीमा में समेटना मेरे लिए 'उडुपेनसागरतरणसदृश' दुष्कर कार्य हैं।

आधुनिक संस्कृत साहित्य में उद्भावित–बालसाहित्य विधा के अग्रिम पुरोधा प्रो. मिश्र जी का जन्म महापौष कृष्णपक्ष की नवमी (शनिवार) विक्रम संवत् 1999 (2 जनवरी 1943 ई.) को उत्तरप्रदेश राज्य के जौनपुर जनपद में सेई नदी के तट पर बसे द्रोणपुर नामक ग्राम में हुआ था।[2] त्रिवेणी कवि के विरुद् से विभूषित एवं 'अभिराज' उपाधि से अलंकृत कवि राजेन्द्र मिश्र पं. दुर्गाप्रसादमिश्र एवं अभिराजी देवी की मध्यम सन्तान थे।[3] कवि ने 'अभिराज' शब्द उपनाम माँ के ममत्व के कारण ग्रहण किया है। नाट्यकृति 'पंचगव्यम्' में कवि ने स्वयं उल्लेख किया है–

"अभिराजी नाम्नासि जननि तस्मादऽहमप्यभिराजः।
त्वमसि मदर्थं यमुना–गङ्गा–भरत धराचलराजः।।"[4]

प्रो. मिश्र जी की प्रारम्भिक शिक्षा द्रोणपुर गाँव के प्राथमिक विद्यालय में ही सम्पन्न हुई। आपने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से 1962 ई. में स्नातक, 1964 ई. में स्नात्तकोत्तर (संस्कृत) तथा 1966 ई. में डी.लिट् की उपाधि प्राप्त की।

1. बालनाट्यसौरभम्, प्राक्कथन भाग
2. प्रो. अभिराजराजेन्द्र मिश्र द्वारा प्रेषित आत्मजीवनी में से उद्धृत
3. नाट्यनवग्रहम् ईश्वरान्वेषणम्, पृ.–1
4. नाट्यपंचगव्यम्–व्यक्तित्व एवं कृतित्व, पृ.–79

बाल–आकर्षण, सौम्य, शालीन विनोदक, काव्य–नाट्य में प्रवीण त्रिवेणी कवि प्रो. अभिराज राजेन्द्र मिश्र के बहुमुखी व्यक्तित्व का प्रस्तुत शोध में मेरे द्वारा केवल स्पर्श मात्र करने का तुच्छ प्रयास किया है। 'त्रिवेणी कवि' ने संस्कृत की प्राचीन शैली में निबद्ध महाकाव्य, नाटक, कथा, आख्यायिका एवं खण्डकाव्य इत्यादि विधाओं से लेकर आधुनिक काल–पर्यन्त उद्भावित एवं पोषित कथा, कथानिका, एकांकी, उपन्यास, लघुनाटक, गीत, कविता एवंबाल–साहित्य नामक नवीन विधाओं में भी स्वलेखनी अग्रेषित की है। मिश्रजी की बाल काव्य–रचना का संक्षिप्त परिचय निम्नलिखित है–

1. **कौमारम् (51 शिशुगीतानि, 2000 ई.)** – आपके द्वारा लिखित 'कौमारम्' एक शिशुगीत काव्य हैं। इसमें अल्पवयस्क बालकों में प्रो. मिश्र जी द्वारा स्वतंत्र रूप से 52 शिशु कविताओं का संग्रह किया गया है। यह कविताएं बच्चों के विकासोन्मुख जीवन क्रम में उत्तरोत्तर विकास की सूचक है। इन कविताओं के विषय हैं– ईश्वर वन्दना, परिवार, माता–पिता, विद्यालय, परिवेश ज्ञान (ग्राम, नदी, बाग, रेलगाड़ी) विभिन्न प्रकार के अनुभव (तितली, मधुमक्खी, चींटी, आकांक्षा, स्वप्नानुभव आदि) तथा विभिन्न प्रकार के त्योहारों का अवबोधात्मक ज्ञान भी यहाँ उपलब्ध है।

   वस्तुतः इन कविताओं में लयमाधुरी एवं शैक्षिक ज्ञान, दोनों ही उपलब्ध हैं।

2. **नाट्यनवग्रहम्** –त्रिवेणी कवि द्वारा विरचित प्रस्तुत ग्रंथ में शिशुजनोपयोगी एवं महाभारत के कथानक पर आधारित सात लघुनाटकों–ईश्वरान्वेषणम्, गुरुदक्षिणा, दास्यमुक्ति, श्वेतोद्धार, सत्यकामजाबाल, रत्नप्रत्यभिज्ञानम्, तथा नामकरणम् आदि एकांकी नाटकों में पौराणिक आख्यानों को नवीन कलेवर में प्रस्तुत किया गया है। प्रो. मिश्र का कथन है कि यह लघु एकांकी नाटक सुकुमार–मति युक्त छात्र–छात्राओं का मार्गदर्शन एवं मनोरंजन करने में सफल सिद्ध होंगे। यह एकांकी–सुखाभिनेय तथा शिक्षाप्रद हैं।

3. **अभिनवपंचतन्त्रम् (कथाग्रन्थ)** –प्रस्तुत ग्रंथ का व्युत्पत्तिपरक अर्थ हैं 'अभिनव' पद पुल्लिंग में 'अभि' उपसर्गपूर्वक नु भावे अण् प्रत्यय करने पर निष्पन्न हुआ है जिसका शाब्दिक अर्थ हैं–नूतनः।[1] प्रो. मिश्र द्वारा प्रायोगिक 'अभिनव' पद का तात्पर्य हैं– नवीन कलेवर, नया परिवेश, वर्तमान इत्यादि। यहाँ प्रो. मिश्र द्वारा 'पंचतन्त्र' को अभिनव कलेवर में अभिव्यक्त करने का सार्थक प्रयास किया गया है। यहाँ कवि द्वारा 'पंचतन्त्र' की कथाओं को इतिहास के गहवर से निकालकार मानवेतर पात्रों के साथ–साथ मानव पात्रों के माध्यम से बालकों को नीति एवं लोकव्यवहार का बहुमूल्य ज्ञान प्रदान किया गया है, साथ ही बाल–साहित्य

---

1. अमरकोषः, 3/1/77/2/2

की वर्तमान परिप्रेक्ष्य में दशा एवं दिशा भी निर्धारित की गयी है। कवि द्वारा प्रस्तुत ग्रंथ में पंचतन्त्र के पाँच तन्त्रों की 75 कथाओं को यहाँ केवल 15 कथाओं में प्रस्तुत करके समाज के सामाजिक–सांस्कृतिक एवं नैतिक पक्ष को भी अभिव्यक्त किया गया है।[1]

प्रथम तन्त्र 'मित्रसम्प्राप्ति' में कुल 4 कथाएं निबद्ध हैं। प्रस्तुत तन्त्र में कवि सामान्य बालकों को सरल–सरस–मधुर एवं व्याकरण रहित, अल्पसमासयुक्त भाषा शैली में मित्र निर्माण का उपदेश दिया गया है। द्वितीय तन्त्र 'मित्रभेद' में निरंजनवचनकथा, दुह्रदवणिक्कथा एवं दस्युप्रणयकथा के माध्यम से बालकों को मित्रों के मध्य भेद उत्पन्न करने वाले कारणों का वर्णन किया गया है।

तृतीय तंत्र 'काकोलूकीयम्' में रसायनभूत 'काकोलूकीयम्' के माध्यम से बालकों को संसार में स्वार्थरहित होकर मित्र बनाने का सदुपदेश प्रदान करता हैं। 'अभिनवपंचतन्त्रम्' के चतुर्थ 'लब्धप्रणाशः' तन्त्र के माध्यम से बालकों को बुद्धि की प्रबलता का प्रयोग करने का नैतिक उपदेश दिया गया है। पंचम तंत्र 'अपरीक्षितकारकम्' में कथाकार बालकों को सम्यक् रूप से विचार विमर्श करके कार्य करने की प्रेरणा प्रदान करता है।

अतः प्रस्तुत ग्रंथ बालकों का शारीरिक एवं मानसिक विकास करने के साथ ही मनोवैज्ञानिक विकास करने में भी अत्यन्त सहायक है। साथ ही विभिन्न कथाओं के माध्यम से बालकों को मनोरंजनात्मक एवं उपदेशात्मक शैली में सामाजिक, नैतिक, आध्यात्मिक, राजनीतिक विकास करने में यह कथाग्रन्थ अत्यन्त सहायक होगा। प्रस्तुत ग्रंथ में कथाएं इस रूप में गुम्फित है कि श्रोता के रूप में विद्यमान बालकों एवं राजकुमारों में कथा श्रवण की उत्सुकता बनी रहती है।

डॉ. केशवचन्द्र दाश

आधुनिक संस्कृत रचनाकारों में विद्वन्मणि आचार्य केशवचन्द्र दाश का नाम शिखर कवियों में परिगणित है। अपनी विशाल रचनाधर्मिता से उन्होंने आधुनिक संस्कृत वाङ्मय को समृद्ध करने का सार्थक प्रयास किया है। उनके द्वारा रचित विशाल साहित्य, जिसमें काव्य, लघुकथाग्रन्थ, बालकथा, बालोपन्यास तथा आख्यायिका आदि विधाओं में अनेकानेक ग्रन्थ प्रकीर्ण रूप से प्रकाशित हुए थे, का संस्कृत जगत् में प्रभूत समादर हुआ।

उत्कल की प्राचीनतम राजधानी ययातिनगर अथवा याजपुर या वर्तमान जाजपुर की अधिष्ठात्री देवी विरजा के कारण प्रसिद्ध पवित्र–भूमि विरजा क्षेत्र के हाटशाही नामक ग्राम में पं. नारायणदाश तथा श्रीमती कुमुदिनी देवी के घर में 6 मार्च 1955 ई. को केशवचन्द्र दाश जी का जन्म हुआ।[2]

1. अभिनवपंचतन्त्रम् का आमुख भाग
2. केशवकलानिधि, प्रथम भाग, कवि परिचय भाग से उद्धृत्।

परम्परागत ब्राह्मण परिवार में जन्मे केशवचन्द्र दाश जी की प्रारम्भिक शिक्षा–दीक्षा ग्राम की ही संस्कृत पाठशाला में सम्पन्न हुई। आपकी उच्च शिक्षा पुरी के श्री सदाशिव केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ से व्याकरण के क्षेत्र में हुई, जिसके दौरान आपकों व्याकरणशास्त्री की उपाधि से अलंकृत किया गया। आपने 'पुणे विद्यापीठ' से स्नातकोत्तर परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। इसके पश्चात् आपको श्री जगन्नाथ संस्कृत विश्वविद्यालय, श्री विहार, पुरी से विद्यावारिधि (Ph.D.) की उपाधि से विभूषित किया गया।

आपने आधुनिक संस्कृत साहित्य के वाङ्मय को अनेक नवीन विधाओं यथा–लघुकाव्य, लघुकथा, बालसाहित्य, आख्यायिका, गीतसंग्रह एवं काव्यसंग्रह से सुशोभित किया है। आपकी काव्यशैली पर टिप्पणी करते हुए आचार्य कलानाथशास्त्री का कथन है कि, "ऐसे विरले ही उपन्यासकार हैं जो, इस प्रकार के आधुनिक परिवेश का चित्रण करते हुए समसामयिक कथावस्तु पर आधारित उपन्यास लिख रहे हैं। इनके प्रतिनिधि के रूप में उड़ीसा के डॉ. केशवचन्द्रदाश का नाम लिया जा सकता है।"[1] डॉ. केशवचन्द्रदाश का बालसाहित्य सर्जन अतुल्य है। यथा–

1. **महान्** (बालकथा, 1991 ई.) इस बाल–कथा ग्रंथ में एकादश (11) बाल–कथाओं का संग्रह हैं जिनमें सरल–सरस ज्ञानवर्धक लघु–कथाओं के माध्यम से बालकों को नैतिक उपदेश प्रदान किया गया है। प्रस्तुत काव्य का नामकरण सप्तम कथा 'महान्' के आधार पर सन्धानीत है जहाँ बालक अशोक के महान् कार्यों का वर्णन है।
2. **एकदा (बालनाटक, 1991 ई.)** इस एकांकी नाटक का प्रारम्भ 'एकदा' इस भूतकालीन वाचक शब्द से होता है। इस एकांकी में प्रयुक्त 'एकदा' शब्द बालकों में जिज्ञासा एवं रोचकता उत्पन्न करता है जिससे नाटक में धाराप्रवाह बना रहता है।
3. **प्ताका (बालोपन्यास, 1990 ई.)** प्रस्तुत उपन्यास का प्रारम्भ स्वतंत्रता दिवस पर ध्वजायमान पताका (तिरंगा) के आधार पर किया गया है। स्वतंत्रता दिवस की प्रतीक 'पताका' बालकों में अनेक जिज्ञासाएं उत्पन्न करती हैं जिनका समाधान कवि सरल–सरस संवादों के माध्यम से करता है।

अतः डॉ. केशवचन्द्रदाश का समस्त बाल–साहित्य चूर्णक गद्य या समासरहित शैली में निबद्ध है। यह बाल–साहित्य बालकों के बुद्धिपटल को ध्यान में रखकर सृजित किया गया है।

आचार्य पद्मदत्त शास्त्री 'पद्मशास्त्री'

अपने नाम के अनुरूप ही अपनी नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभा से संस्कृतसाहित्याकाश में पद्म के समान अपनी प्रतिभा की महक से साहित्याकाश को सुगन्धित करने वाले कविवर पद्मशास्त्री का

1. आधुनिक काल का गद्यसाहित्य, कलानाथ शास्त्री, पृष्ठ 59

जन्म 17 दिसम्बर 1935 ई. को प्राकृतिक छठा से सुरम्य एवं मनोहर स्थल अल्मोड़ा (उत्तराखण्ड) जनपद के सिंगाली ग्राम में हुआ था। आपके पिताजी श्री बद्रीत्त ओझा भी संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् थे।

'आशुकवि' शास्त्री महोदय बाल्यकाल से ही कविता रूपी कामिनी के साथ न्यूनाधिक रूप से काव्यरचना में संलग्न रहे। संस्कृत बाल–साहित्य में प्रगतिशील लेखन का प्रतिनिधित्व करने वाले आपने विभिन्न कथासूत्रों को गुम्फित करते हुए 'विश्वकथाशतकम्' की रचना की।[1] वस्तुतः 'संस्कृतकथाशतकम्' का गुम्फन कवि द्वारा सरल–सरस मनोहर भाषा शैली में बालकों के मनोरंजन एवं नैतिक ज्ञान प्रदान करने के लिए किया गया।

जैसाकि कवि द्वारा प्रस्तावना भाग में उल्लेख किया गया है–

"भूतलेऽस्मिन् विशेषेण मानवोऽयं कथाप्रियः।
कथाभिः कल्पनाशक्तिः बालकेषु विवर्धते।।
कथासु गुम्फितं चास्ति समग्रं लोकजीवनम्।
बालकानां विबोधाय कथानां च निदर्शनम्।।
बाला विविधभावानां कथाः श्रुत्वा प्रहर्षिताः।
ऐक्यभावनया युक्ता विश्वशान्तिप्रवर्धकाः।।
गुम्फित संस्कृतकथाशतकं सरलं मया।
संस्कृतस्य प्रसाराय मनोरंजनहेतवे।।"[2]

बालकों को संस्कृत भाषा के अवबोध तथा उनमें नैतिकमूल्यों के विकास के लिए पद्मशास्त्री विरचित 'कथाशतकम्' (खण्ड द्वितीय) को वर्ष 2010 ई. के केन्द्रीय साहित्य अकादमी द्वारा 'बाल–साहित्य' पुरस्कार से सम्मानित किया गया। 'विश्वकथाशतकम्' के प्रथम एवं द्वितीय खण्ड में उल्लेखित सभी 100 कथाएं बालकों में शील–सदाचार–पवित्रता–नैतिकता–सामाजिकता–दया–क्षमा–त्याग–साहस आदि नैतिक मूल्य प्रदान करने में पूर्णतया सक्षम हैं। जहाँ एक तरफ यह बाल–कथाएं बालकों को मनोरंजन प्रदान करती है तो, वहीं दूसरी तरफ बालकों में कल्पना शक्ति जाग्रत करने में भी पूर्णतया समर्थ है।

---

1. राजस्थानीयमभिनवसंस्कृतसाहित्यम्, डॉ. गंगाधर भट्ट (चतुर्थ खण्ड), पृ. 79–95
2. विश्वकथाशतकम्, पद्मशास्त्री 'आशुकवि' प्राक्कथन भाग से उद्धृत

डॉ. सम्पदानन्द मिश्र

डॉ. सम्पदानन्द मिश्र का जन्म 17 नवम्बर, 1971 को ओडिशा में हुआ। आप वर्तमान में पुण्डुचेरी में निवास कर रहे है। आप भारतीय सांस्कृतिक श्री अरविन्द फाउण्डेशन के निदेशक के रूप में भारतीय संस्कृति एवं सुरभारती की सेवा में दत्तचित्त है। वर्ष 2012 ई. में आपको भारत के राष्ट्रपति द्वारा 'महर्षि बादरायण व्यास सम्मान' से विभूषित किया गया है तथा वर्ष 2018 ई. में बाल–साहित्य के क्षेत्र में किये जा रहे विशेष कार्यों को देखते हुए आपको **'शनैः शनैः'** बाल काव्य हेतु केन्द्रीय साहित्य अकादमी का 'बाल–साहित्य अकादमी पुरस्कार' से अलंकृत किया गया है।

15 अगस्त 2014 को श्री मिश्र जी ने बालकों के मनोरंजनार्थ, ज्ञानार्थ, संस्कृत अनुरागार्थ एवं बालकों की साहित्य लेखन में रूचि जाग्रत करने हेतु श्री अरविन्दो सोसायटी, पुण्डुचेरी के तत्त्वाधान में 'संस्कृत बाल–साहित्य परिषद्' की स्थापना की।

बालकों में संस्कृत भाषा के प्रति दृढ़ अनुराग उत्पन्न करने, भाषा ज्ञान बढ़ाने एवं सौन्दर्य बोध हेतु आपके द्वारा बाल–साहित्य लेखन एवं बालकों में साहित्य लेखन की प्रवृत्ति को जाग्रत करने का सराहनीय कार्य किया जा रहा है। सरल एवं सौम्य व्यवहार के धनी डॉ. मिश्र जी प्रत्येक वर्ष बाल–साहित्य सम्मेलन का आयोजन करवा रहे हैं जिसके अब तक तीन सफल आयोजन नई दिल्ली (सन् 2016 ई.) कोलकत्ता (2017 ई.) एवं कांचीपुरम् (2018 ई.) में सम्पन्न हो चुके हैं।

आपके द्वारा रचित बालसाहित्य का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार से है–

1. बालगीतावलिः (बालगीतसंग्रह, सन् 2016 ई.)

प्रस्तुत गीत–संग्रह में बाल–मनोऽनुकूल अनेक पद्यात्मक गीतों का संकलन किया गया है। यह गीत बालकों में सौन्दर्य बोध जाग्रत करने, उनमें नैतिक संस्कार एवं मूल्य प्रदान करने में पूर्णतया समर्थ है। यह बालगीत बालकों में चरित्र निर्माण, आत्मशक्ति विकास, कल्पना शक्ति जाग्रत करने में अत्यन्त उपयोगी है।

2. **सप्तवर्ण चित्रपतङ्ग–**प्रस्तुत 'सप्तवर्ण–चित्रपतङ्ग* काव्य में बाल–प्रयोजनार्थ रमणीय, मनोहर, बालमनोऽनुकूल, कल्पनामयी कथाएं निबद्ध हैं। यह बालकथाएं बालमन को आकर्षित करने में पूर्णतया सक्षम हैं। मूलतः सप्तवर्ण चित्रपतङ्ग काव्य आङ्ग्ल–भाषा में उपलब्ध है, जिस का डॉ. सम्पदानन्द मिश्र द्वारा संस्कृतानुवाद किया गया है।

प्रो. जनार्दन हेगड़े

कर्नाटक के उडुपी में जन्में प्रो. जर्नादन हेगड़े वर्तमान में संस्कृत मासिक पत्रिका 'सम्भाषण सन्देशः' के प्रधान सम्पादक हैं। सन् 2015 ई. में केन्द्रीय साहित्य अकादमी द्वारा आपकों

बालसाहित्य के क्षेत्र में किये गए उल्लेखनीय रचना कार्यों हेतु बाल–साहित्य पुरस्कार से अलंकृत किया गया। आपको यह पुरस्कार 'बालकथासप्ततिः' कृति हेतु प्रदान किया गया। इसके साथ ही आपको सन् 2017 ई. में उत्तरप्रदेश सरकार द्वारा नारद स्मृति पुरस्कार से सम्मानित किया गया। बाल–साहित्य लेखन के क्षेत्र में आपका योगदान निम्न प्रकार से है–

(क) **बालकथासप्तति**–बालकों को मनोरंजन एवं संवादात्मक कथा शैली में नैतिक शिक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से यहाँ 70 नीति कथाओं का संग्लन किया गया है। प्रस्तुत कथाग्रन्थ की अधिकांश कथाएं सम्भाषण सन्देश (मासिक पत्रिका) के बालमोदिनी शीर्षक के अन्तर्गत प्रकाशित की गई थी। यहाँ 70 (सप्ततिः) कथाओं का संकलन होने से इस रचना का नाम कवि द्वारा 'बालकथासप्ततिः' रखा गया है।

(ख) **बालकथास्रवन्ती** –सम्भाषण सन्देश के बालमोदिनी भाग के अन्तर्गत प्रकाशित कथाएं ही कवि द्वारा चित्रात्मक रूप में संक्षेप में बालकों के ज्ञानार्थ सृजित की गई है। प्रस्तुत कथाग्रन्थ में 65 कथाओं का संलग्न किया गया है, जो बालकों के नैतिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक विकास करने में पूर्णतया समर्थ हैं।

प्रो.सुकान्त कुमारसेनापतिः

उत्कल प्रदेश (उड़ीसा) के केन्द्रापड़ा जनपद में 15 जुलाई 1965 को जन्मे कविवर सुकान्त कुमार सेनापति की प्रारम्भिक शिक्षा ग्राम में ही सम्पन्न हुई। तदुपरान्त आपने वि.जे.वी. महाविद्यालय, भुवनेश्वर से स्नातक की परीक्षा उत्तीर्ण की। आपको स्नातकोत्तर एवं Ph.D.की उपाधि राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान से प्राप्त हुई। आपने संस्कृत माता की सेवा हेतु सर्वप्रथम शोध सहायक के रूप में राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली से कार्य प्रारम्भ किया। सम्प्रति आप राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान में आचार्य के रूप में सेवा प्रदान कर रहे हैं।

आपके द्वारा गीर्वाण वाणी की सेवा एवं संस्कृत अनुरागियों के लिए अधोलिखित रचनाओं का सन्धान किया है।

(क) शाङ्करनये लौकिकन्यायः (ख) सांख्यकारिका (ग) सुकान्तकथाविंशति

यहाँ 'सुकान्तकथाविंशति' कथाग्रन्थ का प्रयोजन न केवल बालकों को मनोर×जन प्रदान करना है अपितु बालकों में सुसंस्कृत–उत्तम–भावी जीवन निर्माण हेतु मूल्य आधारित कथाओं का उपस्थापन भी करना है। कथा के माध्यम से बालकों को नैतिक एवं मूल्य आधारित सन्देश देने का जो कार्य आपके द्वारा किया गया है, वह सराहनीय है। कविवर सेनापति ने स्वयं प्रस्तुत कथाग्रन्थ के प्रयोजन प्रतिपादित किए हैं–परस्परं मित्रता, सद्भावः, परोपकारः, सत्यम्, अहिंसा, नैतिक गुण

धैर्यादिजीवनमूल्यानां विकासः। छात्रेषु श्रवणकौशलस्य शब्दभण्डारस्य अभिव्यक्ति कौशलस्य च विकासः। स्वसंस्कृते परिचयप्रदानम् च।[1]

वस्तुतः प्रस्तुत कथाग्रन्थ में विंशति कथाओं का संलग्न हैं। जिसमें से कुछ कथाएं भारतीय संस्कृति एवं जीवनमूल्याधारित कथानकों पर आधारित है। समस्त कथाएं **कथापुनर्लेखन शैली** में निबद्ध हैं। कथाओं के अन्त में शब्दों का अर्थ–आङ्गल हिन्दी भाषा में प्रदान किया गया है। साथ ही कथाओं में भाव–प्रवणता के श्लोक भी प्रदान किए गए हैं यथा–

"गवीशयानि नगजार्तहारी
कुमारतातः शशिखण्डमौलिः।
लङ्केशसम्पूजितपादपद्मः
पायादनादिः परमेश्वरो वः।।"[2]

यहाँ परमेश्वर के भक्ति भाव को प्रतिपादित किया गया है।

सौः दुर्गा पारखी

सौ. दुर्गा पारखी ने तुकोजी महाराज नागपुर विद्यापीठ से वाङ्मय की परीक्षा उत्तीर्ण की है। संस्कृत सम्भाषण आन्दोलन में आपने अत्यधिक सक्रिय भूमिका निभाई। संस्कृत योगदान के लिए आपने कालिदास संस्कृत विश्वविद्यालय की राष्ट्रिय संस्कृत परिषद में सेवाऐं प्रदान की। आपने काबुलीवाला (नाटकम्), प्रहेलिकाशतकम् और कथासुमनसौरभम् पुस्तकों की रचना की है।

बाल–साहित्य के क्षेत्र में आपके द्वारा 'बालनाट्यवल्लरी' (लघु–बाल एकांकी नाटक) का सन्धान किया गया है। प्रस्तुत बालनाटक ग्रंथ में शिशुओं एवं बालकों के लिए पृथक से लघु–लघु एकांकियों का संलग्न किया गया है। प्रथम 'शिशुविभागः' में 8 एकांकियों का संकलन है। जहाँ चित्रात्मक रूप से बालकों को विभिन्न नैतिक मूल्यों का सौन्दर्यात्मक बोधन करवाने का प्रयास किया गया है। दूसरी और 'बालविभाग' के अन्तर्गत 22 बाल–एकांकियों का संकलन है जिनके माध्यम से बालकों को रोचकता एवं मनोरंजनात्मक माध्यम से विभिन्न प्रकार के नैतिक मूल्यों की शिक्षा प्रदान की गई है।

प्रो. गोपबन्धु मिश्र

उत्कल (उड़ीसा) प्रदेश के नयागड़ जनपद के विरुड़ा ग्राम में 13 अक्टूम्बर 1958 को अपारती मिश्र एवं सोनादेवी की संतान के रूप में गोपबन्धु मिश्र का जन्म हुआ। प्रो. गोपबन्धु मिश्र ने 1977 में राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली से प्रथम श्रेणी में शास्त्री परीक्षा तथा 1979 में

---

1. सुकान्तकथाविंशतिः (प्रस्तावना भाग) सुकान्तकुमारसेनापतिः
2. सुकान्तकथाविंशतिः (परमेश्वरभक्तः) पृ. 1

विश्वभारती शान्ति निकेतन कोलकाता से आचार्य की परीक्षा उत्तीर्ण की। तदन्तर 1986 को पटना विश्वविद्यालय, पटना से **'परिभाषेन्दु–**शेखर–एक आलोचनात्मक अध्ययन' विषय पर विद्यावारिधि (Ph.D.) की उपाधि प्राप्त की। तदुपरांत वीरकुवरसिंह विश्वविद्यालय, आरा से 2004 ई. में आपको '**पाणिनिकृत** प्रत्ययों का विवरणात्मक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन' विषय पर विद्यावाचस्पति (D.Lit) की उपाधि से विभूषित किया गया।

आप नव्य–व्याकरण के विद्वान् है। आपके द्वारा 2010 से 2012 तक पेरिस स्थित सोबोन नुवेल् विश्वविद्यालय में विजिटर आचार्य के रूप में अध्यापन कार्य किया गया। पेरिस में अध्यापन कार्य के दौरान ही आपके द्वारा फ्रांसिस लेखक आन्त्वान द सेंत–एक्जुपेरी' रचित 'Le Petit Prince' पुस्तक का संस्कृत में 'कनीयान राजकुमार' पुस्तक के रूप में अनुवाद किया गया।

आधुनिक संस्कृत साहित्य में विशिष्ट योगदान हेतु आपको वर्ष 2017 में उत्तरप्रदेश संस्कृत संस्थान द्वारा 'विशिष्ट पुरस्कार' से सम्मानित किया गया है।

प्रस्तुत बाल–काव्य 'कनीयान् राजकुमारः' (अनूदित–बालसाहित्य) में 'लेओवर्थ' नामक बालक की बाल–मनोदशाओं, बाल–प्रवृत्तियों एवं संवेदनाओं का बाल–वैज्ञानिक रूप में चित्रात्मक रूप से वर्णन किया गया है। लेखक द्वारा प्रस्तुत अनूदित बाल साहित्य के माध्यम से सभी निवासरत प्रौढ़ों के हृदय में बालकों के प्रति बाल–संवेदना जाग्रत करने का सार्थक प्रयास किया गया है।

डॉ. पूजा उपाध्याय

जीवन मूल्य एवं नैतिक शिक्षा ही भारतीय संस्कृति के सारभूत तत्त्व हैं। हमारे वैदिक ऋषियों, मनीषियों और चिन्तकों के द्वारा अपने जीवन में अनुभूत श्रेष्ठ मूल्यों को ही हमें प्रदान किया गया है। बालकों के व्यक्तित्व के सर्वाङ्गीण विकास की अपेक्षा से जीवन–मूल्य आधारित बाल–कथाओं की सर्जना करने वाली लेखिका डॉ. पूजा उपाध्याय का जन्म 3 सितम्बर 1980 को भोपाल, मध्यप्रदेश में श्रीवासुदेव चतुर्वेदी एवं श्रीमती कविता देवी के ममतामयी आङ्गन में हुआ।

आपको सन 2007 में संस्कृत विषय में **विक्रम विश्वविद्यालय** उज्जैन से पीएच.डी की उपाधि प्रदान की गई। कथाश्रवण पद्धति में आपके द्वारा बचपन में जो कथाएँ अपने पितामह से सूनी थी, उन्हीं कथाओं को आपके द्वारा अपने पुत्रों को भी सुनाया गया है। वस्तुतः आपका मत हैं कि कथाविधि बाल–शिक्षण की सर्वश्रेष्ठ विधि हैं। बालकों के कोमल मन पर जो प्रभाव मनोरंजन युक्त कथाओं के माध्यम से होता है उतना प्रभाव व्याख्यान आधारित साहित्य से नहीं हो पाता है। इसी प्रयोजन से आपके द्वारा बाल–कथा का प्रणयन किया गया, जो बालकों को संस्कार प्रदान करने में पूर्णतया समर्थ है।

बालकथा –डॉ. पूजा उपाध्याय द्वारा बालकों के पठन–पाठन हेतु प्रणीत इस कथाग्रन्थ में कुल 20 बाल–कथाओं का सङ्कलन है। इन बाल–कथाओं के शीर्षक विभिन्न प्रकार के नैतिक तत्त्वों अथवा जीवन मूल्यों के नाम पर रखा गया है। वस्तुतः यह सत्य है कि जिस प्रकार वर्तमान में बालकों में विभिन्न प्रकार के दुर्गुण आत्मसात् हो रहे है तथा नैतिक मूल्यों का अभाव हो रहा है, उस समय बालकथा में उल्लेखित नैतिक मूल्याधारित कथाओं के पाठन अथवा श्रवण से बालकों के जीवन में निश्चित ही सुधार आयेगा। ऐसा मेरा दृढ़विश्वास है। बालकथा–ग्रन्थ के मुख्य बिन्दु संक्षेप में है यथा मानव धर्मः, सत्सङ्गतिः, ज्ञानात् शीलं विशिष्यते, क्लिश्यन्ते लोभमोहिताः, मित्ररत्नम्, सौन्दर्यम्, परोपकारः, बालवीरः श्रद्धा इत्यादि।

ऋषिराज जानी

संस्कृत बाल–साहित्य में विलसित कविवर ऋषिराज जानी का जन्म 3 अप्रेल 1988 को गुजरात राज्य के अहमदाबाद जनपद में कविप्रवर डॉ. हर्षदेव माधव के सुपुत्र के रूप में हुआ। परिवार का संस्कृतमय परिवेश होने से प्रारम्भिक अवस्था में ही आपके मन में संस्कृत भाषा के प्रति विशेष अनुराग उत्पन्न हो गया। अपने पिता डॉ. हर्षदेव माधव जी के समान ही कथासर्जन का बीजारोपण आपके अन्तःस्थल में शैशवकाल में ही रोपित हो गया था। आप प्रत्येक रात्रि को अपने पिताजी से पंचतन्त्र, हितोपदेश, रामायण एवं महाभारत में उपलब्ध कथाओं का श्रवण करते थे। यौवनावस्था में ही महाविद्यालय में अध्ययन के दौरान उन्होंने **'डाकणनो डर'** इस गुर्जर भाषा में निबद्ध लघुकथा संग्रह की रचना की। देवभाषा के प्रति आपका सर्जनकाव्य संस्कृत साहित्य को कृतकृतार्थ करता रहेगा। बाल–साहित्य के निर्माण में प्रवृत्त आपका काव्य–सर्जन निरन्तर बाल–सुहृत् एवं बालकों के हृदय को प्रतिपल आनन्दित एवं भाव विभोर करने में सक्षम है ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है।

संस्कृत बालसाहित्य के क्षेत्र में आपकी मुख्यतया दो रचनाएं प्राप्त होती हैं–

(क) चमत्कारिकः चलदूरभाषः (बालकथासंग्रह) सन 2013 ई.

(ख) कपिः कूर्दते शाखायाम् (बालगीतसंग्रह) सन् 2016 ई.

प्रथम 'चमत्कारिकः चलदूरभाषः' (बालकथा संग्रह) में एकादश बाल–कथाओं का संग्रह हैं। जिसकी प्रथम कथा **'चमत्कारिकः चलदूरभाषः'** के आधार पर काव्य का नामकरण किया गया है। प्रस्तुत कथाओं में सुकुमार कवि ऋषिराज जानी द्वारा सामयिक–औद्योगिक युग के महानगरीय जीवन से आक्रांत परिवेश का मनोरंजनात्मक, कल्पनात्मक एवं संवादात्मक शैली में वर्णन किया गया है। वहीं **कपिः** कूर्दते शाखायाम् (बालगीतसंग्रह) में कवि द्वारा बाल सुबोध गेयात्मक कविताओं का संग्रह हैं। जैसाकि डॉ. सम्पदानन्द मिश्र का कथन है कि– "प्रस्तुत काव्य के सभी गीत जिसमें

प्रार्थनापरक प्रस्तुत काव्य में 35 बालगीतों का संग्रह हैं" जिसमें उल्लेखित 13वां बालगीत 'कपिः कूर्दते शाखायाम्' के आधार पर काव्य का नामकरण किया गया है। गीत, अभिनयगीत, क्रीडागीत, प्रकृतिसम्बन्धितगीत, व्यङ्ग्यपरकगीत, व्याकरणशिक्षण, गीत, प्रहेलिका एवं प्रश्नकाव्य सम्बन्धित विविध गीत प्राप्त होते हैं। सभी बालमनोविज्ञान एवं बालमनोऽनुकूल सृजित किए गए हैं। यहाँ वृक्ष पर कूदते कपि के समान ऋषिराज की बाल–दृष्टि परिलक्षित होती है।

बालसाहित्यकार की इसी परम्परा में प्रो. विष्णु पोगत्ति महोदय द्वारा रचित बालबोध राजकुमार मिश्र प्रणीत' 'डयते कथमाकाशे' प्रो. बनमाली विश्वाल रचित'भारतभूषणम्', डॉ. हर्षदेव माधव कृत 'पिपीलिका विपणिं गता' प्रमुख रूप से स्मरणीय है।

प्रो.सुभाष वेदालंकार

प्रसिद्ध शिशुगीतकार आचार्यवर सुभाष वेदालंकार का जन्म 13 अप्रैल 1942 को पराधीन भारत की टोंक रियासत के **डेरा** इस्माइल कस्बे में हुआ था, जो वर्तमान में जयपुर जिले के अन्तर्गत आता है। **आचार्यवर** वेदालंकार जी द्वारा बालकों के मनोरंजन एवं नैतिक उपदेश प्रदान करने के प्रयोजन से गेय शैली में बाल एवं शिशु काव्यों का सर्जन किया है। प्रो. रमाकान्त शुक्ल ने आचार्यवर के बारे में वक्तव्य प्रकट किया है कि– "वस्तुतः आचार्य सुभाष वेदालंकार जी की प्रसिद्धि उनके द्वारा रचित शिशुगीत काव्यों से हैं।" उनके द्वारा प्रणीत शिशुगीत बाल शिक्षा एवं नैतिक शिक्षा से सम्बन्धित हैं।[1]

आचार्य वेदालंकार जी द्वारा रचित '**शिशुगीतम्**' काव्य में शिशुओं अथवा बालकों के लिए सरल–सरस एवं रमणीय संस्कृत शब्दावली में 40 गीतों का संग्रह हैं। आपके द्वारा प्रणीत शिशुगीतों का मुख्य ध्येय वर्तमान परिवेश में पालित बालकों में देशभक्ति, भारतीय संस्कृति एवं नैतिक शिक्षा का भाव जाग्रत करना है। 'शिशुगीतम्' काव्य के अतिरिक्त आपके द्वारा बालकों में देश सेवा का भाव जाग्रत करने के लिए 'संस्कृत देशभक्ति गीता' का भी प्रणयन किया गया है।

स्व. पण्डित करुणाकरदाश

राष्ट्रपति पुरस्कार से सम्मानित आचार्य पण्डितवर्य करुणाकरदाश जी का जन्म 1930 ई. को उत्कल (उड़ीसा) में हुआ था। आपका सन 2017 ई. में देवलोक गमन हो गया। बालसाहित्यकार के रूप में प्रतिष्ठित आपके द्वारा बालकों के चारित्रिक विकास के लिए विद्या–धर्म–संस्कृति–मातृभक्ति–पितृभक्ति–जीवन्मुक्ति–प्रभृति विषयों को आधार बनाते हुए सरल एवं सरस, मधुर भाषा शैली में 'जीवनालोक' बालकाव्य का सर्जन किया गया है।

1. बसंत जेटली प्रणीत 'प्रो सुभाष वेदालंकार अभिनन्दग्रन्थमाला' जयपुर

भगवत्पाद श्री शंकराचार्य की शैली का अनुसरण करने वाला 'जीवनालोक' बालसाहित्य की दृष्टि में नितराम् श्लाघनीय हैं। लगभग 180 विविध छन्दोबद्ध पद्यों में रचित इस **जीवनालोक** बालसाहित्य में सरल–सरस मधुर भावों द्वारा बालकों को अन्धकार से निकालकर दिव्यप्रकाश युक्त सन्मार्ग पर चलने का नैतिक उपदेश दिया गया है।

कवि जहाँ एक तरफ बालकों को अपने हृदय प्रदेश में स्थित षड्भाव विकारों–काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, ईर्ष्या को छोड़ने का उपदेश देते है, वहीं दूसरी और अपने जीवन में सत्य, सेवा, परोपकार आदि नैतिक सद्गुणों को आत्मसात् करने का उपदेश भी प्रदान करते हैं। यथा सत्यता का अभिनन्दन करता हुआ कवि कहता हैं–

सृष्टेः सृष्टं सर्वमसारम्
अवेहि सत्यं शाश्वत–सारम्।
सत्यबलेन हि धरणी रम्या।
राजति दानवबलै–रदम्या।।
सत्याश्रयिणः काऽपि न भीतिः।
एषा जगतो निश्चलनीतिः।
सत्यपरायण इह संसारे
भास्वानिव संभाति मुरारेः।
पालय सत्यं कुरु मा हेलाम्
सार्थं कुरु ते जीवन–बेलाम्।
तस्य बलेन च परमं रम्यम्
ब्रह्मपदं ब्रज मनसोऽगम्यम्।।

अतः कवि करुणाकरदाश प्रणीत 'जीवनालोक' बालसाहित्य के पठन–पाठन एवं श्रवण से बालकों का अवश्य ही कल्याण होगा, ऐसा मेरा दृढ़ एवं पूर्ण विश्वास है।

डॉ. एच.आर. विश्वास

श्रीमान् डॉ. एच.आर. विश्वास का जन्म कर्नाटक के चिक्कमंगलूरु जनपद में हुआ। आपने साहित्य में स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त की तथा कुवेम्पुविश्वविद्यालय से विद्यावारिधि (Ph.D.) की उपाधि प्राप्त की। इसके साथ ही आप देवभाषा संस्कृत के प्रचार–प्रसार हेतु संस्कृत भारती संघटन में पूर्णकालिक कार्यकर्ता के रूप में संलग्न हो गए। आधुनिक संस्कृत साहित्य में महती रूचि वहन करते हुए आपके द्वारा कुछ समय के लिए सम्भाषण सन्देश (मासिक पत्रिका) के प्रधान सम्पादक के रूप में कार्य का निर्वाह किया गया। संस्कृत भारती के सम्भाषण शिविरों में अध्ययनरत

संस्कृतानुरागी बालकों के मनोविनोद एवं नैतिक शिक्षा के वर्धन हेतु आपके द्वारा विनोदजनक 25 लघुनाटकों के संकलन से युक्त 'मार्जालस्य मुखं दृष्टम्' (जनवरी 2011 ई.) का प्रणयन किया गया। इसके अतिरिक्त आपके द्वारा निम्नांकित काव्यों का प्रणयन किया गया हैं–

(क) अपश्चिमः पश्चिमेः (अमेरिकाप्रवासानुभव कथनम्)

(ख) आवरणम् (संस्कृतानूदित उपन्यासः)

(ग) कविकोपकलापः (रूपकाणां संग्रहः)

(घ) मार्जालस्य मुखम् दृष्टम् (रूपकाणां संग्रहः)

(ङ) यदुमहाराजः (अनूदितानां कथानां संग्रहः)

लेखक द्वारा प्रणीत 'मार्जालस्य मुखं दृष्टम्' लघु एकांकी ग्रंथ में संस्कृतभाषाविषयक, आधुनिक जीवन से सम्बन्धित लोककथाधारित और पौराणिक लघुनाटकों का संग्रह है। नाटकों में सर्वत्र सरल सम्भाषण शैली का प्रयोग किया गया है। सम्पूर्ण लघुनाटकों का मुख्य प्रयोजन बालकों में अभिनेय कौशल की कला का विकास करने के साथ–साथ उनमें संस्कृत भाषा के प्रति श्रद्धा एवं विश्वास तथा संस्कृत भाषा की अभिव्यक्ति क्षमता में वृद्धि करना है।

पूजा लाल डालवाड़ी

पूजालाल डालवाड़ी का जन्म गोदरा गुजरात में हुआ था। आपके अधिकांश काव्यों का मुख्य ध्येय बालकों को संस्कृत भाषा का ज्ञान प्रदान करना है। आपके द्वारा प्रणीत 'बालनाटकानि' काव्य में संकलित अधिकांश नाटकों का मंचन अरविन्दो आश्रम, पुण्डुचेरी में लघु–लघु बालकों द्वारा किया जाता है। 'बालनाटकानि' लघुनाटक ग्रंथ में संकलित अधिकांश नाटकों की कथावस्तु आधुनिक विषयवस्तु से सम्बन्धित हैं। इन नाटकों की विषयवस्तु नैतिक शिक्षा एवं मनोरंजनप्रधानता हैं। इस काव्य में 23 लघुनाटकों का संकलन हैं।

प्रो. हरिदत्त शर्मा

संस्कृत बाल–साहित्य के क्षेत्र में प्रो. हरिदत्त शर्मा का नाम बड़े आदर से लिया जाता है। सन् 2015 ई. में प्रो. शर्मा को राष्ट्रपति अवार्ड से सम्मानित किया गया तथा सन् 2007 ई. में 'लसलतिका' काव्य हेतु आपको केन्द्रीय साहित्य अकादमी द्वारा पुरस्कृत किया गया। आपको उत्तरप्रदेश संस्कृत संस्थान द्वारा **'महर्षि व्यास'** पुरस्कार (सन 2018 ई.) में सम्मानित किया गया। आपने सन 2013 ई. तक विजिटिंग प्रोफेसर के रूप में सिल्पकोर्न यूनिवर्सिटी, बैंकांक में अध्यापन कार्य किया। आपने अनेक बार विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, नई दिल्ली में मनोनित सदस्य के रूप में सेवाएँ प्रदान की है।

कृतित्व – आपके द्वारा संस्कृत साहित्य रूपी अथाह सागर को भरने हेतु सभी काव्यविधाओं में काव्य प्रणयन कर श्लाघनीय कार्य किया है। आपके द्वारा प्रणीत कृतियों का संक्षेप परिचय निम्नलिखित है–

(i) संस्कृत काव्यशास्त्रीय भावों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन, चौखम्भा ओरियंटल प्रकाशन, वाराणसी, 1983

(ii) निबंध निकुंजम्, नारायण प्रकाशन हाउस, इलाहाबाद, 1983 ई.

(iii) गीतकंदलिका (गंगानाथ झा, केन्द्रीय साहित्य विद्यापीठ इलाहाबाद), 1983 ई.

(iv) उत्कलिका (आंजनेय प्रकाशन, इलाहाबाद), 1989 ई.

(v) बालगीतावलि, (बालसाहित्य पर सर्जनात्मक कार्य), आंजनेय प्रकाशन, इलाहबाद

वस्तुतः आपके द्वारा संस्कृत साहित्य की सभी प्राचीन व आधुनिक काव्य विधाओं पर लेखनी अग्रेषित की गई है, जिनमें बालकों की आवश्यकतानुसार नैतिक मूल्यपरक बाल–साहित्य सन्धान का आपका जो कार्य है, वह अविस्मरणीय है। आपके द्वारा प्रणीत **'बालगीतावलि'** (कविता संग्रह) काव्य बालकों के मनोमस्तिक को ध्यान में रखकर सन्धानीत किया गया है। आपके द्वारा प्रस्तुत काव्य में नवीन संस्कृत–शब्दों का प्रयोग किया गया है, यथा–सुन्दरगुडिका, मनोमोहिका, चिरसहचरी...... आदि।

दृष्टान्त उल्लेखित है–

"अहो प्रिया मे सुन्दरगुडिका
मनोमोहिका सुन्दरगुडिका।
इयं स्वपिति हि ममैव समीपे
वसति सदैव ममैव समीपे।।"

अतः आचार्य हरिदत्त शर्मा द्वारा 30 कविताओं का संग्रह करते हुए 'बालगीतावलि' काव्य का सर्जन किया गया है, जो बालमनोवैज्ञानिक पक्ष को परिलक्षित करती है।

डॉ. कृष्णलाल

आपके द्वारा बालकों में संस्कृत भाषा के प्रति अनुराग उत्पन्न करने, उनमें जिज्ञासा एवं रोचकता उत्पन्न करने के विशेष प्रयोजन से सन 2005 ई. में 20 कविताओं का संग्रह करते हुए 'बालगीतम्–अङ्गगीतम्' काव्य की रचना की गई, जो विभुवैभवम् प्रकाशन, नई दिल्ली से प्रकाशित

हुआ। इन कविताओं की भाषा शैली बहुत ही सरल एवं मनोहर है। प्रस्तुत काव्य का नामकरण प्रथम कविता 'बालप्रार्थना' के 'बाल' शब्द एवं अन्तिम कविता 'अङ्गगीतम्' को सम्मिलित करने पर निष्पन्न हुआ है। व्याकरण रहित, चूर्णक शैली का प्रयोग सम्पूर्ण कविताओं में दिखाई देता है। गद्यपद्योभयात्मक छन्दोमुक्त शैली में यह कवितायें लिखी गई है।

प्रस्तुत काव्यसंग्रह की कविताओं का शीर्षक निम्नांकित है 1. बालप्रार्थना, 2. सफला वयं भविष्यामः', 3. शुकः, 4. चल सुपुत्र, 5. गणतन्त्रदिनं रम्यम्, 6. मधुपवन, 7. बालमेलकम्, 8. भारतजननी नमस्तुभ्यम्, 9. आयाता वर्षा, 10. हिमशोभा, 11. मम वत्सा 12. वयं बालकाः वीराः, 13. गाय गाय गीतम्, 14. दोला, 15. शुभजन्म दिनम्, 16. गायति चटका, 17. चल एकाकी, 18. चल रे पथिक, 19. रेलक्रीडा, 20. अङ्गगीतम्

यह सम्पूर्ण बालकवितायें बालकों में सामाजिक–सांस्कृतिक–आध्यात्मिक एवं नैतिक गुणों का संचार करती है, साथ ही राष्ट्रप्रेम की भावना भी आत्मसात करवाती है, यथा–

राष्ट्रवीर रे सुधीर
चल रे चल चल सुपुत्र
तव मानसे निश्चयः
भवतु न वीर संशयः।। राष्ट्रवीरः.....[1]

कवि ने शुकः, भारत जननी नमस्तुभ्यम्, मम वत्सा इत्यादि कविताओं के माध्यम से बाल मन में उत्पन्न भावों को ढूंढने का सफल प्रयत्न किया है।

प्रो. गौरीकुमार ब्रह्मा

संस्कृत बालसाहित्य में प्रो. ब्रह्म द्वारा 19 पद्यों में संक्षेप में बालकों के मनोरंजन एवं ज्ञान के उद्देश्य को लेकर ''शिशु–गीतिका'' काव्य का प्रणयन किया है, जो 1992 ई. में भुवनेश्वर (उड़ीसा) से प्रकाशित हुआ था। मनोरंजनात्मक सरल–सरस, भाषा–शैली में बालकों के शब्दार्थ अवबोध हेतु आपके द्वारा विभिन्न ध्वनियों के माध्यम से पशु–पक्षी जगत के प्राणियों का ज्ञान करवाया गया है, यथा–

छागो रोदिति में में में,
भेरी जनयति शब्दं भें भें।
शिशु मार्जारः कुरुते म्याऊँ,

---

1. आचार्य हरिदत्त शर्मा कृत, बालगीतालि काव्य की 'राष्ट्रवीरम्' कविता से उद्धृत, पृ.–20, सन 2000 ई.

वीणा जनयति नादं क्याऊँ।।[1]

रवीन्द्र पण्डा

नव्यशास्त्र, प्राचीन एवं आधुनिक संस्कृत साहित्य के ज्ञाता डॉ. रवीन्द्र पण्डा द्वारा 1984 ई. में श्री जगन्नाथ संस्कृत विश्वविद्यालय पुरी, उड़ीसा से एम.फिल तथा 1986 ई. में विद्यावारिधि (Ph.D.) की उपाधि प्राप्त की। आपके द्वारा बालकों के ज्ञानवर्धन हेतु 108 अनुष्टुप् श्लोकों में 'सुभाषितसुधाबिन्दु' बालकाव्य का प्रणयन किया गया। कवि प्रस्तुत काव्य में बाल्यावस्था एवं किशोरावस्था में पदासीन बालकों को नेतृत्व गुणों वाले वर्तमान नेता (राजनेता) के खुशनुमा जीवन से परिचय करवाता है, यथा–

"मूर्खेषु पूज्यते मूर्खः
पण्डितेषु च पण्डितः।
जन्तुषु पूज्यते सिंहो
नेता सर्वत्र पूज्यते।।"

प्रस्तुत बालकाव्य वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भारतीय समाज के सामाजिक एवं सांस्कृतिक पक्ष को रेखांकित करता है।

इसके अतिरिक्त रवीन्द्र पण्डाजी द्वारा 'सचित्र संस्कृतबालगीतानि' (भागवत विद्यापीठ, सोला, गुजरात, 2002 ई.) में बालकों के ज्ञानवर्धन हेतु 35 बाल–कविताओं का सचित्र उल्लेख किया गया है, यथा–

"चर्मपृच्छिका रे.........चर्मपृच्छिका सुंदरतरा
चर्मपृच्छिका
सुंदरं कमनीयं तव शरीरम्।
तव शरीरे रामेण पट्टिका रचिता
त्वचा सेतुबंधनिर्माणे साहाय्यं कारितम्।।"

यहाँ भगवान राम के सेतुबंध कार्य में सहायिका गिलहरी के कार्य का सुन्दर एवं मनोहर वर्णन किया गया है।

आचार्य इच्छाराम द्विवेदी

1. आचार्य गौरीकुमार ब्रह्म, शिशुगीतिका, श्लोक–3, सन 1992 ई.

'प्रणव' उपनाम से प्रसिद्ध 'इच्छाराम द्विवेदी का जन्म उत्तरप्रदेश राज्य के इटावा जनपद के चक्रापुरी ग्राम में 15 नवम्बर 1960 ई. को हुआ था। पिता लाल बिहारी द्विवेदी से द्विवेदी जी को विनम्रता एवं दृढ़ता तथा माता कृष्णादेवी से धर्मपरायणता के संस्कार बाल्यकाल में ही प्राप्त हो गये थे। वर्तमान संस्कृत साहित्य में आचार्य द्विवेदी जी द्वारा बालकों के लिए अत्यन्त ही सरल–सरस सहृदय भाषा में **'बालगीतांजलि'** काव्य की रचना की गई है। इस काव्य में 20 बालगीतों का संग्रह है, जिसमें विभिन्न बालमनोऽनुकूल विषयों यथा–प्रार्थना, राष्ट्रभक्ति, फलविक्रेता, मेला, खिलोना, पशु–पक्षी इत्यादि नैतिक मूल्य–परक बालकविताओं का संग्रह किया गया है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में यह बालकविताएँ बालकों के लिए अत्यन्त उपयोगी है।

गणेश गंगाराम पेण्डरकर

आचार्य पेण्डरकर द्वारा बालकों के लिए चारित्रिक एवं नैतिक मूल्यपरक उपदेशात्मक शैली में बालसाहित्य की खण्डकाव्य विधा में सर्वप्रथम 1979 ई. में 'शिशुलीलालाघवम्' काव्य का प्रणयन किया गया। 140 पद्यों में निबद्ध प्रस्तुत खण्डकाव्य में बालकों के व्यवहारगत हाव–भावों का पद्यात्मक शैली में वर्णन किया गया है। आपके द्वारा प्रस्तुत काव्य में बालमनोवैज्ञानिक पक्ष को आत्मसात् करते हुए बालकोंमें अवस्थानुरूप होने वाले शारीरिक एवं मानसिक विकास को प्रतिबिम्बित किया गया है। काव्य का प्रारम्भ 'बलराज' नामक बालक के वर्णन से होता है जो परिवार में इकलौता पुत्र है। कवि का कथन है कि बालक ही माता–पिता के वास्तविक सुख की अनुभूति का साधन है। यथा–

"वात्सल्यो जनन्याः पितुरपि कुलसंदीपनोऽखण्डदीपः।"

कवि द्वारा प्रस्तुत काव्य में बालकों के जीवन में परिलक्षित सभी पक्षों– सामाजिक, नैतिक, बालमनोवैज्ञानिक इत्यादि का ध्यान रखा गया है।

पं. एस.भी. वेलणकर

22 जून 1915 ई. को जन्में पं. वेलणकर महोदय द्वारा बच्चों के लिए सरल–सहज संस्कृत भाषा में दो बाल काव्यों की रचना की गई, जिसमें प्रथम 'बालगीतम' (1983 ई.) एवं दूसरा काव्य 'बालकथाकुंजम्' (1987 ई.) है। यह दोनों काव्य रामसुधा संस्कृत निधि, मुम्बई से प्रकाशित हुए हैं। 'बालकथाकुंजम्' काव्य में बालकों के लिए 37 कथाओं का संग्रह है जिनके कथानक विद्यार्थी, वैज्ञानिक एवं दार्शनिकों का जीवन एवं व्यक्तित्व है। प्रत्येक कथा का अन्त नैतिक सन्देश आधारित श्लोक से हुआ है, यथा–

"किं क्रोधेन कृतं कार्यं कस्यापि कुत्रचित् कदा।

शमे सिद्धयन्ति कार्याणि तस्माद्धि शममाचरेत्।।"[1]

कथाओं का आकार बहुत लघु है। अधिकांश कथाएं केवल चार–पांच पंक्तियों में गुम्फित है। कोई भी बालक सरलता से इनकों याद कर लेता है। अधिकांश कथाएं पुराण एवं जातक कथाओं पर आधारित है। जिनके पात्र अब्राह्म लिंकन (अमेरिकी राष्ट्रपति), सत्यभामा (श्रीकृष्ण की पत्नी), गोतमी (भगवान बुद्ध की शिष्या), एवं पुरुराज पौरष (सिकन्दर का विरोधी शासक) आदि है।

हर्षदेव माधव

आधुनिक संस्कृत साहित्य जगत् में अपनी रचनाधर्मिता, भावगार्म्भीय के साथ ही सहज एवं मर्मस्पर्शी काव्यों के रचयिता डॉ. हर्षदेव माधव का जन्म 20 अक्टुबर 1954 ई. को गुजरात के भावनगर में हुआ। आपकी शिक्षा–दीक्षा गाँव के ही प्राथमिक विद्यालय में सम्पन्न हुई। आपने स्नातक की परीक्षा 1975 ई. में गुजरात विश्वविद्यालय से तथा स्नातकोत्तर की परीक्षा 1981 ई. में सौराष्ट्र विश्वविद्यालय से उत्तीर्ण की। आपको 2006 ई. में केन्द्रीय साहित्य अकादमी द्वारा **'तव स्पर्शे–स्पर्शे'** कवितासंग्रह के लिए पुरस्कृत किया गया।

आपके द्वारा बाल–साहित्य के अन्तर्गत आधुनिक परिवेश के अनुकूल गद्य–पद्य दोनों विधाओं में बाल साहित्य की रचना की गई है। यथा–पिपीलिका विपणिं गता, बुभुक्षितः काकः, चटका इत्यादि। 'चटका' (संस्कृत बालगीतसंग्रह) बालकविता का यह अंश अत्यन्त रोचक एवं मनोहर है–

चटको राजा,
चटका राज्ञी।
चटकः काम्यः
चटका सुमुखि।
चटकः खलतिः
वधूः सुकेशी।
चटकः क्रीडति
चटका पचति
चटको भ्रमति
चटका खादति।

चटकाचटकौ सांयकाले रविवासरे द्वौ,

1. बालकथाकुंजम्, पृ.–8

उपवनवृक्षे, दोलां बद्धवा प्रणयं कुरुतः।

आइसक्रीमं चषकं

भुक्त्वा क्रीडतः।।

डॉ. संजय कुमार चौबे

डॉ. संजयकुमार चौबे का जन्म 19 जनवरी 1984 ई. को बिहार के एक छोटे से गाँव राजापुर, गोसाईपुर (बक्सर) जिले में श्री शोभानाथ चौबे एवं श्रीमती हीरामुनी देवी के घर में हुआ। आपने स्नात्तकोत्तर की परीक्षा काशी हिन्दु विश्वविद्यालय, वाराणसी से तथा विधावारिधि की उपाधि श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ, नई दिल्ली से प्राप्त की। आपके द्वारा अर्वाचीन संस्कृत साहित्य में बालोपयोगी बालगीति संग्रह 'चित्वा तृणं तृणम्' (बालगीतिमालिका) की रचना की है। प्रस्तुत गीत संग्रह में पच्चीस गीत अनुस्यूत किए गए हैं। बालक की मनोगत भावनाओं और उसकी सहज क्रीड़ाओं को आत्मसात् करते हुए आपके द्वारा जो भी बालगीत लिखे है, वह अत्यन्त सरल एवं मधुर स्वर में है। आपका हर गीत बाल–भावना से सम्पृक्त है।

कवि का अत्यन्त मनोहर एवं प्रेरणीय गीत वह लगता है, जिसमें वह उन सम्पूर्ण महान् बच्चों का उल्लेख करता है, जिनके कार्य भारतीय संस्कृति में आदर्श एवं उद्धरण बनकर वर्तमान के बच्चों में नवीन ऊर्जा का संचार करते है–

वयं बालका भारतभूताः शूरा वीरा मनस्विनः।

निर्भीका निर्द्वन्द्वचेतसस्तेजोयुक्तास्तपस्विनः।।

डॉ. अरविन्दकुमार तिवारी

डॉ. अरवन्दिकुमार तिवारी का जन्म 10 मार्च 1979 ई. को बिहार के मटिहानो माधो ग्राम में श्रीसालिक तिवारी एवं श्रीमती दुर्गावती देवी के घर में हुआ। आपने स्नातकोत्तर की परीक्षा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से तथा विद्यावारिधि की उपाधि बनारस से प्राप्त की।

अर्वाचीन संस्कृत काव्य विधाओं में अभिनवगीत विधा में बाल–साहित्य का अनुसरण करते हुए आपके द्वारा 51 बालगीतों के संग्रह के रूप में 'बालगुंजनम्' शीर्षक से पुस्तक की रचना की गई। दस वर्षीय बालक 'विभव तिवारी' प्रस्तुत पुस्तक का मुख्य बालक है जिसके क्रियाकलाप इस काव्य में सर्वत्र भ्रमर सदृश गुंजायमान् है।

इसके अतिरिक्त आधुनिक काव्यकारों द्वारा बालकों के लिए भिन्न–भिन्न काव्य प्रयोजनों को आत्मसात् करते हुए बालकाव्य एवं बालगीतों का प्रणयन किया जा रहा है। जिनका मुखदर्शन अनेक बाल–साहित्य आधारित पत्र–पत्रिकाओं एवं डॉ. सम्पदानन्द मिश्र के 'संस्कृत बाल–साहित्य परिषद्'

के आमुखपटल पृष्ठ पर परिलक्षित होता है। इन बालकाव्यकारों में मुख्य है– कवयित्री आशा अग्रवाल का 'किम् भो बालः!' (2017 ई.) कवयित्री मनोरमा रचित 'संस्कृतगीतमालिका' (1981 ई.), ओमप्रकाश ठाकुर रचित 'इन्द्रधनु' काव्य (1993 ई.), डॉ. विश्वास रचित 'बालवाटिका' (सम्भाषणसन्देश में प्रकाशित), प्रो. बनमाली बिश्वाल रचित 'बालवाटिका' (2006 ई.), अनिलकुमार दवे रचित 'बालगीतम्, प्रमिला पारेख रचित 'बालसाहित्यसरिता' दशरथजानी विरचित 'भारतदेशविधाता' (1989 ई.), एवं 'कथातरङ्गिनी' (1989 ई.), वैद्य रामस्वरूप शास्त्री विरचित 'बालनीतिकथा' (1977 ई.), कमला अभयंकर विरचित 'रंजनकथामाला', आचार्य उदयन हेगड़े विरचित, 'महाभारतनीतिकथा', श्री अशोक कौशिक विरचित, 'बोधकथा' इत्यादि काव्यों का प्रणयन किया गया है। इसके अतिरिक्त डॉ. कौशल तिवारी, मधुसूदन महापात्र, तरुण मित्तल 'तारा', श्री रामचन्द्र अम्बिकानाथ शांडिल्य, राजनाथ द्विवेदी, डॉ. पूर्णचन्द्र उपाध्याय, डॉ. तन्मय भट्टाचार्य, नागराज राव, डॉ. नारायण दाश आदि लेखकों के द्वारा स्वतंत्र रूप से बालगीत, बालनाटक, बालकथा, हास्यकणिका आदि की रचना की जा रही है।

≈≈≈≈

तृतीय अध्याय

आधुनिक संस्कृत बाल–साहित्य परक विधा

एवं ग्रन्थ परिचय

(क) बाल–साहित्यपरक : खण्डकाव्य (गीतिकाव्य)

(ख) बाल–साहित्यपरक : कथा संग्रह

(ग) बाल–साहित्यपरक : उपन्यास

(घ) बाल–साहित्यपरक : अनूदित बाल साहित्य

(ङ) बाल–साहित्यपरक : नाट्यसंग्रह

(च) बाल–साहित्यपरक : पत्र–पत्रिकाएँ

तृतीय अध्याय

आधुनिक संस्कृत बाल–साहित्यपरक विधा एवं ग्रन्थ परिचय

आधुनिक काव्य जगत् में काव्यशास्त्रियों द्वारा 'साहित्य' शब्द का प्रयोग काव्य के अर्थ में मानकर ही विचार किया जाता है। पूर्व में 'काव्य' संज्ञा वस्तुतः कवि–कर्म को अभिव्यक्त करती थी–कवेः कर्म काव्यम्।

आधुनिक सन्दर्भ में काव्य के स्थान पर प्रयुक्त 'साहित्य' शब्द का व्यावहारिक प्रयोगों के साक्ष्य के आधार पर तीन अर्थों में प्रयुक्त किया गया है–

प्रथमतः – 'साहित्यपाथोनिधिमन्थनोत्थं काव्यामृतं रक्षत हे कवीन्द्रा': के साक्ष्य पर साहित्य शब्द का अर्थ बड़ा व्यापक है अर्थात् समस्त लिखित मौखिक वाङ्मय के अर्थ में भी साहित्य शब्द का प्रयोग होता है।

द्वितीयतः – 'साहित्ये सुकुमारवस्तुनि दृढ़न्यायग्रहग्रन्थिले' श्री हर्ष की इस उक्ति के साक्ष्य पर साहित्य शब्द को वाङ्मय के एक भाग विशेष 'काव्य' के अर्थ में प्रयुक्त किया जाता है।

तृतीयतः – 'साहित्यविद्याश्रमवर्जितेषु.....' में साहित्य शब्द काव्य और काव्यशास्त्र के सम्मिलित अर्थ में प्रयुक्त किया गया है।

आधुनिक जीवन में साहित्य या काव्य शब्द संस्कृत में समान भाव को अभिव्यक्त करता है... 'सहितेन भावः साहित्यम्'। वस्तुतः प्राचीन काव्यशास्त्रियों से ले कर अर्वाचीन काव्यशास्त्रियों द्वारा 'काव्य' अथवा 'साहित्य' को अलग–अलग सन्दर्भों में परिभाषित किया जाता है। काव्यशास्त्र के आचार्य भामह का साहित्य के सन्दर्भ में मत है कि– "शब्दार्थौ सहितौ काव्यम्।"[1] अर्थात् सहभाव सम्पन्न शब्दार्थ ही काव्य है। शब्दार्थ का सहभाव व्यावहारिक वाक्य और शास्त्रीय या वैज्ञानिक चिन्तन परक वाक्यों में प्रत्यक्ष होता है। परन्तु काव्य का सहभाव इससे पृथक् है। वस्तुतः भामह शब्दार्थ के जिस भाव को साहित्य कहते हैं वह उत्कृष्ट कोटि का सहभाव है। वह सहभाव ऐसा हो कि एक तरफ पाठक विभिन्न पुरुषार्थों में व्युत्पन्न मति प्राप्त करे, साथ ही सहृदय बालक, तरुण अर्थात् काव्यमर्मज्ञों को आह्लाद तथा प्रसन्नता प्राप्त हो।

---

1. काव्यालंकार, आचार्य भामह, 1/16, पृ.–13

वस्तुतः शब्दार्थ की समष्टि द्वारा वर्णित आख्यान को आचार्य भामह से लेकर मम्मट तक, काव्य के रूप में स्वीकार करने की अविच्छिन्न परम्परा का अनुमोदन प्रकट होता है। पण्डितराज जगन्नाथ द्वारा भी प्राकारान्तर से शब्दार्थ समष्टि से युक्त (रमणीय अर्थ के प्रतिपादक) शब्द को 'काव्य' शब्द से सम्बोधित किया है। यथा कथन है– "रमणीयार्थप्रतिपादकः शब्दः काव्यम्"[1] वस्तुतः शब्द एवं अर्थ दोनों मिलकर ही काव्य संज्ञा प्राप्त करते हैं, पृथक्–पृथक् होकर नहीं। जैसाकि ध्वनिकार आनन्दवर्धन का कथन हैं–

"सहृदयहृदयाह्लादिशब्दार्थमयत्वमेव काव्यमिति।"[2]

अर्थात् सहृदयों को आह्लादित करने वाले शब्दार्थों की संघटना ही काव्य है।

यहां 'सहृदयता' क्या है? इस सन्दर्भ में महामहेश्वर अभिनवगुप्त पदाचार्य का कथन है– "येषां काव्यानुशीलनाभ्यासवशाद् विशदीभूते मनोमुकूरे वर्णनीयतन्मयीभवनयोग्यता ते हृदयसंवादभाजस्सहृदयाः इति।"

स्नातन कवि रहसबिहारी द्विवेदी ने भी सहृदयाह्लादन युक्त कवि सद्वाणी को ही 'काव्य' शब्द से सम्बोधित किया है। यथा–

"सुहृदां हृदयाह्लादे लोकोद्बोधे च सङ्गता।
प्रज्ञावतः कवेः सद्वाक् काव्यमित्यभिधीयते।।"

अर्थात् सहृदयों के हृदयाह्लादन एवं लोक के उद्बोधन में संगत प्रतिभाशाली कवि की सद्वाक् ही काव्य कही जाती हैं। 'सहृदय' शब्द को ग्रहण करते हुए अभिराज राजेन्द्र मिश्र ने काव्य को सहृदयास्वाद्य, कोविदास्वाद्य तथा लोकास्वाद्य इन तीन रूपों में विभक्त किया है। प्रो. मिश्र जी कहते हैं कि यहाँ 'सहृदया' वह हैं जो व्यङ्ग्यार्थ के अवगमन में समर्थ हो।[3] किन्तु वर्तमान काव्य–जगत् में व्यंग्यार्थ के ज्ञाताओं की अल्पता होने के कारण अभिधेयार्थ युक्त 'सत्काव्य' ही लोकास्वाद्य होता है। अतः मात्र व्यङ्ग्यार्थ–संवलित कविता ही कवि के लिए श्रेयस्करी नहीं होती और न ही मात्र लक्ष्यार्थ से युक्त कविता प्रशंसनीय होती है। 'कविता' शब्द से प्रो. मिश्र का वक्तव्य 'लोक' (समाज) का यथेष्ट–अनुरंजन करने वाले माधुर्यादि गुणों से गुम्फित तथा अतिशय उदात्त वर्णनों से युक्त शब्दार्थ ही कविता है।[4]

---

1. रसगंगाधर, पण्डितराज जगन्नाथ, 1/1, पृ.–10
2. ध्वन्यालोक, आचार्य आनन्धवर्धन, 1/7
3. अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, परिचयोन्मेष/38–40, पृ.–51
4. अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, परिचयोन्मेष/46, पृ.–58

प्राचीन साहित्य का अनुसरण करते हुए वर्तमान युग में आविर्भूत 'बालसाहित्य' में समस्त वेद, शास्त्र–इतिहास–पुराकथाएँ–काव्य एवं नाट्य ; यहाँ तक की समस्त साहित्यक विधाएँ भी सम्मिलित हैं।

अर्वाचीन संस्कृत में प्रादुर्भूत 'बालसाहित्य' लेखन के प्रयोजन को स्पष्ट करते हुए आत्मीयप्रवर रहसबिहारी द्विवेदी का कथन है–

"असन्तं मार्गमुत्सृज्य सन्तं गमयितुं जनम्।
हृदाह्लादिकया वाचा प्रज्ञावान् काव्यमङ्क्ते।।

कविकीर्तिपुरस्कारस्वान्तसुखसमीहया।
प्राक्कथावस्तुसंस्कारं सतां च चरिताङ्कनम्।।

नव्यकाव्यविधोन्मेषं व्यङ्ग्योक्तिं विकृतोतथा।
राष्ट्रभक्तिं युगौचित्यं पर्यायवरणचेतनाम्।।
राष्ट्रस्वातन्त्र्यवीराणां चरितं चाराध्यमीश्वरम्।
समुद्दिश्याधुना काव्यं कुर्वन्ति कवितल्लजाः।।"[1]

वस्तुतः अर्वाचीन युग में सन्धानित बालकाव्य का मुख्य प्रयोजन भी अनेक विधा आधारित साहित्य के माध्यम से बालकों में नैतिक चरित्र, संस्कार–शील–राष्ट्रभक्ति, पर्यावरण चेतना जैसे नैतिक मूल्यों को आत्मसात् करवाने का कविप्रयोजन दृष्टिगोचर होता है।

कविवर प्रो. राधावल्लभत्रिपाठी जी[2] ने भी भावों को स्फूर्त करने वाले तथा लोक अर्थात् संसार का अनुसरण करने वाले शब्दार्थ को ही 'काव्य' शब्द से सम्बोधित किया है– यथा–**'लोकानुकीर्तनम् काव्यम्'।**

यथार्थतः प्रो. त्रिपाठी 'साहित्य' शब्द के अन्तर्गत पद्यबद्ध आधुनिक कविताओं के साथ–साथ गद्यबद्ध कथा–आख्यायिका का भी ग्रहण करते हैं।

अर्वाचीन लक्षण ग्रन्थों में यद्यपि पृथकतया बाल–साहित्य के लक्षण एवं भेद तो प्राप्त नहीं होते हैं किन्तु बाल–साहित्य में प्राप्त विधाओं के लक्षण आधुनिक **काव्यलक्षण** ग्रन्थों के काव्यलक्षणों से समानता रखते हैं। प्रो. सम्पदानन्द मिश्र जी (अध्यक्ष, बालसाहित्य परिषद, पुण्डुचेरी) के बालकाव्य ग्रंथों के प्राक्कथन में बाल–साहित्य की परिभाषा एवं स्वरूप का उल्लेख प्राप्त होता है–

---

1. कालिदास संस्थान, वाराणसी में आयोजित समारोह में कवि रहसबिहारी द्विवेदी के उद्बोधन से उद्धृत।
2. अभिनवकाव्यालंकारसूत्रम्, प्रो. त्रिपाठी 1/1/1, पृ.–1

"बालानां बोधाय, बालानां चरित्रनिर्माणे, आत्मशक्तीनां विकसने च तेषु स्वदेश प्रेम्णः जागरणाय, सौन्दर्यबोधाय, तेभ्यः संस्कारप्रदानाय, समुचितनैतिकमूल्यबोधाय, बालकेषु संस्कृतप्रीतिं प्रदयितुं, तेषां भाषा ज्ञानं, वर्धयितुं बालानां रुच्यनुसारेण यत् साहित्यं विनिर्मितं तत् साहित्यं 'बालसाहित्यम्' इति शब्देन परिभाष्यते। वस्तुतः बालसाहित्यान्तर्गते नवनवशब्दानां प्रयोगः, नवनवकाव्यशैलीनां, काव्यविधानां नवनवविचाराणां च समावेशो भवति।"[1]

आधुनिक काव्यशास्त्रियों में अभिराजराजेन्द्रमिश्र ने शब्दार्थ युक्त रसात्मक काव्य को ही दृश्य एवं श्रव्य काव्य के रूप में स्वीकार किया है। यथा–

"दृश्यं श्रव्यं प्रकाराभ्यामादौ काव्यं द्विधा मतम्।"[2]

कविवर प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी जी ने काव्य को पाठ्य एवं दृश्य के अन्तर्गत दो भेदों में विभक्त किया है–

"द्विविधं तत् पाठ्यं दृश्यं च।"[3]

यहाँ त्रिपाठी जी द्वारा 'पाठ्य' शब्द प्राचीन विद्वतगण द्वारा प्रतिपादित 'श्रव्य' काव्य से समानार्थक रखता है। त्रिपाठी जी का वक्तव्य है कि जिस प्रकार प्राचीन काल में कविगण सदन अथवा समाज में अपने काव्य का पाठ करते थे तथा सहृदय सामाजिक गणों से सुनने से उस काव्य को 'श्रव्य' शब्द से सम्बोधित करते थे। किंतु वर्तमान में साहित्य का रूप मुद्रित पुस्तकों के रूप में उपलब्ध होने से श्रव्य काव्य का 'पाठ्य' काव्य में रूपान्तरण हो गया है। प्रो. मिश्र जी ने श्रव्य काव्य को परिभाषित किया है कि– "जो काव्य श्रवणेन्द्रिय (कर्णेन्द्रिय) ग्राह्य हो, वह 'श्रव्य काव्य' कहलाता है।"[4]

मिश्रजी का वक्तव्य है कि वह श्रव्य काव्य तीन प्रकार का होता है– पद्य–गद्य एवं मिश्र काव्य। यहाँ 'पद्य' काव्य से प्रो. मिश्र जी का अभिप्राय चार पदों अथवा चरणों से निबद्ध काव्य से हैं। आचार्य भरतमुनि 'पद्य' के स्थान पर 'बन्ध' शब्द का प्रयोग करते है। 'बन्ध' पद को लक्षित करते हुए आचार्य भरत कहते हैं– बन्धभेदमाचार्यभरतो चूर्णनिबद्धशब्दाभ्याम् नियताक्षर प्रमाण–नियताक्षरशब्दाभ्यां वा बोधयति। वस्तुतः बाल–साहित्य में उपलब्ध श्रव्य–काव्य बालमनोऽनुकूल 'कविता' अथवा 'गीतविधा' में उपलब्ध होता है।

---

1. संस्कृत बाल–साहित्य परिषद, पुण्डुचेरी के अध्यक्ष प्रो. सम्पदानन्द मिश्र का वक्तव्य।
2. अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, निर्मितित्त्वोन्मेष/19, पृ.–197
3. अभिनवकाव्यालंकारसूत्रम्, प्रो. त्रिपाठी, 3.1.1, पृ.सं.–145
4. अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, 4/50, पृ.–206

"श्रव्यकाव्यमथेदानीं प्राप्तकं यन्निरूच्यते।
गृह्यते हि यदानन्दो रसिकैः श्रुतिसङ्गतः।।"

बाल–साहित्य में स्वतंत्र रूप से प्रयुक्त श्रव्य काव्य छन्दोबद्ध होता है किंतु मुक्तक शैली की प्रधानता ही वहाँ अधिकांशतया प्राप्त होती है। श्रव्य बालकाव्यों का मुख्य प्रयोजन भी साहित्यानुरागी मनोरंजन प्रिय एवं सहृदय सुकारमति प्रयुक्त बालकों को नैतिक ज्ञान की शिक्षा उपलब्ध करवाना है।

श्रव्यकाव्य में परिगणित पद्य को नाट्यशास्त्रकार आचार्य भरत ने 'नियताक्षरमाख्यातं'। शब्द से सम्बोधित किया है। यह नियताक्षर पद्य समवृत्त, विषमवृत्त एवं अर्धसमवृत्त के भेद से तीन प्रकार का होता है।[1] बाल–साहित्य में भी इन तीनों प्रकारों का प्रयोग द्रष्टव्य है।

बाल–साहित्य में प्रयुक्त श्रव्य काव्य का द्वितीय भेद हैं गद्य। प्रो. मिश्र जी ने गद्य के लिए 'चूर्णपद' का प्रयोग किया है। नाट्यशास्त्र में चूर्णपद को परिभाषित करते हुए भरत मुनि कहते हैं–

"अनिबद्धपदच्छन्दस्तथा चनियताक्षरम्।
अर्थापेक्षाक्षरस्यूतं ज्ञेयं चूर्णपदं बुद्धैः।।" (अष्टादश अध्याय)

अर्थात् अनिबद्ध पदच्छन्दों वाला, अनिश्चित अक्षर संख्या वाला तथा अर्थापेक्षानुसारी अक्षर–विस्तार वाला बन्ध विद्वानों द्वारा 'चूर्णपद' कहा जाता है। अतः आचार्य भरत की दृष्टि में 'चूर्ण' ही गद्य है। सामान्यतः व्याकरणात्मक दृष्टि में 'गद्य' शब्द 'गद्' धातु (व्यक्तायां वाचि) से यत् प्रत्यय लगाकर बना है जिसका अर्थ हैं मानव की अभिव्यक्ति की मौलिक प्रक्रिया।

दण्डी ने काव्यादर्श में 'गद्यकाव्य' की परिभाषा देकर उसे आख्यायिका और कथा के रूप में विभाजित किया है–

"अपादः पदसन्तानो गद्यमाख्यायिका कथा।" (1/13)

साहित्यदर्पणकार पं. विश्वनाथजी ने[1] समास के प्रयोग तथा वृत्तभाग के निवेश की दृष्टि से गद्य के चार प्रकार माने हैं– मुक्तक, वृत्तगन्धी, उत्कलिकाप्राय, चूर्णक। प्रो. मिश्र जी ने भी चूर्णबन्ध गद्य के पं. विश्वनाथ सम्मत चारों भेद स्वीकार है। प्रो. मिश्र जी का कथन हैं–

"गद्यं चतुर्विधं प्रोक्तं मुक्तकं वृतगन्धि च।
ततश्चोत्कलिका प्रायं चूर्णकं चान्तिकं मतम्।।
असमस्तपदं मुक्तं पद्यांशि वृतगन्धि च।
अन्यदीर्घसमासाढ्यं चूर्णमल्पसमासकम्।।"[2]

---

1. साहित्यदर्पणम् (6/332–2)
"आद्यं समासरहितं वृत्तभागयुतं परम्।
अन्यद्दीर्घसमासाढ्यं तुर्यं चाल्पसमासकम्।।"
2. अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, निर्मितित्त्वोन्मेष/50–55, पृ.–228

अर्वाचीन संस्कृत बालसाहित्य में उपर्युक्त चारों प्रकार के गद्य के प्रकारों के अंश प्राप्त होते हैं। बाल–साहित्य में समासहीन पदों वाले मुक्तक गद्य पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है। यथा–

"एका धेनुः। तस्याः वर्गः श्वेतः। सा द्रष्टुं रमणीया। तस्याः रक्षकः तां बडला इति आकारयति। प्रतिदिनं तृणानि चरितुं सा अरण्यं गच्छति। सायंकाले पुनः गृहं प्रत्यागच्छति।"[1]

वृत्तगन्धि गद्य पद्यांशो से युक्त अर्थात् पद्य जैसा ही प्रतीत होता हैं। यहाँ गद्य में ही पद्य का आभास होता हैं, यथा –

एवं वर्णयन् कृषकः पुनः पाषाणः अभवत्।
तदनु बुद्धिजीवी जीवन् वर्णयितुं प्रारब्धवान्।।[2]

प्रस्तुत गद्यांश में वर्णित है कि कृषक पुनः पाषाणवत् हो गया। यह अंश छन्द की दृष्टि से अनुष्टुप जैसा ही प्रतीत होता है। वस्तुतः वृतगन्धि गद्य युक्त बाल–साहित्य अल्प मात्रा में ही उपलब्ध होता है।

उत्कलिकाप्राय गद्य दीर्घसमासों से ओतप्रोत होता है। बाल–साहित्य में उत्कलिकाप्राय गद्य की अल्पता अभिव्यक्त होती है। कवि बालमानस को दृष्टि में रखते हुए इस प्रकार के गद्य के प्रयोग से बचने का प्रयास करता है। यथा–

"वल्लभोऽपि तामनूढां ज्ञात्वाऽनुकूलयितुकामस्तदन्तिकमुपेत्य
नेत्रयुगलंविस्तारयन् समुद्रग्रीवस्सन् दक्षिणपादमसकृच्चालयन्
स्वकीयस्मरभावमिङ्गिताकारचेष्टाभिः प्रकाशितवान्।
द्विजिह्वस्नुषा तु तं सुदर्शनजम्बुकयुवकं दृष्ट्वैव मदविह्वलाऽऽसीत्।"[3]

चूर्णक गद्य अल्पसमास युक्त होता है। यहाँ सम्भाषण युक्त भाषा शैली में लघु–लघु समासरहित, सार्थक शब्द युक्त वाक्यों का प्रयोग द्रष्टव्य हैं–

आगच्छ मेघ! आगच्छ मातुल! आगच्छ मातुल!
रोटिका उष्णा। उष्णं च शाकम्।.........

वृष्टिं कुरु मातुल! भगिन्या धरित्र्या दुखं हर मेघ![4]

(क) बालसाहित्य परक : खण्डकाव्य (गीतिकाव्य)

वस्तुतः अर्वाचीन संस्कृत बालसाहित्य में उपलब्ध स्तरीय बालसाहित्य जहाँ विभिन्न वृत्तगन्ध में सन्निहित हैं वहीं दूसरी और बालकों के ज्ञानार्थ लिखित विभिन्न गीत एवं कविताएँ मुक्तक प्रकारों में परिलक्षित होते हैं। पद्यकाव्य का लक्षण देते हुए विश्वनाथ जी ने कहा है–

---

1. सुकान्तकथाविंशतिः, प्रो.. सुकान्तकुमारसेनापतिः, पृ.–15
2. पताका (बालोपन्यास), डॉ. केशवचन्द्रदाशः, पृ.–103
3. कान्तारकथा (अनूदित बालकथा), प्रो. मिश्र, पृ.–38
4. चमत्कारिकः चलदूरभाषः, ऋषिराज जानी, पृ.–35

छन्दोबद्धपदं पद्यं तेन मुक्तेन मुक्तकम्।
द्वाभ्यां तु युग्मकं संदानितकं त्रिभिरिष्यते।।
कलापकं चतुर्भिश्च पंचभिः कुलकं मतम्।[1]

पूर्वाचार्यों द्वारा कथित पद्यकाव्य को पुनः प्रो. मिश्र जी ने दो भेदों–मुक्तक एवं प्रबन्ध काव्य में विभाजित किया है। यहाँ मुक्तक पुनः युग्मक, सन्दानितक, कलापक, कुलक एवं शतकादि भेदों में विभक्त है।[2] मूलतः तो पद्यबन्ध काव्य मुक्तक एवं प्रबन्ध, इन दो भागों में ही विभाजित है। मुक्तक अर्थात् पिछले एवं अग्रिम कथा सन्दर्भ से जो मुक्त हो, स्वतंत्र हो– वह पद्य मुक्तक कहलाता है। 'अभिनवगुप्तपादलोचनटीका'[3] में मुक्त शब्द को स्पष्ट करते हुए कहा है कि दूसरे द्वारा आलिङ्गित न होना। मुक्त पद्य ही मुक्तक है। कन् प्रत्यय संयोजित होने से 'मुक्तक' पद निष्पन्न होता है। अतः स्वतंत्रतापूर्वक समाप्त होने वाला, निजेतर अर्थ की आकांक्षा न करने वाला तथा प्रबन्ध काव्य के बीच में परिलक्षित पद्य 'मुक्तक' होता है। बाल–साहित्य में मुक्तक काव्य प्रबन्ध काव्यों के ही समान रसाभिनिवेश युक्त होते हैं।

यथा–

यदाऽऽहवे नीलतरङ्गिणीतटे,
सिताङ्गिनां फ्रेंचजदेहिनां तया।
तथा शतहन्योऽसय आपतन्नृषु
पतान्ते वृष्टौ करकाकरा यथा।।[4]

इसी प्रकार अभिराज राजेन्द्र मिश्र का यह पद्य भी रसाभिनिवेश से युक्त मुक्तक काव्य का श्रेष्ठ उदाहरण है–

"एका चटका स्थिता गवाक्षे द्वे चटके प्रोड्डीने,
तिस्त्रश्चटका बहिरुद्याने संक्रीडन्ते पीने।
माणवकाः संयोज्य वदत, सर्वा एता नु कियत्यः?
एका द्वे तिस्त्रश्चटकास्ताः षट् संख्या गतिमत्यः।।"[5]

प्रस्तुत पद्य, पूर्व पद्य एवं पर पद्य के सन्दर्भों से किसी भी प्रकार सम्बन्धित नहीं हैं।

---

1 साहित्यदर्पणम्, पं. विश्वनाथ, पृ.–224
2. अभिराजयशोभूषणम्, पृ.–211
3. ध्वन्यालोक की लोचन टीका (आचार्य विश्वेष्वर सिद्धान्तशिरोमणि कृत व्याख्या) 3/7, पृ.–182
4. बालतरङ्गिणी, डॉ. रामकिशोर मिश्र, पृ.–23
5. कौमारम्, प्रो. मिश्र, पृ.–32

मुक्तक काव्य के भेद–निरूपण के सन्दर्भ में पं. विश्वनाथजी का कथन हैं–"दो पद्यों के समन्वय से युग्मक, तीन पद्यों के समन्वय से सन्दानितक, चार पद्यों के समन्वय से कलापक, तथा पाँच पद्यों के समन्वय से युक्त मुक्तक को कुलक कहते हैं। प्रस्तुत भेद–निरूपण में परिगणित 'युग्मक' का उदाहरण परिलक्षित है–

"यात्यागतिमपि परावर्तितुं ननु ममास्ति शक्तिः।
प्रत्यक्षं प्रकृटिकर्तुं चणिकां, परा भक्तिः।।"
"आर्षमहिम्नां समुच्चयाश्चामीकरकणा वयम्।
खरदूषणजीवातुहराः श्रितदण्डकवना वयम्।।"[1]

इसी तरह कवि गण बाल–साहित्य में 'सन्दानितक' छन्दोबद्ध पद्यों का भी प्रचुरता से प्रयोग करते हैं–

यथा– **काममद्य शिशवः परन्तु युवकाः श्वस्तना वयम्।**
वयं शासका वयं सैनिका अरिमर्दना वयम्।।
स्वप्नाः सन्ति सहस्रमिता लोचनयोरस्माकम्।
सङ्कल्पाश्च सहस्रमिता नूनं हृदयेऽस्माकम्।।
स्वप्नानहो पूरयिष्यामो विक्रमधना वयम्।
सङ्कल्पे प्रभविष्यामः पुरुषार्थश्रमा वयम्।।[2]

इसी तरह चार पद्यों के संयोग से युक्त 'कलापक' भी बाल साहित्य में द्रष्टव्य हैं–

"इतिहासं नूतनं चरित्रैः स्वीयैः रचयिष्यामः।
काले समागते बन्धो! के वयमित्याख्यास्यामः।।
वेदपुराणस्मृतिगीताङ्गमहिमाऽन्वितवाणी।
संस्कृतनाम्नी जयति भारते निखिलविश्वकल्याणी।।
पायं पायं यत्प्रतिपाद्याऽमृतममराः संजाताः।
वयं विश्वगुरवोऽधुनातना विश्वबन्धुतास्नाताः।।
हिमगिरिगङ्गोदधित्रिवेण्या तीर्थपतिं स्रक्ष्यामः।
काले समागते बन्धो! के वयमित्याख्यास्यामः।।"[3]

---

1. कौमारम्, प्रो. मिश्र, पृ.–92
2. कौमारम्, प्रो. मिश्र, पृ.–91
3. कौमारम्, प्रो. मिश्र, पृ.–95

इसी प्रकार पाँच पद्यों से युक्त 'कुलक' का उदाहरण डॉ. रामकिशोर मिश्र प्रणीत 'बालतरङ्गिणी' ग्रन्थ के **'शब्दधातुरूपाण्यवगच्छ'**[1] **पुत्र! 'संस्कृतं पठ निजभाषायाम्'**[2] तथा **'दुग्धं किन्न पिबसि कविबाले'**[3] एवं 'बाल कवितासंग्रह' में प्रचूरतया उपलब्ध होता है। इसी तरह **'अगस्त्यः'**[4] कविता के अन्तर्गत 6 पद्यों से युक्त 'कुलक' का सुन्दर उदाहरण प्राप्त होता है।

इसी प्रकार बाल–साहित्य में मुक्तक के समान ही प्रबन्ध काव्य का सन्निभिवेश भी दिखाई देता है। प्रबन्ध काव्य का लक्षण अभिव्यक्त करते हुए प्रो. मिश्र जी का कथन है–

पद्यान्तरनिरपेक्षं यथा भवति मुक्तकम्।
पूर्वाऽपरकथापेक्षं प्रबन्धं प्रोच्यते तथा।।

अर्थात मुक्तक काव्य में पद्य का पूर्व पद्य एवं पर पद्य से किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं होता है। प्रबन्ध काव्य मुख्यतया दो प्रकारों–महाकाव्य एवं खण्डकाव्य में विभक्त हैं। अर्वाचीन बाल–साहित्य में महाकाव्य के उदाहरण प्राप्त नहीं होते अथवा साहित्यकारों द्वारा काव्य सन्धान का प्रयास नहीं किया गया है। किंतु खण्डकाव्य का प्रयोग परिलक्षित होता है। खण्डकाव्य का लक्षण प्रतिपादित करते हुए पं. विश्वनाथ जी ने कहा है–

"खण्डकाव्यं भवेत्काव्यस्यैकदेशानुसारि च।"[5]

प्रो. राजेन्द्र मिश्र जी ने खण्डकाव्य का लक्षण प्रतिपादित किया है–

"कस्यचित्पुरुषार्थस्य वर्णनन्तु यदांशिकम्।
जीवनस्याथवा नेतुः खण्डकाव्यं तदुच्यते।।
खण्डकाव्यमिदं चैव स्वेतिवृत्तानुरोधतः।
विविधान्यभिधानानि पृथगर्थानि गच्छति।।"[6]

अर्थात् जिस काव्य में किसी पुरुषार्थ (धर्म, अर्थ, काम) का आंशिक सांगोपांग वर्णन प्राप्त होता हैं अथवा नायक के जीवन के केवल एक भाग का ही वर्णन प्राप्त होता है तो उसे खण्डकाव्य कहते हैं। यहीं खण्डकाव्य स्व इतिवृत के अनुरोधवश, पृथक अर्थ वाले विविध नामों (संज्ञाओं) को धारण करता है। त्रिवेणी कवि प्रो. राजेन्द्र मिश्र ने खण्डकाव्य को गीतकाव्य के नाम से भी संबोधित किया है। क्योंकि गीतकाव्य में भी गीत तत्त्व की ही प्रधानता होती हैं। संस्कृत बाल–साहित्य में

---

1. 'बालतरङ्गिणी' डॉ. रामकिशोर मिश्र, पृ.–3
2. 'बालतरङ्गिणी'' डॉ. रामकिशोर मिश्र, पृ.–4
3. 'बालतरङ्गिणी'' डॉ. रामकिशोर मिश्र, पृ.–5
4. 'बालतरङ्गिणी ' डॉ. रामकिशोर मिश्र, पृ.–37–38
5. साहित्यदर्पणम्, 6/329, पृ.–226
6. अभिराजयषोभूषणम्, प्रो. मिश्र 4/81–82, पृ.–224

विपुलतया गीत काव्यों का प्रयोग उपलब्ध होता है। यथा त्रिवेणी कवि राजेन्द्र मिश्र प्रणीत 'कौमारम् (शिशु गीतसंग्रह), डॉ. रामकिशोर मिश्र प्रणीत' बालतरङ्गिणी' इत्यादि प्रधान गीत काव्य है। गीतकाव्य का लक्षण देते हुए प्रो. राजेन्द्र मिश्र का कथन है–

"यच्च गीतिषु सामाख्येत्युक्तमासीत्पुरातनैः।
तेमैव गीतितत्त्वस्य महत्त्वं धुरि संस्थितम्।।
न तथा व्यंजनैस्तृप्तिर्यथा हि चषकाम्भसा।
ननु धर्माभितप्तस्य पथिकस्याभिजायते।।"
तथैव रसिकस्यापि महाकाव्यानुशीलनात्।
जायते न तथाऽऽनन्दो यथा गीतेन तत्क्षणम्।।
अलङ्कारस्यौचित्यध्वनिवक्रोक्तिरीतिभिः।
तस्मादलं यतो गीतं काव्यास्यात्मेति निश्चितम्।।
तस्मादद्यतने काव्ये गीतमेव महीयते।
अमन्दानन्दसन्दोहस्त्रोतस्त्वादधिसंस्कृतम्।।
गीतिर्गीतं च गेयं च गानमेतन्मिथस्समम्।
प्रत्ययाच्छब्दवैभिन्न्यं न पुनर्धातुयोगतः।।"[1]

यह सत्य है कि बालगीतों में राग तत्त्व का अविरल प्रवाह होता है। यह राग तत्त्व बालकों के हृदय को आकृष्ट करने में समर्थ होते हैं। बालगीतों में गेय तत्त्व बालकों के अर्न्तमन मन में रोमांच एवं मर्मस्पर्शिता उत्पन्न करने में समर्थ होता है। शूद्रक का मत है कि गीत काव्य में निम्नलिखित गुण स्फुट (परिभाषित) होते हैं–

रक्तं स्फुटं समं चैव मधुरं च मनोहरम्।
भावान्वितं भवेद्गीतं ललितं चेति शूद्रकः।।

आधुनिक संस्कृत–साहित्य में परिलक्षित यह बालगीत न केवल बालक बालिकाओं को सन्तुष्ट करने में समर्थ होते हैं अपितु पशु–पक्षी, मृगादि जानवरों के हृदय को भी आकर्षित करने में पूर्णतया समर्थ हैं।

त्रिवेणी कवि प्रो. राजेन्द्र मिश्र द्वारा 'अभिराजयशोभूषणम्' काव्य शास्त्रीय ग्रंथ में गीतकाव्य के मुख्यतया दो भेद स्वीकार किये हैं प्रथम–शास्त्रीय गीत काव्य तथा द्वितीय लोकगीत। शास्त्रीय गीत काव्य को परिभाषित किया है कि यह गीत विभिन्न प्रकार की रागों के माध्यम से गाया जाता

---

1. अभिराजयषोभूषणम्, प्रो. मिश्र 4/83–84, पृ.–226

है। जबकि लोकगीत में स्वतंत्र रीति से सम्प्राप्त कण्ठध्वनि से सुखपूर्वक गायन किया जाता है। बालगीतों में यद्यपि किसी राग विशेष का प्रयोग द्रष्टव्य नहीं है परन्तु इनका मुख्य प्रयोजन शिशुओं अथवा बालकों के हृदय में रमणीयता एवं कौतुकता उत्पन्न करना हैं। साथ ही यह बाल–गीत बालकों के लिए ही लिखे गए हैं।

अतः बालगीतों में कौतुकता, रमणीयता, हृदयहारिता, विनोदप्रियता, रूचि युक्त, चमत्कारवर्धक, रसयुक्त, सरल–सरस भाषा शैली, प्रसाद गुण सम्पन्न, अल्पाक्षर, वैदर्भी रीति, मिश्रित तथा लय इत्यादि गुणों का समावेश होता है। यथा अनुप्रास युक्त अनुरणात्मक लययुक्त बालगीत के अंश उद्धृत हैं–

ग्राममन्दिरे घण्टानादः।
घण्टानदन्ति सांयकाले।
सांयकाले शेते देवः।
देवगृहे नीराजनदीपाः।
ग्राममन्दिरे नीराजनायां।
सांयकाले घण्टानादः।।[1]

(ख) बाल साहित्य परक : कथा संग्रह

पद्य काव्य के अनन्तर संस्कृत बाल–साहित्य में उपलब्ध गद्य काव्य भी बालकों के लिए रमणीय तथा मनोरंजन प्रधान होता हैं। उपलब्ध काव्यशास्त्रीय ग्रंथों में गद्य–काव्य के दो भेद स्वीकार किये हैं– कथा एवं आख्यायिका।

यह सत्य है कि आधुनिक बाल–साहित्य में कथा–साहित्य की कादम्बरी सदृश दीर्घकथाओं का अभाव है। किन्तु यहाँ बाल–साहित्यकार का मुख्य प्रयोजन लघु–लघु कथाओं के माध्यम से बालकों का मनोरंजन प्रदान करने के साथ ही नैतिक शिक्षा प्रदान करना हैं। अर्वाचीन संस्कृत बाल–साहित्य में यद्यपि पृथक् से बाल–कथा का लक्षण प्राप्त नहीं होता है, किंतु कहीं न कहीं बाल–कथाओं की कथावस्तु भी प्राचीन कथा लक्षणों से साम्यता रखती है। जैसाकि पं. विश्वनाथ जी का कथन है–

"कथायां सरसं वस्तु गद्यैरेवे विनिर्मितम्।"[2]

---

1. कपिः कूर्दते शाखायाम्, ऋषिराजः जानी
2. साहित्यदर्पणम्, सप्तम परिच्छेद/332, पृ.–226

अर्थात् सरल एवं ललित कथावस्तु से युक्त गद्य–काव्य को 'कथा–शब्द' से सम्बोधित किया जाता है।

अर्वाचीन संस्कृत साहित्य में आचार्य पद्मशास्त्री का कथा लक्षण, बालकथा साहित्य के लक्षणों को आत्मसात करता हुआ चरितार्थ हुआ है–

भूतलेऽस्मिन् विशेषेण मानवोऽये कथाप्रियः।
कथाभिः कल्पनाशक्तिः बालकेषु विवर्धते।।
शैली लोककथान्मन्तु सजीवा कल्पनाश्रिता।
सत्या भाति विचित्रापि चादर्शे प्रतिबिम्बवत्।।
बीजवच्च कथासूत्रं पद्मपल्लववत्कथा।
एका चैव कथा भङ्ग्या कथ्यते च सहस्रधा।।
हिन्द्यां श्रीचन्द्रनमुनेश्चोद्बोधकथा च।
सन्ति, चान्याश्च, सर्वेषामाभारं शिरसा वहे।।
कथानान्नानुवादोऽयं शतकेऽस्मिन् हि विद्यते।
केवलं हि कथासूत्रबलेनाऽत्र प्रपंचितम्।।
कथासु गुम्फितं चास्ति समग्रं लोकजीवनम्।
बालकानां विबोधाय कथानां च निदर्शनम्।।
बाला विविधभावानां कथाः श्रुत्वा प्रहर्षिताः।
ऐक्यभावनाया युक्ता विश्वशान्ति प्रवर्धकाः।।
गुम्फितं संस्कृतकथाशतकं सरलं मया।
संस्कृतस्य प्रसाराय मनोरंजनहेतवे।।
निर्धारयिष्यन्ति ध्रुवं नीरक्षीरविवेकिनः।
कथाकारश्रमं चात्र वीक्ष्य विद्वज्जनाः स्वयम्।।[1]

इसी तरह प्रो. राजेन्द्र मिश्र द्वारा कथा साहित्य का लक्षण देते हुए कहा है–

प्रबन्धात्मकगद्यस्य रूपद्वयमुदाहृतम्।
कथेति प्रथमं तत्राऽख्यायिकेत्यपरं मतम्।।
कथा तत्र भवेद्रम्या सरसा कल्पनाश्रिता।
दिव्याऽदिव्येवृत्तांशाः विविधानुभवैर्युता।।

---

1. विश्वकथाशतकम् (प्राक्कथनम्), आचार्य पद्मशास्त्री

अर्थात जो रमणीय, सरस, ललित तथा कल्पना आदि गुणों से युक्त हो, जो दिव्य अथवा अदिव्य कथावस्तु आधारित हो, वह कथा कहलाती है। यथा–त्रिवेणी कवि प्रो. राजेन्द्र मिश्र प्रणीत कान्तारकथा, डॉ. केश्वचन्द्रदाश द्वारा लिखित उर्मिचूड़ा, महान्, एकदा, पताका तथा पद्मशास्त्री द्वारा प्रणीत 'विश्वकथाशतकम्' आदि बालकथाओं के अन्तर्गत परिगणित है।

इसी प्रकार प्रबन्धात्मक गद्य के द्वितीय भेद आख्यायिका का यद्यपि अर्वाचीन बाल–साहित्य में कोई ग्रन्थ प्रणयनमेरे मत में अभी तक नहीं हुआ है। किन्तु कथा एवं आख्यायिका के मिश्रित रूप 'उपन्यास' विद्या बाल–साहित्य में वर्तमान में उपलब्ध है। उपन्यास का लक्षण प्रतिपादित करते हुए प्रो. राजेन्द्र मिश्र ने उसे कथा एवं आख्यायिका का मिश्रण बताया है यथा–

"कथाऽऽख्यायिकयोः कश्चिन्मिश्रभेदोऽपि साम्प्रतम्।
उपन्यास इति ख्यातो भाषान्तरप्रतिष्ठितः।।
कालखण्डविशेषस्य समग्रं जनजीवनम्।
प्रतिबिम्ब इवादर्शे न्यस्यतेऽत्र सविस्तरम्।।
क्वचित्सामाजिकी क्रान्तिः सर्वोदयसमर्थिनी।
रुढिपाखण्डविध्वंसौ नवाचारः क्वचित्पुनः।।"[1]

वस्तुतः कथा एवं आख्यायिका के मिश्रित रूप 'उपन्यास' में किसी कालखण्ड विशेष के सांगोपांग जनजीवन का दर्पणसदृश प्रतिबिम्ब के समान विस्तार से प्राप्त होता है, परन्तु उपलब्ध एवं प्राप्त बालोपन्यासों में कालखण्ड विशेष का अल्प रूप से ही वर्णन प्राप्त होता है यथा–केशवचन्द्रदाश प्रणीत 'पताका' (बालोपन्यास) में स्वतन्त्रता दिवस के विशेष कालखण्ड का कौतुकतापूर्ण मात्रा में वर्णन किया गया है।

इसी तरह अर्वाचीन बाल–साहित्य में बालकों के चारित्रिक अभ्युत्थान हेतु नैतिक शिक्षा आधारित विशेष प्रयोजन व्यक्त करने के लिए कथानिका (कहानी) प्राप्त होती है। यद्यपि अग्निपुराण[2] में वेदव्यासजी द्वारा गद्यकाव्य के पाँच भागों में कथानिका को भी प्रतिपादित किया है यथा–कथा, खण्डकथा, परिकथा, आख्यायिका एवं कथानिका।

अम्बिकादत्त व्यास जी द्वारा **'गद्यकाव्य मीमांसा'**[3] में उपन्यास को नो भागों में विभाजित करते हुए उनकों कथा व कथानिका नाम से सम्बोधित किया है जैसे–

---

1. अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, निर्मितित्त्वोन्मेष / 97–99वीं कारिका, पृ.–231
2. अग्निपुराण, 336 / 18
3. गद्यकाव्यमीमांसा, 1 / 25 / 26

कथा कथानिका चैव कथनालापकौ तथा।
आख्यानाख्यायिके खण्डकथा परिकथाऽपि च।।
संकीर्णमिति विज्ञेया उपन्यासभिदा नव।।

वस्तुतः कथानिका में कथा के प्रारम्भिक भाग में भयानक रस, मध्य में करुणरस तथा कथा के अन्त में अद्‌भुत रस की कल्पना की जाती है।

प्रो. राजेन्द्र मिश्र[1] ने कथानिका का लक्षण प्रतिपादित करते हुए उसे लघु एवं दीर्घ नामक दो भेदों में उल्लेखित किया हैं यथा–

प्रतिष्ठाधुरमध्यास्ते कथाभेदो हि कश्चन।
अभीष्टा सर्वभाषासु प्रोच्यते सा कथानिका।।
गृहीत्वा किमुप्युद्देश्यं लोकाभ्युदयकारकम्।
चित्रणेनचरित्राणां सरलयो कथानिका।।
क्वचित्पात्रमुखेनैव क्वचिल्लेखकभाषया।
क्वचित्संवादपद्धतया पूर्वोन्मेषदिशा क्वचित्।।
शिल्पान्तरैरनेकैश्च निबद्धेयं कथानिका।
लघ्वी दीर्घेति भेदाभ्यां द्विविधैव महीयते।।

प्रो. सुकान्तकुमारसेनापति द्वारा रचित 'सुकान्तकथाविंशतिः' में 20 कथानिकाओं का संग्रह हैं। यहाँ प्रत्येक कथानिका में जीवन मूल्य आधारित शीर्षक के माध्यम से बालकों को नैतिक मूल्यों की शिक्षा दी गई है। यहाँ कथानिकाओं के संवाद लेखक द्वारा स्वकीय भाषाशैली में सरल रूप में अभिव्यक्त किए गए हैं।

प्रो. राजेन्द्र मिश्र ने लघुकथा को अल्प विषयाधारित, अद्‌भुत रस समन्वित, एक पात्र युक्त, सरल–सरस एवं आश्चर्य गुणों से युक्त, हृदय को झंकृत करने वाली, अल्पाक्षर, अभिधा शब्द–शक्ति युक्त एवं लघु आकार वाले लक्षणों से परिभाषित किया है। लघुकथा के विषय में सनातन कवि आचार्य रहस–बिहारी द्विवेदी का कथन है–

उपन्यासस्य चैकांशश्चारुगद्यसमन्वितः।
प्रायशः कल्पितं वृत्तं समाश्रित्य प्रवर्तते।।
स्थाने काले क्रियायाश्च तत्रैभ्यं तथ्यगर्भितम्।
प्रेरकं च सदुद्देश्यं यस्याः लघुकथा च सा।।

---

1. अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, निर्मितित्त्वोन्मेष/111–114, पृ.–235

उपर्युक्त गुणों एवं लक्षणों से युक्त बाल–लघुकथाओं में प्रमुख रूप से डॉ. जनार्दन हेगड़े द्वारा लिखित 'बालकथासप्तति'' (2013 ई.) एवं डॉ. संजीव प्रणीत 'बोधकथा' (2011) इत्यादि परिगणित है।

लघुकथाओं के समान ही बाल–साहित्य के अन्तर्गत बालकों के अवबोधार्थ परिकथाओं का भी प्रणयन किया गया है। परिकथा का लक्षण देते हुए महामहेश्वर अभिनवगुप्त का कथन हैं–

"एकां च धर्मादिपुरुषार्थमुद्देश्यप्रकार वैचित्र्येणाऽनन्तवृत्तान्त वर्णनप्रकारा परिकथा। एकदेशवर्णना खण्डकथा। समस्तफलान्तेतिवृत्तवर्णना सकलकथेति।"

अर्थात् बालकों के अवबोध हेतु प्रणीत परिकथाओं का मुख्य प्रयोजन धर्मादि किसी एक पुरुषार्थ की सिद्धि करना है। जैसे–डॉ. के. वरलक्ष्मी द्वारा प्रणीत 'शिशुस्वान्तम्' (कथासंग्रह) में शिष्यवत्सला धात्री, अहो लक्ष्मीः, अनुशासकः शिक्षकः, विनायकः दृष्टः इत्यादि परिकथाओं के माध्यम से शिशुओं एवं बालकों को धार्मिक मूल्यों की शिक्षा प्रदान की गई हैं।

प्रो. राजेन्द्र मिश्र द्वारा 'परिकथा' का लक्षण उल्लेखित हैं–

एकमेव समुद्दिश्य पुरुषार्थप्रवर्तिताः।

याश्च प्रकारवैचित्र्यैस्ता वै परिकथा स्मृताः।।[1]

बाल–कथाओं में समावेशित परिकथाओं का मुख्य प्रयोजन बालकों की कल्पना शक्ति का विकास करना है। आधुनिक जीवनबोध से परिपूर्ण यह परिकथाएँ बाल–साहित्य के सभी पक्षों की पूर्ति करती हैं। काश्यपजी ने कहा है कि– "जादू–टोने तथा अतिमानवीय शक्तियों का विस्तार आगे चलकर कॉमिक्स के रूप में सामने आया, जिसमें टीमैन, स्पाइडरमैन जैसे अतिमानवीय चरित्रों को गढ़ा गया। भारत में शक्तिमान के नाम से भारतीय संस्करण तैयार किया गया, जिसका बच्चों ने भरपूर स्वागत किया।" लेकिन ऐसे चरित्रों की लोकप्रियता के बावजूद यह माना जाता रहा है कि ये बच्चों को यथार्थ से परे कल्पना की दुनिया में ले जाते हैं।इनसे गुजरने वाला बालक एक काल्पनिक दुनिया में रहने का आदी हो जाता है। अतः परीकथाओं के आलोचक मानते हैं कि ऐसी कथानक आधारित कथाऐं बालकों में अंधविश्वास तथा रूढ़ियों को बढ़ावा देते हैं।

इसी तरह बालकथा साहित्य के अन्तर्गत विज्ञान कथाएँ भी प्राप्त होती हैं। वैज्ञानिक कथानक आधारित परिकथाएँ बालकों की कल्पनाशक्ति को प्रखर करती हैं। यथा 'कनीयान्

---

1. अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, निर्मितित्त्वोन्मेषः / 120, पृ.–249

राजकुमारः' (अनूदित काव्य) में कवि फ्रांसिसी बालक लिओं की कल्पनाशक्ति का वर्णन करने के साथ ही उसके हृदय एवं मानस पटल में उत्पन्न होने वाली वैज्ञानिक दृष्टि एवं वैज्ञानिक चिंतन का भी वर्णन करता है। यह वैज्ञानिक काल्पनिकता बालक लिओं में सकारात्मकता का संचार करती हैं।

परिकथाओं के अन्तर्गत ही संस्कृत बाल–कथा साहित्य में सकल कथा अथवा दीर्घकथा का भी प्रणयन किया गया है, जहाँ बालकों को विभिन्न प्रकार की व्यावहारिक जानकारी प्रदान की गई हैं। प्रो. राजेन्द्र मिश्र प्रणीत 'कान्तारकथा' (अनूदित बालसाहित्य, 2009 ई.), आदि दीर्घकथाएँ भी सरल एवं अल्पाक्षर युक्त चूर्णक शैली में बालकों के ज्ञानवर्धन हेतु विरचित एवं अनूदित (दूसरी भाषाओं से संस्कृतानुवाद) की गई हैं। यह दीर्घकथाएँ बालकों को पशु–पक्षी, सरीसृप, वनस्पति एवं वैज्ञानिक तत्त्वों से परिचय करवाती हैं।

(ग) बालसाहित्य परक : उपन्यास

इसी प्रकार प्रबन्धात्मक गद्य के द्वितीय भेद आख्यायिका का यद्यपि अर्वाचीन बाल–साहित्य में कोई ग्रन्थ प्रणयन मेरे मत में अभी तक नहीं हुआ है। किन्तु कथा एवं आख्यायिका के मिश्रित रूप 'उपन्यास' विद्या बाल–साहित्य में वर्तमान में उपलब्ध है। उपन्यास का लक्षण प्रतिपादित करते हुए प्रो. राजेन्द्र मिश्र ने उसे कथा एवं आख्यायिका का मिश्रण बताया है यथा–

"कथाऽऽख्यायिकयोः कश्चिन्मिश्रभेदोऽपि साम्प्रतम्।
उपन्यास इति ख्यातो भाषान्तरप्रतिष्ठितः।।
कालखण्डविशेषस्य समग्रं जनजीवनम्।
प्रतिबिम्ब इवादर्शे न्यस्यतेऽत्र सविस्तरम्।।
क्वचित्सामाजिकी क्रान्तिः सर्वोदयसमर्थिनी।
रूढ़िपाखण्डविध्वंसौ नवाचारः क्वचित्पुनः।।"[1]

वस्तुतः कथा एवं आख्यायिका के मिश्रित रूप 'उपन्यास' में किसी कालखण्ड विशेष का सांगोपांग जनजीवन दर्पणसदृश प्रतिबिम्ब के समान विस्तार से प्राप्त होता है परन्तु उपलब्ध एवं प्राप्त बालोपन्यासों में कालखण्ड विशेष का अल्प रूप से ही वर्णन प्राप्त होता है यथा केश्वचन्द्रदाश प्रणित 'पताका' (बालोपन्यास) में स्वतन्त्रता दिवस के विशेष कालखण्ड का कौतुकतापूर्ण मात्रा में वर्णन किया गया है।

---

1. अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, निर्मितित्त्वोन्मेष / 105–10, पृ.–233

(घ) बालसाहित्य परक : अनूदित बालसाहित्य

अनूदित संस्कृत बाल–साहित्य में कवि अन्य भाषाओं में लिखित कविताओं, कथाओं का संस्कृत में अनुवाद करके शिशुओं, बालकों एवं किशोरों के मनोरंजन एवं ज्ञानवर्धन का प्रयत्न करता है।

व्याकरणात्मक दृष्टि से 'अनुवाद' शब्द अनु उपसर्ग पूर्वक वद् धातु में घञ् प्रत्यय के संयोग से व्युत्पन्न होता है जिसका अर्थ है– 'अन्य भाषाओं में उपलब्ध पूर्वोक्त निर्देश का शब्दशः अनुवाद'।

संस्कृत बाल–साहित्य में अनुवाद विधा के बारे में श्रीमती कान्द्रेगुल वरलक्ष्मीः ने उल्लेख किया है–

अभिनयं वा अबीभयं वा अविश्यं वा
इत्यादिषु शब्देषु निरन्तरं चिन्तनं विना साधुता न ज्ञायते।

"नवग्रन्थरचनाकाशः अत्रैनामादरभावेन पश्यन्ति चेत् निर्दिष्टग्रन्थाः प्रभविष्यन्तीत्याशासे। अस्याः अनया रचनया पण्डिती वृद्धि शुद्धी जाते। न केवलमस्याः एतदध्ययनेनान्यासामन्येषामपि भविष्यतीति चाशासे।"

अर्वाचीन संस्कृत बाल–साहित्य में जहाँ लेखक संस्कृत में मौखिक बाल–साहित्य के लेखन में व्यस्त हैं वहीं कुछ साहित्यकार वैदेशिक भाषाओं में रचित बाल–साहित्य का शब्दशः अपनी विद्व्वता से संस्कृत भाषा में अनूदित कर संस्कृत बाल–पाठकों को रसास्वाद एवं हृदयावर्धक करने का अनूठा प्रयास किया है। इस विधा के अन्तर्गत प्रो. अभिराजराजेन्द्र मिश्र का सराहनीय प्रयास हैं जिन्होंने आंग्ल–भाषा में रुडयार्थकिपलिंग रचित JUNGLE STORYका संस्कृत में कान्तारकथा के रूप में प्रणयन एवं अनूदित कर संस्कृत बाल–पाठकों को जंगल भ्रमण का चर्मास्वादन प्रदान किया हैं। जिस तरह Jungle Story ग्रन्थ के आधार पर आज आंग्ल एवं अन्य भाषाओं में एनिमेशन चलचित्र एवं कॉमिक्स द्वारा बालकों के मनोरंजन एवं नैतिक शिक्षा प्रदान की जा रही हैं। उस आधार पर संस्कृत बाल–पाठकों के लिए प्रो. राजेन्द्र मिश्र द्वारा मोगली की घटना को 'कान्तारकथा' के रूप में प्रणयन करना अद्भुत सन्धान है। इसी तरह 'प्रो. गोपबन्धु मिश्र' द्वारा फ्रेंच भाषा में 'आन्त्वान–द–सेंत्–एक्वजुपेरी' द्वारा **'लिओवर्थम्'** का संस्कृत में 'कनीयान् राजकुमारः' के रूप में अनुवाद किया गया है। प्रस्तुत पुस्तक में 'लिओवर्थ' नामक बालक की बाल्यावस्थाकालीन मानसिक अवस्था का काल्पनिक वर्णन हैं। लिओवर्थ प्रोढ़ावस्था में पदासिन होन पर अपने बचपन की शारीरिक एवं मानसिक विकास की चेष्टाओं को याद करता है। कवि स्वयं कहता हैं–

"लेओं वर्धस्य कृते

यदा सः बालः आसीत्।"

इसी तरह डॉ. के. वरलक्ष्मी द्वारा अनूदित 'पलायितश्चणकः' (गीतासुब्बाराव द्वारा मूलतः तेलगू में उपलब्ध) एवं 'गोरुमुद्दलु' (गीतासुब्बाराव द्वारा तेलगू भाषा में प्रणीत) काव्य, बालकों में बचपन में ही नैतिक संस्कार समारोपित करने के प्रयोजन से संस्कृत भाषा में अनूदित किए गए हैं। डॉ. के. वरलक्ष्मी ने 'शिशुस्वान्तम्' (लघु बालनाटक) ग्रंथ में बालकों के लिए 50 लघुकथाओं की रचना की गयी हैं। यह कथाएँ यद्यपि आकार में लघु है किन्तु जीवन की कठिन एवं दीर्घ समस्याओं को सरलतया सुलझा देते हैं। साथ ही प्रणीत समस्त कथाऐं सरल–सरस एवं मनोरंजक पूर्ण भाषा शैली में प्रणीत है। यह कथाऐं बालकों का आध्यात्मिक, आधिभौतिक एवं आधिदैविक विकास करने में पूर्णतया समर्थ हैं।

इसी तरह गोविन्द कृष्ण द्वारा लोक में प्रचलित 'अलीबाबा एवं चालिस चोर' कहानी का संस्कृत बाल–साहित्य में चौरचत्वारिंशित् कथा' के रूप में संस्कृत अनुवाद किया है। यह कहानियाँ जहाँ एक तरह बालकों को रसास्वाद एवं मनोरंजन प्रदान करती हुई उनमें जिज्ञासा एवं कल्पना तत्त्वों का संचार करती है, तो दूसरी तरफ बालकों का ज्ञानवर्धन भी करती हैं। इसी तरह **'संभाषण संदेशः'** (मासिक पत्रिका) के 'बालमोदिनी' शीर्षक के अन्तर्गत समय–समय पर तेलगू, कन्नड़, गुजराती, मराठी, बंगाली भाषाओं में लिखित बालकथाओं का अनूदित साहित्य के रूप में प्रकाशन होता रहता है। यह अनूदित बालसाहित्य, अबोध बालकों को सरल संस्कृत भाषा में मनोरंजन एवं नैतिक शिक्षा प्रदान करने का पुनित कार्य कर रहा हैं।

(ङ) बालसाहित्य परक : नाट्यसंग्रह

बाल–साहित्य में प्राप्त श्रव्य काव्य के लक्षण निरूपण के पश्चात अब दृश्य–काव्य की उपलब्ध बाल विधानों का सन्धान किया जायेगा। दृश्य काव्य को परिभाषित करते हुए कविराज विश्वनाथ जी ने कहा हैं–

"दृश्यं तत्राभिनेयं"[1]

अर्थात् जिन काव्यों का दर्शकों अर्थात सहृदय सामाजिकों के समक्ष मनोरंजन हेतु या ज्ञानवर्धन के लिए रङ्गमच पर अभिनय किया जाए, वह काव्य दृश्य अथवा रूपक कहलाते हैं। आधुनिक काव्यशास्त्र के पुरोधा प्रो. राधावल्लभ जी ने दृश्यकाव्य को परिभाषित किया है–

1. साहित्यदर्पणम्, षष्ठ परिच्छेद/प्रथम कारिका

"दृश्यं तु रूपकम् यत्तु काव्यं रङ्गमंचे प्रदर्शनाय कविना विरच्यते, तत्रैव तस्य सौन्दर्यमुन्मीलति तद् दृश्यम्। दृश्येऽपिभवत्येव पाठ्यांशः तस्य पाठो वाचिकाभिनयद्वारेण न तु विदधाति, अप्रयुज्यमाने वा दृश्यकाव्ये कश्चन पाठकोऽपि एकाकी तस्य पाठं कुरुते। तथापि प्राधान्येन प्रदर्शनायैव विरचितत्वात् क्रियामाणे प्रचलितेऽपि वा तस्य पाठे दृश्यकाव्यमिति संज्ञैव तत्रोचिता।"[1]

इसी तरह त्रिवेणी कवि प्रो. राजेन्द्र मिश्र ने 'दृश्य काव्य' को 'रूप' शब्द से सम्बोधित किया है– **"रूपं दृश्यतयाऽऽख्यातं"।**[2]

अर्थात् दृश्यकाव्य को 'रूप' काव्य भी कहते हैं। रूपक, नाटय इत्यादि दृश्यकाव्य के अवान्तर भेद हैं। प्रो. राजेन्द्र मिश्र ने पूर्वाचार्यों के मतों के समान ही रूपक के दश भेद स्वीकार किये हैं–

"नाटकं च प्रकरणं भाणः प्रहसनं तथा।
व्यायोगसमवकारौ डिमेहामृगवीधयः।।"[3]

इसी प्रकार भरतादि पूर्वाचार्यों के समान ही उपरूपक के 18 भेद स्वीकार किये गए हैं जो निम्नलिखित हैं– नाटिका, भणिका, गोष्ठी, दुर्भल्लीका, विलासिका, त्रोटक, सट्टक, काव्यरासक, नाटयरासक, संलापक, श्रीगदीत, प्रेङ्खण, शिल्पक, हल्लीश, प्रकरणी, प्रस्थान, उल्लायक**–ये अठ्ठारह भेद यद्यपि उपरूपक के भेद प्रतिपादित किए गए हैं किंतु सभी एकांकी कोटि के हैं।**[4]

संस्कृत बाल–साहित्य के केवल एकांकी प्रवृति वाले दृश्य काव्यों का ही प्रचलन दृष्टिगोचर होता है। क्योंकि बाल–काव्यों का मुख्य ध्येय अल्प–परिश्रम से बालकों का विनोदजनन एवं नैतिक शिक्षा प्रदान करना है।

एकांकी काव्य का लक्षण प्रतिपादित करते हुए प्रो. राजेन्द्र मिश्र ने कहा है–

हिन्दी प्रभृतिभाषासु भारतीयासु साम्प्रतम्।
लघुनाट्यं यदेकाङ्कि सर्वाभीष्टं महीयते।।
देववाच्यपि तन्नूनं तद्वदेव प्रतिष्ठितम्।
नियन्त्रितं न तज्ज्ञेयमुपरूपकलक्षणैः।।
नायकोऽत्र भवेद्भूपः पण्डितः पामरोऽथवा।
दिव्योऽदिव्योऽथवाऽन्योऽपि शिक्षकोभिक्षुको यतिः।।

---

1. अभिनवकाव्यालंकार, प्रो. त्रिपाठी, 3/1/1, पृ.–145
2. अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, निर्मितितत्वोन्मेषः/20, पृ.–197
3. अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, निर्मितितत्त्वोन्भेद/25, पृ.–198
4. अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, निर्मितितत्त्वोन्भेद/27–29, पृ.–199

योऽपि काश्चिद् भवेन्नेता पुरुषो महिलाऽपि वा।
यादृशं चापि वृत्तं स्यान्नाट्यकृत्प्रतिभाश्रितम्।।
एकाहचरितं चैव लघुनाट्ये प्रयोजयेत्।
संवादबहुला भाषा व्यङ्ग्यगर्भाऽत्र सम्मता।।
रसः कोऽपि भवेदङ्गी नाटयवृत्ताऽनुगुण्यतः।
लक्ष्यमेकं परं तस्य भवेदङ्गप्रसादनम्।।
नाट्यशिल्पादिसम्बद्धं वैलक्षण्यं नवं नवम्।
एकाङ्केऽस्मिन्प्रयोक्तव्यं नाटयकर्त्रा यथामति।।[1]

उपलब्ध बाल–एकांकियाँ यद्यपि आकार में लघु होती हैं, किंतु बाल–एकांकियों का नायक अधिकांशतया सामान्य बालक–बालिकाएँ ही होती हैं। इन बाल–एकांकियों की विषयवस्तु भी एकांकी के समान ही एक दिन में घटित घटना के आधार पर प्रणीत होती है। यहाँ संवाद अभिधा शैली में ही निबद्ध होते हैं। रस की दृष्टि से इन एकांकियों में अधिकांशतया वात्सल्य, शान्त एवं हास्य रस की परिणती होती हैं। साथ ही रसों के प्रयोग का लक्ष्य बालकों के मनोरंजन अथवा उनकों नैतिक एवं व्यवहार–परक ज्ञान प्रदान करना है।

अर्वाचीन बाल–एकांकियों में मुख्यतया प्रो. राजेन्द्र मिश्र द्वारा रचित 'नाट्यनवग्रहम्' (जनवरी 2007 ई.), डॉ. रामकिशोर मिश्र प्रणीत 'बालनाट्यसौरभम् (1994 ई.), सौ. दुर्गापारखी कृत् 'बालनाट्यवल्लरी' (2013 ई.), पूजा लाल कृत 'बालनाटकान्', विघ्नहरिदेव प्रणीत 'बालकानाम् जवाहरः', डॉ. ताराशङ्कर द्वारा लिखित 'वृक्षरक्षणम् (2013 ई. लघुनाटक) एवं हंसरक्षणम् (2013 ई. लघुनाटकम्) तथा एच.आर. विश्वास प्रणीत 'मार्जारस्य मुखं दृष्टम्' (2011 ई.) भी लघुनाटक अथवा बाल–एकांकियों के सुन्दर उदाहरण हैं।

(च) बालसाहित्य परक : पत्र–पत्रिकाएँ

संस्कृत बाल–साहित्य में पत्र–पत्रिका भी नवीन विधा के रूप में उभरकर आयी हैं। संस्कृत–बाल–पत्रिकाएँ बालकों को सरल–सरस, व्याकरण–रहित भाषा शैली में संस्कृत–भाषा का ज्ञान करवाने के साथ ही उनके मनोविनोद एवं नैतिक ज्ञान के लिए भी अत्यन्त सहायक हैं। संस्कृत में पत्रकारिता के पक्षधर बहु–भाषाविदों का मानना है कि 'पत्रकारता' और 'पत्रकारिता' दोनों ही साधु शब्द हैं क्योंकि 'पत्रकरोति तच्छीलमस्य' इस व्युत्पत्ति से 'पत्र उपपदपूर्वक','डुकृञकरणे' इस अर्थपरक धातु से निष्पन्न 'पत्रकारिता' का अर्थ है– "पत्र–पत्रिकाओं के लेखन–पठन–मुद्रण–प्रकाशनादि स्वभाव से 'युक्त कर्म' इसी प्रकार द्वितीय पद 'पत्रं करोति' इस

1. अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, निर्मितितत्त्वोन्भेद / 40–46, पृ.–203–205

विग्रह से 'पत्रकारिता' का अर्थ है 'पत्र' या 'पत्रिका' को लिखने वाला अथवा लिखवाने वाला, प्रकाशित करने वाला प्रसारण करने वाला, मुद्रित रूप प्रकाशित करने वाला। वस्तुतः वार्तापत्र एवं साहित्यिक पत्रिकाओं के लेखन–प्रकाशन–मुद्रणादि कार्यों के लिए **'पत्रकारिता'** यह शब्द एवं अन्य भाषाओं में व्यावहृत एवं प्रचलित होकर लोकप्रिय हुआ है। बाद में संस्कृत में भी 'पत्रकारिता' शब्द का व्यापक प्रयोग किया जाने लगा है।"

वस्तुतः पत्रकारिता के तीन प्रयोजन हैं– लोक की जानकारी प्रदान करना, मनोरंजन एवं शिक्षण। संस्कृत–बाल–पत्रिकाएं जहाँ एक तरफ बालकों को भाषा परिपक्वता हेतु विभिन्न प्रकार के शाब्दिक ज्ञान की शिक्षण सामग्री उपलब्ध करवाती है वहीं दूसरी और विभिन्न लघु–लघु कथाओं, लघु नाटकों के माध्यम से बालकों को मनोरंजन शैली में नैतिक मूल्य प्रदान करने के साथ ही उनका सर्वाङ्गीण विकास भी करती हैं।

आज वृहद् स्तर पर बाल–साहित्यकारों की रचनाएँ विविध बाल–साहित्य विधाओं में अनुकृत्, आविष्कृत एवं स्वीकृत हो रही हैं। यह रचनाऐं बाल–पाठकों के लिए विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं एवं ग्रन्थाकार का विषय बन रही हैं। संस्कृत–पत्रकारिता की कड़ी में वर्तमान में संस्कृत बाल–पत्रिकाओं का भी व्यापक प्रचलन हो रहा हैं।

इस दिशा में 'दिल्ली संस्कृत अकादमी' में कार्यरत डॉ. धमेन्द्र कुमार के अथक प्रयासों से बालकों के लिए विशेषतः बाल–चन्द्रिका के नाम से बाल–पत्रिका का सम्पादन किया जा रहा है। इससे पहले ओड़ीशा से 'सुवर्णा भगिनी' नाम से 'बाल–पत्रिका' का प्रकाशन हो रहा था। वर्तमान में बाल–जगत् को ध्यान में रखते हुए अनेक सरल–सरस भाषा शैली में बाल–पत्रिकाओं का सम्पादन किया जा रहा है जिनमें–सम्भाषण सन्देशः, संस्कृत–चन्दामामा, कथासरित् पद्यबन्धा, प्रतिभा, भारती, लोकसंस्कृतम् इत्यादि प्रमुख हैं।

संस्कृत–प्रतिभा – साहित्य अकादमी नई दिल्ली से प्रकाशित यह षाण्मासिक पत्रिका हैं। डॉ. व्ही राघवन् के अनेक वर्षों की कठिन मेहनत एवं निष्ठा के अनन्तर इसका प्रकाशन प्रारम्भ हुआ था। संस्कृत–प्रतिभा पत्रिका मूलतः रचनात्मक साहित्य से युक्त पत्रिका हैं। इसके प्रत्येक अंक में संस्कृत भाषा में अनूदित काव्य, गद्य विधा में कहानी, कथानिका, बाल–कथा, लघुकथा, ललित निबंध, रूपक (एकांकी) तथा पद्यविधा में बाल–गीत, लघुगीत आदि काव्यों के आलेख भाग इसमें छपते हैं। संस्कृत प्रतिभा की एक बड़ी विशेषता है– सद्य प्रकाशित कृतियों की संक्षिप्त समीक्षा। पत्रिका के 'निकषोपलः' स्तम्भ के प्रत्येक अंक में 20–25 पद्य रचित कृतियों का संक्षिप्त परिचय परिलक्षित होता है। प्रतिभा में बाल–साहित्य की बालोपन्यास, बाल–एकांकी, बाल–कथा आदि विधाओं की कृतियों का परिशीलन भी यदा–कदा देखने को मिलता हैं।

पद्यबन्धा – प्रो. बनमाली बिश्वाल के प्रधान सम्पादकत्व एवं डॉ. धमेन्द्र कुमार सिंहदेव के सह–सम्पादकत्व में पद्यबन्धा नाम से समकालिक संस्कृत–पत्रिका (षाण्मासिकी) भोपाल से प्रकाशित हो रही है। इस पत्रिका में हर तरह की कविता या काव्य यथा–छन्दोबद्ध कविता, मुक्तकच्छन्द कविता, वैदेशिक–छन्दोबद्ध कविता, अनूदित कविता, बाल–कविता, शिशु–गीत, लोक–गीत आदि कविता ग्रन्थ समीक्षा सहित प्रकाशित किए जाते हैं।

कथासरित् –प्रो. बनमाली बिश्वाल और डॉ. नारायणदाश के सम्पादकत्व तथा राकेशदाश के सह–सम्पादकत्व में सन् 2005 ई. से समकालिक संस्कृत कथा–पत्रिका 'कथासरित्' प्रयाग से प्रकाशित हो रही हैं। इस पत्रिका में प्रत्येक प्रकार की कथा, लघुकथा, दीर्घकथा, परिकथा, बालकथा, कथाग्रन्थ समीक्षा, गत अङ्को में प्रकाशित कथाओं की समीक्षा धारावाहिक, उपन्यास, धारावाहिनी एवं दैनन्दिनी इत्यादि गद्य की समस्त कथा विधाओं का प्रकाशन किया जाता है। यह बाल–कथाएँ बालकों को विभिन्न प्रकार से रसास्वादन करवाने में पूर्णतया सक्षम हैं।

संस्कृत चन्दामामा –बालकों में काल्पनिकता का संचार करने एवं चित्रों के माध्यम से संस्कृत भाषा का सरल–सरस रूप से परिचय करवाया जाता है। वस्तुतः प्रत्येक भाषा के दो पक्ष होते हैं सरल एवं कठिन पक्ष। यहाँ प्रस्तुत कथाएँ सरल संस्कृत भाषा में निबद्ध हैं। लघु–लघु बालक, छात्र इत्यादि पाठक उत्साह से चन्दामामा को पढ़ते हैं। यहाँ तक की संस्कृत भाषा के वाचन में भी समर्थ होते हैं। बाल–कथाओं में प्रयुक्त शब्द, प्रयुक्त संधि एवं समास की कठिनता से रहित होते हैं। संस्कृत चन्दामामा में युष्मद् (तुम) शब्द के स्थान पर भवान् शब्द (आप) का उपयोग किया जाता है। 'चन्दामामा' यह नाम भारत देश में सर्वत्र प्रसिद्ध है। सामान्यतः 'चन्दामामा' का सामासिक विग्रह है 'चन्द्रमसः मातुलः चन्द्रमा'। तथा व्युत्पत्तिपरक अर्थ है, चन्द्रमस इव भाति इति चन्द्रमा। चन्द्रकान्तिसदृशी इत्यर्थः।

1984 ई. से संस्कृत भाषा में बालकों के ज्ञानवर्धन के उद्देश्य से आचार्य चक्रपाणी एवं गुरुवर नागिरेड्डी के सम्पादन में 'संस्कृत चन्दामामा' का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ। यह जनमानस में देववाणी के प्रति अनुराग उत्पन्न करने का सफल प्रयास सिद्ध हुआ था। यह बालकों में संस्कृत सम्भाषण की प्रवृति का वर्धन करता हैं। यथा संस्कृत चन्दामामा के मुखपृष्ट पर उल्लेखित है–

"अन्यस्य सम्भाषणं जागरुकतया परिशीलनीयस्य अन्येन कृताः दोषाः स्वभाषणे यथा न भवेयुः तया जागरुकता समाश्रयणीया। सम्भाषणपरम्परायाः उज्जीवने सर्वै संस्कृतज्ञाः सश्रद्धाः भवेयुः।।"[1]

सम्भाषण सन्देशः –"सुलभा रम्यता लोके दुर्लभं हि गुणार्जनम्" अर्थात् सौन्दर्य लोक में सुलभ है किंतु गुणसम्पत्ति प्राप्त करना अत्यन्त कष्टदायक है। अर्थात् सरल, सरस संस्कृतनिष्ठ 'सम्भाषण

1. संस्कृत चन्दामामा, अक्टोम्बर 1984 (मुखपृष्ठ भाग)

सन्देशः' (मासिक पत्रिका) के प्रकाशन का मुख्य ध्येय 'संस्कृत भाषा' को जन–जन में लोकप्रिय बनाना है। इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु सर्वप्रथम हिन्दू सेवा प्रतिष्ठान द्वारा 1981 ई. में 'सम्भाषाण आन्दोलन' का सभी जगह आयोजन किया गया था। आन्दोलन के सम्पादक समूह द्वारा अनेक प्रकार से चिन्तन करने के अनन्तर यह निश्चित किया गया कि पत्रिका के सम्पादन का प्रयोजन पाठकों को सन्तुष्ट करना है। यह पाठक सम्भाषण शिविरों में प्रवेशित लघु–लघु बालक, तरुण एवं किशोर है, जिनकों संस्कृत भाषा का सरल एवं मनोर×जक शैली में संस्कृत भाषा में वार्तालाप करवाना मुख्य प्रयोजन है। पत्रिका के नियमित अध्ययन से बालकों में संस्कृत भाषा के वाग्व्यवहार का ज्ञानवर्धन होता हैं। पत्रिका के 'बालमोदिनी' शीर्षक के अन्तर्गत बालकों के लिए सम्भाषण शैली में लघुकथा, लघुउपन्यास, कथानिकाओं का प्रकाशन किया जाता है। साथ ही 'शब्दमाला' शीर्षक में बालकों के लिए दैनन्दिन व्यवहार में प्रयुक्त शब्दों का अभ्यास करवाया जाता हैं। सम्पादक का कथन है कि जिस प्रकार भोजन के बिना जीवन असम्भव है, उसी तरह नवीन शब्दों के बिना भाषा व्यवहार भी नहीं हो सकता हैं, यथा–

"आहारं विना जीवनं यथा न प्रचलति तथा नूतनशब्दान् विना भाषाव्यवहारः अपि। नूतनशब्दानां निर्माणे स्वेच्छया व्यवहारः न युक्तः। यदि प्राज्ञाः शब्दान् निर्माय दद्युः तर्हि व्यवहारः सुकरः। व्यवहारे सौकर्यं सम्पादनीयम् इत्यतः एषा योजना–शब्दशाला।"[1]

वर्तमान में पत्रिका के प्रधान सम्पादक जर्नादन हेगड़े एवं परामर्शदाता मण्डल में डॉ. एच. आर. विश्वास है। इसी तरह वर्तमान में कॉमिक्स, एनिमिशन चलचित्रों के अन्तर्गत विभिन्न पौराणिक आख्यानों यथा (बाल गणेश) को आधार बनाकर भी ज्ञानवर्धक एवं मनोरंजन प्रधान चलचित्रों का निर्माण किया जा रहा है, यथा संस्कृतबाल साहित्य परिषद् पुण्डुचेरी के अध्यक्ष डॉ. सम्पदानन्द मिश्र द्वारा 'बाल गणेशः' चलचित्र का निर्माण किया गया है जो बालकों में रचनात्मक सोच को जाग्रत करती है।

इसी तरह बाल जिज्ञासाओं एवं बाल–समस्याओं का समाधान करने हेतु नवीन बाल विधा 'प्रहेलिका' का भी आविर्भाव हुआ है।

वस्तुतः प्रहेलिका का उद्गम अलङ्कारशास्त्र में परिलक्षित होता हैं। अलंकारशास्त्र में दो अर्थों के प्रतिपादन के लिए श्लेष अलंकार का प्रयोग किया जाता है। अतः एक पद के दो अर्थ प्रतिपादित करने वाला 'श्लेष अलंकार' ही बाल–साहित्य में परिगणित प्रहेलिका विधा का उद्गम स्थान माना जाता है। सुविख्यात बाल–साहित्यकार ऋषिराजजानी द्वारा रचित 'कपिः कूर्दते शाखायाम्' (बालगीत) काव्य में 'विहगवृन्दम्', जानन्तु माम, एवं 'समस्यापूर्तिः' प्रहेलिकाओं के माध्यम से विभिन्न चर–अचर जगत् से बालकों को अवगत करवाने हेतु लगभग 18 प्रहेलिकाओं की रचना

---

1. सम्भाषण सन्देशः (शब्दमालाः) सेप्टेम्बर, 1994 ई., पृ.–14

की गई हैं यह प्रहेलिकाएँ बालकों का ज्ञानवर्धन करवाने के साथ–साथ उनकों मनोरंजन प्रदान करने के उद्देश्य की भी पूर्ति करती हैं यथा–

"श्यामवर्णो रसालेऽहं
गायामि मधुरं सदा।
चैत्रमासे प्रसन्नोऽहं
वदन्तु कोऽस्मि बालकाः।।" (कोकिलः)

इसी तरह एक ओर दृष्टान्त उल्लेखित हैं–

बिले वसामि गेहेषू
'चूं चूं' ध्वनिं करोम्यहम्।
कर्तयामि च वस्त्राणि
गणाधिपस्य वाहनम्। (मूषकः)

अतः बालसाहित्यकारों ने बाल मनोविज्ञान को ध्यान में रखते हुए प्रहेलिकाओं की रचना की हैं।

≈≈≈≈

चतुर्थ अध्याय

आधुनिक संस्कृत बालसाहित्य की समीक्षा के आधार

(क) काव्य पक्ष

(ख) भाव पक्ष

चतुर्थ अध्याय

आधुनिक संस्कृत बालसाहित्य की समीक्षा के आधार

अर्वाचीन संस्कृत–साहित्य में आविर्भूत बालसाहित्य वर्तमान में बिल्कुल नवीन विधा के रूप में प्रकट हुआ है। इस विधा में संस्कृत–साहित्यकारों का काव्य लेखन क्षेत्र में पर्दापण ही हुआ हैं। अतः बालसाहित्य के विभिन्न प्रकारों–काव्य, नाटक, एकांकी, कथा, उपन्यास इत्यादि का काव्यशास्त्रीय पक्ष और भाव पक्ष के आधार पर समीक्षा अथवा आलोचना करना मेरे जैसे शोध समीक्षक के लिए कालिदास सम्मत **'उडुपेन सागरतरणसदृश'** दुष्कर कार्य है। सम्प्रति जब साहित्यकारों की दृष्टि पौराणिक आख्यान आधारित कथानकों के स्थान पर समसामयिक जगत् के विभिन्न नवीन घटनाओं की ओर अग्रसर हुई है उस पदार्पण भाग में ही उनके द्वारा प्रणीत काव्यों में त्रुटि अथवा समीक्षक की कोटि पर परखना शुभ संकेत का द्योतक नहीं होता है किन्तु लिखित ग्रंथों को अग्नि की लौ में तप्त करके अर्थात् समीक्षा रूपी ज्वाला में तपाकर स्वर्णमय बनाना अत्यन्त आवश्यक हो जाता है। यद्यपि साहित्य सत्य की कसौटी पर ही लिखा जाता है किन्तु इसमें यथार्थता के साथ–साथ कल्पना का पूंज समाहित करना भी आवश्यक हैं। साहित्य आकर्षण, रागात्मकता एवं रमणीयता के गुणों से युक्त होता है।

आचार्य विश्वनाथ और पण्डितराज जगन्नाथ प्रभृति काव्यशास्त्रियों ने रसात्मकता और रमणीयता को साहित्य का आधार स्तम्भ घोषित किया है। अतः साहित्य चाहे किसी भी प्रयोजन से लिखा जाए, वह पाठकों अथवा साहित्य अनुरागियों को आकर्षित, आनन्दित एवं चमत्कृत करने वाला होना चाहिए।

साहित्य में साहित्य की परिभाषा निर्धारित है– **"साहित्य भाषा के माध्यम से रचित वह सौन्दर्य या आकर्षण से युक्त रचना हैं जिसके अर्थबोध से सामान्य पाठकों को आनन्द की अनुभूति होती है।"**[1]

काव्य की समीक्षा करने वालों के बोधनार्थ प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी ने 'समीक्षक' शब्द का प्रयोग करते हुए समीक्षक शब्द के चार भेद स्वीकार किए हैं– **तत्त्वाभिनिवेशी, विषयनिष्ठ, विषयिनिष्ठ तथा सतृणांशव्यवहारी।**[2]

---

1. 'भारतीय एवं पाश्चात्य काव्य सिद्धान्त साहित्य, स्वरूप एवं विवेचन', गणपतिचन्द्र गुप्त, पृ.–5
2. 'अभिनवकाव्यालंकारसूत्रम्', प्रो. त्रिपाठी, 1/1, पृ.–14

पाश्चात्य काव्यशास्त्रीय विद्वान आर्नल्ड[1] का मत हैं कि आलोचक के समक्ष सबसे बड़ी समस्या यह है कि वह किन तत्त्वों, लक्षणों, मूल्यों, आदर्शों एवं नियमों के आधार पर काव्य का मूल्यांकन करे। साहित्य में आलोचक के लिए ऐसी समस्याओं के समाधान का उपाय सामान्यतया यह है कि काव्य या उपलब्ध साहित्य परम्परागत अथवा आधुनिक काव्यशास्त्रीय ग्रंथों के समक्ष कितना व्यावहारिक है। वस्तुतः यह सत्य है कि अभी तक संस्कृत काव्य ग्रंथों की समीक्षा भरतमुनि कृत 'नाट्यशास्त्र', भामह कृत 'अलङ्कारशास्त्र', दण्डी प्रणीत 'काव्यादर्श', आनन्दवर्धनाचार्य प्रणीत 'ध्वन्यालोक', मम्मट कृत 'काव्यप्रकाश', पं. विश्वनाथ के 'साहित्यदर्पणम्' एवं पण्डितराज जगन्नाथ कृत रस–गङ्गाधर के आधार पर ही की जाती रही है किन्तु जब से संस्कृत–साहित्य में उपन्यास, एकांकी, कथानिका, गीतिकाव्य, कविता, बालकाव्य, निबंध, यात्रा–वृतान्त जैसी नवीन विधाओं का प्रार्दुभाव हुआ है तब से समीक्षक सामान्य लक्षणों अथवा मूल्यों के अभाव में अपनी वैयक्तिक धारणाओं के आधार पर समीक्षा करने लगे हैं जो अव्यावहारिक है।

अतः वर्तमान युग में नवीन विधाओं के रूप में उद्भावित काव्यों की समीक्षा केवल काव्यकृति के आधारभूत स्थायी तत्त्वों के आधार पर न करके बाह्य परिस्थितियों एवं प्रभाव तत्त्वों के आधार पर करना समीचीन प्रतित होता हैं। अतः बाल–साहित्य की समीक्षा भी बाल–काव्यों में उपलब्ध सामाजिक–सांस्कृतिक–आध्यात्मिक भावों तथा रस–अलङ्कार–छन्द–भाषा–शैली इत्यादि विशेषताओं को सम्यक् प्रकार से अध्ययन करके ही की जा सकती हैं।

आधुनिक संस्कृत बाल–साहित्य में उपलब्ध साहित्य का काव्यशास्त्रीय समीक्षा करना अत्यन्त आवश्यक है। यतोहि आधुनिक संस्कृत साहित्य में परिगणित बाल–साहित्य को अभी तक काव्यशास्त्रों का विषय नहीं बनाया गया हैं। काव्यशास्त्र के क्षेत्र में जहाँ भरतमुनि को प्रथम काव्यशास्त्री स्वीकार किया जाता है, वहीं पण्डितराज जगन्नाथ को अन्तिम आचार्य के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त है। यह सत्य है कि पण्डितराज जगन्नाथ के पश्चात् संस्कृत काव्यशास्त्र में कोई विशेष प्रगति नहीं हुई हैं, किंतु क्या प्रवाह की अविच्छिन्नता को बनाये रखना कुछ कम हैं? पुनश्च सभी लेखक अपने पूर्ववर्ती लेखकों से अधिकांश ग्रहण करते हैं और उसमें परिष्कार कर अपने ढंग से नवीन रूप में उद्भावित करते हैं।

यदि निष्पक्ष रूप से अवलोकन किया जाए तो किसी भी आचार्य की स्वकीय उद्भावना अत्यल्प मात्रा में ही प्रत्यक्ष होगी। आचार्य मम्मट, पं. विश्वनाथ तथा पं. जगन्नाथ प्रभृति आचार्यों ने भी पूर्ववर्ती ग्रंथों का प्रचुर उपयोग किया, किन्तु इससे उनकी प्रतिष्ठा तनिक भी कम हो जाती है? अर्थात् नहीं।

---

1. 'पाश्चात्य काव्यशास्त्र' (मैथ्यु आर्नल्ड), देवेन्द्रनाथ शर्मा, पृ.–164

वस्तुतः अर्वाचीन संस्कृत बाल–साहित्य के काव्यशास्त्रीय लक्षणों का निर्धारण करने से पूर्व प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी द्वारा प्रतिपादित बाल–काव्य लक्षण को निरुपित करना अत्यन्त आवश्यक हैं उन्हीं के शब्दों में–

"शिशुं वा बालकं वापि समुद्दिश्य सुगुम्फितम्।
बालभावस्य सहजं सर्वथोद्बोधकारकम्।।
चमत्कारस्य सर्वस्वमुद्भुतश्च महारसः।
विचित्रं रमणीयं यत् तथा कौतुकवर्धनम्।।
संविधानस्य चातुर्यं कथायां बुद्धिवैभवम्।
सरवं सरलं छन्दः सहजं लयमिश्रितम्।।
आनन्दाद् यत् समुद्भुतं सर्वथानन्ददायकम्।
तदेतद् बाल–साहित्यं बालकेभ्य उदीरितम्।।"[1]

अर्थात् बाल–साहित्य कौतुकता आधायनिष्ठ, रमणीयता, विचित्रता, मनोहारिता, चित्र–सज्जा युक्त, मनोरंजन प्रधान, नैतिक शिक्षा प्रदायक, बाल–मुग्धता, चमत्कार आधायक, अनुप्रास युक्त, अनुरणात्मक, लय–मिश्रित छन्दों से युक्त, लोक कल्याण, एक पात्र से युक्त, ह्रदय को झंकृत करने वाले मनोभावों वाला, अल्पाक्षर इत्यादि लक्षणों से युक्त होता है।

आधुनिक काल में प्रणीत नाटक, कथा, उपन्यास, जैसी नवीन विधाओं के लक्षण अथवा उनके स्वरूप की विवेचना हेतु नवीन दृष्टि का प्रदर्शन करते हुए सर्वप्रथम विश्वेश्वर पण्डित द्वारा **'अलङ्कार–कौस्तुभ'** ग्रन्थ की रचना की गई। तदन्तर रेवा प्रसाद द्विवेदी द्वारा 'काव्यालंकारकारिका' ग्रन्थ का प्रणयन किया गया। इसी तरह प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी द्वारा प्रणीत 'अभिनवकाव्यालंकारसूत्रम्' तथा प्रो. राजेन्द्र मिश्र द्वारा रचित 'अभिराजयशोभूषण्म्' में भी आधुनिक काव्य विधाओं के लक्षण प्रतिपादित किये गए हैं। इन काव्यशास्त्रीय ग्रंथों में बाल–साहित्य की विधाओं–लघु नाटक, एकांकी, गीत, लघु–उपन्यास, कथा, कथानिका, परिकथा, वैज्ञानिक कथा, प्रहेलिकाओं के लक्षण भी दृष्टिगोचर होते हैं।

अतः बाल–साहित्य की समीक्षा हेतु सन्धानित भाव पक्ष एवं काव्य पक्ष में समाहित विभिन्न आन्तरिक एवं बाह्या गुणों की समीक्षा करना अत्यन्त आवश्यक है। काव्य पक्ष में उल्लेखित बाल–साहित्य परक विशेषताओं का निरूपण स्वयं ही काव्य को कसोटी पर परखने वाला होता है।

---

1. प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी के मुखारविन्द से उद्धृत एवं "CHILDREN'S LITERATURE IN SANSKRIT" (डॉ. नारायण दाश)

(क) काव्य पक्ष

(i) 'बालसाहित्यपरक शीर्षक'

कवि काव्य के अभिधान में इस बात पर अधिकाधिक ध्यान देता है कि काव्य के नामकरण में ही काव्य लेखन का उद्देश्य स्पष्ट हो जाए। यद्यपि नामकरण प्रबन्ध या काव्य सन्धान का आन्तरिक तत्त्व नहीं हैं किन्तु यह सर्वविदित तथ्य है कि नामकरण के सौन्दर्य बोध से ही प्रबन्ध की कथावस्तु का स्वरूप प्रत्यक्ष हो जाता है। वक्रोक्तिकार कुन्तक ने इसे प्रबन्ध वक्रता का एक भेद **'नामकरणवक्रता' (शीर्षक वक्रता) के रूप में स्वीकार किया है।**[1] काव्यकार काव्य के लिए जिस अभिधान का चयन करता है वह नामकरण ही उसकी कृति हेतु समीक्षा सूत्र माना जाता है। काव्य रूपी समग्र अस्तित्व की व्यंजना वह इसी सूत्र में **प्रदान करने की चेष्टा करता हैं।**[2]

आधुनिक संस्कृत बाल–साहित्य में काव्यों का नामकरण काव्य की कथा के आधार पर या घटना के आधार पर किया गया है।

(क) काव्य में उल्लेखित कथा के शीर्षक के आधार पर–

महान् (बालकथा)–डॉ. केशवचन्द्रदाश

एकदा (बालकथा)–डॉ. केशवचन्द्रदाश

चमत्कारिकः चलदूरभाषः – ऋषिराज जानी

कपिः कूर्दते शाखायाम् – ऋषिराज जानी

(ख) नायक अथवा पात्रों के नाम के आधार पर–

बालवीरम्–डॉ. रामकिशोर मिश्र

कनियान् राजकुमारः – गोपबन्धु मिश्र

ईसपकथानिकुंजम् – ओ.पी. ठाकुर

चौरचत्वारिंशत् कथा – गोविन्द कृष्ण

हंसरक्षणम् (लघुनाटकम्) – प्रो. ताराशंकर शर्मा 'पाण्डेय'

वृक्षरक्षणम् (लघुनाटकम्) – प्रो. ताराशंकर शर्मा 'पाण्डेय'

(ग) काव्य में स्थित विषय के आधार पर –

किशोरकथावलिः – डॉ. रामकिशोर मिश्र

कान्तारकथा– प्रो. राजेन्द्र मिश्र

---

1. अरस्तु का काव्यशास्त्र (पाश्चात्य काव्यशास्त्र), देवेन्द्रनाथ शर्मा, पृ.–6
2. अग्निपुराण 33/10, 'अपारे काव्य संसारे कविरेव प्रजापतिः'

अभिनवपंचतन्त्रम् – प्रो. राजेन्द्र मिश्र

बालचरितम् – डॉ. रामकिशोर मिश्र

पताका (बालोपन्यासः) – डॉ. केशवचन्द्रदाश

संक्षेपपंचतन्त्रम् – डॉ. विश्वास

ललितलवङ्गम् – प्रो. वासुदेव दीक्षित

रङ्गरूचिरम् – प्रो. वासुदेव दीक्षित

मृत्युः चन्द्रमसः – पराम्बा श्री योगमाया

(घ) काव्य अथवा कथा ग्रन्थ में स्थित कथाओं की संख्या के आधार पर

बालकथासप्ततिः – प्रो. जनार्दन हेगड़े

विश्वकथाशतकम् – स्व. पद्मशास्त्री

नाटयनवग्रहम् – प्रो. राजेन्द्र मिश्र

अष्टोक्तिशतकम् – डॉ. रामकिशोर मिश्र

(ङ) बालकाव्य विधा अथवा काव्य शैली के आधार पर

बालनाट्यवल्लरी – सौ. दुर्गा पारखी

बालनाटकान् – पूजा लाल

बालनाट्यसौरभम् – डॉ. रामकिशोर मिश्रा

बालनाट्यावलि – रामचन्द्र अम्बिकादत्त 'शाण्डित्य'

बालगीतम् – भि. वेलणकर

बालगीताली– हरिदत्त शर्मा

संस्कृत शिशुगीतम् – सुभाष वेदालंकार

बालकथा– पूजा उपाध्याय

बालकवितावलिः – आचार्य वासुदेव दीक्षित

बालकथामाला– आचार्य वासुदेव दीक्षित

बालनाटकम् – आचार्य वासुदेव दीक्षित

अन्ततः काव्य का नामकरण कथानक को भिन्न–भिन्न दृष्टि से देखने पर मालूम होता है। इसके साथ ही बाल–पात्रों के नाम सम्बोधन में पौराणिकता के साथ–साथ आधुनिकता का समावेश भी परिलक्षित होता है। विशुद्ध आधुनिक बाल–साहित्य में बालकों के नाम सामान्यतया उच्चारण में सरल होते हैं यथा– 'चमत्कारिकः चलदूरभाषः' काव्य में पात्रों के नाम अनिल, मोन्टु तथा 'पताका (बालोपन्यास)' में अनिल, सीमा आदि का प्रयोग द्रष्टव्य है। ओमप्रकाशजी बताते हैं कि– "नाम ऐसा हो एकदम नया हो, अनूठा इतना कि किसी ने सुना तक न हो, क्योंकि बालक आत्मसम्मान का भूखा होता हैं।"

(ii) कथावस्तु प्रकार

काव्यशास्त्रों में कथावस्तु को 'वस्तु' शब्द से सम्बोधित किया गया है यथा आचार्य धनंजय 'दशरूपक' में रूपक के तीन भेद स्वीकार करते हैं **वस्तु, नेता एवं रस।**[1] यहाँ रूपक के तीनों भेदों में वस्तु अर्थात् कथावस्तु को प्रथमतः वर्णित किया गया है। दूसरी तरफ पाश्चात्य काव्यशास्त्री अरस्तू द्वारा दुःखांतक के छः भेदों के अन्तर्गत 'कथावस्तु' को प्रथम अंग स्वीकार किया है। अरस्तू कथानक को केवल कथा या कहानी ही नहीं मानते, बल्कि कथानक को घटनाओं की संरचना के रूप में स्वीकार करते हैं। अरस्तू का कथानक घटनाओं की कलात्मक संरचना से संबंधित हैं।[2]

बाल–साहित्य के कथानक अनेक विषयों पर केन्द्रित होते हैं। सम्प्रति केवल राजा–रानी की कथाएँ अथवा कपोल कल्पना आश्रित कथाएँ ही बालकों के मनोरंजन के लिए पर्याप्त नहीं है, बल्कि समकालिक घटनाओं का वर्णन बाल–साहित्य में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। आधुनिक बाल–साहित्य में उपलब्ध कथानक मुख्यतया तीन प्रकार के होते हैं– ऐतिहासिक कथावस्तु, कल्पनाश्रित कथावस्तु एवं समकालिक घटना प्रधान कथावस्तु।

(क) ऐतिहासिक कथावस्तु – इतिहास प्रधान कथानक आधारित बाल–साहित्य का विषय राजा, रानी, अमात्य, विप्र, विद्वान् आदि पात्रों के निकट ही भ्रमण करना हैं। इनकी वर्ण्यवस्तु पुराण, रामायण, महाभारत आदि काव्यों एवं समकालिक ऐतिहासिक घटनाओं, देशभक्ति, कर्तव्यपरायणता, जीवनचरित से सम्बन्धित होती है। यह काव्य बालकों को नीतिज्ञान, जीवनज्ञान, दार्शनिक ज्ञान, सृष्टिज्ञान आदि से अभिभूत करते हैं। ऐतिहासिक कथावस्तु आधारित काव्यों का पठन–पाठन बालकों के सर्वाङ्गीण विकास में पूर्णतया समर्थ है। बाल–साहित्यकार इन इतिहास प्रधान निरस कथावस्तु को स्वबुद्धिचातुर्य से रोचकता प्रधान कर बालकों को आनन्दित करते है। बालसाहित्य में उपलब्ध ऐतिहासिक काव्यों में परिगणित डॉ. केशवचन्द्रदाश प्रणीत 'महान् (बालकथा) में स्वराज्यम्,

---

1. 'दशरूपकम्', आचार्य धनंजय, वस्तु नेता रसस्तेषां भेदकः – प्रथम प्रकाश / 16
2. 'पाश्चात्यकाव्यशास्त्र', देवेन्द्रनाथ शर्मा पृ.–30

शेषःस्मितम्, संघं शरणं गच्छामि, महान्, संगतस्वप्नः आदि बालकथाओं के कथावस्तु रामायण, महाभारत, भगवान बुद्ध, सम्राट अशोक एवं चाणक्य आदि ऐतिहासिक प्रसङ्गो से ग्रहण किए गए हैं। वस्तुतः प्रासंगिक कथावस्तु आचार्य धनंजय द्वारा प्रतिपादित 'आधिकारिक कथावस्तु' का ही एक भेद है जिसका लक्षण हैं–

"तत्राधिकारिकं मुख्यमङ्गं प्रासङ्गिकं विदुः।" (दशरूपक, प्रथम प्रकाश/11)

प्रासङ्गिक कथावस्तु प्रधान कथावस्तु का अङ्ग होती है जो आधिकारिक कथा की फलसिद्धि में सहायक होती है।

अतः ऐतिहासिक कथावस्तु स्वयं के प्रयोजन को सिद्ध करने के साथ–साथ सहृदय बाल रसिकों के ज्ञानवर्धन, मनोरंजन एवं नैतिक उपदेश प्रदान करने में भी सहायक होता है। 'अभिनवपंचतन्त्रम्' में प्रो. राजेन्द्र मिश्र का मुख्य मन्तव्य बालकों को विभिन्न प्रकार की प्रासङ्गिक कथाओं के माध्यम से नैतिक उपदेश प्रदान करना है। इसी तरह 'नाट्यनवग्रहम्' में संकलित शिशु नाटक महाभारत के प्रसङ्गो के माध्यम से शिशुरूपी बालकों को नैतिक मूल्यों की शिक्षा प्रदान करते हैं।

संस्कृत बाल साहित्य में ऐतिहासिक कथावस्तु अधारित काव्य निम्नलिखित द्रष्टव्य है–

महान् – डॉ. केशवचन्द्र दाश

नाट्यनवग्रहम् – प्रो. राजेन्द्र मिश्र

बालकथास्रवन्ती– प्रो. जनार्दन हेगड़े

बालनाट्यवल्लरी – सौ. दुर्गा पारखी

बालनाट्यसौरभम् – डॉ. रामकिशोर मिश्र

(ख) **काल्पनिक कथावस्तु –** इस विषयवस्तु से सम्बन्धित साहित्य प्रायः अवास्तिक एवं अयर्थात् कथावस्तु से सम्बन्धित होता है। इन काव्यों का कथानक इहलोक के साथ–साथ परलोक की विषयवस्तु पर आधारित होता है। **अरस्तू**[1] ने इन्हें दन्तकथाओं के अन्तर्गत परिगणित किया है।

कल्पना लोक से युक्त बाल–काव्य बालकों में कौतूहल एवं आकर्षण उत्पन्न करने में समर्थ होता हैं। इन काल्पनिक काव्यों का प्रारम्भ प्रायः "आसीदेकः राजा.......अथवा एकाऽऽसीत् परी" अथवा

1. 'पाश्चात्य काव्यशास्त्र', प्रो. देवेन्द्रनाथ शर्मा, पृ.–31

"एकासीत् राज्ञी......." अथवा एकदा कश्चिद् वनेचरः.....इत्यादि शब्दों से होता है। इन काव्यों में प्रयुक्त 'एकदा' एकासीत् शब्द बालकों के मन को कल्पना के उच्च गमन में विचरण करवानें में समर्थ होते हैं। साथ ही बालकों के मन में जिज्ञासा का प्रार्दुभाव भी करती हैं। बालकों को यह दन्तकथायें नूतन जगत् का दर्शन करवाती है। काल्पनिक कथानक से आधारित काव्य बालकों की समस्या का समाधान करने के साथ ही चमत्कारपूर्ण शैली में मनोरंजन जगत् में भी विचरण करवाता है।

काल्पनिक कथावस्तु आधारित बाल–काव्यों में वृक्ष, लता, नदी आदि प्रकृति भी मानवीय भाषा में वार्तालाप करने में सक्षम होती है। साथ ही विभिन्न प्रकार के जानवर, पशु–पक्षी इस कल्पनामय संसार में मनोवांछित रूप धारण करने में समर्थ होते हैं। इस कल्पनामय जगत् में सब–कुछ सम्भव होता हैं, असम्भव कुछ भी नहीं होता है। पात्राधारित काल्पनिक कथावस्तु को तीन भागों में वर्गीकृत कर सकते हैं।

(क) **मानवीय पात्राधारित काव्य –** इस प्रकार के काव्यों के पात्र सम्राट–साम्राज्ञी, राजा–मन्त्री, राजा–प्रजा, गुरु–शिष्य, मित्रों की कथाएँ, पारिवारिक सम्बन्धों से युक्त काव्य, बाल–वृद्ध आदि श्रेणियाँ सम्मिलित हैं। यह काव्य बालकों को पारिवारिक–सामाजिक सम्बन्धों को सरल एवं व्यावहारिक रोचक शैली में अवबोध करवाने में समर्थ होते हैं।

(ख) **मानवेतर पात्रों से युक्त काव्य –** मानवेतर पात्रों में पशु–पक्षी, वृक्ष, लता इत्याादि प्रकृति, अप्सरा, भूत–प्रेत, देव–दूत देवताओं से सुसज्जित कथाएँ सम्मिलित हैं।

बालकों में लोकप्रिय ये कथाएँ नितांत काल्पनिक एवं असत्य लोक से संबंधित होती हैं। ये काव्य बालकों को सत्यजगत्, मानव–जीवन के सिद्धांत, आदर्श एवं लोकव्यवहार का न्यूनाधिक ज्ञान प्रदान करते हैं।

(ग) **मानव–मानवेतर पात्राधारित संयुक्त काव्य –**इन बाल–काव्यों में कभी–कभी मानव–पात्रों के साथ पशु–पक्षी, नदी–वृक्ष, भूत–प्रेत, देव–दानव पात्रों का भी चित्रण परिलक्षित होता है।

वस्तुतः काल्पनिक बाल–साहित्य का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। इन काव्यों में जीवन का सन्देश भी निहित होता है। यह काव्य बालकों में धर्म, व्यवहार, जीवन–शैली, पारिवारिक उत्तरदायित्व, सामाजिक–कर्त्तव्य बोध, विनम्रता, शिष्टाचार, नैतिकता, सदाचार, समस्त सांसारिक सम्बन्धों को अत्यन्त रोचकतापूर्ण शैली में वहन करवाने में समर्थ होते हैं।

काल्पनिक कथावस्तु आधारित बाल–साहित्य

पताका (बालोपन्यासः)	–	डॉ. केशवचन्द्रदाशः
एकदा (बालकथाखण्डः)	–	डॉ. केशवचन्द्रदाशः
अष्टोक्तिशतकम्	–	डॉ. रामकिशोर मिश्रा
बालनाट्यवल्लरी	–	सौ. दुर्गा पारखी
शिशुस्वान्तम्	–	डॉ. के. वरलक्ष्मी
सुकान्तकथाविंशतिः	–	सुकान्तकुमार सेनापतिः
कपिः कूर्दते शाखायाम्	–	ऋषिराज जानी
चमत्कारिकः चलदूरभाषः	–	ऋषिराज जानी
संस्कृतकथाशतकम्	–	आचार्य पद्मशास्त्री
शनैः शनैः (बालगीतावालिः)	–	डॉ. सम्पदानन्द मिश्रः
चित्रपतङ्गम्	–	डॉ. सम्पदानन्द मिश्र

(घ) **समकालिक घटना प्रधान एवं वैज्ञानिक विषय–**वस्तु आधारित बाल–साहित्य

कनियान् राजकुमारः	–	गोपबन्धु मिश्र
मृत्युः चन्द्रमसः	–	परामबा श्रीयोगमाया

अतः आधुनिक संस्कृत बाल–रचनाकार प्राचीन एवं अर्वाचीन विषयों को परिवर्तित कर प्रस्तुत करने में पूर्णतया सक्षम है। राष्ट्रभक्ति गीतों के कथानक को चरितार्थ करने हेतु डॉ. राजकुमार मिश्र द्वारा 'विमलात्रिरङ्गन' बाल–काव्य का प्रणयन किया गया हैं। इसी तरह बालकों का सूचना प्रौद्योगिक सम्बन्धित ज्ञान से अवगत करवाने हेतु कवि गुण्डमि गणपत होलकर द्वारा 'दूरदर्शने किमिदं विश्वदर्शनम्' की रचना की गई है। बालकों को रेलयान से परिचय करवाने के लिए 'चलति वाष्पयानं झटिति' तथा वर्षा ऋतु से अगवत करवाने हेतु डॉ. बनमाली बिश्वाल द्वारा **'नृत्यति वर्षाराज्ञी'** कविता की रचना की गई हैं।

(iii) पात्र चरित्र–चित्रण

बालसाहित्य में पात्रों की संख्या प्रचुर मात्रा में होती हैं। मानवीय पात्रों के साथ–साथ वृक्ष, नदी, पशु–पक्षी, पर्वत–झरनें, वायु–अग्नि, देव–दूत, यक्ष–यक्षिणी, भूत–प्रेत इत्यादि सभी जड़–चेतन

वस्तुएँ भी बाल–साहित्य में बालकों के ज्ञानार्थ एवं मनोरंजनार्थ प्रयुक्त किए गए हैं। यह–सम्पूर्ण जड़–चेतन पात्र मानवीय पात्रों के साथ वार्तालाप एवं संवाद स्थापित करते हैं।

वस्तुतः साहित्यकार द्वारा इस प्रकार के पात्रों का प्रयोग बालकों की अवस्था, बुद्धि, मनोदशा एवं बाल–संवेगों को दृष्टि में रखते हुए किया गया है। यथा अभिराज राजेन्द्र मिश्र का कथन है– **"शिशु मनसि निमज्ज्यैव शिशुकाव्यं कर्तुं शक्यते न पुनर्विषयचयन मंत्रिण। येषां संस्कृतशब्दानामभिप्रायेण न जानाति शिशुः, यादृशं सम्प्रत्ययं तर्कं वाचोयुक्तिं वाऽसौ न जानाति यदि कविस्तत्सर्वं प्रयुनक्ति, तर्हि कीदृशी सा शिशुकविता? शिशोः संसार एवान्यादृशः। स एव संसारो वर्णनीयतामर्हति बालकाव्ये।"**[1] प्रस्तुत आलेख में प्रो. राजेन्द्र मिश्र का मन्तव्य है कि काव्यकार बाल काव्य की सर्जना बाल–मनोभावों का अनुभव करते हुए ही करता है।

प्राचीन बाल–काव्यों में काव्य का वक्ता जहाँ कोई वृद्ध मंत्री अथवा बुद्धिमान मनुष्य होता था तथा श्रोता राजकुमार पुत्र या विप्र इत्यादि प्रयुक्त होते थे, वहीं आधुनिक बाल–काव्यों में वक्ता स्वयं कवि होता हैं तो, श्रोता बालक–बालिकाएँ, शिशु आदि सामान्य समाज में निवासित पात्र होते हैं। जैसा कि प्रो. राजेन्द्र मिश्र प्रणीत 'अभिनवपंचतन्त्रम्' में प्रयुक्त पात्र हो अथवा डॉ. केशवचन्द्रदाश प्रणीत 'एकदा' बालकाव्य में परिलक्षित सामान्य पात्र हो।

इन बालकाव्यों में सम्मिलित पात्र बाल–पाठकों को अपने–अपने विशेष गुणों द्वारा बुद्धिता, कार्यकुशलता, प्रेम, स्नेह, सामंजस्य, सहयोग, दया, परोपकार इत्यादि सत्कर्मों की प्रेरणा देते हैं। यथा प्रो. राजेन्द्र मिश्र प्रणीत एवं अनूदित काव्य 'कान्तारकथा' का प्रधान पात्र 'मोगली' अपने विशेष गुणों से अरण्य में निवासरत सम्पूर्ण पशु–पक्षियों को परस्पर प्रेम एवं सहयोगपूर्वक निवास करने का नैतिक उपदेश प्रदान करने के साथ ही सर्वदा निर्भीकतापूर्वक जीवनयापन करने की शिक्षा देता है–

"बन्धनं न सहामहे अर्थात् बन्धन नहीं सहेंगे।"

यह बाल–साहित्य बालकों में कल्पना शक्ति, कर्त्तव्यबोध, नीतिज्ञान एवं लोक–व्यवहार का ज्ञान प्रदान करने में भी सहायक होता हैं।[2]

(iv) संवाद एवं वाक्य–विन्यास

बाल–साहित्य की प्रत्येक विधाओं यथा–कथा–कथानिका–एकांकी–लघुनाटक एवं उपन्यास में प्रयुक्त संवाद अतीव सरल–सुगम्य–प्रत्ययरहित–समासविहीन–अल्पाक्षर एवं व्यावहारिक होते हैं।

---

1. डॉ. राजेन्द्र मिश्र द्वारा दूरदर्शन (वार्तावली कार्यक्रम) में दिये गए साक्षात्कार से उद्‌धृत।
2. दृक् (षाण्मासिक) पत्रिका, अङ्क 26–27, पृ.–175–178

वस्तुतः बाल–कथाओं में प्रयुक्त संवादों में सम्प्रेषण तत्त्व निरन्तर प्रवाहमान रहता है। यथा डॉ. केशवचन्द्रदाश प्रणीत काव्य में द्रष्टव्य है–

"पवनोऽयं मृदुः। अतः सुखकरः।

पुलोमजा अपृच्छत्।

केन प्रकारेण अयं मृदुः?

पितामही अबोधयत्।

स्वभावेन मृदुः।

पुलोमजा पुनश्च अपृच्छत्।

मृदुस्वभावः किं सुखस्य कारणम्?

पितामही कथामारब्धवती

शृणु......। एकदा...."[1]

इसी तरह सरल एवं मनोहारिणी पदावली युक्त कथा का उदाहरण द्रष्टव्य हैं–

"आगच्छ मेघ
आगच्छ मातुल
रोटिका उष्णा
उष्णं च शाकम्
वृष्टिं कुरु मातुल
भगिन्या धरित्र्या दुःखं हर मेघ।।"[2]

बाल–साहित्य में प्रयुक्त संवाद बालकों में निरन्तर जिज्ञासा एवं कौतूहल उत्पन्न करने में सक्षम होते हैं यथा–सौ. दुर्गा पारखी विरचित 'बालनाट्यवल्लरी' में उपलब्ध 'कः चोरः' लघु एकांकी में प्रताप एवं रामदास के मध्य जिज्ञासा तत्त्व से युक्त अल्पाक्षर संवाद का प्रयोग द्रष्टव्य हैं–

"प्रतापः – गृहे कति सेवकाः?

रामदासः – त्रयः

प्रतापः – ते कदा भवतः गृहम् आगच्छन्ति?

1. एकदा (बालकथासंग्रह), पृ.–38
2. 'चमत्कारिकः चलदूरभाषः' (कथासंग्रह), ऋषिराज जानी, पृ.–35

रामदासः — प्रातः दशवादने।

प्रतापः — भवतः पूजासमयानन्तरम्?

रामदासः — आम्।"[1]

अतः बाल–मनोविज्ञान के अनुरूप कवि अल्पाक्षर एवं रमणीय संवादों का प्रयोग सर्वत्र परिलक्षित होता है।

(v) भाषा शैली

भाषा विचार विनिमय का सरल एवं परिष्कृत माध्यम है। भाषातत्वविद् भाषा की परिभाषा इस प्रकार अभिव्यक्त करते हैं कि– "जिन ध्वनि चिन्हों द्वारा मनुष्य परस्पर, विचार–विनिमय करता है, उसको समष्टि रूप से भाषा कहते हैं।" भाषा मानव जीवन के लिए अनिवार्य उपकरण हैं जिसके अभाव में जीवन के विकास की प्रक्रिया अपूर्ण हैं।

'भाषा' शब्द व्याकरणात्मक दृष्टि से संस्कृत की 'भाष भाषणे' धातु से निष्पन्न हुआ है जिसका शाब्दिक अर्थ है बोलना या कहना। महर्षि पाणिनी ने भाषा शब्द का निर्वचन किया हैं– "भाष्यते व्यक्त वाक्यरूपेण अभिव्यंजते इति भाषा।" अर्थात् जिसके माध्यम से जनमानस परस्पर वाणी का आदान–प्रदान करे, वह भाषा कहलाती हैं। बाल–साहित्यकार का भाषा के सम्बन्ध में विचार मुख्यतया अभिधा शक्ति युक्त सरल–सरस भाषा है जिसमें लक्षणा एवं व्यंजना की शून्यता रहती हैं। कवि का मुख्य प्रयोजन केवल सरल पदावली के माध्यम से बालकों को नैतिक–उपदेश एवं मनोरंजन प्रदान करना होता हैं। बालसाहित्यकार काव्यों में लघु–लघु पद युक्त भाषा शैली का प्रयोग करता है यथा **पं. वासुदेव दीक्षित**[2] कृत बालकाव्य से कुछ पद्य उद्धृत हैं–

"निपतति जम्बूः टप् टप्
बालः खादति गप् गप्
वायुः प्रवहति हर् हर्
पत्रं निपतति खर् खर्
विहगो ब्रूते चुन् चुन्
गन्त्री गच्छति धक् धक्
बालः पश्यति टक् टक्।।"

1. 'बालनाट्यवल्लरी', सौ. दुर्गा पारखी, पृ.–58–59
2. 'बालकवितावलि' पं. वासुदेव दीक्षित

यद्यपि बालसाहित्य में सर्वत्र सरल भाषा का ही प्रयोग दिखाई देता हैं किंतु कहीं–कहीं प्रौढ़ भाषा शैली का प्रयोग भी परिलक्षित होता हैं–

अखण्डभारतच्छविप्रदर्शनैकमानसाः

जयन्तु वीरसैनिकाः............

रणे धरन्ति तीक्ष्णतां विपक्षपक्षनाशिकामभेद्यभेदने क्षमा जयन्तु

राष्ट्रगौरवाः।।

जयन्तु वीरसैनिकाः............।[1]

किंतु पण्डिता क्षमाराव का कथन हैं कि प्रायः बालसाहित्यकार की भाषा चित्रात्मक, कवित्व प्रधान और माधुर्य गुण से युक्त होती हैं।[2] बालसाहित्य में कवि बालकों के अनुकूल चित्रात्मक, सम्भाषणात्मक तथा कथावाचक शैली का प्रयोग करता हैं। यहाँ भारवि की अलंकृत शैली के स्थान पर मनोरंजनात्मक एवं उपदेशात्मक शैली का प्रयोग किया जाता हैं। पद्यात्मक बालसाहित्य में कवि अनुरणात्मक गेय तत्व को प्रधानता देता है। यथा डॉ. सम्पदानन्द मिश्र के बालकाव्य में सर्वत्र गेयात्मक तत्त्व का प्रयोग द्रष्टव्य हैं–

"खप् खप् खप् वल्गति।

गप् गप् गप् खादति।।

रिमि झिमि झिमि वर्षति।

त त थै थै नृत्यति।।"[3]

इसी तरह डॉ. राजेन्द्र मिश्र कृत 'कौमारम्' (51 शिशुगीतसंकलन) कविता संग्रह में भी प्रायश चित्रात्मक एवं गेयात्मक शैली का प्रयोग द्रष्टव्य हैं यथा–

"डिमिक्डिमक् वादयन् डमरुकं

मार्कटिकोऽयं भ्रमति ग्रामे।।

एहि सुधाकर! मोहन! सोहन!

कमले! विमले! रमे! बलाके!

प्रदर्शयिष्यति वानरनृत्यं

सर्वसमक्षं बहिरारामे।।"[4]

---

1. 'डयते कथमाकाशे', डॉ. राजकुमार मिश्र, पृ.–34
2. 'कथामुक्तावली', पण्डिता क्षमाराव, पृ.–7
3. बालगीतावलिः (शनैः शनैः), डॉ. सम्पदानन्दमिश्रः, पृ.–8
4. कौमारम्, प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–45

डॉ. राजेन्द्र मिश्र द्वारा प्रणीत 51 शिशुगीतों से युक्त 'कौमारम' काव्य सरल–सरस एवं मनोहर शैली में निबद्ध एक दुर्लभ मणिकांचन संयोग हैं। इसी तरह डॉ. केशवचन्द्रदाश प्रणीत 'महान्' एवं 'एकदा' बालकाव्यों में प्रश्नात्मक, भावात्मक एवं संरचनात्मक भाषा शैली का सम्मिलित प्रयोग प्राप्त होता है। प्रश्नात्मक भाषा शैली का उदाहरण उल्लेखनीय है–

–"को नाम निशाचरः?

– निशाचरो नाम यः रात्रौ विचरति।

– चन्द्रोऽपि रात्रौ विचरति। स किं निशाचरः?

– न............न.......। निशाचरः दुष्टाः। ते न कदापि

प्रकाशं वांछन्ति। तमसि सदा निवसन्ति। तत्र च अपकुर्वन्ति।"[1]

बालसाहित्य मनोहर हो इसके लिए बाल–साहित्यकार प्रायः बालकाव्यों के अन्तर्गत चित्रों की योजना करता है। प्रो. राजेन्द्र मिश्र एवं डॉ. सम्पदानन्द मिश्र प्रभृति विद्वानों द्वारा भरपूर मात्रा में चित्रात्मक भाषा शैली का प्रयोग किया गया है। यथा–

कोऽयं पक्षी? अयं कोकिलः कूजंति कथमिव? कुहू–कुहू।

कोऽयं पशुः? अयं खलु छागः। गणति कथमयम्?

में में में.....।।[2]

वस्तुतः चित्रात्मक शैली बालकों में जिज्ञासा एवं कुतुहलता उत्पन्न करने में पूर्णतया सक्षम है। पं. गोपबन्धु मिश्र प्रणीत 'कनीयान् राजकुमारः' अनूदित कृति में एक षड्वर्षिय बालक की बाल्यावस्था का उल्लेख हैं जिसमें वह विभिन्न प्रकार के पशुओं अजगर, हाथी, भेड़, बकरी आदि के चित्रों के माध्यम से उनके शारीरिक आकार के ज्ञान को अवगत करता हैं।

इसी तरह बाल साहित्य में वर्णनों की विविधता एवं कल्पनाशक्ति की तीव्रता युक्त वर्णनात्मक शैली का प्रयोग भी द्रष्टव्य हैं। डॉ. केशवचन्द्रदाश द्वारा प्रणीत 'पताका' (बालोपन्यास) में वर्णनात्मक भाषा शैली का प्रयोग किया गया है। प्रस्तुत काव्य में कवि बालकों को विभिन्न उदाहरणों के द्वारा स्वतन्त्रता दिवस पर पहराई जाने वाली पताका (ध्वजा) से परिचय करवाता हैं। यथा–

---

1. 'महान्' (बालकथा), डॉ. केशवचन्द्र दाश, पृ.–11
2. कौमारम् (पशुपक्षिपरिचयः), प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–30

"केशरं समृद्धेः प्रतीकम्। श्वेतं शान्तेः चिह्नम्। हरितं प्रगतेः प्रतीकम्। पुनश्च केशरं अग्नेः वर्णम्। सूर्यस्य उदयरागः अस्तरागः अपि केशरतुल्यम्। अग्निः सूर्यस्य अस्माकं परम्परायाः मूलाधारः। अतः केशरं सर्वदा अग्रे इति गुरुजनाः वदन्ति।"[1]

इसी तरह आचार्य पद्मशास्त्री द्वारा बालकों के ज्ञानवर्धन, लोकव्यवहार एवं मनोर×जन हेतु कथावाचक शैली में 'संस्कृतकथाशतकम्' का प्रणयन किया गया है। ये कथायें यद्यपि चित्र–विचित्र वर्णनों से व्याप्त रहती है किन्तु बिम्ब–प्रतिबिम्ब की तरह सत्य तत्त्व ये सर्वत्र एवं सर्वदा ओत–प्रोत होती हैं।

इसी प्रकार आधुनिक बाल–साहित्य में सम्भाषणात्मक भाषा शैली का प्रयोग भी परिलक्षित होता है। इस भाषा शैली के अन्तर्गत काव्य में उपलब्ध पात्र किसी नैतिक मूल्याधारित कथानक को दृष्टि में रखते हुए सरल–सरस, समासरहित पद शैली में परस्पर संवाद करते हुए दिखाई देते हैं। यथा–

"नागराजः	–	**अपशकुनं भोः, अपशकुनम्।**
श्यामला	–	**किं तत् अपशकुनम्?**
नागराजः	–	**प्रातः उत्थाय साक्षात् तदेव दृष्टवान्....।**
श्यामला	–	**किं तत् दृष्टवान्..............?**
नागराजः	–	**तदेव मार्जारस्य मुखम्।"[2]**

अतः सरल–सरस एवं अभिधा शब्द शक्ति से युक्त भाषा शैली का प्रयोग ही बाल–साहित्य में परिलक्षित होता है।

(vi) रस योजना

रस सिद्धान्त के प्रवर्तक आचार्य भरतमुनि का कथन हैं कि 'नहि रसादृते कश्चिदर्थः प्रवर्तते'(ना.शा.–6.32) यह उक्ति प्रकट करती हैं कि काव्य में ऐसी कोई वस्तु नहीं हैं जो रस से रहित हो। जिस प्रकार आत्मतत्त्ववेत्ता मनुष्य परमात्मा का दर्शन करके अपूर्व आनन्द में मग्न हो जाता हैं, उसी प्रकार काव्यमर्मज्ञ एवं सहृदय पाठकगण भी ब्रह्मानन्द सदृश आनन्द प्रदायक रस का आस्वादन करके काव्यानन्दरूपी सागर में निमग्न हो जाते हैं। भारतीय संस्कृत वाङ्मय के अतीव

---

1. पताका (बालोपन्यास), डॉ. केशवचन्द्रदाश, पृ.–97
2. 'मार्जालस्य मुखम् दृष्टम्' (लघु एकांकी), डॉ. विश्वास, पृ.–37

प्राचीन शब्दों में 'रस' शब्द अन्यतम है। यद्यपि हेमकोश में 'रस' शब्द को भिन्न–भिन्न अर्थों में प्रतिपादित किया गया है–

"रसः स्वादं जले वीर्ये शृङ्गारादौ विषे द्रवे।
बले रागे ग्रहे धातौ तिक्तादौ पारदेऽपि च।।"

किंतु काव्य में विद्यमान रस अलौकिक एवं अद्वितीय हैं। नाट्यशास्त्र के सदृश अग्निपुराण में उल्लेख है कि भाव से विहीन रस की सत्ता नहीं होती, साथ ही स्वयं भाव भी रस से रहित होकर अपनी स्थिति नहीं रख सकता हैं। वस्तुतः भाव ही रसों को भावित करता हैं तथा रस भी स्वयं उन भावों के द्वारा भावित होते हैं।

अग्निपुराण में उल्लेख हैं–

न भावोहीनोऽस्ति रसो न भावो रसवर्जितः।
भावयन्ति रसानेभिर्भाव्यन्ते च रसा इति।।[1]

वस्तुतः काव्य में आत्मसदृश विद्यमान 'रस' तत्त्व आनन्द का उत्कर्षाधायक होता हैं। यह काव्यरूपी 'आनन्द' तीन प्रकार का उल्लेखित हैं–लौकिकानन्द, काव्यानन्द एवं ब्रह्मानन्द। काव्यानन्द की सत्ता ही साहित्य में उपलब्ध होती हैं। बालकाव्यों के अनुशीलन अथवा श्रवण से भी बालकों को इसी काव्यरूपी आनन्द की प्राप्ति होती हैं। जैसा कि अग्निपुराण में उल्लेख हैं–

"वाग्वैदग्ध्यप्रधानेऽपि रस एवात्र जीवितम्। वचनविन्यासचमत्कारपूर्णे सत्यपि, काव्यस्यात्मा तु रस एव। स चानन्दमयः।" (अ.पु. 337/33) अर्थात् वह काव्यानन्द रस से युक्त होता हैं।

यह पूर्णतः सत्य है कि काव्य चाहे किसी भी विधा का क्यों न हो, उस काव्य में रस निश्चित रूप से विद्यमान रहता हैं। **यद्यपि बालकाव्यों की भाषा शैली व्यंग्यप्रधान न होकर अभिधेय होती है फिर भी बालकों के मन में सत्वगुण को बढ़ाने वाले रस सर्वत्र परिलक्षित होते हैं।**[2] यह रस बालकाव्यों में प्रयुक्त होकर बालकों के हास्य एवं आनन्द अवाप्ति में सहायक होता हैं। जैसाकि आचार्य विश्वनाथ का कथन हैं–

"सत्त्वोद्रेकादखण्डस्वप्रकाशानन्दचिन्मयः,
वेद्यान्तरस्पर्शशून्यो ब्रह्मास्वादसहोदरः।
लोकोत्तरचमत्कारप्राणः कश्चित् प्रमातृभिः,
स्वाकारवदभिन्नत्वेनायमस्वाद्यते रसः।।"[3]

---

1. अग्निपुराण, 339/1/12
2. 'भारतीय एवं पाश्चात्य काव्य का सिद्धांत', गणपतिचन्द्र गुप्त, पृ.–68
3. साहित्यदर्पण, पं. विश्वनाथ, तृतीय परिच्छेद/2–3, पृ.–50

आधुनिक संस्कृत बाल–साहित्य में 'रस विवेचन' समीक्षा का महत्त्वपूर्ण विषय हैं। रस सम्प्रदाय एवं ध्वनि सम्प्रदाय के आचार्यों द्वारा तो 'रस' को प्रमुख काव्यात्मक तत्त्व स्वीकार किया गया हैं। किन्तु अलंकार, रीति, गुण सम्प्रदायों का सूक्ष्म अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि इन्होंने भी किसी न किसी स्तर तक 'रस' की सत्ता को अङ्गीकार किया है।

आचार्य राजशेखर[1] का मत है कि ब्रह्मा के आदेशानुसार नन्दिकेश्वर ने सर्वप्रथम 'रस' का प्रतिपादन किया। किन्तु स्वतंत्र रूप से आचार्य नन्दिकेश्वर का रस विषयक मत प्राप्त नहीं होता है। आचार्य भरतमुनि के अनुसार भावों से रसों की निष्पति होती हैं यथा–

"दृश्यते हि भावेभ्यो रसानामभिनिर्वृत्तिर्न तु रसेभ्यो भावानाभिनिवृत्तिरिति।"[2]

आचार्य आनन्दवर्धन ने 'ध्वनि' को काव्य की आत्मा स्वीकार करते हुए भी 'रस ध्वनि' को ही सर्वोत्कृष्ट माना हैं। महिमभट्ट भी रसात्मवादी है वह रस को व्यंग्य न मानकर अनुमेय मानते हैं–

"काव्यस्यात्मनि संज्ञिनि रसादिरूपे न कस्यचिद् विभाति।
अनुमतिदन्तर्भावं सर्वस्यैव ध्वनेः प्रकाशयितुम्।।"[3]

आचार्य भोजराज ने भी काव्य के तीन भेदों–वक्रोक्ति, रसोक्ति और स्वाभावोक्ति में 'रसोक्ति' को ही प्रधानता दी हैं। इसी तरह आचार्य भोज ने भी श्रृङ्गार रस को ही प्रधानतया काव्य की उत्कर्षता का द्योतक बताया हैं। आचार्य मम्मट[4] ने व्यंग्य के तीन भेदों में रस को ही प्रमुख भेद स्वीकार किया है।

आधुनिक काव्यशास्त्रीय आचार्यों में प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी, प्रो. राजेन्द्र मिश्र, सनातन कवि रेवाप्रसाद द्विवेदी, प्रो. इच्छाराम द्विवेदी, आदि ने भी रस को ही किसी न किसी प्रकार से काव्य अथवा साहित्य का 'प्राणतत्त्व' स्वीकार किया है। रस को परिभाषित करते हुए सर्वप्रथम आचार्य भरतमुनि[5] का कथन हैं कि विभाव, अनुभाव तथा व्यभिचारों भावों से अभिव्यक्त स्थायी भाव ही रस हैं।

जहाँ तक काव्य या साहित्य में रसों की संख्या का प्रश्न है, सर्वप्रथम आचार्य भरतमुनि ने नाट्यशास्त्र में श्रृङ्गारादि आठ रसों को ही स्वीकार किया है। किंतु शान्त रस को लेकर विद्वानों में मतैक्य भी दिखाई देता हैं। अभिनवगुप्त शान्त रस को 'प्रकृति' तथा अन्य रसों को 'विकृति रस' मानते हैं। आचार्य मम्मट ने भी– 'शान्तोऽपि नवमो रसः' परिभाषित करते हुए शान्त रस को नवाँ रस स्वीकार किया हैं। इन नौ रसों के अतिरिक्त आचार्य विश्वनाथ 'वात्सल्य' रस को दसवाँ रस

---

1. पं. राजशेखर कृत 'काव्यमीमांसा' 'रसाधिकारिकं नन्दिकेश्वरः'
2. आचार्य भरतमुनि 'नाट्यशास्त्र', षष्ठम अध्याय
3. आचार्य महिमभट्ट ''व्यक्तिविवेक'' पृ.–111
4. आचार्य मम्मट 'काव्यप्रकाश, चतुर्थोल्लासः/27–28', पृ.–119
5. विभावाऽनुभावाव्यभिचारि संयोगाद्रसनिष्पत्ति, 'नाट्यशास्त्र' 6/7

मानते हैं, जिसकी परिणति आधुनिक बालसाहित्य में पर्याप्त मात्रा में दिखाई देती हैं। हरिदास–सिद्धान्त वागीश[1] 'स्नेह' को वात्सल्य रस का स्थायी भाव स्वीकार करते हैं। शाण्डिल्य मार्गीय विद्वान 'भक्ति' को भी पृथक से रस मानते हैं। साहित्य में 'भक्ति रस' की स्थापना का श्रेय मधुसूदन सरस्वती को है। वस्तुतः आस्वादन होने से 'भक्ति' भी रस सम्मत है। आचार्य विद्याराम के अनुसार 'भक्तिरस' का स्थायी भाव 'भाव' हैं। रूप रसादि को छोड़कर ईश्वर में दृढ़ प्रेम भाव उत्पन्न होना 'भाव' कहलाता हैं। यहीं स्थायी भाव परिपुष्ट होकर काव्य में 'भक्ति रस' के रूप में परिणत हो जाता है।[2]

प्रो. अभिराजराजेन्द्र मिश्र का कथन है कि वस्तुतः जैसे लोक में जीवात्मा से भी मोक्ष श्रेष्ठ होता हैं, उसी प्रकार आत्मा का लक्ष्यभूत होने के कारण काव्य में काव्यादभूत व्यङ्ग्यार्थ से रस श्रेष्ठ होता हैं।[3]

आधुनिक संस्कृत बाल–साहित्य में बालकों के मनोऽनुकूल हास्य, शान्त, वात्सल्य एवं भक्ति रस का काव्यों में अनुप्रयोग परिलक्षित होता हैं। कविराज विश्वनाथ हास्य रस का लक्षण प्रतिपादित किया है–

विकृताकारवाग्चेष्टादेः कुहकाद्भवेत्।
हास्यो हासस्थायिभावः श्वेः प्रमथदैवतः।। (साहित्य दर्पण)

अर्थात् विकृत आकार, वाणी, वेष तथा चेष्टादि के नाट्य से हास्य रस का आविर्भाव होता है। इसका स्थायीभाव 'हास' हैं। यथा डॉ. के.वरलक्ष्मी कृत 'शिशुस्वान्तम्' बालसाहित्य में 'उल्लेखित' विनायकः दृष्टः कथा में भगवान् गणेश की हास्यप्रद अभिनय बालकों के लिए मनोरंजन प्रदान करता है यथा–

"अयि बुभुक्षा जायते। इति रुदन् हस्तं प्रसार्य सदैन्यं याचते स्म सः। तं बालं दृष्ट्वा दयालुः संजातः श्रीनिवासः। बुभुक्षितस्य तस्य कृशोदरं दृष्ट्वा श्रीनिवासः सजलनेत्रः जातः। अनुक्षणं कोशस्थानि विंशति रूप्यकाणि निष्कास्य............पार्श्वस्थाय अल्पाहारस्वामिने दत्त्वा अवदत् यत्.......भो! एनं बालं भोजयतु।"[4]

1. 'स्नेह : स्थायिभावको वत्सलः' हरिदास सिद्धान्त वागीश कृत काव्यकौमुदी से उद्धृत, पृ.–57
2. विषयाध्यासमुन्मुत्थदृढ़प्रेमाय ईश्वरे।
   स भाव इति विज्ञेयः पूर्णो भक्तिरसस्तु सः।। रसदीर्घिका, पृ.–40–41
3. अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, निर्मितित्त्वोन्मेष, पृ.–150
4. शिशुस्वान्तम्, पृ.–24–25

यहाँ विनायक की 'कृशोदर' इत्यादि चेष्टाएँ उद्दीपन विभाव तथा भोजन की याचना, हस्त फैलाकर दीनतापूर्वक भोजन की याचना करना तथा भोजन प्राप्त कर प्रसन्न होना आदि अनुभाव हैं तथा चपलता, रुदन् आदि संचारी भाव हैं। अतः विभाव, अनुभाव एवं संचारी भावों से परिपुष्ट वह हास 'स्थायी भाव' है।

वात्सल्य रस –बाल–साहित्य में पुत्रविषयक 'रति' वात्सल्य रस का स्थायी भाव होता हैं। पं. विश्वनाथ ने 'साहित्यदर्पण' में नव रसों के अतिरिक्त काव्य में दसवें रस के रूप में 'वात्सल्य' रस को स्वीकार किया हैं–

स्फुटं चमत्कारितया वत्सलं च रसं विदुः,
स्थायी वत्सलतास्नेहः पुत्राद्यालम्बनं मतम्,
उद्दीपनानि तच्चेष्टां विद्याशौर्यादयः,
आलिंगनांगसंस्पर्शशिरश्चुम्बनमीक्षणम्।।
पुलकानन्दवाष्पाद्या अनुभावाः प्रकीर्तिताः।
संचारिणोऽनिष्टशङ्काहर्षगर्वादयो मताः।।[1]

डॉ. रामकिशोर मिश्र प्रणीत 'बालचरितम्' काव्य में कविपत्नी के अपने पुत्र राजेश के प्रति स्नेह व्यक्तादि कार्यों में 'वात्सल्य रस' का पर्याप्त प्रयोग दिखाई देता है यथा–

"क्षणं त्वङ्के मातुस्तदनु पितुरङ्के गतिमतीम्
स्वसुः क्रोडे चेच्छां प्रतिपलमरं दर्शयति यः।
जनानामन्येषामपि स पुनरङ्के विहरति।
यतस्ते तत्स्नेहान्न जहाति तमङ्कात् प्रियशिशुम्।।"[2]

यहाँ 'स्नेह' वात्सल्य रस का स्थायी भाव हैं। पुत्रादि आलम्बन तथा उसकी चेष्टाएँ, विहरण आदि उद्दीपन विभाव हैं। पुत्र राजेश का आलिङ्गन, अङ्कस्पर्श, रोमांच आदि संचारी भाव हैं। अतः यहाँ विभाव, अनुभाव एवं संचारी भावों के संयोग से कवि एवं सामाजिकों के हृदय में वासना रूप में विद्यमान 'स्नेह' स्थायी भाव जाग्रत हो जाता है।

शान्त रस – आचार्य विश्वनाथ ने 'साहित्यदर्पण' ग्रन्थ में शान्त रस की काव्य में सिद्धि द्योतित की हैं। शान्त रस का स्थायी भाव 'शम' बताया है–

---

1. साहित्यदर्पणम्, षष्ठम् परिच्छेद/241–43, पृ.–123
2. बालचरितम्, श्लोक–14, पृष्ट–51

शान्तः शमस्थायिभावउत्तमप्रकृतिर्मतः।[1]

कविराज विश्वनाथ के अनुसार परमात्मा का स्वरूप 'आलम्बन' तथा ऋषि आदि के पवित्र आश्रम, पवित्र तीर्थ, रमणीय एकान्तवन, महात्माओं की सत्सङ्गति 'उद्दीपन विभाव' होते हैं। रोमांच आदि इसके अनुभाव तथा धृति, हर्ष, स्मरण, ग्लानि, प्राणियों पर दया आदि इसके संचारी भाव होते हैं। यथा–

"स्वस्ति, श्रीभोजराजन् त्वमखिलभुवने धार्मिकः सत्यवक्ता। पिता ते संग्रहीता नवनवनिर्मिता रत्नकोटयो मदीयाः। तास्त्वं मे देहि राजन् संकलबुधजनैर्सार्यते सत्यमेतत्। नो वा जानन्ति चेत् तन्ममकृतिमपि नो देहि लक्षं ततो मे। यदा राजा श्लोकं शृणोति तदा प्रतिपक्तिं तस्य मुखभावः परिवर्तते। प्रसन्नं मुखं क्रमशः खिन्नं खिन्नतरं भवति।"[2]

प्रस्तुत गद्यांश में राजा भोज की धार्मिक प्रवृत्ति, सत्यवक्ता का स्वरूप इत्यादि आलम्बन विभाव, सकल बुधजन युक्त समास्थान उद्दीपन विभाव तथा काव्य के श्रवण से उत्पन्न रोमांच अनुभाव तथा धैर्य, हर्ष, मुख मुद्रा संचारी भाव है। साथ ही सभा में उपस्थित शान्त वातावरण से 'शान्त रस' का भाव परिलक्षित होता हैं। कवि स्वयं कहता है– **"श्लोकावसाने सर्वत्र शान्तः।"**[3]

भक्ति रस – बालकों के ईश्वर अथवा परमात्मा के प्रति भक्ति भाव से अन्तः मन में उत्पन्न रस 'भक्ति रस' है। यथा–

तारकचन्द्रविवृद्धाभासम्,
येन कल्पितं नीलाकाशम्।
तं सर्वेशं सदा नमामः,
यशस्तस्य नित्यं गायामः।।[4]

यहाँ बालकों की ईश्वर के स्वरूप का स्मरण करते हुए परमात्मा के प्रति भक्ति भाव प्रदर्शित करना भक्ति रस हैं। यहाँ परमेश्वर के प्रति उत्पन्न भक्ति भाव 'आलम्बनविभाव' परमेश्वर की तारकचन्द्र, विवृद्धाभास, नीलाकाश रचना इत्यादि शक्तियाँ उद्दीपन विभाव, बालकों के मुखमण्डल पर उत्पन्न प्रसन्नता, रोमांच अनुभाव तथा ईश्वर की शक्तियों को जानने की उत्सकता संचारी भाव हैं।

---

1. साहित्यदर्पणम् षष्ठ परिच्छेद/245, पृ.–121
2. बालनाट्यवल्लरी, सौ. दुर्गा पारखी, पृ.–125
3. बालनाट्यवल्लरी, सौ. दुर्गा पारखी, पृ.–125
4. 'कौमारम्' (शिशुगीतसंग्रह), प्रो. मिश्र, पृ.–2

अतः विभाव, अनुभव एवं संचारी भावों के संयोग से बालकों के मन में उत्पन्न ईश्वर विषयक रति 'भक्ति रस' का स्थायी भाव हैं।

अद्भुत रस – पं. विश्वनाथ कृत 'साहित्यदर्पण' लक्षण ग्रंथ में अद्भुत रस का लक्षण प्रतिपादित किया है–

"अद्भुतो विस्मयस्थायिभावो"[1]

अर्थात् अद्भुत रस का स्थायीभाव 'विस्मय' होता हैं। बालसाहित्य में कौतुक अलङ्कार से युक्त गद्य–पद्य में सर्वत्र अद्भुत रस की छठा परिलक्षित होती है। जगत् में विद्यमान अलौकिक परिदृश्य इसका आलम्बन विभाव, अलौकिक वस्तु के गुणों का वर्णन उद्दीपन विभाव, बालकों के मन में उत्पन्न स्वेद, रोमांच आदि इसके अनुभाव हैं तथा आवेग, भ्रान्ति, हर्ष आदि व्यभिचारी भाव होते हैं। यथा–

"न श्रेयसे भवत्येव अपरीक्षितकारकम्।
पुरोहितं तिरस्कृत्य यथाऽवाप नृपो भयम्।।"[2]

यहाँ बालकों के मन में आचार्य द्वारा कथित प्रश्न (अपरीक्षितकारकम् अर्थात् बिना विचार किसी भी प्रकार का कोई कार्य नहीं करना चाहिए) का उत्तर जानने की अद्भुत जिज्ञासा है। अतः अद्भुत रस हैं।

(vii) अलङ्कार योजना

'अलङ्कार' शब्द का अर्थ हैं अलंभाव अर्थात् अलंभत्व। रेवाप्रसाद द्विवेदी के अनुसार यहाँ 'अलम्' अव्यय का अर्थ 'पर्याप्त' ग्राह्य है। अतः अलङ्कार शब्द का अर्थ है– 'पर्याप्तता अथवा पूर्णता'। द्विवेदी जी का कहना है कि अलङ्कार शब्द काव्य में सौन्दर्य एवं सौन्दर्य प्रसार के कारणों को व्याप्त करना हैं। जैसाकि प्रो. द्विवेदी का कथन हैं–

"अलंभावोऽलङ्कारः स च सौन्दर्यतात्कृतोः।
विभक्तात्मा विभुर्जीव ब्रह्मणोश्चिद् धनो यथा।।
अलङ्कारोऽपि काव्यस्य तथा सौन्दर्य तत्कृतोः।
अभिव्याप्य स्थितस्ताभिर्व्युत्पत्तिभिर्विभुः।।"[3]

---

1. साहित्यदर्पणम् षष्ठ परिच्छेद / 242, पृ.–120
2. अभिनवपंचतन्त्रम्, प्रो. मिश्र, पृ.–83
3. काव्यालंकारकारिका, पृ.–52

दूसरी ओर आचार्य ब्रह्मनन्द शर्मा काव्य में सत्यता संबंधी सात उपायों को 'अलङ्कार' शब्द से सम्बोधित करते हैं–

"सूक्ष्माधर्मादयो येऽत्र उपायाः केऽपि दर्शिताः।
अलङ्काराभिधानं ते भजन्त इति मे मतिः।।"[1]

आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी भूषण, वारण एवं पर्याप्तता के अर्थ में अलङ्कार शब्द की व्याख्या करते हैं–**"आधिभौतिकाधिदैविकाध्यात्मिकविश्वत्रयसमुन्मीलनपुरस्सरंभूषणवारणपर्याप्त्याधायक–त्वमलङ्कारत्वम्"**[2] **।** अर्थात् कविता में अलङ्कार अविभाज्य एवं अनिवार्य तत्त्व है। त्रिपाठी जी का कथन है कि साहित्य या काव्य में अलङ्कार के लक्षणानुरूप ही आधिभौतिक, आधिदैविक एवं आध्यात्मिक विश्वों का उन्मीलन होना चाहिए।

यह सम्भव है कि किसी रचना में आधिभौतिक लोक की प्रधानता होती हैं तो किसी काव्य में आधिदैविक एवं आध्यात्मिक लोक की व्यापकता परिलक्षित होती है। प्रो. अभिराजराजेन्द्र मिश्र कृत 'कान्तारकथा' (अनूदितकाव्य) में जहाँ आधिभौतिक जगत् की प्रधानता हैं तो कौमारम् (शिशुगीतसंकलनम्) काव्य में तीनों लोक तत्त्वों के दर्शन होते हैं। यहाँ कवि के अलङ्कार प्रयोग का प्रयोजन बालकों को काव्य के माध्यम से सम्पूर्ण सृष्टि का ज्ञान करवाना है। **प्रो. त्रिपाठी अलङ्कार को काव्य का 'प्राणतत्त्व' स्वीकार करते हैं।**[3]

वस्तुतः प्रो. त्रिपाठी अलङ्कार को ही काव्य का काव्यात्म स्वीकार करते हैं उन्हीं के शब्दों में– " अलङ्कार ही समस्त कलाओं तथा साहित्य में सार्वकालिक, सार्वदेशिक तथा सर्वङ्कश मानदण्ड है। वह अलङ्कार न केवल काव्यजगत् का मानदण्ड हैं, प्रत्युत काव्यमार्ग की समस्त पद्धतियों का नियामक भी हैं।"[4]

अतः अलङ्कार सम्बन्धित जो लक्षण प्राचीन–काव्यशास्त्रियों यथा उद्भट, वामन, आनन्दावर्धन, मम्मट, पं. विश्वनाथ प्रभृति विद्वानों ने प्रतिपादित किए थे, वह समस्त मत प्रो. त्रिपाठी के अलङ्कार लक्षण में समाहित हो गए हैं। प्रो. त्रिपाठी अलङ्कारों को दो भागों में वर्गीकृत करते हैं। प्रथम आभ्यन्तर तथा द्वितीय ब्राह्य अलङ्कार। प्रो. त्रिपाठी प्रतिपादित आभ्यन्तर अलङ्कारों में परिगणित एकादश अलङ्कार बालसाहित्य सहित समस्त काव्य विधाओं में दर्शित होते हैं। आभ्यन्तर अलङ्कारों में प्रेमा, आह्लाद, विषादनम्, विभीषका, व्यङ्ग्य, कौतुक, जिजीविषा, अहंकार, स्मृति, साक्ष्य तथा उदात्त सम्मिलित है। दूसरी तरफ बाह्या अलंकारों में परिगणित अष्टादश (18) अलंकारों

---

1. काव्यसत्यालोक, पृ.–26
2. अभिनवकाव्यालङ्कारसूत्रम्, प्रो. त्रिपाठी, 2/1/2, पृ.–38
3. अभिनवकाव्यालङ्कारसूत्रम्, प्रो. त्रिपाठी, 2/1/1, पृ.–39
4. अभिनवकाव्यालङ्कारसूत्रम्, प्रो. त्रिपाठी, पृ.–39

में अन्यथाकरण, छाया,जाति, अतिशय, अपह्नुति, असङ्गति, विरोध, विषम, द्वन्द्वम्, तानवम्, उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, दीपक, नादानुवृत्ति, यमक, श्लेष, लय इत्यादि। यहाँ अनुप्रास अलङ्कार के लिए 'नादानुवृत्ति' शब्द प्रयुक्त किया है। बालसाहित्य में प्रो. त्रिपाठी द्वारा उल्लेखित अलङ्कारों की छाया सर्वत्र बिखरी हुई नज़र आती हैं।

अनुप्रास (नादानुवृत्ति) अलङ्कार –नादानुवृत्ति अलङ्कार का लक्षण–प्रतिपादित करते हुए प्रो. त्रिपाठी का कथन हैं–**"वर्ण्यानुरूपो नादविन्यासो नादानुवृत्तिः।"**[1]

अर्थात् छन्दोबद्ध लय सहित शब्दों का नाद अथवा अनुवृत्ति अनुप्रास अलङ्कार कहलाता हैं। प्रो. राजेन्द्र मिश्र प्रणीत **'अभिनवपंचतंत्रम्'** का यह पद्य उल्लेखित है–

"मिष्टभाषी मिताकांक्षी मितव्ययो मिताक्षरः।
त्रस्तशत्रुस्त्रपशीलो मित्रसंज्ञोऽभिधीयते।।"[2]

प्रस्तुत पद्य में मिष्टभाषी, मिताकांक्षी, मितव्यय, मिताक्षरा, मित्रसंज्ञ इत्यादि पदों में 'म' वर्ण की आवृत्ति बारम्बार सुनाई एवं दिखाई देती हैं। अतः अनुष्टुप छन्द युक्त पद्य में नादानुवृत्ति अथवा अनुप्रास अलङ्कार की सुन्दर छटा प्रत्यक्ष होती है।

श्लेष अलङ्कार –प्रो. त्रिपाठी 'अभिनवकाव्यालंकारसूत्रम्' में श्लेष अलङ्कार का लक्षण प्रतिपादित करते हैं– **"एकस्य पदस्य अनेकेष्वर्थेषु ग्रहणं श्लेषः।"**[3]

अर्थात् जहाँ एक पद में अनेक अर्थों की सङ्गति विद्यमान रहती हैं। अथवा एक पद में अनेक अर्थ ग्रहण किए जाते हैं, वहाँ श्लेष अलङ्कार विद्यमान रहता है। संस्कृत बाल–साहित्य में प्रहेलिकाओं में श्लेष अलङ्कार द्रष्टव्य है यथा–

श्यामवर्णो रसालेऽहं
गायामि मधुरं सदा।
चैत्रमासे प्रसन्नोऽहं
वदन्तु कोऽस्मि बालकाः।।[4]

प्रस्तुत पद्य में 'श्यामवर्ण' पद कोकिल एवं काक इन दो पक्षी युक्त अर्थों को व्यक्त करता हैं। किंतु अग्रिम विशेषताओं के कारण वह कोकिल के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है।

---

1. अभिनवकाव्यालङ्कारसूत्रम्, प्रो. त्रिपाठी, 2/6/17, पृ.–137
2. अभिनवपंचतन्त्रम्, प्रो. मिश्र, पृ.–9
3. अभिनवकाव्यालंकारसूत्रम्, प्रो. त्रिपाठी, 2/6/19, पृ.–141
4. कपिः कूर्दते शाखायाम्, ऋषिराज जानी, पृ.–75

लय अलङ्कार –प्रो. त्रिपाठी द्वारा लय अलङ्कार का लक्षण प्रतिपादित किया गया है–

वर्ण्यविषयानुरूपो गति–यति–पद–वाक्यादिविन्यासो लयः।[1]

अर्थात् विशिष्ट लय से अन्वित, वाक्यविन्यास एवं पदविन्यास से युक्त अलङ्कार 'लय' अलङ्कार कहलाता है। यथा–

"कपिः कूर्दते शाखायाम्। शाखा नमति नदीनले।।
नदीजले स्पन्दन्ते मत्स्याः। मत्स्याः सन्ति मत्स्यगृहे।।
मत्स्यगृहे मे ग्रहकक्षेऽस्ति। गृहकक्षे वातायनमस्ति।।
वातायनात् दृश्यन्ते वृक्षाः। वृक्षाणां सन्ति बहुशाखाः।।
शाखायां ननु कपिः कूर्दते।।"[2]

प्रस्तुत बाल कविता में कवि द्वारा पदों का कुशलतापूर्वक विन्यास किया हैं, साथ ही वाक्यविन्यास भी सुशोभित हो रहा हैं। इसी तरह 'ग्राममन्दिरे' कविता में 'लय अलङ्कार का भरपूर प्रयोग परिलक्षित होता हैं।

जाति अलङ्कार – स्वाभावोक्ति अलङ्कार का ही दूसरा नाम है 'जाति अलङ्कार'। जाति अलंकार में द्रष्टा को विषयवस्तु का साक्षात् दर्शन होता हैं–

यथादृष्टस्य चित्रोपमनिरूपणं जातिः।[3]

बालक प्रकृति में घटित घटनाओं का नयनों के माध्यम से साक्षात् दर्शन करके आनन्द मग्न हो जाते है यथा–

कराघातैर्हस्तैर्लगुडहतिभिस्ताडिततनोः–
पदाघातान् सोढ्वा मम गमनयात्रा प्रतिजनम्।
असह्यावक्षेपश्च मम मनसः शल्यवदतः,
प्रपातं प्राप्यापि द्विगुणितजवेनोत्पतितवान्।।[4]

उपमा अलङ्कार –प्रो. त्रिपाठी द्वारा उपमा अलङ्कार का लक्षण प्रतिपादित किया है–

"साम्यपरिकल्पनोपमा।"[5]

---

1. अभिनवकाव्यालंकारसूत्रम्, प्रो. त्रिपाठी, 2/6/20, पृ.–142
2. कपिः कूर्दते शाखायाम्, ऋषिराज जानी, पृ.–29
3. अभिनवकाव्यालंकारसूत्रम्, प्रो. त्रिपाठी, /2/6/4, पृ.–97
4. बालनाट्यावल्लरी, सौ. दुर्गा पारखी, पृ.–124
5. अभिनवकाव्यालंकारसूत्रम्, प्रो. त्रिपाठी, 2/6/12, पृ.–124

वस्तुतः अतत् में तत् का सादृश्य प्रकट करना ही उपमा हैं। यहाँ उपमान एवं उपमेय में साधर्म्य या समानता परिलक्षित होती हैं।

यथा– **"अनुदिनं कदलीव विवर्धते,**
तुहिनाबिन्दुततीव च शोभते।
परिणतिं समुपेत्य विनश्यति,
ननु समूलमियं खलमित्रता।।"[1]

अर्थात् दुर्जन के साथ की गई मित्रता दिन–प्रतिदिन बढ़ती हैं केले के पौधे की तरह! ओंस की बूँदों के समान शोभित भी होती हैं। परन्तु यह पूर्णतया नष्ट हो जाती हैं अन्तिम मुकाम पर पहुँच कर! यहाँ दुष्टों की सङ्गति को कदली के वृक्ष के समान प्रतिपादित किया गया हैं। अतः 'खलमित्रता' उपमेय एवं 'कदली वृक्ष' उपमान हैं। 'इव' साधर्म्यवाचक शब्द तथा 'विवर्धन' अर्थात् 'बढ़ना' दुर्जन एवं कदली वृक्ष का साधारण धर्म हैं।

साक्ष्यम् अलङ्कार –मानव जीवन के आधिभौतिक, आधिदैविक एवं आध्यात्मिक इन तीनों लोकों की पूर्व निर्धारित स्थिति का कवि के द्वारा साक्षात् निरूपण करना, साक्ष्य अलङ्कार है। प्रो. त्रिपाठी ने 'साक्ष्य अलङ्कार' का लक्षण निरूपण किया हैं–

"जीवनस्य दर्शनं साक्ष्यम्।"[2]

अर्थात् 'दर्शन' शब्द का तात्पर्य केवल 'नेत्र दर्शन' मात्र न होकर किसी मनुष्य के पूर्वजीवन के त्रिविध लोक आधिभौतिक, आधिदैविक, आध्यात्मिक लोकों का दर्शन हैं। यथा डॉ. रामकिशोर मिश्र द्वारा अपने पुत्र राजेश के बचपन की त्रिविध गतिविधियों का साक्षात् वर्णन किया गया है–

पिबन् दुग्धं मातुस्तदुपरि करावस्यतितमाम्,
यदा तन्माता स्वे नयनजलजे मीलयति सा।
तदा रोदं रोदं नयनजजलं मुंचतितमाम्,
करोत्यङ्के सा तं, स हसति शनैरस्यति पदे।।[3]

प्रस्तुत पद्य में कवि द्वारा माँ सुशीला एवं पुत्र राजेश के मातृ–पुत्र वात्सल्य, ममता एवं स्नेह का साक्षात् वर्णन किया गया है। अतः साक्ष्य अलङ्कार है।

---

1. अभिनवपंचतन्त्रम्, प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–12
2. अभिनवकाव्यालंकारसूत्रम्, प्रो. त्रिपाठी, 2/5/11 , पृ.–80
3. बालचरितम्/29, डॉ. रामकिशोर मिश्र, पृ.–29

कौतुकम् अलङ्कार –प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी ने बाह्य अलंकारों के अन्तर्गत कौतुक अलङ्कारों की सत्ता स्वीकार की हैं। बालकाव्यों में यह अलङ्कार बालकों के मन में रोमांच एवं कौतुहल जाग्रत करने में अत्यन्त सहायक है। प्रो. त्रिपाठी कौतुक अलङ्कार का लक्षण निरूपण करते हैं–

कुतूहलं तु कौतुकम्।[1]

अर्थात् साहित्य में पाठक या सामाजिक दर्शकों के मन में उत्पन्न जिज्ञासा ही कुतूहल हैं। यथा डॉ. केशवचन्द्रदाश प्रणीत 'महान् (बालकथा)', 'एकदा (बालकथा)' एवं 'पताका (बालोपन्यस)', काव्यों में पद–पद पर बालकों में कथा के अग्रिम भाग को जानने हेतु मन में कुतूहल भाव बना रहता हैं। कौतुक अलङ्कार से युक्त काव्यों में अद्भूत रस की छठा विद्यमान रहती हैं।

जिजीविषा अलङ्कार –प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी ने जिजीविषा अलङ्कार का लक्षण प्रतिपादित किया हैं–**"जीवनेच्छा जिजीविषा।"**[2]

अर्थात् विपरीत परिस्थितियों में भी मनुष्य द्वारा अपने जीवन में आशा, विश्वास एवं आस्था का संचार करना जिजीविषा कहलाती हैं। यथा–प्रो. अभिराजराजेन्द्र मिश्र प्रणीत **'अभिनवपंचतन्त्रम्'** बालकाव्य में 'वृद्धबलिनिवारणकथा' के अन्तर्गत नवयुवक द्वारा विपरीत परिस्थितियों में भी ग्राम में निवासरत वृद्धजनों के हृदय में जीवन जीने की कामना का संचार किया जाता है। अतः जिजीविषा अलङ्कार परिलक्षित होता हैं।

अतिशय अलङ्कार –अतिशय अर्थात् 'अधिकता'। काव्य में किसी वस्तु का प्रकृष्ट वर्णन करना 'अतिशय' कहलाता है। प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी द्वारा अतिशय अलङ्कार का लक्षण निरूपित किया है– **"अतिशयो विशेषनिरूपणजनिता असाधारणता।"**[3]

अर्थात् काव्य में विद्यमान अलौकिक पदार्थों से लौकिक पदार्थों का विशेष रूप से वर्णन करना, उनकी प्रकृष्टता द्यौतित करना 'अतिशय' अलङ्कार है। यथा–

"शतप्रयत्नेन न यद् विधात्रा
सहस्रयत्नैश्च मनुष्यजातैः।
कृतं मतं वा भुवि तद्विलासैः,
दृशां क्षमन्ते ललना विधातुम्।।"

अर्थात् ब्रह्मा द्वारा इहलोक में जो कार्य सैकड़ों प्रयत्नों से और मानव द्वारा हजारों प्रयत्नों से भी सम्पन्न नहीं होता है, वहीं कार्य रमणियों या ललनाओं द्वारा नेत्रों के भ्रूभंग मात्र से ही सम्पादित

---

1. अभिनवकाव्यालंकारसूत्रम्, प्रो. त्रिपाठी, 2/5/7, पृ.–71
2. अभिनवकाव्यालंकारसूत्रम्, प्रो. त्रिपाठी, 2/5/8, पृ.–72
3. अभिनवकाव्यालंकारसूत्रम्, प्रो. त्रिपाठी, 2/6/5, पृ.–101

कर दिया जाता है। यहाँ उपमान (ब्रह्मा या मनुष्य) से उपमेय (ललनाएँ) की अतिशयता अर्थात् प्रकृष्टता द्यौतित की गई है। अतः अतिशय अलंकार है।

अतः बालसाहित्य में उपर्युक्त अलंकारों के अतिरिक्त उत्प्रेक्षा, रूपक, आह्लाद, विषाद, प्रेमा, उदात्त, अलङ्कार एवं प्राचीन अलङ्कारों की सत्ता भी परिलक्षित होती हैं।

(viii) छन्द योजना –काव्यशास्त्र में 'छन्द' शब्द 'छद् आह्लादकत्वे' धातु से निष्पन्न हुआ हैं, जिसका शाब्दिक अर्थ हैं– आच्छादन करना। निरूक्तकार यास्क ने 'छन्द' शब्द की व्युत्पत्ति की है–'छन्दांसि छान्दनात्' अर्थात् जो श्लोक का आच्छादन करे वह छन्द हैं। पाणिनीय शिक्षा में 'छन्द' को वेदपुरुष का पैर बताया हैं, "छन्दः पादौ तु वैदस्य।"

काव्य–योजना में छन्दों का बहुत महत्त्व हैं। क्षेमेन्द्र कहते हैं कि सुवर्ण–तुल्य साहित्य में 'छन्द' रत्नतुल्य रूप में सुशोभित होता है–

"सुवर्णार्हप्रबन्धेषु यथास्थाननिवेशिनाम्।
रत्नानामिव वृत्तानां भवत्यभ्यधिका रूचिः।।"[1]

इसी तरह वह अन्यत्र कहते हैं कि– "जिस प्रकार साधुओं के वचनों और चरण चिह्नों का अनुसरण करने वाले सज्जन अवस्थानुकूल सद्चरणों से सुशोभित होते हैं उसी तरह शब्द और पदों से युक्त 'प्रबन्ध' सुन्दर छन्दों से सुशोभित होते हैं–

तथाप्यवस्थासदृशैः साधुशब्दपदास्थिताः।
सुवृत्तैरेव शोभन्ते प्रबन्धाः सज्जना इव।।"[2]

इसी प्रकार क्षेमेन्द्र भिन्न–भिन्न काव्यविधाओं में छन्दों के नियोजन का उपाय प्रतिपादित करते हुए कहते हैं–

"शास्त्रं कुर्यात्प्रयत्नेन प्रसन्नार्थमनुष्टुभा।

येन सर्वोपकाराय याति सुस्पष्टसेतुताम्।।

काव्ये रसानुसारेण वर्णनानुगुणेन च।

कुर्वीत् सर्ववृत्तानां विनियोगं विभागवित्।।
शास्त्रकाव्येऽतिदीर्घाणां वृत्तानां न प्रयोजनम्।
काव्येशास्त्रेऽपि वृत्तानि रसायत्तानि काव्यवित्।।

---

1. सुवृत्ततिलक, आचार्य क्षेमेन्द्र, तृतीय विन्यास/37
2. सुवृत्ततिलक, आचार्य क्षेमेन्द्र, तृतीय विन्यास/12

पुराणप्रतिबिम्बेषु प्रसन्नोपायवर्त्मसु।

उपदेशप्रधानेषु कुर्यात्सर्वेष्वनुष्टुभम्।।"[1]

अर्थात् काव्य में प्रसादगुणसम्पन्न अनुष्टुप का सर्वत्र प्रयोग करना चाहिए। जिससे वह सबके लिए सेतु का प्रयोग कर सके। काव्य में रस और वर्ण्य विषय के अनुसार सभी छन्दों का भिन्न–भिन्न प्रयोग करना सर्वसम्मत हैं। पौराणिक आख्यानों से युक्त काव्यों में, मनोरंजन प्रधान काव्यों में तथा उपदेश प्रधान काव्यों में अनुष्टुप छन्द का प्रयोग परिलक्षित होता हैं। चूंकि बालसाहित्य मनोरंजन प्रधान एवं उपदेशप्रधान गुणों से युक्त होता हैं अतः वहाँ पर्याप्ततया अनुष्टुप् छन्द का प्रयोग किया गया हैं।

अभिराजराजेन्द्र मिश्र वर्णिक एवं मात्रिक छन्दों से रहित एवं विलक्षण काव्य को छन्दोबद्ध काव्य की संज्ञा दी है–

"कोऽयं छन्दोमुक्तकाव्यप्रस्ताव इति पृच्छायां समुच्यते यद्

वर्णमात्रागणक्रमैरप्रणीतमेव काव्यमुपचाप्तश्छन्दोमुक्तमुच्यते।।"[2]

अर्थात् वर्ण, मात्रा एवं गण के क्रम से रहित काव्य उपचार से छन्दोमुक्त काव्य कहलाता हैं। बाल–साहित्य में सर्वत्र छन्दोमुक्त काव्य के दर्शन होते है जो लय, गद्य–पद्य शैली में बालकों का ज्ञानबोधन, भावबोधन एवं मनोरंजन करने में पूर्णतया सक्षम हैं। किन्तु फिर भी बालसाहित्यकारों द्वारा स्वतंत्र रूप में अथवा बालकथाओं, एकांकी, नाटकों में प्रसङ्गवश छन्दयुक्त पद्यों का भरपुर प्रयोग किया है।

यह छन्द दो प्रकार का बताया गया है–वर्णिक तथा मात्रिक। वर्णिक छन्द पुनः तीन प्रकार का होता है सम, अर्धसम और असम (विषम)। वर्णिक छन्द में वर्णों की गणना की जाती हैं जबकि मात्रिक छन्दों में मात्राओं की गणना की जाती हैं। प्रो. राजेन्द्र मिश्र ने गद्य–पद्य युक्त काव्य को 'छन्दोमुक्त' काव्य की संज्ञा दी है–

"गद्यपद्योभयात्मेदं छन्दोमुक्तं हि वाङ्मयम्।

पद्यात्मकलयेनैव यदि गद्येन लिख्यते।।"[3]

अर्थात् गद्य व पद्य दोनों के जीवातु को धारण करने वाला एवं पद्यात्मक लय को धारण करने वाला गद्य विधा में लिखा गया काव्य भी 'छन्दोमुक्तकाव्य' होता हैं। प्रो. राजेन्द्र मिश्र छन्दोमुक्त काव्य को आंग्ल भाषा में 'रिछिकप्रोज जावी' भाषा में 'सुलुक' गायन की संज्ञा दी है।

---

1. सुवृत्ततिलक, आचार्य क्षेमेन्द्र, तृतीयविन्यास / 6–9
2. अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, प्रकीर्णतत्त्वोन्मेष, पृ.–302
3. अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, प्रकीर्णतत्त्वोन्मेष / 100, पृ.–302

केशवचन्द्रदाश का छन्दोमुक्त उदाहरण है–

चर संचर पुरश्चर

सुचर विचर परिचर।

चरन् वै मधु विन्दति

चरन् जनः अनुभवति

माऽति चर......माऽऽचर.....।

चर संचर.........

पुरश्चर......प्रमतये

विभूतये च शान्तये

अनुकरणे किमपि नास्ति

अनुसरणे किमपि नास्ति।।[1]

इसी तरह प्रो. राजेन्द्र मिश्र कृत....कौमारम् (शिशुकवितासङ्ग्रह) में प्राप्त छन्दोमुक्त काव्य का उदाहरण –

"हरितः संदृश्यते पादपो यथारसार्द्रधरण्या,

हृष्टः पुष्टस्सदा प्रसन्नः अहमपि तथा जनन्या।।

अमृतं वर्षति जननि वदनं

मधुचुम्बनपरिपूतम्।

भाति सदा तल्लोचन युगलम्

वत्सलताऽनुस्यूतम्।।"[2]

वस्तुतः छन्दोमुक्त काव्य के अतिरिक्त छन्द युक्त काव्यों का प्रयोग भी बालसाहित्य में परिलक्षित होता हैं।

अनुष्टुप् छन्द –बालमनोऽनुकूल अनुष्टुप् छन्द का प्रयोग बाल–साहित्य की सभी विधाओं में परिलक्षित होता हैं। अनुष्टुप छन्द का लक्षण उल्लेखित है–

"पंचमं लघु सर्वत्र सप्तमं द्विचतुर्थयोः।

षष्ठं गुरु विजानीयाद् एतत्पद्यस्य लक्षणम्।।" (छन्दोमंजरी, च. स्तबक, पृ.–136)

---

1. डॉ. केशवचन्द्रदाश, पताका (बालोपन्यास), पृ.–104
   केशवकाव्यकलानिधिः (द्वितीयो भागः)
2. कौमारम् (शिशुगीतसंकलनम्), पृ.14

अर्थात् अनुष्टुप छन्द के प्रत्येक चरण में पंचम वर्ण लघु(।), द्वितीय व चतुर्थ चरणों में सप्तम वर्ण लघु(।) होता है। श्लोक के चारों चरणों में षष्ठ वर्ण गुरु(ऽ) होता है। यथा–

ऐक्यं बलं समाजस्य, तदभावे स दुर्बलः।

तस्मादैक्यं प्रशसन्ति दृढ़ं राष्ट्रहितैषिणः।।

यहाँ प्रत्येक चरण का पाँचवा वर्ण लघु(।), षष्ठ वर्ण गुरु(ऽ) हैं। द्वितीय एवं चतुर्थ चरण का सातवाँ वर्ण लघु(।) हैं। अतः अनुष्टुप् छन्द हैं।

2. उपेन्द्रवज्रा छन्द –छन्दोमंजरी में पं. गंगाधर द्वारा 'उपेन्द्रवज्रा' छन्द का लक्षण प्रतिपादित किया हैं–**"उपेन्द्रवज्रा प्रथमे लघौ सा।"**[1]

अर्थात् उपेन्द्रवज्रा छन्द में प्रथम वर्ण लघु(।) होता हैं। वृत्तरत्नाकर में उपेन्द्रवज्रा का निम्न लक्षण प्राप्त होता है–

"उपेन्द्रवज्रा जतजास्ततो गौ।"

अर्थात् उपेन्द्रवज्रा वृत्त के प्रत्येक पाद में क्रमशः जगण, तगण, जगण और दो गुरु (ऽ) होते हैं। इसके प्रत्येक चरण में एकादश (11) वर्ण होते हैं। उपेन्द्रवज्रा छन्द का निम्नलिखित उदाहरण हैं–

स्वतेजसा सूर्यजयी स्वकान्त्या
प्रलीनचन्द्रोऽपि नरो गुणौघः।
स्त्रिया जितो यद्वितनोत्यभद्रं,
शरीरनाशोऽपि वरं हि तस्मात्।।[2]

3. उपजाति छन्द –आचार्य पण्डित गंगाधर द्वारा छन्दोमंजरी में उपेन्द्रवज्रा छन्द का लक्षण प्रतिपादित किया हैं–

अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजौ

पादौ यदीयावुपजातयस्ताः।

इत्थं किलान्यास्वपिमिश्रितासु

वदन्ति जातिष्विदमेव नाम।।[3]

---

1. छन्दोमंजरी, पं. गंगाधर, पृ.–12
2. अभिनवपंचतन्त्रम् मित्रभेद/श्लोक 5, प्रो. मिश्र, पृ.–38
3. छन्दोमंजरी, पण्डित गंगाधर, पृ.–13

उपजाति वृत्त वह है जो इन्द्रवज्रा एवं उपेन्द्रवज्रा के भेद से बनता हैं–

"धर्मस्य तत्त्वं निहितं गुहायाम्
इति प्रवादो न सतामभीष्टः।
तथापि नारीहृदयानुलीनं
तदेव संरक्षति मूढ़लोकम्।।"[1]

प्रस्तुत पद्य के प्रथम पाद में इन्द्रवज्रा, द्वितीय, तृतीय एवं चतुर्थ चरण में उपेन्द्रवज्रा छन्द का मिश्रित लक्षण घटित हो रहा हैं, अतः उपजाति छन्द हैं।

4. वंशस्थ छन्द –इस छन्द का लक्षण छन्दोमंजरी में निम्न प्रकार से परिलक्षित होता है–

जतौ तु वंशस्थमुदीरितं जरौ।
वदन्ति वंशस्थविलं जतौ जरौ।।

अर्थात् वंशस्थ छन्द के प्रत्येक चरण में क्रमशः जगण–तगण–जगण और रगण होता है। वह वंशस्थ छन्द कहलाता हैं। इस छन्द के प्रत्येक पाद में 12 वर्ण होते हैं। वस्तुतः बालसाहित्य में बालकों को नीतियुक्त उपदेश प्रदान करने में वंशस्थ छन्द की रमणीयता दिखाई जाती हैं–

तरंगिणी भूधरतस्समुद्गता
गृहद्रुता वाथ कुलीनकन्यका।
मनोऽपि लावण्यपयोधिमज्जितं,
स्वयं विधात्रापि न रक्ष्यते त्रयम्।।[2]

अर्थात् पर्वतोत्पन्न नदी, गृह त्यागकर पलायन करने वाली कन्या और लावण्य के सागर में डूबा मन, ये तीनों स्वयं ब्रह्म द्वारा भी रोके नहीं जा सकते। अतः नीतियुक्त कथन हैं। यहाँ सभी चरणों में क्रमशः जगण–तगण–रगण की गणव्यवस्था है। अतः प्रस्तुत पद्य में वंशस्थ छन्द है।

5. **वसन्ततिलका छन्द** –क्षेमेन्द्र के अनुसार वीर और रौद्र रस के मिश्रण में वसन्ततिलका छन्द का प्रयोग किया जाता है–

"वसन्ततिलकं भाति संकरे वीररौद्रयोः।"[3]

छन्दोमंजरी में वसन्ततिलका छन्द का लक्षण उल्लेखित हैं–

"उक्ता वसन्ततिलका तभजाजगौगः।।"[1]

---

1. अभिनवपंचतन्त्रम्, मित्रभेद/8, प्रो. मिश्र, पृ.–40
2. अभिनवपंचतन्त्रम्, मित्रभेद/12, प्रो. मिश्र, पृ.–45
3. सुवृत्ततिलक, 3/17

अर्थात् वसन्ततिलका छन्द में तगण–भगण–जगण–जगण एवं गुरु–गुरु (दो गुरु) की गणव्यवस्था विद्यमान रहती हैं तथा प्रत्येक चरण में चतुदर्श (14 वर्ण) होते हैं। वसन्ततिलका छन्द का उदाहरण द्रष्टव्य हैं–

यथा– **आस्थापयामि निजदेहमधः पदानाम्**
लताप्रहारदलितोऽस्मि चलज्जनानाम्।
यानान्यहो वपुषि मे सततं सहेऽहम्,
एतद् हि दैवनिहितं मम भागधेयम्।।[2]

यहाँ प्रत्येक चरण में क्रमशः तगण–भगण, जगण, जगण एवं 2 गुरु प्रयुक्त होने से वसन्ततिलका छन्द हैं।

6. द्रुतविलम्बित छन्द – 'द्रुतविलम्बितमाह नभौ भरौ'।[3]

अर्थात् यहां छन्द के प्रत्येक चरण में क्रमशः नगण, दो भगण एवं एक रगण होता हैं। द्रुतविलम्बित छन्द का प्रयोग निम्न उदाहरण में द्रष्टव्य हैं–

अनुदिनं कदलीव विवर्धते,
तुहिनविन्दुततीव च शोभते।
परिणतिं समुपेत्य विनश्यति,
ननु समूलमियं खलमित्रता।।[4]

प्रस्तुत पद्य के प्रत्येक चरण में क्रमशः नगण–भगण–भगण–रगण के रूप में गणव्यवस्था परिलक्षित होती हैं अतः द्रुतविलम्बित छन्द हैं।

7. मालिनी छन्द – 'ननमययुतेयं मालिनी भोगिलौकेः'।[5]

अर्थात् इस छन्द के प्रत्येक चरण में क्रमशः नगण–नगण–मगण–यगण–यगण के रूप में गण क्रम तथा भोग (8वे वर्ण) तथा लोक (7वें वर्ण पर) वर्णों पर यति (विराम) होता हैं। छन्द के प्रत्येक चरण में पंचदश वर्ण (15) होते है।

मालिनी छन्द का उदाहरण उल्लेखित है–

---

1. छन्दोमंजरी, पृ.–15
2. बालनाट्यावल्लरी, सौ. दुर्गा पारखी, पृ.–123
3. छन्दोमंजरी, पृ.–19
4. अभिनवपंचतन्त्रम्, मित्रसम्प्राप्ति/4, प्रो. मिश्र, पृ.–11
5. छन्दोमंजरी, पृ.–28

मधुरजलयुतोऽहं सेव्यमानो गभीरः,
तृषित–जन–समाधानैक–लक्ष्योऽसि नित्यम्।
जलधितुलयनयाऽहं श्रेष्ठतां यामि सत्यम्
चतुरबुधजनानां बुद्धिखाद्यं भवेयम्।।

प्रस्तुत पद्य में मालिनी छन्द का लक्षण द्योतित होता है।[1]

8. शिखरिणी छन्द – "रसैः रुद्रैश्छिन्ना यमनसभलागः शिखरिणी।"[2]

अर्थात् इस छन्द के प्रत्येक चरण में क्रमशः यगण–मगण–नगण–सभग–भगण और एक लघु एवं एक गुरु वर्ण के रूप में गणव्यवस्था तथा रस (6) एवं रुद्र (11) वे वर्णों पर यति (विराम) हो, वहाँ शिखरिणी छन्द होता है। क्षेमेन्द्र के मतानुसार ही बालसाहित्य में उचित–अनुचित के निर्धारण के समय शिखरिणी छन्द प्रयुक्त होता है। यथा–

"हृषीकेच्छाजातो विषसुखभोगो युवतिषु,
लभेतालं तोषं तदपि जनिभाजां अतिमताम्।
न सार्थक्यं लोके प्रभवतितरां जन्मनिलयं
विना मित्रं ह्येकं स्वजन्मचरमं मंगलकरम्।।"[3]

प्रस्तुत पद्य में शिखरिणी छन्द का लक्षण घटित होता हैं तथा बालकों को उचित–अनुचित का निर्धारण करके मित्र निर्माण का नैतिक उपदेश प्रदान किया गया है।

9. मन्दाक्रान्ता छन्द – "मन्दाक्रान्ताम्बुधिरसनगैर्मो भनौ तौ गयुग्यम्।"[4]

अर्थात् मन्दाक्रान्ता छन्द के प्रत्येक चरण में क्रमशः मगण–भगण–नगण–तगण–तगण और अन्त में दो गुरु अक्षर होते हैं।

10. स्रग्धरा छन्द – म्रभ्नैर्यानां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्रग्धरा कीर्तितेयम्।[5]

इस छन्द के प्रत्येक चरण में मगण–रगण–भगण–नगण–यगण–यगण–यगण (त्रिमुनि) होते हैं तथा सात–सात अक्षरों पर यति होती हैं। यथा–

स्वस्ति श्रीभोजराजन् त्वमखिलभुवने धार्मिकः सत्यवक्ता,
पित्रा ते संग्रहिता नवनवतिमिता रत्नकोटयो मदीयाः।

---

1. बालनाट्यवल्लरी, सौ. दुर्गा पारखी, पृ.–121
2. छन्दोमंजरी,पृ.–32
3. अभिनवपंचतन्त्रम्/मित्रभेद/10, प्रो. मिश्र
4. छन्दोमंजरी, पृ.–33
5. छन्दोमंजरी, पृ.–40

तास्त्वं मे देहि राजन् सकलबुधजनैर्ज्ञायते सत्यमेतत्,
नो वा जानन्ति चेत्, तन्ममकृतिमपि नो देहि लक्षं ततो मे।।[1]

प्रस्तुत पद्य में स्रग्धरा छन्द का लक्षण घटित हो रहा है।

वस्तुतः बालसाहित्य चूंकि उपदेशात्मक एवं मनोरंजन प्रधान है, इसीलिए यहाँ यद्यपि अनुष्टुप् छन्द का प्रयोग अधिकाधिक दृष्टिगोचर होता हैं किंतु प्रसङ्गवश रसानुरूप अन्य छन्दों का प्रयोग भी सुन्दर रूप में परिलक्षित होता हैं।

(ix) गुण योजना –प्राचीन आचार्यों भरतमुनि, दण्डी, कुन्तक प्रभृति विद्वानों के काव्यशास्त्रीय ग्रंथों में 'गुण' का सामान्य लक्षण परिलक्षित नहीं होता है। वामन ने सर्वप्रथम 'गुण' का लक्षण प्रतिपादित किया है– 'काव्यशोभायाः कर्त्तारो धर्मा गुणाः' अर्थात् काव्य की शोभा के उत्कर्षाधायक धर्म 'गुण' है। अग्निपुराण में 'काव्यशोभाकरान् धर्मानऽलंकारान् प्रचक्षते' उल्लेखित करते हुए गुण एवं अलंकारों में अभेद की स्थिति उत्पन्न कर दी है। **आचार्य मम्मट**[2] ने आनन्दवर्धन एवं अभिनवगुप्त के गुण रहस्य को आत्मसात् करते हुए गुणों को 'रस' के अङ्गी धर्म के रूप में स्वीकार किया है। नरसिंह कवि[3] और हरिदास सिद्धान्त वागीश[4] ने भी गुणों को रस के उत्कर्षवर्धक रूपी तत्त्व के रूप में अङ्गीकार किया है।

आधुनिक काव्यशास्त्री प्रो. अभिराजराजेन्द्र मिश्र ने काव्य में अङ्गीभूत रस के आश्रय तत्त्व को गुण कहा है।[5] प्रो. मिश्र ने गुण तथा शरीरादि में साक्षात् विद्यमान आत्मा को अन्वय–व्यतिरेक व्याप्ति व्याप्ति से अन्योन्याश्रित सिद्ध किया है। श्रीकृष्ण कवि आत्मा में स्थिति शौर्यादि धर्मों के समान गुणों को काव्य के अङ्गीभूत रस के धर्म, हेतु तथा संघटन मानते हैं।

काव्य में गुणों की संख्या को निर्धारित करते हुए सर्वप्रथम भरतमुनि ने नाट्यशास्त्र में दस गुणों (श्लेष, प्रसाद, समता, समाधि, माधुर्य, ओज, सुकुमारता, अर्थव्यक्ति, उदारता, कान्ति) को स्वीकार किया है। **आचार्य दण्डी ने भी काव्यादर्श में आचार्यवर भरतमुनि द्वारा प्रतिपादित गुणों को**

---

1. बालनाट्यवल्लरी, सौ. दुर्गा पारखी, पृ.–125
2. ये रसस्याङ्गिनो धर्माः शौर्यादयः इवात्मनः। उत्कर्ष हेतवस्तेस्युऽचलस्थितयो गुणाः।।
   काव्यप्रकाश/अष्टम उल्लास–1
3. रसोत्कर्षापादकत्त्वं गुणत्त्वम्–नंजराजयशोभूषणम्, नरहरिकवि, पृ.–69
4. उत्कर्षाधायको रसस्य धर्मो गुणः–काव्यकौमुदी, पृ.–92
5. 'अङ्गीभूतो रसः काव्ये गुणानां समुपाश्रयः।' अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, वपुस्तत्त्वोन्मेषः/81, पृ.–96

ही सहर्ष स्वीकार किया है।[1] किंतु अग्रिम काव्यशास्त्रीय विद्वान् भामह, मम्मट, विश्वनाथ, जगन्नाथ, हेमचन्द्र प्रभृति आचार्यों ने प्रकारान्तर से माधुर्य, ओज और प्रसाद इन तीन गुणों में ही उपर्युक्त गुणों की सत्ता को सम्मिलित किया हैं। अतः काव्य या साहित्य में भावरूप में माधुर्य, ओज और प्रसाद यह तीन ही गुण विस्तार से परिलक्षित होते हैं।

1. माधुर्य गुण –श्रीकृष्ण कवि और नरसिंह कवि के अनुसार समासहीन पदों का होना माधुर्य गुण कहलाता है।

आचार्य भूदेव शुक्ल[2] का कथन हैं कि चित् का द्रवित होना, द्वेषादिजनित काठिन्य का अभाव होना द्रुति हैं और इस द्रुति का कारण जो आह्लाद स्वरूपत्व हैं उसे माधुर्य गुण कहते हैं। **प्रो. राजेन्द्र मिश्र**[3] ने चित्त के द्रवीभावमय आह्लाद को ही माधुर्य गुण कहा हैं। मिश्रजी का भाव है कि शृङ्गार, करुण और शान्त रसों में माधुर्य गुण की स्थिति रहती हैं।

माधुर्य गुण ट वर्ग (ट,ठ,ड,ढ,ण) रहित, अनुनासिक वर्ण (ञ म ङ ण न) तथा कोमल अनुभवजन्य, र–ल वर्णों युक्त काव्य में प्रयुक्त होता हैं।[4] वस्तुतः बालसाहित्य की सभी काव्य–विधाओं में माधुर्य गुण प्रचुर मात्रा में परिलक्षित होता हैं, क्योंकि बालकों के कोमल मानसपटल को स्मृति में रखकर ही साहित्यकार बालसाहित्य के सन्धान में संलग्न होते हैं। माधुर्यगुण का सुन्दरं उदाहरण द्रष्टव्य हैं–

"मधुरं मधुरं आम्रं मधुरम्।
मधुरं मधुरं सेवं मधुरम्।।
मधुरं मधुरं पनसं मधुरम्।
लघुनारङ्गम् अतीव मधुरम्।।"[5]

प्रस्तुत पद्य के सम्पूर्ण चरणों में म,र,न वर्णों की मधुर ध्वनि बालकों के मन को आह्लादित कर रही हैं, अतः माधुर्य गुण की सुन्दर छठा परिलक्षित होती है।

---

1. ये रसस्याङ्गिनो धर्मा शौर्यादय इव स्थिताः।
   उत्कर्षहेतवस्तेस्युरचलस्थितयो गुणाः।। मन्दारमरन्दचम्पू, पृ.–175
2. "द्रुतिश्चेतसो गलितत्वमिव द्वेषाधिजन्यकाठिन्याभावः।" रसविलास, पृ.–30
3. "तत्र चित्तद्रवीभावमयो ह्लादो माधुर्यम्।" अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, वपुस्तत्त्वोन्मेष, पृ.–98
4. वर्गान्त्यवर्णोष्टवर्गरहितैरन्यैश्च कोमलवर्णे रणाभ्यां च – माधुर्यगुणः। अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, वपुस्तत्त्वोन्मेष, पृ.–98
5. शनैः शनैः (बालगीतावलिः), डॉ. सम्पदानन्द मिश्र

2. ओज गुण

आचार्य श्रीकृष्ण कवि[1] एवं नरसिंह कवि के अनुसार बड़े–बड़े पदों का समासयुक्त होना, ओजगुण की विशेषता है। **प्रो. राजेन्द्र मिश्र**[2] का मन्तव्य है कि जिन पद्यों में रकार–सकार, ट वर्ग (ट,ठ,ड,ढ,ण) तथा प्रत्येक वर्ग के प्रथम–द्वितीय संयुक्ताक्षर तथा तृतीय–चतुर्थ वर्ण के संयुक्ताक्षर विद्यमान रहे, वहाँ ओज गुण परिलक्षित होता है। बालकों में आश्चर्य एवं चित्त के विस्तार हेतु बाल–साहित्यकार ओज गुण का प्रयोग करते हैं यथा–

"कराघातैर्हस्तैलगुडहतिभिस्ताडिततनोः
पदाघातान् सोढ्वा मम गमनयात्रा प्रतिजनम्।
असह्यावक्षेपश्च मम मनसः शल्यवदतः,
प्रयातं प्राप्यापि द्विगुणितजवेनोत्पतितवान्।।"[3]

प्रस्तुत पद्य में ट वर्ग र–स वर्ण एवं वर्ग के प्रथम–द्वितीय वर्णों की बारम्बार आवृत्ति होने से ओज गुण का वैशिष्ट्य प्रकट हो रहा है।

3. प्रसाद गुण

आचार्य हरिदास सिद्धान्त वागीश के अनुसार "श्रवण मात्र से ही बालकों को अर्थावबोध हो जाए, तो ऐसे गद्य–पद्य में प्रसागदगुण विद्यमान रहता है।"[4] आचार्य नरसिंह कवि[5] के अनुसार, जो गुण काव्य के श्रोता के चित्त को व्याप्त कर लेता है, वह प्रसाद गुण होता है।

आचार्य भूदेव शुक्ल[6] का कथन हैं– "कि जो गुण ओजस्थल युक्त शुष्क ईंधन में अग्नि के समान और माधुर्यस्थल युक्त स्वच्छ जल के समान व्याप्त चित्त को शीघ्र ही रस से व्याप्त कर लेता है वह प्रसाद गुण हैं। यह प्रसादगुण सभी रसों में आधेय रूप में तथा सभी रचनाओं में व्यंग्य रूप में रहता है।"

बालसाहित्य के अन्तर्गत शान्त रस से युक्त परमेश्वर आराधना, प्रकृति–ज्ञान एवं नैतिक उपदेशों में प्रसाद गुण की व्याप्तता रहती है। यथा–

---

1. दीर्घ दीर्घ समासत्वमोजः शब्दे न गीयते। मन्दारमरन्दचम्पू, पृ.–175
2. "रकारसकाराभ्यां ट वर्गः वर्गप्रथम द्वितीयः संयुक्ताक्षरैस्तृतीयचतुर्थसंयुक्ताक्षरै च समुत्पद्यते ओजोगुणः।" अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, वपुस्तत्त्वोन्मेष, पृ.–98
3. सौ. दुर्गा पारखी, बालनाट्यवल्लरी, पृ.–124
4. "सुगमः प्रसादः श्रवणमात्रैव बोधगम्यो गुणः प्रसाद उच्यते।"काव्यकौमुदी, पृ.–93
5. व्याप्नोति श्रोतृचेतो यः स प्रसादो गुणः मतः। अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, वपुस्तत्त्वोन्मेष, पृ.–70
6. रसविलास, पृ.–61

"अहं गणेशः, अहं गणेशः।
विघ्नेशोऽहं, सदा पूजितः।
विशालकर्णः सूक्ष्मलोचनः।
अग्रे शुण्डा एको दन्तः।
लम्बोदरोऽस्मि विशालकायः,
मूषकवाहनः कुंजरवदनः।।"[1]

अतः त्रिविध गुणों की प्रधानता बालसाहित्य में सर्वत्र व्याप्त रहती हैं। कवि बालकों को विभिन्न गुण युक्त कविता, गीत, कथा, नाटक इत्यादि के माध्यम से नैतिक एवं जीवनोपयोगी शिक्षा प्रदान करता है।

(x) देशकाल एवं परिस्थितियाँ

पाश्चात्य काव्यशास्त्रीय विद्वान अरस्तू ने काव्य के वातावरण को क्रियान्वित करने के लिए अन्विति त्रय सिद्धान्त का प्रार्दुभाव किया है। अन्विति त्रय के अन्तर्गत कार्यान्विति, कालान्विति और स्थानान्विति की गणना की जाती है।[2] बालसाहित्य के कथानक एवं संवादों की रमणीयता इन तीनों उपर्युक्त अन्वितियों का अनुसरण करती हैं, किंतु नाटक या महाकाव्य के समान यहाँ साहित्य या काव्य में इन तीनों की समवेत रूप से उपस्थिति न होकर पृथक्–पृथक्से इनकी उपस्थिति प्रत्यक्ष होती हैं। प्रो. राजेन्द्र मिश्र विरचित 'अभिनवपंचतन्त्रम्' में विद्यमान कथावस्तु यद्यपि पं. विष्णु शर्मा प्रणीत 'पंचतन्त्रम्' का अनुकरण हैं किंतु ग्रंथ में विद्यमान कथाएँ केवल पशु–पक्षी जगत् से ही सम्बंधित न होकर सम्पूर्ण चर–अचर, लोक–परलोक तक उसका प्रभाव विद्यमान हैं। जहाँ मूल कथा का प्रारम्भ जहां भूतकाल की घटना से होता हैं वहीं उपकथाओं में वर्तमान की घटना मुख्य कथा को सिद्ध करने हेतु प्रस्तुत होती है। अतः कालान्विति के अन्तर्गत भूतकाल के साथ वर्तमान की क्रियाओं का बाहूल्य व्याप्त है। स्थानान्विति के अन्तर्गत बालसाहित्य में पृथ्वी लोक के साथ–साथ स्वर्ग–लोक अथवा मृत्युलोक के स्थानों का वर्णन भी बालकों में रूचि जाग्रत करता है।

यद्यपि बालसाहित्य में कालान्विति का सम्यक् रूप से पालन नहीं किया जाता है। यहाँ किसी पात्र के जीवन–चरित्र के सम्पूर्ण वृतान्त को चरितार्थ करने के स्थान पर केवल नायक के एक भाग का ही वर्णन प्राप्त होता है। सम्पूर्ण कथाओं अथवा नाटकों का मुख्य उद्देश्य बालकों को मनोरंजनपूर्ण शैली में नैतिक उपदेश प्रदान करना हैं। बाल–साहित्य में समय–सीमा का कोई बन्धन नहीं रहता है। पात्र–परिस्थितियाँ, वेश–भूषा, सामाजिक नियम एवं काव्य के उद्देश्य, यह सभी

---

1. कपिः कूर्दते शाखायाम् (गणेशः बालकविता), ऋषिराज जानी, पृ.–3
2. पाश्चात्य काव्यशास्त्र, देवेन्द्रनाथ शर्मा, पृ.–64

लेखक की इच्छा के अधीन होते हैं। वन के पात्र नगरों में तथा नगर के पात्र वनों में दिखाई देते हैं। बाल–साहित्य में नितान्त काल्पनिक जगत् पलभर में ही चमत्कारिक ढंग से प्रकट हो जाता हैं। प्रायः बाल–साहित्य का उद्देश्य बालकों को सरल–सुगम रीति से ज्ञान प्रदान करना है। अतः यहाँ प्रायः देशकाल की उपेक्षा की जाती हैं।

(xi) रोचकता

रोचकता बाल–साहित्य का मूल तत्त्व हैं। बाल–मन को सरसता प्रदान करने एवं आकर्षित करने वाले सभी तत्त्वों का प्रयोग सामान्यतः बाल–काव्यों में किया जाता है। बाल–काव्य अपनी रोचकता, आकर्षण एवं कल्पनाशीलता से सभी उम्र के मनुष्यों के मन को आह्लादित करने में समर्थ होता है। डॉ. केशवचन्द्रदाश महोदय प्रणीत 'एकदा' (बालकथा संग्रह) में 10 लघुकथाओं का संग्रह हैं। इन बालकाव्यों में मनोरंजन एवं बालोपयोगी नैतिक शिक्षा भी परिलक्षित होती हैं। रोचकता, सरलता एवं व्यावहारिकता का प्रवाह यहाँ पद–पद पर देखने को मिलता है। इस सम्पूर्ण कथा–संग्रह में वृद्ध पितामह कथाओं का वक्ता तथा श्रोता के रूप में माधव और पुलोज नामक दो बालक हैं। प्रथम कथा 'विवाद' के अन्तर्गत कोई व्याघ्र एवं वृक्ष अपनी–अपनी महत्ता एवं श्रेष्ठता को लेकर परस्पर विवाद में प्रवृत्त होते हैं। अन्त में पारस्परिक एकता के महत्त्व को परस्पर अङ्गीकार करते हुए विवाद को शान्त करते हैं।

बालसाहित्य में उपलब्ध रोचकता तत्त्व का दर्शन निम्न उदाहरण में परिलक्षित हुआ हैं–

"लघुके लघुके मे नेत्रे स्तः।
सदा सुन्दरं शिवं पश्यतः।
लघुकौ लघुकौ मे कर्णौ स्तः।
भद्रं श्रुणुत मधुरं श्रुणुत।।
लघुकौ लघुकौ मे पादौ स्तः।
सदैव चलतः सदैव भ्रमतः।।"[1]

प्रस्तुत बालकविता में कवि सरल–सरस–व्याकरण रहित भाषा शैली में रोचकतापूर्ण ढंग से बालकों को मानव शरीर के अङ्गों से परिचय करवाता है।

(ख) भाव पक्ष

काव्य के दो पक्ष होते हैं भाव पक्ष तथा कला पक्ष। भाव पक्ष को यदि काव्य का प्राणतत्त्व कहा जाए, तो कला पक्ष को काव्य का शृङ्गार कहा जा सकता है। काव्य में भाव पक्ष को प्रधान माना गया है। अतः कला पक्ष के सभी भेदों का प्रयोग किए बिना भी काव्य सहृदय सामाजिक को

---

1. कपि कूर्दते शाखायाम्, ऋषिराज जानी, पृ.–83

आह्लादित कर सकता है। **सामान्यतया काव्य के दो पक्षों कला एवं भाव में दया, करुणा, सहानुभूति, आह्लाद, भय, क्रोध, जुगुप्सा, जिज्ञासा आदि भाव लता–वितानों के रूप में विद्यमान रहते हैं।**[1]

कवि 'भाव पक्ष' के अन्तर्गत जहाँ काव्य के सन्दर्भ में बाहरी स्वरूप का, तो बालकों के सन्दर्भ में अन्तश्चेतना में प्रादुर्भूत भाव स्वरूपों का विचार करता हैं। कवि के सहृदय की कोमल अनुभूतियों का साकार रूप ही काव्य हैं। काव्य में परिलक्षित मनोरम एवं लोकमंगल दृष्टि ही काव्य का भाव पक्ष है। कवि काव्य द्वारा तात्कालिक सत्य को स्वरूप प्रदान करता है। समाज को दिशा निर्देश देता है एवं श्रेष्ठ गुणों व आदर्शों की प्रतिष्ठा करता हैं। काव्य अर्थात् बालकाव्य का मुख्य प्रयोजन है बालकों में नैतिक–आध्यात्मिक–आधिदैविक एवं आदिभौतिक स्वरूप युक्त 'सत्यं शिवं सुन्दरम्' की भाव प्रतिष्ठा स्थापित करना। वस्तुतः 'कवित्व' कवि के हृदय की तीव्रतम् अनुभूतियों का शुद्ध रूप है। जिसमें लौकिक जीवन के सुख–दुख, प्रेम, करुणा, क्रोध, घृणा के भाव स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगते हैं। बुद्धि एवं कल्पना के योग से कवि बड़ी सहजता–सरलता से बड़ी–बड़ी बातें कह देता हैं। बाल–काव्य में निहित नीति व उपदेश, सुनने एवं पढ़ने वाले बालकों के पूरे जीवन को बदलने की सामर्थ्य रखते हैं। बालकवि का मन बहुत अधिक संवेदनशील होता है। वह सहृदय होता है इसलिए उसकी अनुभूति प्राचीन शास्त्रीय कवियों से भिन्न होती हैं। बाल–कवि की हृदय की निर्मलता, कोमलता और पवित्रता ही बाल–काव्य को मर्मस्पर्शी बनाती है। कवि की भावुकता से काव्य इतना मधुर बन जाता है कि पढ़ने–सुनने वाले बालक कविता रूपी सागर में डूब जाते है। जीवन में आह्लाद का आस्वादन कराने वाली यह बालसाहित्य रूपी साहित्यिक विधा सम्पूर्ण सृष्टि को अलौकिक आनंदप्रदान करने में पूर्ण समर्थ हैं। संस्कृत बाल–साहित्य परिषद् के अध्यक्ष डॉ. सम्पदानन्द मिश्र ने बालसाहित्य को बालकों के चरित्र निर्माण, आत्मशक्ति को जाग्रत करने, बालकों में स्वदेश प्रेम जाग्रत करने, पर्यावरणीय तत्त्वों के सौन्दर्य बोध का विकास करने, उनमें सामाजिक–नैतिक मूल्य बोध प्रदान करने में पूर्णतया सक्षम बताया है।[2]

बालसाहित्य में विद्यमान भाव पक्ष के अन्तर्गत कवि द्वारा वर्णित सामाजिक–बालमनोवैज्ञानिक–नैतिक–सांस्कृतिक–प्राकृतिक–मनोरंजनात्मक इत्यादि पक्षों का प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध के अन्तर्गत विवेचन प्रस्तुत किया गया है।

---

1. भारतीय एवं पाश्चात्य काव्य सिद्धान्त, गणपतिचन्द्र गुप्त, पृ.–25
2. बालगीतावलि (आमुखम् भाग से उदग्रहित), डॉ. सम्पदानन्द मिश्र

(i) सामाजिक पक्ष

बालसाहित्यकार विभिन्न प्रकार की काव्य विधाओं– कविता, गीत, कथा, लघुकथा, एकांकी इत्यादि के माध्यम से बालकों को सामाजिक पक्ष के विभिन्न भावों से अवगत करवाते हुए बालकों में प्रेम, स्नेह, श्रद्धा, समरसता, परोपकार इत्यादि भावों का समावेश करने का प्रयत्न करता हैं। प्रो. राजेन्द्र मिश्र द्वारा बालकों में परिवारजनों के प्रति सम्मान की भावना विकसित करने का सार्थक प्रयास किया हैं–

जननी मां पाययति क्षीरं,
सस्नेहं लालयति चिरम्।
क्वचिद् दर्शयति काकं चटकां
मातुलश्चन्द्रं नभः स्थिरम्।।[1]

इसी तरह बालकों में 'विश्वकुटुम्बकम्' एवं 'सर्वधर्मसम्भाव' का भाव जाग्रत करने हेतु 'महोत्सवाः सर्वे रमणीयाः' गीत के माध्यम से सामाजिक पक्ष को उभारा हैं यथा–

महोत्सवाः सर्वे रमणीयाः
क्वचित्त्वदीयाः क्वचिन्मदीयाः।
नवसौहार्दमुपेत्य कुर्वते,
नूतनसंख्यं स्वैरम्।।[2]

(ii) नैतिक पक्ष

आचार्य मम्मट [3] प्रतिपादित काव्य प्रयोजनों–यश प्राप्ति, अर्थ प्राप्ति, व्यवहार ज्ञान, लोक–कल्याण, आत्मशांति और कान्तासम्मित उपदेशों में बालसाहित्य बालकों को नीति एवं व्यवहार की शिक्षा देने हेतु 'व्यवहारविदे' इस काव्य प्रयोजन को प्रमुखतया अङ्गीकार करता है। अतः बालकाव्यों को पढ़ने एवं सुनने मात्र से ही बालकों में व्यवहार कुशलता एवं लोक प्रवृत्ति का अवबोध हो जाता है। **महात्मा टॉलस्टाय एवं रस्किन प्रभृति पाश्चात्य विचारकों ने भी काव्य का मानदण्ड 'नैतिकता' को ही स्वीकार किया है।**[4] बालक चूकिं पाप–पुण्य से रहित, शुद्ध अन्तःकरण युक्त, निर्मल मानसिकता वाले होते हैं अतः सत्य रूप में वहीं बालकाव्यों का आस्वदन कर सकते हैं। प्राचीन काल से ही महाभारत, पंचतन्त्र, हितोपदेश, कथासरित्सागर प्रभृति ग्रंथों द्वारा बालकों में सदाचार, दया, परोपकार, सत्य इत्यादि भावों का संचार किया जाता रहा हैं। आधुनिक बालकाव्य तो

1. कौमारम् (शिशुगीतसंकलनम्), प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–12
2. कौमारम् (शिशुगीतसंकलनम्), प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–74
3. 'भारतीय एवं पाश्चात्य काव्य सिद्धान्त', गणपति चन्द्र गुप्त, पृ.–52
4. 'भारतीय एवं पाश्चात्य काव्य सिद्धान्त', गणपति चन्द्र गुप्त, पृ.–52

वस्तुतः बालकों को लक्ष्य बनाकर ही सृजित किए गए है। जैसाकि डॉ. सम्पदानन्द मिश्र का मुख्य ध्येय है–

बालानां बालेभ्यः वा कृते यत् काव्यं तत् काव्यं **'बालसाहित्यं'**[1] अर्थात् बालकों के नैतिक कल्याण के लिए सृजित काव्य बालकाव्य हैं। प्रो. राजेन्द्र मिश्र प्रणीत **'नाट्यनवग्रहम्'**[2] (शिशुपयोगी बाल एकांकी) में संग्रहित सभी सातों एकांकियों का मुख्य प्रयोजन बालकों में विभिन्न नैतिक मूल्यों का संचार करना हैं। 'ईश्वरान्वेषणम्' एवं 'गुरुदक्षिणा' एकांकी बालकों में कार्य के प्रति निष्ठा एवं गुरु के प्रति सच्ची श्रद्धा का भाव जाग्रत करती है। 'विद्या ददाति विनयम्' एकांकी बालकों को सुख प्राप्ति के उपायों से अवगत करवाती हैं।

अतः बाल–साहित्य बालकों में विभिन्न काव्य विधाओं के माध्यम से सरलतया नैतिक मूल्यों का समावेश करता है।

(iii) सांस्कृतिक पक्ष

भारतीय संस्कृति के विविध तत्त्वों–सदाचार, समरसता, त्याग, दान, पुरुषार्थ, वसुधैव–कुटुम्बकम्, विश्वबन्धुत्व, अहिंसा, उदारता इत्यादि तत्त्वों का बालकों को परिचय करवाने हेतु विपुल मात्रा में बाल–साहित्य का सर्जन किया गया है और अनवरत किया जा रहा है। पं. राजेन्द्र मिश्र ने बालकों में विश्वबन्धुत्व एवं सर्वधर्मसम्भाव की भावना को चरितार्थ करने वाली कविता उल्लेखनीय हैं–

भारतीयसंस्कृतिकथा विजयते!!
राष्ट्रगौरवं ह्वदि–ह्वदि दधती, दिशि–दिशि समुदयते।।
विश्वबन्धुतास्थापनलीना
सर्वधर्मसमभावधुरीणा
कौटुम्बिकपरिवेषविधाने शतयत्नं कुरुते।।[3]

इसी तरह बालकों में भारत राष्ट्र की पावन–धरा से भी बालकों को परिचित करवाया गया है–

"भारतराष्ट्रं तीर्थपावनम्।
चारं–चारं तीर्थनिकाये भवति मानसं शुद्धम्।

---

1. शनैः शनैः (बालगीतावलि), आमुख से उद्ग्रहित, डॉ. सम्पदानन्द मिश्र,
2. 'नाट्यनवग्रहम्' (बाल एकांकी), प्रो. राजेन्द्र मिश्र
3. कौमारम् (शिशुगीतसंकलनम्), प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–100

सर्वधर्मसमभावमण्डितं रात्रिन्दिवं प्रबुद्धम्

भारतराष्ट्रं तीर्थपावनम्।"[1]

अतः बालसाहित्य बालकों में सांस्कृतिक भाव को दृढ़ करने में कृत–कृतार्थ हैं।

(iv) बालमनोवैज्ञानिक पक्ष

संस्कृत साहित्य में 'बाल' शब्द 'बल्' धातु से अवयस्कता के भाव को प्रकट करने के लिए 'ण' प्रत्यय लगाकर निष्पन्न होता हैं। यहाँ 'अवयस्क' शब्द अबोध, अज्ञ, विवेकरहित, स्थिरबुद्धिहीन अर्थ में प्रयुक्त हुआ हैं। नारद स्मृति में बाल–अवस्था को जन्म से षोडश 16 वर्ष तक निर्धारित किया हैं–**'बाल आषोड्शाद्वर्षात्।'**

बाल मनोवैज्ञानिक जी.एच. डिक्सन[2] ने भी बालक की आयु को मनोविकास के क्रम में पाँच भागों में बाँटा हैं–

प्रथम– शिशु काल (जन्म से तीन वर्ष तक)

द्वितीय – बाल्यावस्था (तीन वर्ष से आठ वर्ष तक)

तृतीय – पूर्व किशोरावस्था (8 वर्ष से 12 वर्ष तक)

चतुर्थ– उत्तर किशोरावस्था (13 वर्ष से 18 वर्ष तक)

पंचम – कुमारावस्था (18 वर्ष से 20 वर्ष तक)

डिक्सन ने पंचम अवस्था को 20 वर्ष तक स्वीकार किया है। नारद स्मृति ने अंततः षोडश अवस्था तक ही बाल्यावस्था को स्वीकार किया है।

बाल–साहित्यकार काव्यों में मनोवैज्ञानिक ढंग से बालकों के व्यवहार, शारीरिक व मानसिक क्रिया–प्रतिक्रियाओं को प्रत्यक्ष तरीके से अवलोकन करते हुए नजर आते हैं। उनका काव्य–लोक कोरी कल्पनाओं की उड़ान मात्र नहीं होता हैं। उनमें बाल–क्रियाओं का प्रत्यक्षीकरण होता है। डॉ. रामकिशोर मिश्र ने 'बालतरङ्गिणी' में 'बालचरितम्' शीर्षक से स्वयं के शिशुवत् बालक (राजेश) की जन्म से 12 वर्ष पर्यन्त की शारीरिक व मानसिक चेष्टाओं का वर्णन किया है। कवि शैशवास्था में परिलक्षित मूलप्रवृत्ति प्रेम (काम) को इङ्गित करते हुए उल्लेख करता हैं–

---

1. कौमारम् (शिशुगीतसंकलनम्), प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–72
2. चाइल्ड स्टडी, जी.एच. डिक्सन, पृ.–43

"क्षणं त्वङ्के मातुस्तदनु पितुरङ्के गतिमतीम्

स्वसुः क्रोडे चेच्छां प्रतिपलमरं दर्शयति यः।

जनानामन्येषामपि स पुनरङ्के विहरति,

यतस्ते तत्स्नेहान्न जहति तमङ्कात् प्रियशिशुम्।।"[1]

आधुनिक काल के साहित्यकार बालक के स्वभाव का अध्ययन करने में दो बातों को आवश्यक मानते हैं–

प्रथम–बालक के वंशानुक्रम का ज्ञान, द्वितीय– बालक का वातावरण जो बालक के मानसिक विकास में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होता है। प्रो. राजेन्द्र मिश्र ने 'कान्तारकथा' काव्य के अन्तर्गत अरण्य संस्कृति में निवास करने वाले एवं काव्य के नायक 'मोगली' के जन्म से लेकर 6 वर्ष की अवस्था को चरितार्थ किया है। इस काव्य के अनुसार मानव जाति के 'मोगली' का पालन–पोषण अरण्यसंस्कृति के प्राणियों द्वारा किया जाता है। मोगली यद्यपि शारीरिक रूप से मनुष्य जाति का सदस्य हैं किंतु उसका वातावरण उसकी शारीरिक व मानसिक अभिवृद्धि तथा विकास को निर्धारित करता है। आधुनिक बालमनोवैज्ञानिकों ने भी वातावरण को बालक के सार्वभौमिक विकास का अनिवार्य घटक स्वीकार किया है तथा बालसाहित्य भी वातावरण जनित अंश है। अरण्यवासी सुवेगा वृक दम्पती मोगली को यद्यपि बुभुक्षार्थ गाँव से उठा ले जाती हैं किंतु पुत्र वात्सल्य भाव के जाग्रत होने वह उसको खाने से परहेज करती हैं। सुवेगा का कथन है कि–

"धृष्ट! मम स्तनदुग्धं पीतमनेन। तस्मात् शावको मे जातः। सम्प्रति त्रयः शावका मे, न खलु द्वौ। तवाप्ययं धर्मपुत्र एव। एष स्वभावकाम्यामेव प्रतिजाने यदिममपि मानवजातकं स्वजातकद्वयमिव द्रक्ष्यामि, रक्षिष्ये च।।"[2]

पूर्व बाल्यावस्था में बालक में 'जिज्ञासा' मनोवृत्ति दृढ़ होने लगती है। बालक वातावरण में परिलक्षित प्रत्येक वस्तु का ज्ञान प्राप्त करना चाहता है। संस्कृत बाल–प्रहेलिकाओं में जिज्ञासा प्रवृत्ति यथैव द्रष्टव्य हैं–

प्रभवन्ति कुतो नद्यः? (पर्वतात्)

पर्णं कुत्र प्ररोहति? (वृक्षे)[3]

प्रो. राजेन्द्र मिश्र ने उत्तर बाल्यावस्था में बालक के मन में प्रार्दुभूत विभिन्न प्रकार की जिज्ञासाओं को शान्त करने के लिए 'कौमारम्' (52 कविताओं का संग्रह) काव्य का प्रणयन किया

---

1. बालतरङ्गिणी (बालचरितम्), डॉ. रामकिशोर मिश्र, पृ.–51
2. कान्तारकथा, डॉ. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–24
3. कपि कूर्दते शाखायाम्, ऋषिराज जानी, पृ.–75

है। प्रस्तुत काव्य के अन्तर्गत सृष्टिपरिचयः, सर्वधर्मसमभावः, परिवारसदस्यपरिचयः, जननीमाहात्म्यम्, शरीराङ्गपरिचयः, वर्णमालापरिचयः, उद्यानपरिचयः, नदीगीतम्, प्रकृतिशिक्षापरिचयः, वाणीवन्दनम् इत्यादि बालगीतों के माध्यम से बाल जिज्ञासाओं का समाधान किया है।

वर्तमान में बालसाहित्य को बालमनोवैज्ञानिक आधार पर तीन भागों में वर्गीकृत किया जा सकता हैं प्रथम– 5 वर्ष के बालकों के लिए प्रणीत बालसाहित्य, जिनकी निम्नलिखित विशेषताएँ– शिशुओं के लिए प्रणीत बालगीत या कविताएँ, जिनमें ध्वनियों का गुंजन हो, लय की चपलता हो, अल्प नाटकीयता हो, कल्पनाशीलता का सर्वत्र प्रवाह सर्वत्र परिलक्षित हो। यथा डॉ. सम्पदानन्द मिश्र रचित, शनैः शनैः पुस्तक से उद्धृत यह दृष्टान्त उल्लेखित हैं–

"विशालकायं
स्थूलमपि चण्डं
पीवरचरणं
गजराजं, पश्यत पश्यत गजराजम्।।"[1]

द्वितीय –6 से 12 वर्ष के बालकों के लिए संस्कृत बाल–साहित्य युक्त कथाओं, लघुकथा, लघु एकांकी की सर्जना की गई हैं जो यथार्थपरक एवं विवरणात्मक साहित्य है यथा सौ. दुर्गा पारखी द्वारा 'शिशुस्वान्तम्' का वर्गीकरण 'शिशुविभागः' एवं 'बालविभागः' इन दो भागों में वर्गीकृत किया गया है। 'बालविभाग' भाग के अन्तर्गत बालकों के यथार्थपरक विषय युक्त लघु एकाकियों का समावेश हैं जैसे– 'शठे शाठयम्', अतिविश्वासः न कर्तव्यः, शुकस्य मृत्युवार्ता, 'अमूल्यं कमलम्' इत्यादि यथार्थ से संबंधित 21 एकांकियों का समावेश है।

तृतीय –इस वर्ग के अन्तर्गत किशोर बालक जो 13वर्ष से लेकर 19 वर्ष के अवस्था में पदार्पित हैं। इस अवस्था के बालकों के लिए समस्या प्रधान, वैज्ञानिक, नवीन एवं मौलिकता युक्त तार्किक बाल–साहित्य को शामिल किया जा सकता हैं। यथा गोपबन्धु मिश्र प्रणीत 'कनीयान् राजकुमारः', डॉ. रामकिशोर मिश्र प्रणीत 'किशोरकथावलि', 'बालनाट्यसौरभम्' एवं प्रो. राजेन्द्र मिश्र प्रणीत 'अभिनवप×चतन्त्रम्' बाल साहित्य को शामिल किया गया हैं।

अतः संस्कृत बाल–साहित्यकारों को बालमन से अवगत होना पड़ेगा, उनके बीच में रहना होगा।[2] महाकवि जिब्रान की पंक्तियाँ उल्लेखित हैं–

"तुम्हारे बच्चे तुम्हारे नहीं हैं।
जिन्दगी जीने के वे प्रयास हैं।

---

1. बालगीतावलिः, शनैः शनैः, पृ.–14
2. चाइल्ड डेवलपमेन्ट, हरलॉक. ई.वी. (मैकग्राहिल प्रकाशन, 1942 ई.)

तुम केवल निमित्त मात्र हो,
वे तुम्हारे पास हैं फिर भी वे तुम्हारे नहीं हैं।
उन्हें अपना विचार मत दो,
उन्हें प्रेम चाहिए।
दीजिए उन्हें घर उनके शरीर के लिए
लेकिन, उनकी आत्मा मुक्त रहने दीजिए।।"

'राजिमति रथनेमिश्च'[1] बालकथा के माध्यम से बालकों में एकनिष्ठा समर्पण भावना का सन्देश दिया गया है। इसी तरह आचार्य पद्मशास्त्री प्रणीत 'संस्कृतकथाशतकम्' काव्य में लियूवीर कहानी के माध्यम से बालकों में 'साहस' मूलप्रवृत्ति का विकास किया जा सकता है। इसमें एक फ्रांसिसी राजकुमार द्वारा अपने पिता के साम्राज्य को पुनः शत्रुओं से हस्तगत कर पदस्थापित करने के लिए किए गये साहसी कार्यों का परिचय प्राप्त होता हैं–

"स्वपितामहस्य सिंहासनम् आनीय अश्वं बालकः प्रहर्षितः स न स्वग्रामं प्रतिनिवृत्तः।"

डॉ. राजकुमारी त्रिखा द्वारा महाभारत के शांतिपर्व के आधार पर कुल 26 लघुकथाओं के 'महाभारत की बोधकथाएँ'[2] सरल तथा ललित शब्दों में प्रस्तुत किया हैं। इनका उपयोग बालसुलभ होने के साथ ही महाभारत के पाठकों को भी अपनी तरफ आकर्षित करना हैं। यह बालकथायें किशोरावस्था में उत्पन्न तनाव एवं संघर्ष को भी शान्त करती हैं। समय एवं परिस्थितियों ने बालसाहित्य के कलेवर में अनन्त परिवर्तन एवं परिवर्द्धन किया गया है। मनुष्य के ज्ञान, रूचियों एवं सोच में परिवर्तन होने के साथ ही संस्कृत बाल–साहित्य का स्वतंत्र विकास किया जाने लगा है। बालसाहित्य को विभिन्न गद्य, पद्य, उपन्यास एवं कथा विधाओं में सृजित किया जाने लगा है। प्रत्येक बाल काव्य बालक की मूलप्रवृत्तियों प्रेम, साहस, भय, क्रोध, जिज्ञासा को ध्यान में रखकर लिखा जा रहा है।

(v) पर्यावरणीय पक्ष

निश्चित ही अखिल भारतीय संस्कृति के संस्कारों एवं विभिन्न पर्वों पर पर्यावरणीय तत्त्वों की पूजा–अर्चना का विधान न केवल आदर के लिए, अपितु वैज्ञानिक एवं ऐतिहासिक विचारों के समावेश के लिए किया जाता है। बालकों में प्रकृति के प्रति सकारात्मक सोच विकसित करने एवं उनको पर्यावरणीय तत्त्वों से अवगत करवाने हेतु विपुल मात्रा में पर्यावरण आधारित बाल–साहित्य

1. राजिमति रथनेमिश्च, दृक् पत्रिका, अंक–26–27, पृ.–181
2. 'महाभारत की बोधक कथाएँ', डॉ. राजकुमारी त्रिखा

की सर्जना की गई है। आधुनिक सन्दर्भ में प्रकृति–निरीक्षण, बालकों के लिए एक सहज एवं आवश्यक घटक हैं। बालक प्रकृति से मित्रता करना चाहता हैं। वह अपने आस–पास की प्रकृति–फूल, वृक्ष, नदी, पर्वत, तितली इत्यादि के माध्यम से संस्कार एवं ज्ञान प्राप्त करता हुआ, परिलक्षित होता है। यथा नैसर्गिक भाव से जीवनयापन की शिक्षा देते हुए प्रो. राजेन्द्र मिश्र का वक्तव्य है–

"स्वगुणसौरभैर्वातावरणं मंगलमयं विधेयम्।
पुष्पमिदं शिक्षयते सर्वान् जगतोऽखिलं पदेयम्।।
फलभारैर्नमिता तरुशाखा कथयति वारं वारम्।
प्राप्य समृद्धिं भवतः विनम्रा इदमेवोन्नतिसारम्।।"[1]

बालकों के लिए बाल–गीत द्वारा परिचय देते हुए डॉ. रामकिशोर मिश्र महोदय का कथन हैं–

"चटका गता तत्र बिजानी, वप्त्वा पुनरागता वायसम्।
पुनरेकाकिन्या तया निजं क्षेत्रं कृतं स्वचंच्वा सरसम्।।
वायसवर्जं तया कर्तितं स्वीयं शस्य शुष्कतां गतम्।
सहायतायाचने तस्य चहि केवलमेतद्वचः कर्णितम्।।
अग्रेत्वं चल पुनरायामि।।"[2]

डॉ. सम्पदानन्द मिश्र सरल–सरस भाषा–शैली में बालकों को प्रकृति में निवासरत चेतन प्राणियों के कार्यों से अवगत करवाते हैं–

"पश्यत वानरराजं दक्षम्। कूर्दति वृक्षादन्यं वृक्षम्।।
दृष्ट्वा रात्रौ एकं चौरम्। भषति कुक्कुरौ वारं वारं।।
मार्जारीयं खादति मीनम्। पिबति च दुग्धं तिष्ठति मौनम्।।
हस्ती गच्छति मन्दसुमन्दम्। जनयति चासौ नयनानन्दम्।।
मधुपोऽयं विहरति सानन्दम्। पायं पायं मधुमकरन्दम्।।"[3]

इसी तरह प्रो. राजेन्द्र मिश्र द्वारा प्रणीत 'कौमारम्' (शिशुगीतम्) काव्य में प्रकृति में समावेशित तत्त्वों का परिचय करवाते हुए 'मेघ' का विशुद्ध सरल परिचय करवाया हैं–

"मेघोवितरति बहु बहु वारि

---

1. अभिराजगीता मुनिकीर्तित्रयी, पृ.–76–77, (नन्दनवनकल्पतरु प्रकाशन)।
2. बालतरङ्गिणी (बालगीतम्), डॉ. रामकिशोर मिश्र, पृ.–101
3. बालगीतावलि (शनैः शनैः), डॉ. सम्पदानन्द मिश्र, पृ.–39

भुवनसुखमाननुते।
भाति धरणी विशाला। धृतशाकतृणमाला।
शाखाविमलशाखा। मंजुकलरवहासा।।
क्वचिच्चण्डं क्वचित्तारम्। क्वचिन्मन्दं बिन्दुसारम्।।"[1]

(vi) आर्थिक पक्ष

जैसाकि आचार्य मम्मट का काव्य प्रयोजन उल्लेखित है 'काव्यं यशसेऽर्थकृते' अर्थात् काव्य लिखने से अर्थ एवं समृद्धि प्राप्त होती हैं। साहित्यकार द्वारा बाल–साहित्य लेखन एवं बालकों द्वारा काव्य पढ़ने एवं सुनने से किस प्रकार के अर्थ की प्राप्ति होती है यह विचारणीय प्रश्न है। किंतु जैसाकि आचार्य भर्तृहरि का कथन है– 'विद्या ददाति विनयम्' अर्थात् काव्य या साहित्य के पठन एवं श्रवण से विनम्रता प्राप्त होती है। लेखक एवं श्रोतागण बालक इस बालसाहित्य के लेखन, पठन एवं श्रवण से अंतिम रूप से सुख–समृद्धि एवं आनन्द प्राप्त करते हैं। बाल–साहित्य के पठन से बालकों को वर्तमान समाज में प्रचलित आर्थिक दुर्गुणों, भ्रष्टाचार, लोभ, गबन जैसे तत्त्वों की जानकारी होती हैं तथा जीवन में इनका दुर्गुणों से बालक सचेत हो जाते हैं। यथा– प्रो. राजेन्द्र मिश्र द्वारा 'अभिनवपंचतन्त्रम्' में कवि बालकों से 'उत्कोचकीटाधिकारिकथा' कथा का उल्लेख करता है–

"सुस्नेहपूरपरिपोषितवर्तिकोऽपि
दीपो न किं वमति कज्जलकालिमानम्?
पूर्वग्रहग्रथिलचित्तधियां जनानां
जानाति नैव विनयौषधिमीश्वरोऽपि।।"[2]

(vii) राजनीतिक पक्ष

साहित्य सृजन कवि की आन्तरिक प्रक्रिया हैं। बाल–साहित्यकारों के अन्तःकरण में बालसाहित्य का प्रार्दुभाव उनके आस–पास के वातावरण से होता है। इन्हीं परिवेश जनित भावों, विचारों का तीव्र आलोडन–विलोडन लेखक के लिए प्रेरणा बन जाता हैं। साहित्यकार तत्कालिन समाज में व्याप्त–सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजीतिक पक्षों को अपने साहित्य में समाहित करते हुए बालकों को सहज एवं सरल रूप में अवगत करवाने की चेष्टा करता हैं। इसके लिए

---

1. कौमारम् (शिशुगीतम्), 2009 ई., प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–68
2. अभिनवपंचतन्त्रम्, प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–53

बाल–साहित्यकार विभिन्न प्रकार की बालकाव्य विधाओं यथा–कविता, लघु नाटक, लघुकथा, कथानिका, पत्र–पत्रिकाओं के माध्यम से बालकों को उस परिवेश से परिचय करवाता हैं।

आधुनिक संस्कृत बाल–साहित्यकार पौराणिक एवं प्राचीन बाल–साहित्य के समान ही समाज में निवासरत बालकों को नीति एवं राजनीति की शिक्षा उपलब्ध करवाने में तत्पर है। इसी कड़ी में प्रो. मिश्र द्वारा हितोपदेश एवं पंचतन्त्र के उद्देश्यों को आत्मसात करते हुए नवीन कलेवर में 'अभिनवपंचतन्त्रम्' की रचना करते हुए आधुनिक समाज में विद्यमान बालकों को विभिन्न प्रकार की कथाओं के माध्यम से नीति एवं राजनीति की शिक्षा प्रदान की गई हैं। कवि का कथन है कि खल अर्थात् दुष्ट पुरुषों से की गई मित्रता कदलीफल की तरह दिन–प्रतिदिन बढ़ते हुए विनाश को आमंत्रित करती हैं–

"अनुदिनं कदलीव विवर्धते।"[1]

साथ ही बालकों को मणिकांचन युक्त मित्रता का नैतिक उपदेश भी देते हैं–

"द्राङ् न मैत्री विधातव्या मज्जनीया न वा तथा।
मणिकांचनसंयोगा मुद्रिकैव हि शोभते।।"[2]

इसी तरह प्रो. राजेन्द्र मिश्र बालकों के मन में भारतवर्ष की राजनीतिक एकता स्थापित करते हुए 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' की व्यापक एकता को उल्लेखित करता हैं–

"उत्तरे स्यान्मङ्गलं ननु दक्षिणे स्यान्मङ्गलम्!
हे प्रभो! मम भारते सर्वं भवेदिह मङ्गलम्!!
वातु शान्तसमीरणः क्वचिदपि न चाऽग्निभयं भवेत्!
हे प्रभो! मम भारते वर्षापि तनुतां मङ्गलम्!!
सर्वं एव भवन्तु सुखिनः सर्व एव निरामयाः,
हे प्रभो! मम भारते सर्वोऽपि लभतां मङ्गलम्!!
यथाऽवसरमुपेत्य गगने जलं वर्षतु वारिदः,
हे प्रभो! मम भारते शस्यं नु दधतां मङ्गलम्!!"[3]

वर्तमान में सर्वत्र जातिवाद, क्षेत्रवाद, साम्प्रदायिकवाद, स्वार्थवाद को जन्म दिया जा रहा है। बालक–बालिकाओं में राष्ट्रभक्ति की भावना दिनोंदिन कम होती जा रही है। ऐसे विकट समय में साहित्यकारों द्वारा बालकों के अन्तर्मन में राष्ट्रभाव जाग्रत करने के लिए जो बालसाहित्य सृजित किया जा रहा है, वह सराहनीय कदम हैं। उत्कलवासी डॉ. केशवचन्द्रदाश द्वारा 'पताका'

---

1. 'अभिनवपंचतन्त्रम्', प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–11
2. 'अभिनवपंचतन्त्रम्', प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–15
3. कौमारम् (शिशुकाव्यं), प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–132

(बालोपन्यास) में बालकों को 'संगच्छ्वं संवदध्वं' की भावना को चरितार्थ करने वाली उपदेशात्मक बाते कहीं हैं–

"अस्माकं चिन्ता देशस्य चिन्ता, अस्माकं कल्पना देशस्य मानचित्रम्। अस्माकं नीतिः देशस्य भविष्यत्। अस्माकं निर्माणे देशस्य सुरक्षा।"[1]

(viii) मनोरंजन पक्ष

साहित्य का मुख्य प्रयोजन होता हैं– 'ब्रह्मस्वादसहोदर'। सम्पूर्ण वेद वेदाङ्ग, रामायण, महाभारत के अध्ययन से भी बाल–पाठकों को ब्रह्मानन्दप्राप्ति नहीं हो सकती हैं। जैसाकि नाटयशास्त्रकार भरतमुनि ने नाट्य का प्रयोजन बताया है–

"श्रमार्तानां शोकार्त्तानां निवृत्तिजनकं लोके नाट्यमेतद् भविष्यति।" (प्र.अ./111)

अर्थात् साहित्य शोक से क्लान्त सभी प्रकार के पाठकों को आनन्द प्रदान करने में समर्थ हैं। जैसाकि बाल–साहित्य परिषद्, पुण्डुचेरी के निदेशक डॉ. सम्पदानन्द मिश्र का कथन है कि बालसाहित्य सहज–सरल, मनोरंजनपूर्ण गद्य–पद्य शैली में बालकों का आधिभौतिक–आदिदैविक–आध्यात्मिक विकास करने में सक्षम है। यथा सप्तवर्णचित्रपतङ्ग (अनूदितकथासाहित्य), चमत्कारिकचलदूरभाषः, बालगीतावलि (शनैः शनैः), शिशुस्वान्तकं (नाटक), बालनाट्यवल्लरी प्रभृति बाल–साहित्य में मनोरंजन शैली में बालकों को नैतिक मूल्य एवं नैतिक सदाचार युक्त उपदेशों की शिक्षा दी गई हैं।

सप्तवर्णचित्रपतङ्गः (अनूदितकथा) संस्कृत बालसाहित्य की सर्वोत्कृष्ट मनोरंजन गुणों से युक्त रचना हैं। जैसाकि डॉ. हर्षदेव माधव का कथन हैं– **"सप्तवर्णः चित्रपतङ्गः रम्या मनोहरा बालमनोरूपा कल्पनामयी कथा। मम मनोऽपि शिशुकामयते। नयति च मां शैशवम्।"[2]**

(ix) उपदेशात्मक पक्ष

बाल्यावस्था अत्यन्त कोमल होती है। छोटी से छोटी घटना भी बालकों के चंचल एवं कोमल मन पर गहरा प्रभाव डालती है। बाल्यावस्था मनुष्य का आधारस्तम्भ है, नीव हैं। यदि नीव कमजोर होगी तो मनुष्य रूपी इमारत ढह जायेगी। इसीलिए हितोपदेशकार नारायण पण्डित ने सत्य ही कहा है–

"यन्नवे भाजने लग्नः संस्कारों नान्यथा भवेत्।
कथाच्छलेन बालानां नीतिस्तदिह कथ्यते।।"[1]

---

1. पताका (बालोपन्यास), डॉ. केशवचन्द्रदाश, पृ.–104 (केशवकाव्यकलानिधि से उद्धृत)
2. सप्तवर्ण चित्रपतङ्गः (प्राक्कथन से उद्धृत), डॉ. सम्पदानन्द मिश्र

उपदेशात्मक बालसाहित्य सरल–सरस रूप में बालकों को नैतिकता, सदाचार, सत्य, परोपकार, त्याग, क्षमा इत्यादि गुणों का अवबोध करवाने में पूर्णतया सक्षम है। **डॉ. सम्पदानन्द मिश्र**[2] ने बालकों के चरित्र निर्माण, संस्कार प्रदान करने एवं आध्यात्मिक विकास करने वाले साहित्य के बालसाहित्य के रूप में परिभाषित किया है, अपने एक वक्तव्य में पं. जवाहर लाल नेहरू ने कहा था कि प्रारम्भ के वर्षों में जो आदतें पड़ जाती हैं और बच्चे जिस तरह सोचने लगते हैं उसका बच्चे के सम्पूर्ण जीवन पर प्रभाव पड़ता है। **इसलिए मैं इस बात से पूरी तरह सहमत हूँ कि बच्चों के नैतिक विकास के लिए राष्ट्रीय नीति तय की जाए।**[3]

वर्तमान में जिस प्रकार सम्पूर्ण परिवेश विभिन्न प्रकार के सामाजिक, नैतिक, सांस्कृतिक एवं प्राकृतिक प्रदूषण से व्याप्त हो रहा है ऐसे समय प्रो. जनार्दन हेगड़े द्वारा सरल–सरस, कान्तासम्मित नीतिबोध शब्दों के प्रणयन द्वारा बालहितार्थ, 'बालकथासप्ततिः' (बालपुरस्कार से पुरस्कृत 2015 ई.) लेखन का जो सफल कार्य किया है, वह बालकों के चारित्रिक उत्थान में पूर्णतया सक्षम है। जहाँ कवि 'सरलता' लघुकथा के माध्यम से बालकों में सादगी, सरलता, शौर्य का संचार करता है तो 'गुरोः वचनस्य पालनम्' शीर्षक से गुरु के प्रति श्रद्धा भाव जाग्रत करने का प्रयास भी करता है। उत्कल कवि डॉ. करुणादाश प्रणीत 'जीवनालोक'[4] काव्य में सर्वत्र बालकों के लिए उपदेशात्मक बाल–साहित्य के दर्शन होते हैं–

"स्नेह–समादर–सुधया सर्वम्
प्लावय भावय निजमपि सर्वम्।
लब्ध्वा स्नेहादरयोः स्पर्शम्।
वश्यति हिंस्योऽपीह सहर्षम्।
यो वै खर्वति सकले क्षेत्रे
भवति महान् स तु जनता नेत्रे।"

इसी तरह वर्तमान में जिस प्रकार बालकों में सोशल मीडिया में बहुमूल्य समय का व्यय किया जा रहा है वैसे समय–समय परक बाल कविताएँ अत्यन्त कारगर साबित होगी।

यथा– **बहु पठनीयं बहुमाननीयम्।**
बहुकरणीयं न हि शयनीयम्।।
विमुंच निद्रां मुंचालस्यम्।

---

3. हितोपदेश, पं. नारायण,
1. शनैः शनैः (बालगीतावलि), डॉ. सम्पदानन्द मिश्र, प्राक्कथन भाग से उद्धृत।
3. हिंदी बाल–साहित्य, दिविक रमेश, कुछ पड़ाव
4. 'जीवनालोक', डॉ. करुणाकर दाश

त्यजाभिमानं त्यज परिहासम्।।
अल्पं खाद मा चापवद।
अल्पं जल्प समयः स्वल्पः।।[1]

अतः बालकों को असत्य से सत्य के मार्ग पर अग्रसर करवाने हेतु उपदेशात्मक बाल–साहित्य अत्यंत उपयोगी हैं।

(x) काल्पनिकता एवं यथार्थता

हिंदी के बाल–साहित्यकार दिविक रमेश ने डॉ. विभा शुक्ला से बातचीत के दौरान कहा था कि "बाल–साहित्य बच्चों की मानसिकता और परिवेश से हुई उनकी तैयारी के अनुकूल होना चाहिए। उसमें बालक को रचनात्मक बनाने, उसकी कल्पना शक्ति को सक्षम करने और अधिकार सम्पन्न अर्थात् आत्म विश्वासी बनाने का सामर्थ्य होना चाहिए। बाल–साहित्य में जहाँ कल्पना के कितने भी घोड़े उड़ा लेने की छूट दी जा सकती हैं बशर्ते वह विश्वनीयता एवं यथार्थता के धरातल का स्पर्श भी करती हो। वैसे तो आज बालकों को रोमांचक, जोखिम, साहस, सद्भाव, कल्पनाशीलता आदि से भरी रचनाएँ भाती हैं किंतु बाल–**साहित्यकार को दकियानूसी विचारों और अंधविश्वासों से बचना चाहिए।"**[2]

संस्कृत बाल–साहित्य में कल्पना एवं यथार्थता तत्त्व का सामंजस्य पूर्ण प्रयोग परिलक्षित होता है। डॉ. सम्पदानन्द मिश्र कृत 'सप्तवर्णः चित्रपतङ्गः' रम्य, मनोहारी, बालमनोकूल एवं कल्पनामयी कथा अंश हैं। डॉ. हर्षदेव माधव ने कहा है 'सप्तवर्णः चित्रपतङ्गः' लघुकथा के अध्ययन से मन भी शिशु सदृश हो जाता है। यह मुझे पुनः शैशवास्था की और ले जाती है। यथा–

"एकदा चत्वारः बालाः वने भ्रमन्ति स्म। तत्र ते एकं सुन्दरं जलाशयम् अपश्यन्। सः जलाशयः विविध वर्ण–पद्मपुष्पैः पूर्णः आसीत्। बालाः नितान्तम् आनन्दिताः अभवन्।"[3]

वस्तुतः कथाकार काव्य में कल्पनाशीलता का प्रवाह सर्वदा बनाये रखने के लिए कुछ कल्पनात्मक शब्दों का प्रयोग करता है यथा 'एकदा' अर्थात् एक बार कश्चन् आसित् अर्थात् कोई... था, एकवारं अर्थात् एक बार इत्यादि शब्दों से काव्य का प्रारम्भ होता है।

संस्कृत बाल–कथा साहित्य प्रायः अवास्तविक एवं असम्भव तथ्यों से संबद्ध होती है। काल्पनिक विषयाधारित इन कथाओं का प्रारम्भ प्रायः 'आसीदेकः राजाः.......' अथवा 'एकाऽऽसीत् परी...

1. शनैः शनैः (बालगीतावलि), डॉ. सम्पदानन्द मिश्र, पृ.–50
2. डॉ. विभा शुक्ला से बातचीत के कुछ अंश, दिविक रमेश, पृ.–184
3. 'सप्तवर्णः चित्रपतङ्गः', डॉ. सम्पदानन्द मिश्र, पृ.–1

...' अथवा एकासीत् राज्ञी......' अथवा एकश्चासीत् शुकः......, व्याघ्रः........, वृक्षः.........., ग्रामः........, भूतः....... ...इत्यादि शब्दों से होता है। इन कथाओं में 'एकासीत्' इस प्रकार के शब्दों का प्रयोग बालकों के मन में कल्पना शक्ति को ऊँचे आकाश में ले जाती है। **सर्वत्र पाठकों को नूतन जगत का दर्शन करवाती है।**[1]

(xi) वैज्ञानिकता

वस्तुतः आज बालकों में संस्कार समारोपित करने, सामाजिक–सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक विकास करने के साथ–साथ बालकों को वर्तमान वैज्ञानिक विषयों से भी परिचय करवाना आवश्यक है। ऋषिराज जानी, पराम्बा श्रीयोगमाया, प्रो. गोपबन्धु मिश्र एवं प्रो. राजेन्द्र मिश्र प्रभृति बाल–साहित्यकारों द्वारा वैज्ञानिक तत्त्व को अपने बाल–साहित्य में स्थान दिया है। ऋषिराज जानी द्वारा 'चमत्कारिकः चलदूरभाषः'[2] बाल–काव्य में बालकों को जङ्गम दूरवाणी की उपयोगिकता एवं कुशलता से अवगत करवाते हुए उनमें जिज्ञासा एवं कौतुहल उत्पन्न करने का साहसिक कार्य किया है। इसी तरह 'कनीयान् राजकुमारः' बाल–काव्य में बालकों को खगोल विज्ञान की जानकारी प्रदान की गई है–

"पृथिवी, बृहस्पतिः मङ्गलः शुक्रः इत्यादीनां येषां विशालानां ग्रहाणां नामकरणम् अस्माभिः विहितम् अस्ति, तेषां इव शतशः इतरेषां ग्राहाणां स्थितिरस्ति। तेषु च केचन ग्रहाः तथाविधाः लघ्वाकारः सन्ति यत् तान् दूरवीक्षणयन्त्रेण द्रष्टुम् अपि कस्यचित् पार्श्वे तावान् समयो न भवति।"[3]

अतः वैदिक साहित्य के अनन्तर वैज्ञानिक तत्त्व का संस्कृत साहित्य में सन्निवेश करने में बाल–साहित्य का प्रमुख योगदान हैं। बाल–संस्कृति, बाल–विचारों का उपस्थापन–बाल–चरित्र चित्रण सन्धान एवं बाल मनोगत भावों का सूक्ष्मातिसूक्ष्म चित्रणयुक्त बाल–साहित्य ने विश्व–संस्कृत साहित्य में नवीन कलापक्ष एवं भावपक्ष के प्रकटीकरण का कार्य किया हैं।

≈≈≈≈

---

1. आधुनिक संस्कृत कथासाहित्ये बालकथास्वरूपम्, अर्चना तिवारी, दृक् पत्रिका 26–27 अंक, पृ.–175
2. चमत्कारिकः चलदूरभाषः, ऋषिराज जानी, 2013 ई.
3. 'कनीयान् राजकुमारः', प्रो. गोपबन्धु मिश्र, पृ.–18, 2013 ई.

पञ्चम अध्याय

आधुनिक संस्कृत बाल–साहित्यपरक काव्यों की समीक्षा

(क) बालकाव्य

(ख) बाल कथासाहित्य

(ग) बालनाटकम्

(घ) बाल–उपन्यास

पंचम अध्याय

आधुनिक संस्कृत बाल–साहित्यपरक काव्यों की समीक्षा

यथार्थ सत्य है, कि हमारे चारों ओर की परिस्थितियां, आवश्यकताएं एवं मानसिक भावानुभूतियां ही बाल–साहित्यकारों की काव्य–सर्जन की प्रेरणा शक्ति होती है। इन्हीं सबसे प्रेरणा ग्रहण कर बालकवि साहित्यरूपी नवनिर्माण में संलग्न होता है। जिस तरह भगवान शिव अपनी शक्तिभूता प्रतिभा से नवीन से नवीन सृष्टि का उद्‌भव करता है, उसी प्रकार कवि भी अपनी काव्यमयी प्रतिभा के बल पर नवीनतम सौन्दर्ययुक्त काव्यजगत् का निर्माण करता है। क्रान्तदृष्टा कवि की विलक्षण प्रतिभा से प्रसूत काव्य को काव्यशास्त्रियों ने मुख्यतः दो भागों में वर्गीकृत किया है–

प्रथम–प्रबन्ध काव्य एवं द्वितीय–मुक्तक काव्य।

आचार्य मम्मट प्रस्तुत भेदों को महाकाव्य एवं अनिबद्ध काव्य के अन्तर्गत समाहित करते हैं। पूर्वापर सम्बन्ध से युक्त पद्यात्मक रचना प्रबन्ध कहलाती है। काव्य का स्फुट स्वरूप मुक्तकात्मक होता है। काव्यशास्त्रियों ने प्रबन्ध काव्य के अवान्तर भेदों के तहत महाकाव्य एवं गीतिकाव्य को स्वीकार किया हैं। आचार्य विश्वनाथ[1] ने महाकाव्य को विस्तृत रूप से लक्षित करते हुए उसे सर्गबद्ध कहा है। प्रो. राजेन्द्र मिश्र[2] ने तो प्रबन्ध काव्य को ही सर्गात्मक मानते हुए उसे पूर्वापर पद्यों के समावेश से युक्त माना है।

आचार्य विश्वनाथ ने महाकाव्य के तहत ही खण्डकाव्य को स्वीकार किया है। जहाँ महाकाव्य में नायक के समग्र जीवन का सांगोपांग वर्णन होता है, वही खण्डकाव्य में नायक के एक अंश का ही वर्णन होता है– "खण्डकाव्यं भवेत् काव्यस्यैकदेशानुसारि च।"[3] प्रो. राजेन्द्र मिश्र ने पं. विश्वनाथ के लक्षण सदृश ही लघु–कलेवर व सर्गविहीन पद्यों से युक्त काव्य को खण्डकाव्य नाम से सम्बोधित किया है। इसके अतिरिक्त खण्डकाव्य के अनुरोधवश दूतकाव्य, संदेशकाव्य, स्तोत्रकाव्य, नीतिकाव्य, लहरीकाव्य इत्यादि भेद भी लक्षित किए गए हैं।[4] प्रो. राजेन्द्र मिश्र ने खण्डकाव्य को ही अवान्तर प्रकार से गीतिकाव्य की संज्ञा दी है। मिश्र जी का कथन है,

---

1. साहित्यदर्पणम्– आचार्य विश्वनाथ, 6/315–324
2. अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. राजेन्द्र मिश्र, निर्मितितत्वोन्मेष/61–70, पृ.–218
3. साहित्यदर्पणम्, आचार्य विश्वनाथ, 6/329
4. अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. राजेन्द्र मिश्र, निर्मितितत्वोन्मेष 82–90, पृ.–224

कि गीतिकाव्यं तदेवोक्तं गीततत्त्वप्रयोगतः। अर्थात् गीतिकाव्य में गेय तत्त्व की प्रधानता होती हैं।[1] पाश्चात्य विद्वान् हीगल ने गीतिकाव्य का स्वरूप स्पष्ट करते हुए लिखा है, कि गीतिकाव्य में कवि के शुद्ध अन्तःकरण के प्रतिबिम्ब का निदर्शन होता है। कवि का एकमात्र प्रयोजन कलात्मक शैली में आन्तरिक जीवन की विभिन्न अवस्थाओं, आशाओं, आह्लाद की तरंगो एवं मनोभावों का उद्घाटन करना है। कवि की वैयक्तिक अनुभूतियों का सम्बन्ध भावनाओं से होता है। वह बालसाहित्य के अन्तर्गत लयपूर्ण, कोमल पदावली में बालकों को विभिन्न मनोगत भावों से अवबोध करवाना चाहता है। 'कौमारम्' काव्य में प्रो. राजेन्द्र मिश्र ने कला एवं भाव पक्ष को आत्मसात करते हुए बालकों के लिए विविध आन्तरिक एवं बाह्या विषयों को अवधारित करते हुए बालगीतों का प्रणयन किया है, जिनमें भक्तिपरक गीत, देश–प्रेम के गीत, प्रकृतिपरक गीत, सामाजिक गीत, विचारात्मक गीत, बुद्धिप्रदान गीत एवं शैक्षिक गीतों को सन्धानित किया है।[2]

गीतिकाव्य के लिए संस्कृत आचार्यों ने मुक्तक काव्य का व्यवहार किया है। अग्निपुराण में ऐसे श्लोकों के लिए मुक्तकों की संज्ञा दी है, जो अपने अर्थोत्पन्न में स्वयं समर्थ हो– "मुक्तक श्लोक एकैकश्चमत्कारक्षमः सताम्।।" आगे चलकर ध्वन्यालोक के लोचनकार अभिनवगुप्त ने इसकी विस्तृत व्याख्या करते हुए लिखा है कि ऐसे पद्य को, जिसका अगले–पिछले पद्यों से कोई सम्बन्ध न हो, तथा जो अपने विषय को प्रकट करने में समर्थ हो, मुक्तक कहते हैं। बालसाहित्य में सर्वत्र गीतिकाव्यों के अन्तर्गत मुक्तकों का प्रवाह परिलक्षित होता है। मुक्तक पद्यों में विभाव, अनुभावादि से परिपुष्ट इतना रस भरा रहता है कि वह बाल–पाठकों को रसानुभूति प्रदान कर सकता है। आनन्दवर्धनाचार्य का कथन है कि प्रबन्ध के अन्तर्गत जितने भावों या रसों का परिपाक सम्भव है उतने ही भावों या रसों की व्यंजना मुक्तक में भी सम्भव है।[3]

व्याकरणात्मक दृष्टि से 'मुक्तक' शब्द 'मुच्' धातु में 'क्त' एवं 'कन्' प्रत्यय करने पर निष्पन्न होता है। प्रो. राजेन्द्र मिश्र ने 'मुक्तक' को 'छन्दोमुक्तं' के रूप में परिभाषित करते हुए इसे लय–प्रवाहात्मक गद्य का ही अपररूप स्वीकार किया है। यह छन्दोमुक्त काव्य गद्य जैसा ही है। परन्तु छन्द के गुणों (लय, यति–गति) की उपस्थिति के कारण यह पद्य का सजातीय भी है।[4] यह काव्य पद्यात्मक लय द्वारा गद्य–विधा में लिखा जाता है। अतः छन्दोमुक्त काव्य गद्यपद्योभयात्मक होता है। वस्तुतः बालसाहित्य की उपलब्ध सभी गीतिपरक रचनाओं में पद्य छन्दोमुक्त रूप में ही प्राप्त होते हैं केवल कहीं–कहीं प्रसङ्गवश छन्दात्मक पद्यों का समावेश होता है।

1. अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. राजेन्द्र मिश्र, निर्मितितत्त्वोन्मेष/85, पृ.–224–25
2. भारतीय व पाश्चात्य काव्य सिद्धान्त, आचार्य गणपतिचन्द्र गुप्त, पृ.–244–246
3. भारतीय व पाश्चात्य काव्य सिद्धान्त, आचार्य गणपतिचन्द्र गुप्त, पृ.–244–45
4. अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. राजेन्द्र मिश्र, प्रकीर्णतत्वोन्मेष/100, पृ.–302

प्रस्तुत अध्याय में बालसाहित्य के अन्तर्गत परिगणित छन्दोमुक्त गीतिकाव्यों में प्रो. राजेन्द्र मिश्र कृत ''कौमारम् (शिशुकाव्य)'', आचार्यप्रवर वासुदेव द्विवेदी कृत, "बालकवितावलिः प्रथम" एवं 'बाल–कवितावलिः–द्वितीय', 'दिगम्बर महापात्र विरचित', ललितलवङ्गम्' एवं 'रङ्गरुचिरम्', डॉ. रामकिशोर मिश्र विरचित, 'बालचरितम्', भि. वेलणकर विरचित, 'बालगीतम्', हरिदत्त शर्मा कृत, 'बालगीताली', सुभाष वेदालंकार कृत, 'शिशुगीतम्', प्रो. सम्पदानन्द मिश्र कृत 'शनैः शनैः (बालगीतावलि), गणेश गंगाराम पेण्डेनकर प्रणित, 'शिशुलिलालाघवम्', ऋषिराज जानी कृत, 'कपिः कूर्दतेशाखायाम्', डॉ. अरविन्द तिवारी विरचित, 'बालगुंजनम्', डॉ. हर्षदेव माधव कृत, 'चटको राजा, चटको राज्ञी', रविन्द्र पण्ड्या विरचित, 'सुभाषित–सुधाबिन्दु', कृष्णलाल प्रणित 'बालगीतम्अङ्गगीतम्', राजेन्द्र पाण्ड्या कृत, 'सचित्र संस्कृत बालगीतानि, प्रो. गौरी कुमार ब्रह्म कृत 'शिशुगीतिका', आशा अग्रवाल कृत, 'किम् भो बालाः! अक्षरमाला' इत्यादि बालगीतों, खण्डकाव्यों एवं छन्दोबद्ध मुक्त काव्यों की कला एवं भाव पक्षों के आधार पर समीक्षा की गई है।

इन सब बालगीतों के अतिरिक्त भी प्रो. सम्पदानन्द मिश्र द्वारा उद्भावित संस्कृत बाल–साहित्य के आमुखपटल पेज (Facebook-Blog Page) पर नित–नूतन बालकवियों द्वारा लघु–लघु बालगीतों का प्रणयन किया जा रहा है। इन बालकवियों में डॉ. कौशल तिवारी, गुण्डमि गणपय्य होळः, तरुण मित्तल, पूजालाल, शशिपाल शर्मा, प्रो. जनार्दन हेगड़े, पण्डितहरेकृष्णधूपाल शर्मा, कल्लसि कृष्णम कुट्टी, लक्ष्मीकान्त जाम्बोरकर प्रभृति विद्वानों का नाम आदर से लिया जा सका हैं।

(क) बालकाव्य

आचार्य गणेश पेण्डरकर –शिशुलीलालाघवम्

'शिशुलीलालाघवम्' आचार्य गणेश पेण्डरकर द्वारा उपदेशात्मक रचित एक खण्डकाव्य (गीतिकाव्य) विधा का ग्रन्थ है। इसका प्रणयन 1979 ई. में कवि द्वारा उपदोत्मक शैली का अनुकरण करते हुए 140 पद्यों में किया गया है। प्रस्तुत काव्य को मुख्य उद्देश्य बालकों का नैतिक एवं चारित्रिक उपदेश प्रदान करना है। आपके द्वारा प्रस्तुत काव्य में बालमनोवैज्ञानिक पक्ष को आत्मसात् करते हुए अवस्थानुरूप बालकों के शारीरिक एवं मानसिक विकास को भी प्रतिबिम्बित किया गया है।

'शिशुलीलालाघवम्' खण्डकाव्य का प्रारम्भ 'बालराज' नामक बालक के वर्णन से होता है जो परिवार में इकलौती सन्तान है। कवि का कथन है कि, बालक ही एकमात्र कारण है जो माता–पिता को सच्चे सुख की अनुभूति करवाने में समर्थ है।

कवि द्वारा कविता के उल्लेखनीय गुणों को सरल–सरस भाषा में निबद्ध किया गया है। कवि के मूल्यपरक योगदान को उद्धृत किया गया है–

भज भज निद्रां निद्रां भज हे बाल।
कुर्वे तव दोलांदोलम्।। ध्रु।।
त्वां मन्येऽहं विधिना न्यस्तमपूर्वम्।
कोषं मयि कमपि महार्हम्।।
त्वत्प्रीतिवशात् त्वष्टाऽन्विष्टः श्रेष्ठः।
दोला निर्माणगरिष्ठः।।
निर्मिता विशाला दोला।
दृढरज्वा लीलाऽऽलोला।।
शय्याऽप्यस्यामति मृदुला।
नो वपुषस्ते बाधालेशोऽपीह।
भज भज निद्रां.........।।[1]

इसी तरह पं. विश्वनाथ द्वारा सिद्ध 'वात्सल्य रस' का भाव भी प्रस्तुत काव्य में सर्वत्र परिलक्षित होता है।

कुरु रे, लघु कुरु रे, सुखशयनम्।
कथमिव मिलति न नयनम्।
प्रियसुत कुरु शयनम्।। ध्रु।।
गोवत्सा हंसा : खगपोताः।
अपि सुप्ताः शुककाकाः।।
वायुर्मोहयते निशिगन्धैः।
प्रसरद्धारिसुगन्धैः।।
कुरु रे, लघु कुरु रे.......
प्रातर्दवबिन्दोर्विलसन्ती
तद्वत्तवमुखकान्तिः।।
अनुपमरूपवतो वपुरोजः।
तव तिरयति विधुतेजः।।
कुरु रे, लघु कुरे रे.........[2]

वस्तुतः प्रस्तुत कविता में पुत्र के प्रति माता का स्नेह भाव प्रकट होता है। यह वात्सल्य रस का सुन्दर उदाहरण है।

---

1. शिशुलीलालाघवम्, पृ.–11
2. शिशुलीलालाघवम्, पृ.–18–19

कवि द्वारा प्रस्तुत काव्य में बाल–मनोभावों के अनुकूल शार्दूलविक्रीडितम्, मन्दाक्रान्ता, वसन्ततिलका, उपजाति एवं मालिनी छन्दों का प्रयोग दिखाई देता है। यथा मालिनी छन्द का उदाहरण उद्धृत है–

वितथभयविमुक्ता भूरिवात्सल्ययुक्ता।
मधुरविशदहासा मेघमुक्तेन्दुभासा।।
लघु नव शिशुमाता भावभावावदाता।
लसति युवतिवृन्दे रोहिणीवोडुपु×जे।।[1]

कवि वर्णन करता है कि बालक ही शून्य मकान में एकमात्र धनसम्पत्ति है। पुत्र सूर्य के समान भव्य प्रकाशयुक्त है। वहीं दुःखरूपी सागर में अनन्त सुख प्रदान करने वाला है। वह ईर्ष्या, राग–द्वेष, क्रोध एवं अहंभाव से रहित शुद्ध चैतन्य है–

बालो बालरविप्रभः स विभवो गेहेऽपि निर्वैभवे।
बालो ह्लादिमृगाङ्कबिम्बसुखदोऽपारेऽपि दुःखार्णवे।।
बालो निर्मलपङ्कजोज्वलमुखः स्थानेऽप्यनच्छाऽऽचिते।
निर्व्याजं हृदयं हि वैभवमहो शौचं सुखं मूर्तिमत्।।[2]

अतः कवि बालमनोवैज्ञानिक भाव से ओतप्रोत दिखाई देता है।

कवि का कथन है कि बालक भी मनुष्य के समान ही एक सामाजिक प्राणी है। बालक में जन्म से ही प्रेम, दया, दुःख–सुख, क्रोध, भय, ममता के मनोभाव प्रकट होने लगते है। बालक के हृदय में माँ के प्रति प्यार एवं माता के हृदय में पुत्र वात्सल्य, स्नेह एवं ममता का भाव प्रकृति से ही सिद्ध है। यथा–

लघु नव शिशुमाता भावभावावदाता।
लसति युवतिवृन्दे रोहिणीवोडुपुंजे।।

बच्चों की रोचक आकृति उनकी भाषात्मक अभिव्यक्ति से प्रकट एवं परिलक्षित होती हैं। कवि का मनोरम वर्णन, सजीवता एवं कलात्मकता निम्नांकित पद्य में उद्धृत की गई है–

उक्तिर्लुप्पदाक्षराऽमृतमयी भावानुभावौ स्मितम्।
निर्व्याजं परमप्रमोदजनकं स्वाभाविकत्वाच्छिशोः।।
तुल्यं नाऽभिनये नटीनटकृतैस्तत्कृत्रिमाविष्कृतैः।
दम्भाऽडम्बरवंचनाऽऽश्रयिनृणां का व्यापृतीनां कथा।।[3]

---

1. शिशुलीलालाघवम् / 27
2. शिशुलीलालाघवम् / 2
3. शिशुलीलालाघवम् / 60

इस प्रकार कवि द्वारा बालकों के हाव–भाव एवं उनकी चारित्रिक विशेषताओं को महत्त्व दिया गया है।

आचार्य वासुदेव द्विवेदी –(I) बालकवितावलि (प्रथम भाग)

बच्चों को संस्कृत वर्णमाला एवं बाल–शब्दकोष का ज्ञान करवाने के साथ–साथ आचार्य वासुदेव द्विवेदी जी ने लघु–लघु वाक्यों को अर्थसहित, मनोहारी तुकबन्दी शैली में हँसते–खेलते पद्धति में बालकवितावलि पुस्तक की रचना की। यह पुस्तक दो भागों में गुम्फित है बालकवितावलि–प्रथम भाग एवं बालकवितावलि–द्वितीय भाग। इस पुस्तक का हिन्दी नाम है– 'हँसते–खेलते संस्कृतम्'। इस बालसाहित्य आधारित पुस्तक में आधुनिक छन्दोबद्ध शैली में 26 लघु कविताएँ निबद्ध है जो अत्यन्त सरल–सरस, मधुर काव्यपरक शैली में लिखी गई है। पाँच वर्ष का बालक भी इन कविताओं का पाठ करते समय आनन्द से नाचने लग जाता है।

इस पुस्तक के प्रस्तावना भाग में स्वयं आचार्य वासुदेव शास्त्री का कथन है कि–

"इयं सर्वथा नवीना चेतोहरा प्रथमा रचना वर्तते।"

यहाँ नाम के अनुरूप ही बिना परिश्रम किए, मनोरंजन के साथ ही बालक संस्कृत को जानने समझने एवं बोलने लग जाते है। प्रस्तुत कविता भाग में पहले संस्कृत वाक्य है तदन्तर हिन्दी अनुवाद भी गेयपरक शैली में उपलब्ध है। संस्कृत एवं हिन्दी अनुवाद, इन दोनों वाक्यों को मिलाने पर छन्द निर्मित हो जाता है।[1]

यथा–

हे दयानिधे हे दयाधाम!
हे दयानिधे हे दयाधाम!
वीरा भवेम हम वीर बने
धीराः भवेम हम धीर बने
शिष्टा भवेम हम शिष्ट बने
सभ्याः भवेम हम सभ्य बने।
सततं पठेम हम सदा पढ़े
सततं लिखेम हम सदा लिखें
सत्यं वदेम हम सच बोले
सुखिनो वसेम हम सुखी रहें।
तुभ्यं नमोऽस्तु तुमको प्रणाम
हे दयानिधे! हे दयाधाम!।।[2]

---

1. बालकवितावलिः प्रथम भाग, प्रस्तावना अंश से उद्धृत
2. बालकवितावलिः प्रार्थना प्रकाशक, सार्वभौमसंस्कृतप्रचारसंस्थानम्, वाराणसी

इन पंक्तियों में अद्भुत शक्ति है जो बालकों के अन्तर्मन में सभ्य एवं शिष्ट नागरिक के गुणों का अवगाहन करने का कार्य करती है। आचार्यवर की 'टप् टप् गप् गप्' कविता, जो दुनिया भर में बालकविता लिखने का प्रकाश बिखेरती है, जिसे पढ़कर कवियों ने बालकविता के प्रति लेखनी उठायी है।

निपतति जम्बूः टप् टप्
गिरती जामुन टप् टप्।
बालः खादति गप् गप्
बालक खाता गप् गप्।।
वायुः प्रवहति हर् हर्
हवा बह रही हर् हर्
पत्रं निपतति खर् खर्
पत्ता गिरता खर् खर्
विहगो ब्रूते चुन् चुन्
चिड़िया बोले चुन् चुन्
भ्रमरो गुंजति गुन् गुन्
भंवरा गूँजे गुन् गुन्
गन्त्री गच्छति धक् धक्
गाड़ी जाती धक् धक्
बालः पश्यति टक् टक्
लड़का देखे टक् टक्।।[1]

इसी तरह कोमल मति युक्त बालकों को आनन्दित करने एवं संस्कृतमय वातावरण के निर्माण के लिए आचार्य द्विवेदी जी द्वारा 'में में कुरुते', दिनचर्या, घटी, गन्त्री, चुन्नु–मुन्नु, गोमातृ–चटका, विडाल, मूषिका, पिपीलिका, गोचारक, सूर्योदय, वर्षा, नीतिशिक्षा, आचारशिक्षा प्रभृति बालकविताओं की रचना की है। यह– कविताऐं न कवेल बालकों के मनोरंजन के उद्देश्य को पूरा करती है अपितु बालोचित ज्ञान को भी उपलब्ध करवाती है। 'सावधानम्' शीर्षक से युक्त कविता उल्लेखित है–

"कुसुमानां कलिका मा त्रोटय
फूलों की कलियाँ मत तोड़ों।
पुस्तकस्य पत्रं मा मोटय
पुस्तक का पन्ना मत मोड़ो।।

1. बालकविताविलः–प्रथम भाग, गन्त्री कविता

वायानशीशं मा स्फोटय,
जंगले का शीशा मत फोड़ो।
दुष्टैः सम्बन्धं मा योजय
दुष्टों से नाता मत जोड़ो।।
गच्छति शकटे मा आरोहेः
चलति गाड़ी में मत चढ़ना।
दुष्टैः पुरुषैः सह मा गच्छेः
दुष्टजनों के साथ न चलना।।
कृत्वा कर्म झटिति आगच्छेः
कर के काम तुरन्त आ जाना।।"[1]

यद्यपि यह सरल–सरस एवं सामान्य अर्थ से युक्त कविता है किंतु बच्चों के भावी जीवन के निर्माण में अमृततुल्य है, जिनके अभ्यास मात्र से ही बालक बाल्यकाल से बुद्धिमान एवं सभ्य नागरिक बन सकेगा।

इसी प्रकार बालकों को ग्रामीण भारत के परिवेश का ज्ञान उपलब्ध करवाने वाली 'देहात का चित्र' कविता उल्लेखित हैं–

भारतग्रामवासिनो लोकाः भारत के देहाती लोग।
अशनं स्वल्पं; खाना थोडा,
मलिनं वसनम् गन्दा कपड़ा।
शुष्कं वदनम् सूखा मुखड़ा
कथयति दुःखम् कहता दुःखड़ा।।
ह्रस्वकुटीरम् छोटी कुटिया
भग्ना खट्वा टूटी खटिया।
वक्रपट्टिका टूटी पहिया
रोदिति कन्या रोती बिटिया।।
करे तमाखुः सूर्ती कर में
कलहो गेहे झगड़ा घर में।
चिन्ता हृदये चिन्ता मन में
कृशता देहे कृशता तन में।।[2]

1. बालकवितावलिः प्रथम भाग, सावधानम् कविता
2. बालकवितावलिः – प्रथम भाग, 'देहात का चित्र'

प्रस्तुत काव्य बालकों को ग्राम्य जीवन के कठिन एवं अभावग्रस्त सामाजिक जीवन से अवगत करवाता हुआ उन्हें नैतिक उपदेश भी प्रदान करता है।

(II) बालकवितावलि (द्वितीय भाग)

आचार्य वासुदेव द्विवेदी प्रणीत बालकवितावलि–द्वितीय भाग में मनोहारी एवं नवीन चिताकर्षक बालोपयोगी गीत है, जो संगीतमय रूप में विद्यमान है। आचार्य द्विवेदी ने बच्चों को संस्कृत के प्रारम्भिक कक्षाओं में ललित एवं सन्धिसमास रहित कविता का दर्शन कराते हुए भूमिका भाग में उल्लेख किया है कि "आज के इस वैज्ञानिक युग में भी संस्कृत पाठशालाओं में सर्वप्रथम विद्यार्थियों को वही दुर्बोध लघुसिद्धान्तकौमुदी पढ़ाई जाती है जो बालकों की सुकुमार बुद्धि को कुण्ठित करने वाली एक कठिन पुस्तक है। इसके अतिरिक्त हितोपदेश जो कुछ भी ग्रन्थ पढ़ाये जाते हैं, वे कथात्मक तो होते हैं पर सन्धि–समास की अधिकता के कारण उनकी भाषा इतनी क्लिष्ट होती है कि उन पुस्तकों द्वारा बाल–विद्यार्थियों का भाषा में सहज प्रवेश नहीं हो पाता। यही कारण है कि संस्कृत के विद्यार्थी संस्कृत बोलने–लिखने में अत्यन्त असमर्थ होते हैं।"[1]

प्रस्तुत काव्य जयदेव द्वारा रचित 'गीतगोविन्द' की ललित पदावली के समान सुमधुर है। यथा 'ईश्वरवन्दना' कविता के प्रत्येक चरण में अन्तिम पद 'वन्दे' की प्रत्येक बार आवृति होती है–

"ईशं विश्वनिदानं वन्दे।
निगमगीतगुणगानं वन्दे।
परितो विततवितानं वन्दे।
शोभाशक्तिनिधानं वन्दे।
मन्दिरमस्जिदवासं वन्दे।
गिरिजाभवननिवासं वन्दे।
जनजनहृदयनिवासं वन्दे।
कणकणकलितप्रकाशं वन्दे।।"

अद्भूत नादानुप्रास से युक्त यह कविता वसुधैव कुटुम्बकम्, सर्वधर्मसम्मान की भावना से युक्त है। यह काव्य समाज में सहयोग, प्रेम एवं भाईचारा को प्रोत्साहन देता है।

आचार्य वासुदेव द्विवेदी का वैशिष्ट्य है कि उनकी रचनाये न तो कभी व्याकरणशून्य रचनाधर्मिता की पक्षधर है न ही सर्वथा संस्कृत नियमों को छोड़कर रचना करने की अपेक्षा करती है। उनकी दृष्टि अपूर्ण है। प्रथम तो मनोरंजनपूर्वक बालक संस्कृत पढ़ते है तदन्तर

1. 'सुरभारती के अनन्य समुपासक आचार्य वासुदेव द्विवेदी शास्त्री' पुस्तक से उद्धृत, पृ.–20

धीरे–धीरे उन कविताओं के अनुशीलन के साथ बालकों को उपदेशित किया जाता है। यथा 'अनुशासन' कविता की पंक्तियां सभ्य समाज में हमेशा प्रासंगिक एवं परिशीलन के योग्य रहेगी–

"मा कुरु दर्पं मा कुरु गर्वम्
मा भव मानी मानय सर्वम्।
मा भज दैन्यं मा भज शोकं
मुदितमना भव मोदय लोकम्।।
मा वद मिथ्यां मा मद व्यर्थं,
न चल कुमार्गे न कुरु अनर्थम्।
पाहि अनाथं पालय दीनं
लालय मातापितृविहीनम्।।
तनयं पाठय तनयं पाठय
शिक्षय गुणं दुर्गुणं वारय।।[1]

प्रस्तुत कविता में जहाँ एक और बालकों को दर्प मत करो, अहंकार मत करो, झूठ मत बोलों, कुमार्ग को त्याग कर सन्मार्ग पर चलो आदि नैतिक उपदेशों की शिक्षा देने के साथ ही काव्यात्मक अनुप्रास एवं माधुर्य गुण की छठा सर्वत्र दृष्टिगोचर हुई है। इसी तरह नादानुप्रास का सुन्दर उदाहरण दृष्टिगोचर होता है–

सर् सर् सर् वहति समीरः
झर् झर् झंझाकालः।
घर् घर् वर्षति घनमाला
टप् टप् बिन्दुनिपातः।।[2]

आचार्य द्विवेदी जी का कथन है कि बालक व्याकरण के कठिन नियमों से अनभिज्ञ होते हैं। अतः उनके लिए सामान्य नियमों के अनुकूलन किंतु नियमों से रहित आभूषणों से शून्य होने पर भी शकुंतला के समान मनोहारी, ज्ञानप्रद एवं आकर्षक बालसाहित्य का परिणयन किया जाना अत्यावश्यक है। इसी प्रकार आचार्य द्विवेदी द्वारा बालविनोदमाला, (मनोरंजनप्रधान कविता), बालसुभाषितम् (शिक्षाप्रद श्लोक) आदि भी गेयात्मक शैली में निबद्ध काव्य है। **आचार्य दिगम्बर महापात्र–(I) रङ्गरुचिरम्**

उत्कलवासी, प्रायोगिक संस्कृतधारा में शिशु–साहित्य के तपोमूर्ति पण्डितप्रवर आचार्य दिगम्बर महापात्र द्वारा 1983 ई. में 'रङ्गरुचिरम्' काव्य की रचना की गई। प्रस्तुत काव्य में 44 बालोपयोगी कविताओं का सङ्कलन है जो उपदेश प्रदान करने के साथ–साथ अपने

1. बालकवितावलि–द्वितीय भाग, अनुशासनम्
2. बालकवितावलि : द्वितीय भाग

उद्बोधकत्व गुणों से हमेशा बालकों को प्रेरित करती है। 'रङ्गरुचिरम्' शब्द का अर्थ है– 'बालसौन्दर्य की मधुरता एवं लालित्य'। यहाँ बालसौन्दर्य को प्रकट करने हेतु मधुर–मधुर बालगीतों का संग्रह है। यह काव्य बालकों में संस्कृत के प्रति रुचि जाग्रत करने के साथ ही उन्हें नैतिक गुणों से आच्छादित करता है।

आचार्य महापात्र द्वारा बालकों के ज्ञान के लिए प्रकृति में निवासरत पात्रों को कविता का पात्र बनाया गया है। छागः (बकरी), ओतु (बिल्ली), मर्कट (वानर), विडाल (बिल्ला), भल्लुक (भालू) जैसे पशु–पक्षी पात्रों को बालकों के मनोरंजनार्थ यहाँ कवि द्वारा प्रयुक्त किया गया हैं। प्रस्तुत काव्य में संवाद एवं वाक्यविन्यास अनुरणात्मक, गेयात्मक, शब्दानुकरणात्मक एवं बालोऽनुकूल तत्त्वों से युक्त है। यथा पशुओं की वाणी का अवबोध करवाने वाली कविता उल्लेखित है–

शकटः वदति कें कें
छागों वदति में में,
ओतुर्वदति म्याऊँ म्याऊँ,
बालः क्रन्दति क्याऊँ क्याऊँ।[1]

प्रस्तुत काव्य की भाषा सरल–सरस है। कविताओं में विभक्ति, वचन, क्रियाओं के परिवर्तन से भाषा सरल एवं रमणीय बन गई है, यथा–

विडालः पिबति क्षीरम्
बालकौ पिबतौ नारिकेलरसम्।
धेनवः पिबन्ति जलम्।।[2]

कवि बालकों को उपदेश प्रदान करने के लिए उपनिषदात्मक शैली का प्रयोग करता है। यथा– तैतिरियोपनिषद के आदर्श एवं उपदेशात्मक वाक्यों का प्रयोग द्रष्टव्य है–

सत्यं वद प्राणपणेन पुत्र! धर्मं चर त्वं भव मातृदेवः।
सम्मानयेर्मान्यजनानजस्रम्, मुदा च सन्मार्गमनुप्रयाहि।।
हे प्रजामयि! हे पुण्यमयि! शक्तिमत्यसि भक्तिं मयि धेहि।
कीर्तिमत्यसि, कीर्तिं मयि धेहि, बुद्धिमत्यसि बुद्धिं मयि धेहि।।[3]

यहाँ कवि प्रजामयी, पुण्यमयी परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करता है कि बच्चों को कीर्ति प्रदान करे, भक्ति, शक्ति एवं बुद्धि प्रदान करे। बालक सत्य बोले एवं धर्माचरण करे।

---

1. रङ्गरुचिरम्, पृ.–34
2. रङ्गरुचिरम् (बालकाव्य), पृ.–52
3. रङ्गरुचिरम् (बालकाव्य), पृ.–96

इसी प्रकार बालकों के अन्तर्मन को विस्तारित करने वाले, पंचवर्ण (न,म,ञ,ण,ङ) से युक्त एवं सरल–सरस, मधुर पदावली युक्त माधुर्य गुण की छठा सम्पूर्ण बालगीतों में प्रत्यक्ष होती है–

"वायुर्वहते मन्दं मन्दं
तटिनि–तटे निकुंजे।
तरुणी भरते जलं सलीलं
कल–कल–नादैः कुम्भे।।"

कवि सरल छन्दोबद्ध कवित्व भाव का त्याग किए बिना ही अतीत की परम्पराओं के साथ बालकों को आगे बढ़ने की प्रेरणा देता है–

पृष्ठतः प्रेरयत्यस्मान् महातीतपरम्परा,
वक्तीवादर्शदिग्दर्शात् कान्तार इति मा स्खल।।[1]

इसी तरह अनुप्रास अलङ्कार के भेद 'अन्त्यानुप्रास' का सुन्दर उदाहरण उल्लेखित है–

पठ रे वत्स! पठ शास्त्रम्।
पठ रे वत्स! पठ शास्त्रम्।।
यस्मिन् राष्ट्रे त्वदीय–जननम्
तस्यायतनं सुविस्तृतम्।।[2]

यहाँ 'पठ रे वत्सः' सम्पूर्ण पद की वारम्वार आवृति हुई है, अतः अनुप्रास अलङ्कार है।

बालक स्वभाव से ही आनन्दप्रिय होते है। वह अपने वातावरण में परिलक्षित वस्तुओं को देखकर आनन्द से भावविभोर हो जाते है। जब बालक हाथी को देखता है तो वह अपने मित्रों को बुलाते हुए, हाथी का सौन्दर्य–बोध का वर्णन करता है–

टङ्क टङ्क टङ्क टङ्क घण्टी क्वणति
शनैः सनाथो गजः प्रयाति।
चीत्कुर्वन् चपला बालाः
वदन्ति भो भो, पश्यत पश्यत
गज आयाति, गज आयाति।।

बालकों में सौन्दर्यबोध विकसित करने, काव्य के प्रति रुचि जाग्रत करने, कविता को मनोऽनुकूल बनाने, रोचकता बढ़ाने, बालकों में सामाजिक–सांस्कृतिक–पर्यावरणीय भावों को जाग्रत करने हेतु कवि द्वारा प्रस्तुत काव्य मे सम्पूर्ण बालगीतों को आकर्षक चित्रों से सजाया है।

---

1. रङ्गरुचिरम् (बालकाव्य), पृ.–69
2. रङ्गरुचिरम् (बालकाव्य), पृ.–69

इसके कारण बालक काव्य के चित्रात्मक सौन्दर्य से आकर्षित होकर काव्य को पढ़ने हेतु लालायित हो जाते हैं।

(II) ललितलवङ्गम्

संस्कृत बाल–साहित्य के निर्माण में आचार्य दिगम्बर महापात्र का नाम आदर सहित लिया जाता है। श्री महापात्र जी द्वारा 'रङ्गरुचिरम्' काव्य निर्माण के अनन्तर बालमनोहर 'ललितलवङ्गम्' (2001 ई.) बालकाव्य का प्रणयन किया। यह काव्य दो परतों में विभक्त है। प्रथम परत में 20 एवं द्वितीय परत में 21 अर्थात् कुल 41 कविताओं का सङ्कलन है।

विविध भावसघन, सरल गीतिच्छन्दो के साथ ही विविध शब्दालंकारों का प्रयोग, बालमनोऽनुकूल भाषा इस कविता संग्रह की प्रमुख विशेषतायं है। यहाँ ईश्वरभक्ति, राष्ट्रीय भावना, सदाचार, संस्कृत–संस्कृति और प्रकृति वर्णन प्रमुख काव्य विषय है।

अन्त्यानुप्रास का सुन्दर उदाहरण द्रष्टव्य है–

उपरि व्याप्तं नीलं गगनम्,
अधस्तृणानां तल्पम्।
मध्ये स्वभावमधुरं रम्यम्,
शिशोः सुहास्यं स्वल्पम्।।[1]

इसी प्रकार बालकों द्वारा उच्चारित मङ्गलकामना वैदिकी प्रार्थना युक्त शान्तिपाठ के पर्याय के रूप में प्रयुक्त हुई है, यथा–

"सकला भुवि मे सुहृदो भवन्तु
नगरे नगरे मित्रता मिलतु,
सकले जलदः सलिलं वर्षतु
सदा धर्मधियो नमेन शासतु
तपेऽपसरतु प्रकाश उदेतु
मम सर्वदिनं सुदिनं भवतु।।"[2]

इसी तरह शब्दानुकरण का सुन्दर उदाहरण उल्लेखित है–

"मन्दं मन्दं वर्षति जलदः
कल–कल–नादैः वहन्ति नद्यः।

1. ललितलवङ्गम् (बालकाव्य), पृ.–1
2. ललितलवङ्गम् (बालकाव्य), पृ.–3

टर–टर शब्दं कुरुते भेकः
अथवा केन क्रियते शोकः।।"

इसी प्रकार श्वान (कुत्ते), छाग, बिल्ली की वाणी से भी बालकों को अवगत करवाया है–

शुनः शावकः बुक्कति भो भोः में में कुरुते छागः।

ओतुः करोति म्याऊँ म्याऊँ शब्दो भिन्नः भिन्नः

हे भगवन् त्वं धन्यः।।[1]

ईश्वर की चमत्कारिता की चाटुकारिता दर्शनीय है–

नीकाकातोऽममानाऽति बलाहकानां पंक्तिः।
स्वहस्तरचना किमुत स्वान्तं विश्वविधातुश्चमत्करोति।।[2]

अतः 'शरदिः' ऋतुसम्पदः, प्रातः, प्रकृतिरचना, निसर्गसर्गः, भूरिशीतं वर्तते, पठ रे वत्स, प्रभृति कविताओं में नाम के अनुरूप ही पर्यावरणीय तत्त्वों का वर्णन प्रत्यक्ष होता है। इसी प्रकार 'विश्वनियन्ता', 'हे भगवन् त्वं धन्यः', 'तव महिमा', 'तमहं वन्दे', 'अस्तं प्रगते', जैसी कविताएँ बालकों में सदाचार, ईमानदारी, पवित्रता एवं ईश्वर भाव का समावेश करती है। 'विकृतदूरदर्शनम्', 'गोमाता', 'गन्त्री' प्रभृति कविताएँ देश की सामाजिक एवं सांस्कृतिक दयनियता को प्रकट करती है।

कौमारम् (शिशुकाव्य)

यह सत्य है कि आधुनिक संस्कृत साहित्य की विविध विधाओं में विपुल साहित्य का सर्जन किया जा रहा है किंतु विद्वत्त सभा में प्रो. अभिराज राजेन्द्र मिश्र का नाम सम्मान से लिया जाता है। सरल–सरस, ललित मधुर वाणी में गुम्फित महाकवि की वाणी स्वयं ही कविता का भाव ग्रहण कर लेती है। महाकाव्य–खण्डकाव्य (गीत काव्य)–मुक्तक–स्तोत्र–कथा इत्यादि सभी विधाओं में महाकवि राजेन्द्र मिश्र द्वारा साहित्य का सन्धान किया गया है। यति–गति–लय–ताल से समन्वित गीतकाव्य लोक–सचेतन संस्कृतज्ञों के मन को आह्लादित करने में अद्भूत क्षमता से युक्त है।

देववाणी संस्कृत काव्यवाङ्मय के शिशुकाव्य विधा रूपी शून्य को भरने का प्रयास सर्वप्रथम प्रो. अभिराजराजेन्द्र मिश्र ने 'कौमारम्' काव्यसंग्रह में किया है। प्रस्तुत काव्य में कवि

1. ललितलवङ्गम् (बालकाव्य), पृ.–16
2. ललितलवङ्गम् (बालकाव्य), पृ.–85

द्वारा स्वतंत्र रूप से शिशुकविताओं का सङ्कलन किया है। कवि का कथन है– कि यह कविताएँ बालकों के विकासोन्मुख जीवनक्रम में उत्तरोत्तर विकास की सूचक है।[1]

चित्रों के साथ प्रकाशित यह शिशुकाव्य निश्चय ही बालमन को आकृष्ट करेगा, ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है। इस काव्यसंग्रह की अधिकांश कविताएँ बन्धुरत्न आर्य नरेन्द्र द्वारा लोकसंस्कृतम् (संस्कृत त्रैमासिक, अरविन्दाश्रम, पुण्डुचेरी) में प्रकाशित हो चूकी है।

काव्य पक्ष–'कौमारम्' काव्यसंग्रह मूलतः कुमारावस्थापन्न बालक–बालिकाओं को वातावरणजनित विषयों से अवगत करवाने वाला काव्य है। व्याकरणात्मक दृष्टि से 'कौमारम्' शब्द 'कुमार' शब्द में 'अण्' प्रत्यय करने पर निष्पन्न होता है। जिसका अर्थ है– तरुण, बचपन, तारुण्य, किशोरावस्था अर्थात् पाँच वर्ष से षोडश वर्ष तक की अवस्था वाले बालक–बालिकाएं।[2] 'श्रीमद्भागवतगीता'[3] में 'कौमारम्' शब्द 'बाल्यावस्था' के लिए प्रयुक्त हुआ है। 'कौमारम्' काव्य के प्राक्कथन भाग में प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी का कथन है कि– "हृदयनिरवद्यगीतोपेतं सुकुमारमतीनां कुमाराणां कृते विरचितं काव्यं नाम कौमारम् अस्ति।" अर्थात् सुकुमारमती सम्पन्न बालकों के लिए विरचित काव्य 'कौमारम्' काव्य है।

कवि द्वारा महाकवि कालिदास प्रणीत 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' नाटक के बालक सर्वदमन के 'आलक्ष्यदन्तमुकुलाननिमित्तहासैः' को ही सम्पूर्ण शिशुकाव्य का आधारभूत तत्त्व स्वीकार किया गया है। 'कौमारम्' काव्य में कवि द्वारा बालक के विकासक्रम को ध्यान में रखते हुए, उसके आस–पास के वातावरण में परिलक्षित दृश्यों को ही चित्रात्मक रूप से कविताओं का विषय बनाया है। कवि बालकों के उत्तरोत्तर विकास को ध्यान में रखते हुए पारिवारिक, सामाजिक, आध्यात्मिक एवं राष्ट्रीय परिवेश से बालकों को अवगत करवाते है। 'कौमारम्' काव्य के विषय है– ईश्वरवन्दना, परिवार, माता–पिता, विद्यालय, विद्यालयी शिक्षा व्यवस्था, परिवेश (गाँव, नदी, बाग, रेलगाड़ी, वानर–नृत्य), अनुभव (तितली, मधुमक्खी, चींटी, आकांक्षा) विभिन्न त्योहार एवं राष्ट्रीयता का बोध।

प्रो. मिश्र द्वारा प्रणीत 'कौमारम्' काव्य में कविताओं के पात्र भिन्न–भिन्न प्रकार है। यहाँ वृक्ष–नदी, पशु–पक्षी, पर्वत–झरने, वायु–अग्नि, जड़–चेतन प्रभृति पात्रों के माध्यम से बालकों को कल्पनालोक, कर्त्तव्य–अकर्त्तव्य, नीतिबोध, सत्य, शुभाशुभ कर्मों का फल तथा लोक–व्यवहार की शिक्षा दी गई है। इन बालगीतों में चित्रित सभी पात्र अपने–अपने विशेष गुणों से बालकों को अच्छे गुणों को आत्मसात करने एवं दुर्गुणों को त्यागने का नैतिक उपदेश प्रदान करते हैं। यथा

---

1. कौमारम्, प्राक्कथन भाग में आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी के मुखारविन्द से उद्धृत
2. संस्कृत–हिन्दी शब्दकोश, वामन शिवराम आप्टे, पृ.–350
3. श्रीमद्भागवत गीता, 2/13

'सृष्टिपरिचय'[1] शिशुगीत के माध्यम से बालकों को प्रकृति में निवासरत लिक्षा, मधुमक्खी जैसे सूक्ष्म जीवों से लेकर ह्वेल, अश्व, सिंह जैसे स्थूल जीवों से भी अवगत करवाया है–

लिक्षादृष्ट्या घुणो विशालः
घुणदृष्ट्या मधुमक्षी।
क्रमेलकाद् गुरुको मातङ्ग
स्ततोऽपि मत्स्यो ह्वेलः।।

इसी तरह बालकों में जिज्ञासा का भाव जाग्रत करने हेतु 'कोऽय पक्षी?' कविता की रचना की गई है। यह कविता प्रहेलिका शैली में निबद्ध है। जहाँ कवि वाणीगत विशेषताओं के माध्यम से विभिन्न पशु–पक्षियों से परिचय करवाता है। यथा कोकिल (कोयल) पक्षी का परिचय उल्लेखित है–

कोऽयं पक्षी।
अयं कोकिलः
कूजति कथमिव?
कुहू–कुहू।।

इसी प्रकार 'पिहू–पिहू' ध्वनि के माध्यम से 'चातक पक्षी', 'में–में–में' ध्वनि से 'छाग' (बकरी) 'भें–भें–भें' ध्वनि से भेड़ 'भों–भों–भों' ध्वनि से कुक्कुर (कुत्ता) 'खों–खों–खों' ध्वनि से 'वानर' 'चै–चै–चै' ध्वनि से चटका, एवं 'नें–नें–नें' वाणी से लघु–बालक का परिचय करवाया गया है।

कवि का काव्य प्रयोजन न केवल बालकों का मनोरंजन प्रदान करना है अपितु वैज्ञानिक पात्रों के माध्यम से बालकों को विज्ञान का भी ज्ञान प्रदान करना है। यथा 'हृदयं विधेहि' कविता के माध्यम से पंचमहाभूतों के संघटन का ज्ञान करवाया गया है–

हृदयं विधेहि वितताऽऽकाशम्
उदयेद्यथा कामनाचन्द्रः
हृदयं विधेहि ककुबवकाशं
प्रवहेद्यथाऽनिलो मृदुमन्दः।।[2]

इसी प्रकार तितिलिका, मधुमक्षी, पिपीलिका एवं मर्कट जैसे अमानवीय पात्रों से भी बालकों को अवगत करवाया गया है। 'कृषकपरिचयः' बालगीत के माध्यम से माणवकों (बालकों)

---

1. कौमारम्द्व सृष्टिपरिचयम्, पृ.–5–8
2. कौमारम्, हृदयं विधेहि, पृ.–37

को किसान के कार्य एवं उसकी मेहनत से अवगत करवाते हुए भारत को कृषि प्रधान देश बताया है–

कृषिरेका राष्ट्रोन्नतिमूलं
हरते सैव सर्वविधं शूलं
सूते सततमभीप्सितदोहम्
माणवकाः भारतकृषकोऽयम्।।[1]

अतः कौमारम् (शिशुकाव्य) में त्रिवेणी कवि द्वारा मानवीय पात्र, मानवेत्तर पशु–पक्षी पात्र एवं मानव–मानवेत्तर युक्त पात्रों का संयुक्त प्रयोग भी दिखाई देता है। यह शिशुगीत बालकों के अन्तःकरण को विशुद्ध करते हुए उनमें विनम्रता, शिष्टाचार, नैतिकता, समस्त सांसारिक सम्बन्ध, सामाजिक कर्त्तव्य बोध का स×चार करते हैं।

संस्कृत बालगीत प्रायः अभिधा प्रधान होते है। यतोहि व्यंजना व्यापार–बोध बालकों के लिए दुर्गम होता है। त्रिवेणी कवि द्वारा 'कौमारम्' बालकाव्य में सरल–सरस संवादों के माध्यम से विषय को उपस्थापित किया गया है। अधिकांशतः गीत मुक्तक शैली में निबद्ध है जिनमें प्रत्येक गीत स्वतंत्र रूप में अपने–अपने विषय को प्रकट करता है–

अयि मधुमक्षि! कलावति! चतुरे!
कृतः शिक्षिता त्वया कलेयम्!!
कथं रसं तिक्ताम्लकषायं
गुणवति! कुरुषे त्वं मधुपेयम्!![2]

यहाँ मधुमक्खी के मधुर (रस) के निर्माण के स्वाभाविक कार्य का वर्णन किया गया है।

प्रो. मिश्र के संवाद सामान्य, वाग्व्यवहार युक्त प्रकृतिवाद के परिचायक है। संवादों में कृत्रिमता का लेशमात्र भी समन्वय नहीं है। अतः वाक्यविन्यास व्याकरण रहित **भाषा–शैली** एवं लयात्मक प्रधान है–

विलसति विपिने ऋतुराजोऽयम्।
सुखयति विहगसमाजोऽयम्।।
शीतलमन्दसुगन्धसमीरः।
रसयति मदयति सुखयति धीरः।
भवतरति वने ऋतुराजोऽयम्
सुखमेति विहगसमाजोऽयम्।।[3]

---

1. कौमारम्, पृ.–66
2. कौमारम् (मधुमक्षिकापरिचयः), पृ.–41
3. कौमारम्, ऋतुराजोऽयम्, पृ.–54

'कौमारम्' बालकाव्य की भाषा अत्यन्त सरल है। प्रायः सर्वत्र असमस्तपद (समास रहित) शैली परिलक्षित होती है। पदयोजना भी बालकों के अनुकूल ही प्रयुक्त की गई है, जिनका उच्चारण करने में बालक पूर्णतया सक्षम है। सरल पदावली युक्त उदाहरण 'कौमारम्' काव्य के 'कोऽयं पक्षी?' शिशुगीत में प्राप्त होती है–

मातृभर्त्सितः
लघुबालोऽयम्
कथं प्रकुप्यति?
'नें–नें–नें'।।[1]

त्रिवेणी कवि द्वारा प्रस्तुत काव्य में प्रान्तीय भाषाओं के शब्दों का भी प्रयोग किया है– खेला (खेल), अल्लाताला (इस्लाम में अभिवादन शब्द), अम्ब (माँ), नट–नटी, डिमिक्डिमिक् (वादन), टिट्टिट्टि (टिट्टि की ध्वनि), रट् धातु (स्मरण करने के अर्थ में), गोपवधूटी हुक्–हुक् (रेल ध्वनि), इत्यादि शब्दों की छठा बिखरी हुई है जो बालकों के मन को आह्लादित करती है।

कवि स्वाभाविक गुणों से युक्त एवं बाल–अवबोधार्थ भाषा का प्रयोग करता है–

"कः सूचयति कपोतं कमलं, खः कथयति खद्योतम्।
गः सूचयति गवाक्षं गरुडं घः घण्टां घनपोतम्।।"[2]

रस–स्वरूप का उल्लेख करते हुए आचार्य 'मम्मट' तथा 'अभिनवगुप्त' आदि विद्वानों का मत है कि, मनुष्य अपने जीवन में बहुत से भावों का अनुभव करता है। वह कभी किसी से प्रेम करता है, तो कभी किसी पर घृणा, किसी से भय खाता है, तो कभी काम–भाव में उत्साह दिखलाता है। कभी किसी पर हँसता है, तो कभी किसी बात पर आश्चर्य–विस्मय प्रकट करता है। इसी तरह कभी वह शान्ति का अनुभव भी करता है। यद्यपि यह सब अनुभव तो नष्ट हो जाते है, परंतु मनुष्य के हृदय में उनका संस्कार सदा के लिए अमिट हो जाता है। ये ही संस्कार–भाव मानव हृदयों में स्थित रति, शोक, क्रोध, उत्साह, जुगुप्सा, भीति, हास, विस्मय और शम इत्यादि नामों वाले स्थायी भाव होते हैं। जब ये स्थायी भाव 'सत्यं विज्ञानमानन्द ब्रह्म' इत्यादि वेदवाक्य के अनुसार सत्य तथा विज्ञानमय रूप होने से स्वतः प्रकाशमान आत्मानन्द के साथ अनुभूत होते है, तब वे ही स्थायीभाव 'रस संज्ञा' से अभिहीत होते है।

काव्यों में कवि का मुख्य प्रयोजन रसानुभूति के साथ–साथ मनोरंजन, उपदेश एवं ज्ञान प्रदान करना भी होता है। इसलिए कवि इन नवरसों में से कुछेक रसों का प्रयोग करता हुआ नजर आता है। 'कौमारम्' शिशुकाव्य की प्रथम कविता 'यशस्तस्य नित्यं गायामः' में भक्ति रस की प्रधानता है। जिसका स्थायीभाव 'भाव' है। सम्पूर्ण भौतिक पदार्थों को त्याग करके मात्र

---

1. कौमारम्, पृ.–31
2. कौमारम्, पृ.–27

'ईश्वर के प्रति दृढ़ प्रेम–भाव प्रकट करना ही 'भाव' कहलाता है। यही स्थायी भाव पुष्ट होकर भक्ति रस में परिणित हो जाता है।

यथा– **"विविधाख्याऽऽकृतिवर्णरसानि**
येन तरुषु विहितानि फलानि
तं रसिकेशं सदा नमामः।
यशस्तस्य नित्यं गायामः।।"[1]

यहाँ बालक–बालिकाएं ईश्वर की भक्ति में इतने लीन हो जाते है कि ईश्वर को परमेश्वर, जगदीश, सर्वेश, करुणेश, जीवेश, रसिकेश, भुवनेश एवं विश्वेश इत्यादि पर्यायों से सम्बोधित करते हुए दिखाई देते है।

इसी तरह साहित्यदर्पणकार 'पं. विश्वनाथ' द्वारा दसवें रस के रूप में उद्भावित 'वात्सल्य' रस का 'स्नेह' स्थायी भाव भी प्रस्तुत काव्य में भाषित किया गया है। 'मम जननी' शिशुगीत में माँ का अपनी सन्तानों के प्रति स्नेह एवं प्रेम दिखाई देता है–

"सैव जन्मदा, सैव शर्मदा
सैव विपद्भयहरणी।
मातुः क्रोडे निखिलमङ्गलं निखिला मेऽस्ति सुरक्षा
शतं समा जीवतु मे जननी विभो! ममेयं भिक्षा।।"[2]

पुत्र वात्सल्य भाव से अपनी माँ के मुख को निहार रहा है। वस्तुतः मां ही पुत्र को जन्म देने वाली है, वहीं पुत्र के सम्पूर्ण दुःखों को हर के उसकों सुख प्रदान करती है।

यह मनोवैज्ञानिक सत्य है कि जिज्ञासा का भाव बालकों में जन्म से ही होता है। वातावरण जनित पदार्थों से जिज्ञासा बढ़ने लगती है। बालक नितनूतन परिलक्षित वस्तुओं को जानने की इच्छा प्रकट करता है। "कुतो न्वागताः पयोदाः?" बालकविता में अद्भूत रस की छठा से विभोर जिज्ञासा तत्त्व उल्लेखित है–

अम्ब! कुतोन्वागताः पयोदाः।
अम्ब! कुतोस्त्या इमे पयोदाः।।
केन निर्मिताः केन वर्धिताः
केन विविधवर्णेश्च रंजिताः।
केन नभसि संचिताः पयोदाः।
अम्ब! कुतस्त्या इमे पयोदाः।।[3]

---

1. कौमारम्, पृ.–3
2. कौमारम्, पृ.–14
3. कौमारम्, पृ.–20

प्रस्तुत गीत में बालक आकाश में उमड़ते मेघ को देखकर अपनी माँ से पूछता है कि, हे माँ! ये मेघ कहाँ से आता है? यह किसके द्वारा निर्मित किया गया है? इसको किसके द्वारा वर्ण (रंग) प्रदान किए गए है? अतः बालक के हृदय में निरन्तर जिज्ञासा बनी रहती है। वह विस्मय प्रकट करता है। अतः अद्भूत रस है।

इसी प्रकार **'अरिमर्दना'** कविता में 'ओज भाव' से ओतप्रोत 'वीर रस' की छठा बिखरती है–

नन्वभङ्गगायनोन्मदा ज्ञानेश्वरजना वयम्।
संस्कृतिपङ्कैरुपलिप्ता अपि नैरंजना वयम्।।
जनन्याज्ञया मया त्रिलोकी त्रिभिः पदैर्णद्धा।
गुरोराज्ञया मयैव सिंही चन्द्रखा दुग्धा।।[1]

त्रिवेणी कवि प्रो. राजेन्द्र मिश्र ने 'कौमारम्' काव्य में आचार्य मम्मट प्रतिपादित काव्यात्मा के रसोत्कर्ष माधुर्यादि धर्म से युक्त तीन गुणों–माधुर्य, ओज व प्रसाद की सत्ता स्वीकार की है। अधिकांश बालगीतों में माधुर्य गुण का प्रयोग किया गया है, किंतु कहीं–कहीं ओज गुण का प्रयोग भी दिखाई देता है। चित्त को द्रवीभूत करने वाले आह्लाद स्वरूप युक्त माधुर्य गुण का उदाहरण द्रष्टव्य है–

"निनदति पणवः क्वणति च कांस्यं
झङ्कुरते झर्झरिका रम्या
फाल्गुनिकं गीयते छविल्लैः
व्रजमण्डलगीतिस्सा रसिया
सर्वत्रापि मुकुन्दराधिकाः
समागता भव्याच होलिका।"[2]

चित्त के विस्तारभूत एवं वीर रस के समन्वित ओज गुण की छठा भी प्रस्तुत काव्य में दिखाई देती है। 'अरिमर्दना वयम्' बालकविता में खरदूषण राक्षसों का संहारकर्ता भगवान् श्रीराम के शौर्य एवं पराक्रम वर्णन में ओज गुण की पराकाष्ठा परिलक्षित होती है–

वात्यागतिमपि परावर्तितुं ननु ममास्ति शक्तिः।
प्रत्यक्षं प्रकटीकर्तुं चन्द्रिकां, परा भक्तिः।।
आर्षमहिम्नां समुच्चयाश्चामीकरकणा वयम्।
खरदूषणजीवातुहराः श्रितदण्डकवना वयम्।।[3]

---

1. कौमारम्, पृ.–93
2. कौमारम्, पृ.–65
3. कौमारम्, पृ.–92–93

इसी प्रकार सुनाई देने मात्र से ही मधुर लगने वाले प्रसाद गुण की सत्ता प्रस्तुत काव्यों में अनेक बालगीतों में प्रत्यक्ष होती है। 'मम जननी' बालगीत में माँ–पुत्र के मातृत्व प्रेम को उल्लेखित करते हुए माता के माहात्म्य को रेखांकित किया गया है–

"नहि शक्नोमि जीवितुं क्षणमपि जननीं विनाऽत्र लोके
दीपशिखाऽस्ते सैव तमसि मे, परमशान्त्वना शोके।।
पिता प्रियो मे, किन्तु ततोऽपि
प्रियाऽधिका मे जननी
सैव जन्मदा, सैव शर्मदा
सैव विपद्भयहरणी।।"[1]

'बन्धक' अथवा 'मर्यादा' अभिप्राय वाले छन्दों की स्थिति भी प्रस्तुत काव्य में प्रत्यक्ष होती है। किंतु जहाँ पर मर्यादा एवं बन्धन का अभाव होते हुए भी काव्य की संज्ञा से विभूषित हो, वह छन्दमुक्त काव्य 'मुक्तक काव्य' कहलाता है। मुक्तक काव्य छन्द की गणात्मक व्यवस्था से मुक्त होता है। प्रो. राजेन्द्र मिश्र ने 'मुक्तक छन्दयुक्त काव्य' की परिभाषा दी है–

"यद् वर्णमात्रागणक्रमैरप्रणीतमेवकाव्यमुपचाप्तश्छन्दोमुक्तमुच्यते।"[2]

यथा– **"समागतो जलदागममासः।**
अमितः परितो हर्षोल्लासः।।
पथि–पथि विलसति गोपवधूटी
अरुणतनुः सुखवैभवदूती
कृष्णकाणामधेरऽमितहासः।
समागतो जलदागममासः।।"[3]

'कौमारम्' काव्य में शब्द एवं अर्थ की शोभा को बढ़ाने वाले अलङ्कार की बालमनोऽनुकूल छठा सुन्दर ढंग से सुशोभित होती है। कवि नादानुकृति युक्त अनुप्रास अलंकार का बहुतया प्रयोग करता है–

"इयमस्ति ललामा पुष्करिणी।
जनमनोऽभिरामा पुष्करिणी।।
पुष्करिणीयं हिमशुभ्रजला
विस्तृतपुलिना विकसितकमला

---

1. कौमारम्, पृ.–15
2. अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, प्रकीर्णतत्त्वोन्मेष, पृ.–302
3. कौमारम्, पृ.–57

परिमलाऽभिरामा पुष्करिणी
जनमनोऽभिरामा पुष्करिणी।।"[1]

प्रस्तुत पद्य में 'पुष्करिणी' शब्द की बार–बार आवृत्ति होने से अनुप्रास (नादानुवृत्ति) अलङ्कार है। इसी तरह जीवनगत सौन्दर्य का वर्णन होने से सभी बालगीतों में छाया–अलङ्कार प्रत्यक्ष होता है। यहाँ उक्ति–वैचित्र्य परिलक्षित होता है। यथा 'लौहपथगन्त्री गच्छतिः' नामक रेलयान बालगीत में भौतिक जगत् का वास्तविक वर्णन किया गया है परन्तु कविकल्पना के साम्राज्य एवं अन्यथाकरण रीति से मनोहारी बना दिया गया है–

"छुक्–छुक् खट्–खट् सररकरणी,
शतगवाक्षनयना सुखसरणी।
रोगशोकभयहर्त्री गच्छति
पश्य लौहपथगन्त्री गच्छति।।"[2]

इसी तरह प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी द्वारा सन्धानीत 'जाति–अलङ्कार' (स्वाभावोक्ति) की छठा 'कौमारम्' काव्य में दिखाई देती है। यथा–

"अश्वारुढः कश्चिद्राजा गच्छन्नासीद् महावने
चटकाया अण्डकयुगलं सः समपश्यन्नीडायतने।।
कौतूहलाऽक्रान्तहृदयोऽसौ चोरितवानण्डकयुगलम्
आखेटार्थी पुनः प्रतस्थे चटकाऽपश्यन्नृपच्छलम्।।"[3]

यहाँ आखेट के लिए महावन में गये किसी राजा द्वारा पक्षी के दो अण्डों की चोरी का प्रतिबिम्बित किया गया है, अतः जाति अलङ्कार है।

प्रो. राजेन्द्र मिश्र बालकों को आधुनिकता या आधुनिक बोध के नाम पर केवल कटु यथार्थ से ही परिचय करवाने के पक्षधर नहीं है। वह बालक को बौद्धिक अवकाश देने के भी पक्षधर है। जीवन के वास्तविक आलोक से जोड़ने में भी उनकी स्वीकृति है। वह प्रस्तुत काव्य में बालकों को सृष्टि परिचय, फूलों, पशु–पक्षियों, भारत–भूमि का भाव–विभोर परिचय करवाया है।

इस पुस्तक में ऐसे अनेक जीव तथा पशु–पक्षियों का कवि द्वारा स्पर्श किया गया है जिन पर प्रायश पूर्व में किसी ने नहीं लिखा यथा तितिलिका (तितली), मधुमक्षिका (मधुमक्खी), पिपीलिका (चिट्टी), मार्कटिक (बन्दर), कोकिल (कोयल), चातक, कुक्कुर (कुत्ता) आदि। यथा वर्णित है–

1. कौमारम्, पृ.–50
2. कौमारम्, पृ.–79
3. कौमारम्, पृ.–81

अयि मधुमक्षि! कलावति! चतुरे!
कुतः शिक्षिता त्वया कलेयम्!!
कथं रसं तिक्ताम्लकषायं
गुणवति! कुरुषे त्वं मधुपेयम्!![1]

वैज्ञानिक नजरिए से युक्त इन विषयों में भी नवीनता एवं मौलिकता का समावेश करते हुए बच्चों को मनोरंजन, शिक्षा एवं उपदेश प्रदान किया गया है। प्रो. मिश्र ने चाँद पर भी आधुनिक विषयों से युक्त बाल–कविता लिखी है तथा 'हृदय' पर भी बालकविता के रूप में लेखनी चलाई है–

हृदयं विधेहि विततांऽऽकाशम्
उदयेद्यथा कामनाचन्द्रः।
हृदयं विधेहि ककुबवकाशं
प्रवहेद्यथाऽनिलो मृदुमन्दः।।[2]

बालमन को प्रभावित एवं आकर्षित करने में समर्थ रोचकता, कुतुहलता, जिज्ञासा इत्यादि सभी तत्त्वों का प्रयोग इन बाल–कविताओं में प्रत्यक्ष होता है। बाल कविताएँ बालकों के मन में रोचकता एवं कल्पनाशीलता का संचार करती है। 'मार्कटिक' वानरनृत्य द्वारा बालकों का मनोरंजन करता है यथा–

डिमिक्‌डिमक वादयन् डमरुकं
मार्कटिकोऽयं भ्रमति ग्रामे।।
एहि सुधाकर! मोहन! सोहन!
कमले! विमले! रमे! बलाके!
प्रदर्शयिष्यति वानरनृत्यं
सर्वसमक्षं बहिरारामे।।[3]

भाव पक्ष–भावों की सूक्ष्माभिव्यक्ति मुक्तक तथा गीतिकाव्य का प्रमुख अङ्ग है। 'कौमारम्' काव्य में कहीं–कहीं ईश्वरवन्दना एवं चराचर विषयाधारित गीतों के माध्यम से भावों की अभिव्यंजना प्रत्यक्ष होती है। 'यशस्तस्य नित्यं गायामः' बालगीत में कवि परमेश्वर की वन्दना करता हुआ बालकों में भक्ति भाव का संचार करता है–

"अपसारय लोचनान्धकारम्
ज्ञानं देहि हर भ्रमभारम्

त्वां विश्वेशं सदाः नमामः

---
1. कौमारम्, पृ.–41
2. कौमारम्, पृ.–37
3. कौमारम्, पृ.–45

यशस्ते नु नित्यं नमामः।।"[1]

प्रो. मिश्र ने बालकों के सर्वाङ्गीण विकास को ध्यान में रखते हुए सभी पक्षों (सामाजिक, सांस्कृतिक, नैतिक, बाल–मनोवैज्ञानिक, पर्यावरणीय, आर्थिक, राजनीतिक, मनोरंजन, उपदेशात्मक, कल्पना तथा वैज्ञानिकता) पर आधारित कविताऐं कौमारम् काव्य में समावेशित की है। सामाजिक पक्ष को ध्यान में रखते हुए शिक्षा के प्रथम चरण अनौपचारिक केन्द्र के रूप में परिवार में निवासरत माता–पिता, चाचा–चाची, बुआ, मौसी आदि पात्रों से बालकों को परिचय करवाया गया है–

"खेलाम्यहं पितामहवक्षसि
सततं पितामही क्रोडे।
बालविहगो यथा निर्भरं
स्वपिति दृढच्छन्ने नीडे।।"[2]

प्रो. मिश्र ने 'नैतिकता' तत्त्व को बालकाव्य का अभिन्न तत्त्व स्वीकार किया है। कवि बालगीतों के माध्यम से बालकों को ''सत्यं वद, धर्मं चर, अहिंसा परमो धर्मः'' आदि उपनिषद्परक नैतिक वाक्यों का प्रयोग करते हुए आधुनिक सन्दर्भों में बालकों को नैतिक शिक्षा प्रदान करता है। 'चौरो राजा' बालकविता में कवि बालकों को चौर्यकर्म को त्यागकर दानशीलता का नैतिक पाठ पढ़ाता है–

चौरो राजा चौरो राजा चोरितवान्मेऽण्डकद्वयम्।
अनुसृतवतीति संक्रन्दन्ती जातं येन नृपस्य भयम्।।
समुच्छलन्ती कूर्दन्ती चटकाऽपि गतवती नृत्यन्ती
दानी राजा दानी राजा गीताक्षरमिति गायन्ती।।[3]

इसी तरह बालकों में भारतीय संस्कृति के आधारभूत तत्त्वों–परोपकार, सदाचार, सत्य, सर्वधर्मसम्भाव एवं वसुधैवकुटुम्बकम् का समावेश करने हेतु अनेक बाल–कविताओं की रचना की गई है। **'नदीगीतम्'** बालगीत में बालकों को 'अनेकता में एकता' एवं राष्ट्रीय एकता का दर्शन करवाया गया है।**'अरिमर्दनावयम्'** कविता में पुरुषार्थ सम्पन्न भागीरथ ऋषि, राणा सांगा, राम–कृष्ण जैसे पात्रों की गौरवमय गाथा से भी बालकों को अवगत करवाया गया है। इसी तरह 'भारतसंस्कृतिकथा विजयते' कविता भारतभूमि में अवतरित राम–कृष्ण, बुद्ध–महात्मा गाँधी जैसे महापुरुषों के पवित्र कर्मों से परिचय करवाया गया है। **'तीर्थगीतम्'** कविता बालकों को भारतभूमि में स्थित पवित्र तीर्थों–बदरीनाथ, हरिद्वार, काशी, अयोध्या, मथुरा, पुरी, श्रीरङ्गपटनम्, तिरुपति,

---

1. कौमारम्, पृ.–4
2. कौमारम्, पृ.–12
3. कौमारम्, पृ.–83

नाथद्वारा, सोमनाथ, महाकाली, जैन–बोद्ध तीर्थ स्थलों की गौरवमयी परम्परा का भी सुन्दर परिचय दिया गया है। इसी तरह भारतीय संस्कृति में सर्वधर्मसम्भाव, भाईचारे की भावना को बढ़ाने वाले विभिन्न त्योहार–रक्षाबन्धन, वैशाखी, ईद, यीशुजन्म इत्यादि की पवित्रता का सन्देश भी प्रदान किया गया है।

इसी प्रकार बाल–मनोविज्ञान के भी प्रस्तुत काव्य में दर्शन होते हैं। कवि का मुख्य प्रयोजन अन्तः अनुशासनात्मक अध्ययन को बढ़ावा देना है। वस्तुतः मनोविज्ञान ने मनुष्य के सन्दर्भ में जिन मूलप्रवृत्तियों की सूचना दी है उनमें जिज्ञासा भी प्रमुख मूलप्रवृत्ति है। बच्चों में जिज्ञासा बाल्यकाल से ही निहित रहती है। प्रस्तुतः काव्य में **'मातुलचन्द्रः'** कविता में एक नन्हीं बालिका चन्दामामा के बारे में जानने की कुतुहलता प्रकट करती है–

"कुत आगच्छसि मातुल चन्द्र!
कुत्र गमिष्यसि मातुल चन्द्र!
अतिविस्तृतो नीलाकाशः
नैव दृश्यते क्वचिदवकाशः
कथं प्रयास्यसि मातुल चन्द्र!
कुत आगच्छसि मातुल चन्द्र!"[1]

इसी तरह हिन्दी वर्णमाला का परिचय अनुरणात्मक ध्वनियों के माध्यम से करवाया गया है–

कः सूचयति कपोतं कमलं
खः कथयति खद्योतम्।
गः सूचयति गवाक्षं गरुडं
घः घण्टां घनपोतम्।।[2]

प्रो. मिश्र द्वारा लयात्मक शैली में बालकों को पर्यावरणीय तत्त्वों (पशु–पक्षी, वनस्पति) से भी परिचय करवाया गया है। कवि द्वारा 'इदमुद्यानम्', 'वहति नदीः', 'समागतोजलदागममासः' प्रभृति कविताओं के माध्यम से पर्यावरण ज्ञान प्रदान करते हुए प्रकृतिपरक शिक्षा प्रदान की गई है। कवि का कथन है कि प्रकृति में विद्यमान प्रत्येक तत्त्व अपनी मर्यादा (सीमा) में रहकर सृष्टि का कल्याण करता है। वह परोपकार की भावना से युक्त है, यथा–

"संसारेऽस्मिन् सर्वेभ्यः किल यत्किञ्चिदपि ग्राह्यम

---

1. कौमारम्, पृ.–18
2. कौमारम्, पृ.–27

परिहरणीयं कुटिलकल्मषं मङ्गलमयञ्च धार्यम्।

स्वर्गादपि गरीयसी जननी जन्मधरेति समीक्षा,

तद्रक्षायै भवतु जीवनं सेयं निसर्गशिक्षा।।"[1]

इसी तरह राजनीतिक पक्ष को आत्मसात करने वाली 'भारतीय शासनं विजयताम्' बालकविता बालकों को भारतीय लोकतंत्र, राष्ट्रभक्ति, राष्ट्रगौरव जैसे भावपरक तत्त्वों से अवगत करवाती है–

"भारतीयशासनं विजयतां

सत्यमेव जयताम्।।

अविश्रमं खलु जनतातन्त्रम्

लक्ष्यीकृतजनसेवामन्त्रम्।।"

मनोरंजन पक्ष को ध्यान में रखते हुए कवि का कथन है कि बालकों का नैसर्गिक स्वभाव है कि वह अपने–आस–पास के वातावरण में प्रार्दुभूत हास्यपरक एवं कौतुहल परिस्थितियों को देखकर या महसूस करते हुए आनन्दित एवं प्रसन्नचित हो जाते है यथा–

"समागतो जलदागममासः

अभितः परितः हर्षोल्लासः।।

पथि–पथि विलसति गोपवधूटी

अरुणतनुः सुखवैभवदूती

कृषकाणामधरेऽमितहासः।

समागतो जलदागममासः।।"[2]

कवि यहाँ वर्षाकाल का अत्यन्त रोचक वर्णन करता है। इसी तरह होली के आगमन पर बालकों में अत्यन्त हर्ष एवं प्रसन्नता दिखाई देती है–

"रक्तपीतहरितैः पटवासैः

विविधवर्ण आकाशः।

नर्तन–वादक–गायकादिभि

र्नो कुत्राऽप्यवकाशः।।"[3]

इसी प्रकार नैतिक उपदेश प्रदान करने वाली 'भारतीयोऽहम्' कविता बालकों को स्वदेश प्रेम की भावना, एवं 'रविभास्वरं प्रभातम्' कविता कर्त्तव्यपरायण की भावना का संचार करती है। कल्पना का पुट भी प्रस्तुत काव्य में किंचित प्रत्यक्ष होता है। 'दृष्टः स्वप्नः एकः' बालकविता में

1. कौमारम्, (निसर्गाशिक्षा), पृ.–76–78
2. कौमारम्, पृ.–57
3. कौमारम्, पृ.–63

एक छः—सात वर्ष का बालक अपनी मां को कहता है कि हे मा! मैंने एक सपना देखा, जिसमें मेरे पंख लगे हुए है। मैं नील गगन में तीव्र वेग से पंछी के समान उड़ रहा हूँ। उड़ते—उड़ते मैं आकाश को स्पर्श कर रहा हूं। आकाश में तारे टिमटिमा रहे है। पृथ्वी पर मयूर नृत्य कर रहे है। **'विहगा एव भवेम'** बालकविता में बालक परमेश्वर की वन्दना करता हुआ अगले जन्म में पक्षी जन्म प्रदान करने की प्रार्थना करता है—

"अग्रे जन्मनि हे परमेश्वर! विहगा एव भवेय।
पक्षतिबलैर्यथा वृक्षाद् वृक्षं त्वरया गच्छेमः।।"[1]

यह यथार्थ सत्य है कि बाल—साहित्य के प्रणयन के लिए सम्पूर्ण ब्रह्मण्ड खुला है। प्रस्तुत काव्य में कवि की दृष्टि काव्यात्मकता के साथ—साथ वैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी ओतप्रोत है। यह सत्य है कि वैज्ञानिक दृष्टि काल्पनिकता को विश्वसनीयता का आधार प्रदान करने का कार्य करती है।

अतः प्रो. मिश्र द्वारा प्रणीत 'कौमारम्' काव्य भाव पक्ष एवं कलापक्ष की कसौटी पर खरा उतरता है तथा इसे बाल—साहित्य की खण्डकाव्य विधा के अन्तर्गत परिगणित किया जा सकता है।

शनैः शनैः (बालगीतावलिः)

यह सर्वविदित है कि बालक कविता प्रिय होते है। बालकों का स्वभाव है कि वह गाते है, नाचते हैं, आनन्द से झूम उठते है। संस्कृत का बालसाहित्य रूपी गगन विभिन्न गेयपरक गीतों से सरोबार है। संस्कृत बाल—साहित्य परिषद् के अध्यक्ष डॉ. सम्पदानन्द मिश्र द्वारा बालकों में संस्कृत भाषा के प्रति अनुराग जाग्रत करने के प्रयोजन से 'शनैः शनैः' (53 बालकविताएँ) पद्यात्मक पुस्तक की रचना की है। सम्पूर्ण पद्य गेय एवं लय से युक्त है। कवि द्वारा काव्यात्मक रूप से 'शनैः शनैः' पुस्तक का नामकरण किया है जो सौन्दर्यबोध से युक्त है—

"टन् टन् टन् टन् नदति घण्टिका।
हस्ती गच्छति शनैः शनैः।।"

प्रस्तुत कविता में हाथी, पवन, कच्छप, समयसूचिका (घड़ी), की स्वाभाविक गति को द्यौतित करने के लिए काव्यात्मक आधार पर 'शनैः शनैः' पदों का प्रयोग किया गया है। डॉ. नारायण दाश का कथन है कि "प्रकृति के सम्पूर्ण कार्य शनैः शनैः प्रकृति से ही सम्पन्न होते है, यथा शनैः शनैः बालसंस्कृतं विकसति। बालमुखे शनैः शनैः मधुरं संस्कृतं आयाति। समयः समयमापकः मिहिरः च शनैः शनैः अस्तं गच्छति।"[2]

---

1. कौमारम्, पृ.—96
2. शनैः शनैः (बालगीतावलिः), पृ.—21

कवि द्वारा वातावरण में सुलभ बालचित्ताकर्षक पशु–पक्षियों, कीटों आदि को काव्य के पात्रों के रूप में चित्रित किया गया है। यहाँ प्रस्तुत पात्रों के साथ बालक का भावात्मक सम्बन्ध चित्रित किया गया है। प्रत्येक कविता में एक से अधिक पात्र है। 'धावति.......नृत्यति' कविता में घोटक, मूषक, गर्दभ, कुक्कुर, एडका, भल्लुक, वानर इत्यादि जंतुओं की धावन क्रिया का मनोरम वर्णन है। इसी तरह 'मम प्रियः घोटकः' बाल–कविता में एक बालक अपने प्रिय घोड़े की शारीरिक एवं क्रियात्मक विशेषताओं का गेयपरक वर्णन करता है। इसी तरह काकः, कोकिलः, कपोतः, मयूरः, गजराजः, मार्जारी, मधुपः, शशकः, सर्पः इत्यादि पात्रों को कविता का विषय बनाकर लघु–लघु बालमुक्तकों की रचना की गई है। इसी तरह सैंकड़ों पेरो वाले 'शतपदी' के विषयाधारित रचना भी बाल–सौन्दर्यबोध से युक्त है–

"ऋजु गच्छति च वक्रं गच्छति
तरङ्गचालं कृत्वा गच्छति
पादशतैः शतपदी गच्छति।।"[1]

इसी प्रकार बालमर्कट (मकड़ी) का पद्यात्मक वर्णन है–

"मन्दं मन्दं चलति मर्कटः।
पश्यति वृक्षात् बालमर्कटः।।"[2]

प्रस्तुत कविता के संवाद एवं वाक्यविन्यास चित्ताकर्षक एवं कर्णप्रिय है। संवादों में अनुरणात्मकता विद्यमान है–

खप् खप् खप् वल्गाति।
गप् गप् गप् खादति।।
झिमि झिमि झिमि वर्षति।
त त थै थै नृत्यति।।[3]

भाषा की सरलता, गीतों की लय–ताल एवं संवादों में अल्प–समासता युक्त बालगीत स्मरण के लिए अत्यन्त समिचीन है–

"मधुरं मधुरं आम्रं मधुरम्।
मधुरं मधुरं सेवं मधुरम्।।
मधुरं मधुरं पनसं मधुरम्।
लघुनारङ्गम् अतीव मधुरम्।।"[4]

बालगीतों में कहीं–कहीं प्रश्नगत शैली, स्वाभावोक्ति अलंकृत शैली का भरपुर प्रयोग परिलक्षित होता है। प्रश्नगत शैली का सुन्दर उदाहरण उल्लेखित है–

---

1. शनैः शनैः (बालगीतावलि), पृ.–17
2. शनैः शनैः (बालगीतावलि), पृ.–37
3. शनैः शनैः (बालगीतावलि), पृ.–9
4. शनैः शनैः(बालगीतावलि), पृ.–15

निमील्य नेत्रे पिबामि दुग्धम्।
मूषकशत्रुः कथयत कोऽहम्।।
वृक्षात् वृक्षं कूर्दे सततम्।
धरामि पुच्छं कथयत कोऽहम्।।[1]

प्रस्तुत गीत में मार्जारी (बिल्ली), वानर (बन्दर) स्वयं अपनी शारीरिक विशेषताओं का वर्णन पाठक से प्रश्नात्मक शैली में करता है। इसी तरह **'कः किं करोति?'** कविता में प्रत्यक्षतः प्रश्नगत रूप में कवि स्वयं प्रश्न का उत्तर देता है, यथा–

"भक्तः सततं धरति सुवेशम्।
याति मन्दिरं नमति स ईशम्।।
दयार्द्रचित्तः ससुखं जीवति।
दीनजनेभ्यः सततं यच्छति।।"[2]

रस का प्रवाह प्रस्तुत काव्य में सर्वत्र प्रवाहित रहता है। किंतु प्रत्येक बालगीत भिन्न–भिन्न रसात्मक भावों (शान्त, भक्ति, अद्भुत) से युक्त है। छन्दों का प्रयोग भी परम्परागत शैली के स्थान पर आधुनिक शैली में दिखाई देता है। प्रो. बलराम शुक्ल[3] (संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली) के अनुसार, शनैः शनैः (बालगीतावलि) पुस्तक में द्रुतविलम्बित इत्यादि पारम्परिक छन्दों का गीति–रीति में प्रयोग, उनका आधुनिक रूप में मणिकांचन आयाम प्रकट होता है। अधिकांश बालगीत मात्र ध्वन्यात्मक लय–माधुरी में रचित किए गए है। आधिभौतिक, आधिदैविक एवं आध्यात्मिक विश्वत्रय के उद्घाटक भूषण, वारण एवं पर्याप्ति के आधायक एवं लोक का अनुकीर्तन करने वाले, अलम् भाव से युक्त स्वाभावोक्ति (जाति), कौतुक, आह्लाद, स्मरण, नादानुकृति (अनुप्रास) अलङ्कार की छठा सर्वत्र काव्य में परिलक्षित होती है। नादानुकृति अलङ्कार[4] का उदाहरण उल्लेखित है–

"घड घड घड घड गर्जति मेघः।
टरर टरर टर रोदिति भेकः।।
छनन छनन छन रणति शिंजिनी।
झनन झनन झन क्वणति किङ्किणी।।"[5]

यहाँ छन्दात्मक लय एवं शब्दों के नाद (ध्वनि) से वर्णित विषय (भेक, मेघ) की वर्णात्मक अनुकृति हुई है। अतः ध्वन्यात्मक नादानुवृति अलङ्कार है।

---

1. शनैः शनैः (बालगीतावलि), पृ.–32
2. शनैः शनैः (बालगीतावलि), पृ.–41
3. शनैः शनैः (बालगीतावलि) अभिमतम् भाग से उद्धृत्
4. अभिनवकाव्यालङ्कार, प्रो. त्रिपाठी, 2/6, पृ.–137
5. शनैः शनैः (बालगीतावलि), पृ.–60

इसी तरह जाति अलङ्कार (स्वाभावोक्ति) का 'उदेति सूर्यः' कविता में सुन्दर प्रयोग द्रष्टव्य है जहाँ कवि प्रभातकालीन उदय होते सूर्य के वर्णन के साथ ही गाँव में घटित प्रभातकालीन दृश्य का मनोरम वर्णन करता है–

"उदिते सूर्ये धरणी विहसति।
पक्षी कूजति कमलं विकसति।।
नदति मन्दिरे उच्चैर्ढका।
सरितः सलिले सेलति नौका।।"[1]

कवि वर्णन करता है कि उदयाचल से सूर्य उदय हो रहा है। पक्षी चहचहा रहे है। कमल खिल रहे है। मन्दिर में प्रभातकालीन आरती में ढोल–नक्कारे के नाद से सम्पूर्ण परिवेश गुंजायमान हो रहा है। नदियों के प्रवाहित जल में नौका चलायमान है। अतः सर्वत्र मनोरम वातावरण व्याप्त हो गया है।

काव्यशोभा के आधायक त्रिविधिगुण माधुर्य, ओज एवं प्रसाद गुणों की छठा प्रस्तुत काव्य में सर्वत्र दिखाई देती है। चित्त को द्रवीभूत करने वाले माधुर्य गुण का उदाहरण उल्लेखित है–

रम्यं पुष्पं रम्यं पत्रम्।
रम्योधानं कियत्सुन्दरम्।।
विहरति मधुपः पुष्पात् पुष्पम्।
गुंजति गुन् गुन् गुन् गुन् गुन्।।[2]

ट वर्ग (ट,ठ,ड,ढ़,ण) से रहित, प्रत्येक वर्ण के पंचम वर्ण (म,ञ,न) रकार–णकार कोमल वर्णों की उपस्थिति के कारण प्रस्तुत पद्य में माधुर्य गुण विद्यमान है। इसी प्रकार 'मधुरं मधुरं' (पृ.–15), 'लालिका' (पृ.–20), बालकविताओं में भी माधुर्य गुण विद्यमान है।

बालकों में रूचि जाग्रत करने, सौन्दर्यबोध करवाने एवं रोचकता उत्पन्न करने हेतु कवि द्वारा सम्पूर्ण बालगीतों को वर्णात्मक एवं रंग–बिरंगे चित्रों से सजाया गया है।

कवि जिस विषय को आधार बनाकर बालगीतों का प्रणयन करता है उसका चित्र भी कविता के साथ ही बनाता है। यथा 'काक' (कौआ) का चित्रात्मक एवं जिज्ञासापरक वर्णन है–

काकोऽहं कालोऽहम्
करोमि शब्दं का का।

1. शनैः शनैः (बालगीतावलि), पृ.–44
2. शनैः शनैः (बालगीतावलि), पृ.–16

विपुलाकाशे सुखं डयामि
बन्धुभिः सह सदा भ्रमामि।।[1]

अतः सरल एवं लयात्मक, समासरहित पदावली से युक्त इन गीतों को बालक सुखपूर्वक अवबोध एवं स्मरण करने में पूर्णतया सक्षम है।

भाव पक्ष—कला पक्ष के समान ही भाव पक्ष भी ग्रंथ की समीक्षा का मुख्य आधार है। भाव पक्ष कवि के मन की आन्तरिक मनःस्थिति का द्योतक है। कवि भाव पक्ष के अन्तर्गत ग्रंथ में घटित तात्कालिक परिस्थितियों (यथा— सामाजिक, सांस्कृतिक, नैतिक, राजनीतिक, पर्यावरणीय, उपदेशात्मक, मनोरंजनात्मक) को काव्य का भावार्थ बनाता है। वस्तुतः कवि का मुख्य प्रयोजन काव्य को आधिभौतिक, आधिदैविक एवं आध्यात्मिक त्रिविध कसौटी पर परखना है।

डॉ. सम्पदानन्द मिश्र ने 'शनैः शनैः' (बालकवितावलिः) के आमुख भाग में उल्लेख किया है कि— "बालसाहित्य लेखन का मुख्य प्रयोजन बालकों का चरित्र निर्माण करने, उनमें सामाजिक—सांस्कृतिक—नैतिक—आध्यात्मिक—स्वदेश प्रेम एवं आत्मशक्ति का विकास करना है। यह साहित्य बालकों को संस्कार एवं नैतिक मूल्य बोध प्रदान करने में पूर्णतया समर्थ है।"

'शनैः शनैः' पुस्तक के सम्पूर्ण बालगीत वातावरण से निकटता रखते है। सम्पूर्ण बालगीत प्रकृति, प्रकृति में निवासरत जीव—जंतुओं एवं पक्षियों को कथानक बनाकर प्रणीत किये गये है। किंतु सभी बालगीतों का उद्देश्य भिन्न—भिन्न है। कवि प्रकृति में निवासरत सूक्ष्म जीवों से लेकर विशाल जीवों तक, से बालकों को बालगीतों के माध्यम से परिचय करवाना चाहते है।

'शीघ्रं शीघ्रं' गीत बालकों को प्रकृति में निवासरत छागल (बकरी) के भोजन ग्रहण करने की तेज गति से अवगत करवाता है। इसी तरह वानर चर्वणा (भोजन करने) में, घोटक (घोड़ा) धावन में एवं निर्झर (झरना) के प्रवाह की गति भी अत्यन्त तेज होती है। इसी प्रकार **'शनैः शनै'** बालकविता बालकों को घटिका (घड़ी), हाथी एवं कच्छप (कछुआ) की, मंद गति से परिचय करवाती है। इसी प्रकार बीज से वृक्ष बनने की गति भी धीरे—धीरे होती है। पुष्पों के विकसित होने की गति, साँप के चलने की चाल, ऋतुओं के आगमन एवं परिवर्तन की गति भी शनैः शनैः होती है। यथा—

अतिलघुबीजात् रोहति वृक्षः
भवति विशालः शनैः शनैः।। (पृ.—23)

लघु—लघु बालकों को अक्षर ज्ञान की प्रक्रिया में सर्वप्रथम बिना मात्रा वाले शब्दों पर जोर देने के साथ ही गेयात्मकता का उल्लेख किया गया है—

1. शनैः शनैः (बालगीतावलि), पृ.—12

सरस फलम्।। अमल जलम्।। गगन तलम्।।
कमल–दलम्।। गज–गमनम्।। अज–वदनम्।। खग–दयनम्।।
बक–शयनम्।। जलतरणम्।। बल–हरणम्।। अलस–जनः।।
अचल–मनः।। धवल–शशः।।[1]

इसी प्रकार 'क्रियापदम् बालगीत' क्रिया पदों का अवबोध करवाता है–

"पिबति खादति चूषति चर्वति।
वदति रोदिति जल्पति क्रोशति।
हसति ध्माति च गायति ष्ठीवति
दशति गर्जति जृम्भति चुम्बति।।"[2]

कवि द्वारा प्रस्तुत पद्य में मुख द्वारा सम्पन्न क्रियाओं के लिए लट–लकार (वर्तमान) की भिन्न–भिन्न धातुओं का प्रयोग किया गया है। कवि द्वारा प्रस्तुत 'क्रियापदम्' गीत में कुल 62 क्रियापदों का पद्यात्मक वर्णन किया गया है। समय की महत्ता प्रतिपादित करते हुए कवि का बालकों को उपदेश है कि समय अल्प है, इसे आलस्य एवं निद्रा में मत खोओं। यथा–

बहु पठनीयम् बहु मननीयम्।
बहु करणीयम् न हि शयनीयम्।।
विमुंच निद्रा मुंचालस्यम्।
त्याजाभिमानं त्यज परिहासम्।।
पठने सततं निधेहि चित्तम्।
अहर्निशं मा चिन्तय वित्तम्।।[3]

प्रस्तुत रचना में बालकों के मनोरंजन हेतु पशु–पक्षियों से संबंधित बालगीत बहुत लोकप्रिय है। **'धावति–नृत्यति'**, **'मम–प्रिय घोटकः'**, **'पश्यत पश्यत गजराज'**, **'काकः'**, **'मयूरः'**, **'शतपदी'** इत्यादि बालगीत नैतिक उपदेश के साथ ही मनोरंजन से भी युक्त है। अनुरणात्मक संगीत से भरपूर यह कविता बालकों को आनन्दित करती है–

"टप टप टप टप याति घोटकः।
नृत्यति थथर्थे थर्थे नर्तकः।।
फँ फँ शब्दैः फणति पन्नगः।
में में नादं कुरुते छागः।

1. शनैः शनैः (बालगीतावलि), पृ.–50
2. शनैः शनैः(बालगीतावलि), पृ.–23
3. शनैः शनैः(बालगीतावलि), पृ.–50

रौति कुक्कुटः कुक् कुक् कुक् कुक्।
गच्छति यानं छुक् छुक् छुक् छुक्।।"[1]

अंततः यह दृढ़ संकल्प है कि डॉ. सम्पदानन्द मिश्र प्रणीत 'शनैः शनैः' काव्य बालकों का मनोरंजन करने, उपदेश प्रदान करने एवं बालमनोविज्ञान को समझने में अत्यन्त प्रासंगिक है।

बालगीतम्–अङ्गगीतम्

'बालगीतम्' काव्य डॉ. कृष्णलाल द्वारा रचित 20 कविताओं का संग्रह है। इसका प्रकाशन सन 2000 ई. को विभुवैभवम् प्रकाशन, नई दिल्ली से हुआ था। प्रस्तुत काव्य में संग्रहीत सभी कवितायें बालकों में जिज्ञासा, रोचकता एवं संस्कृत के प्रति अनुराग उत्पन्न करने में पूर्णतया सक्षम है। इन बालगीतों की भाषा शैली बहुत ही सरल, सरस एवं बाल–अवबोध तत्त्वों से युक्त है। काव्य में सर्वत्र लघु–लघु वाक्यों वाली समासरहित चूर्णक शैली का प्रयोग दृष्टिगोचर होता है। गद्यपद्योभयात्मक शैली में निबद्ध प्रस्तुत काव्य का नामकरण काव्य के प्रथम बालगीत के 'बाल' पद एवं अंतिम बींसवी कविता 'अङ्गगीतम्' पद के सम्मेलन से युक्त 'बालगीतम्–अङ्गगीतम्' से किया गया है।

प्रस्तुत काव्य का प्रारम्भ 'बाल–प्रार्थना' कविता से तथा काव्यांत 'अङ्गगीतम्' बालगीत से हुआ है। समस्त गीत जहाँ एक तरफ सम्पूर्ण बालसाहित्य के काव्यात्मक लक्षणों से ओतप्रोत है वहीं दूसरी और बालकों के सामाजिक–सांस्कृतिक–आध्यात्मिक–नैतिक एवं मनोवैज्ञानिक विकास में भी अत्यन्त सहायक है।

'सफलाः वयं भविष्यामः' बालकविता बालकों को लक्ष्य के प्रति दृढ़निश्चय करके कार्यपथ पर अग्रसर होने का नैतिक उपदेश देती है–

"सफलाः वयं भविष्यामः
एकस्मिन् दिवसेऽवश्यम्।
दृढ़ोऽयं मम विश्वासः
ध्रुवोऽयं मम विश्वासः।।
गतिरेका अस्माकं स्थितिरेका अस्माकम्।
मिलित्वा समं चलित्वा गृहीत्वा करान् परस्परम्।
सफलाः वयं भविष्यामः एकस्मिन् दिवसेऽवश्यम्।।"

यह यथार्थ सत्य है कि बाल्यकाल खिलोनों एवं क्रीड़ा का काल है। बालक मेलों एवं त्योहारों के आगमन को लेकर अत्यन्त आनन्दित हो जाते है। **'बालमेलकम्'** कविता बालकों के प्रसन्नचित्त को सुन्दर रूप से प्रकट करती है। यथा–

1. शनैः शनैः (बालगीतावलि), पृ.–37

बालमेलकं बालमेलकम्।
कमनीयं बालमेलनं रमणीयं बालमेलकम्।
वाद्यं गीतं विविधाः क्रीडाः।
न च कस्यचित् कापि वीड़ा।
क्वचित् नृत्यन्ति सहबालाः
अन्ये प्रमुदिताः गायन्ति।
इन्द्रजालकं दृष्ट्वा ते मुग्धाः हसन्ति रे बालाः।।

इसी तरह 'गणतन्त्रदिनं रम्य' कविता में गणतन्त्र दिवस की पावन वेला में बालकों में उत्पन्न उत्साह एवं राष्ट्रप्रेम को प्रस्तुत किया गया है–

गणतन्त्रदिनं मम रम्यं पर्व शोभनम् उपस्थितम्।
गच्छतु दुःखमयी रेखा मुखं दृश्यतां सुखास्मितम्।।
गणतन्त्रदिनं रम्यम्.................।
अयं देशस्य हरीतिमा धरण्या इयं मधुस्थली।
उपहारो मधुरः प्रकृतेः तादृशी न हि तारावली।।
गणतन्त्रदिनं रम्यम्.........।।

इसी प्रकार आयाता वर्षा, 'मधुपवनः', 'हिमशोभा' इत्यादि बालगीत कवि के प्रकृति–प्रेम को प्रकट करते है। कवि वर्षाकाल के मधुर दृश्यों का स्वाभाविक वर्णन करते है। कवि कहता है कि वर्षा के आगमन पर चारों तरफ सुख का वातावरण व्याप्त हो जाता है। बारिश के जल–बिन्दु जब पृथ्वी पर टप्–टप् की ध्वनि करते हुए गिरते है तो बालकों के मन में हर्ष (प्रसन्नता) का भाव स्वाभाविक रूप से प्रकट होता है। यथा–

"आयाता मधुवर्षा प्रिय सुखदा मधुवर्षा।
टप् टप् टप् टप् पतिताः मुक्तकणाः सुहर्षाः।।"

कवि बालकों को निष्काम कर्मयोग का उपदेश देते हुए उन्हें सूर्य, नदी, पवन के समान निरन्तर जीवनपथ पर आगे बढ़ने की प्रेरणा देते है–

"चल रे पथिक त्वया चलितव्यम्
चलनमेव तव धर्मः।
स्थैर्यं यत्र हि तत्र जडत्वं
गत्वारवेरपि धर्मः।।
नित्यं पश्य सरित्प्रवाहो गच्छन् सुखयति लोकम्।
बालकम्पितैः पत्रैः पुष्पैः हरति सुगन्धः शोकम्।।"

दोला (झूला) का झूलना बालकों में आनन्द उत्साह एवं रोचकता का संचार करता है। यथा–

"अहो शोभना दोला
प्राप्तः पार्श्वेचन्द्रः आकाशे मम ताराः।
हसति सदा रे चन्द्रः
धरणीशोभा नीचैः
मधुवाटिका प्रफुल्ला।।
कोकिलमानं मधुरं
शोभनबाला तारा।।"[1]

काव्य का अंतिम 'बालगीत–अङ्गगीतम्' कविता में संगीतमय ढंग से बच्चों को दशोऽगुंलियों से परिचय करवाया गया है–

दश हस्ताङ्गुलयो रचिताः
गृह्णन्ति वस्तु मुंचन्ति चैव।
दश पादाङ्गुलयश्चित्राः,
याभिः यामः कष्टं विनैव।।

अंततः डॉ. कृष्णलाल द्वारा प्रणीत ज्यादातर कविताऐं शिक्षाप्रद तथा नैतिकता से सम्बन्धित है। कवि ने प्रस्तुत गीत संग्रह में शुकः भारत जननी नमस्तुभ्यम् मम वत्सा, गाय गाय गीतम्, गायति चटका, रेलक्रीडा शीर्षकों के माध्यम से बच्चों के साथ सहज आत्मीय जुड़ाव का प्रयास किया है।

चित्वा तृणं तृणम् (बालगीतिमालिका)

बिहार प्रदेश में जन्में डॉ. संजय कुमार चौबे द्वारा सन् 2018 ई. में बालकों के मनोरंजन एवं नैतिक उपदेश प्रदान करने के प्रयोजन से 'चित्वा तृणं तृणम्' की रचना की गई। प्रस्तुत काव्य में 25 बालगीतों की माला गूँथी होने से इस काव्य को बालगीतिमालिका भी कहा जाता है। प्रस्तुत बालकाव्य के सम्पूर्ण गीत मनोहर एवं मनोरंजन प्रधान है। कुछ गीत बालमनोवर्णन से युक्त, तो कुछ गीत राष्ट्रभक्तिपरक, प्राकृतिक एवं सौन्दर्यबोध से युक्त है। प्रकृत गीतिसंग्रह के शीर्षक **'चित्वा तृणं तृणम्'** (तिनका चुन कर) एक गीत का अवान्तर हिस्सा है, जो बालकों को छोटे–छोटे प्रयासों से बड़ी सफलता का अवबोध करवाता है, यथा–

"चित्वा तृणं तृणं रचयन्ति नीडकं
स्पर्धां प्रकुर्वते वायुना समम्।।"[2]

---

1. बालगीतम्–अङ्गगीतम्, दोला कविता
2. चित्वा तृणं तृणम्, पृ.–35

वस्तुतः आचार्य चौबे द्वारा विरचित काव्य में बालकों की बालमनोवैज्ञानिक भावनाओं को दृढ़ता प्रदान की गई है, साथ ही बालावबोध हेतु कोमल पदावली, अत्यल्प संधि–समास एवं सरल पदों का प्रयोग किया गया है। प्रकृत गीतिमालिका में निबद्ध सभी 25 गीत स्वर लय एवं ताल से युक्त होने से बालमन को आकर्षित करते है। यथा–

"चल चल चल चल चल
चल चल चल चल चल।
सज्जो भूत्वा माधवः!
पाठशालां चल।
मुदितो भूत्वा माधवः।
पाठशालां चल।।"[1]

इसी प्रकार 'स्नेह' स्थायी भाव युक्त 'वात्सल्य रस' की प्रवाहमयता अत्यन्त मनोरम है–

प्रकृतिपेशलं पल्लवगात्रं
रक्ताभं च कपोलयुगम्।
कमलं नेत्रं चपलचेष्टितं
मधुरं मधुरं नवं नवम्।।[2]

उल्लेखित पद्य में बालक के प्रति माता–पिता का स्वाभाविक स्नेह अत्यन्त रमणीय है।

कवि द्वारा उल्लेखित काव्य में प्राचीन एवं अर्वाचीन दोनों परिस्थितियों, स्थान एवं पात्र–चरित्र–चित्रण का सम्यकतया ध्यान रखा गया है। कवि के **बालगीत** प्राचीन आदर्श एवं भारतीय संस्कृति के समन्वय से युक्त है, यथा–

बाल्ये वयसि ध्रुवेण सिद्धिः स्वीय तपोभिः सम्प्राप्ता।
'ध्रुवतारा' भूत्वा गगनेऽस्मिन् सदा काशते नः भ्राता।।[3]

कवि भारतभूमि में अवतरित बालक भरत, लव–कुश, ध्रुव, नचिकेता, अष्टावक्र, एकलव्य, अभिमन्यु, कुवलायश्व, उपमन्यु, आरुणि, आस्तिक, प्रह्लाद आदि के पवित्र एवं साहसी कार्यों का गुणगान करता है। इसी तरह वर्तमान प्रतियोगी दौर में बालकों को कर्त्तव्यपथ पर आने वाली बाधाओं का सामना करने हेतु उनमें उत्साह एवं साहस का भी संचार करता है यथा–

दैवे न रोदनीयं व्यसनं विसर्जनीयम्।
तन्द्रां विहायलोके वीर्यं समर्जनीयम्।।

---

1. चित्वा तृणं तृणम् (पाठशालां चल), पृ.–72
2. चित्वा तृणं तृणम्, स्मितं तवेदं वत्स!, पृ.–44
3. चित्वा तृणं तृणम् (वयं बालका भारतभूताः), पृ.–82

कवि बालकों को उपदेशित करता है कि निद्रा–तन्द्रा, भाग्यवादी सोच को त्यागकर कर्त्तव्यपथ पर आगे बढ़ने का सन्देश देता है।

सम्पूर्ण बाल–कविताओं की भाषा मनोहर एवं बाल–स्वभाव के अनुकूल है। कवि बालमनोऽकूल भावों प्रवृत्तियों एवं जिज्ञासाओं के अनुरूप सहज–सरल एवं सरस भाषा में काव्य की रचना करता है यथा–

सूर्यो जगतो मूलाधारः।
भवति तेन ऊर्जा संचारः।।[1]

इसी प्रकार कवि का भविष्योन्मुखी धातु (क्रिया) प्रेम भी श्लाघ्नीय है। कवि की लृट् लकार (भविष्यतकाल) की क्रियाओं में गुम्फित बालकविता उल्लेखनीय है। यथा–यास्यामि, पास्यामि, धास्यामि, श्रोष्यामि, भास्यामि, ध्यास्यामि, लालयिष्यति, दास्यति, खेलयिष्यति, नेस्यति, भोजयिष्यति एवं भविष्यति आदि। यथा–

"यदा भविष्यत्यवकाशो मे मातुलगेहे यास्यामि।
क्रीडन् नृत्यन् मित्रैः साकं मधुरं दुग्धं पास्यामि।।"[2]

यति–गति की दृष्टि से यहाँ समस्त गीतों में रसमयता बनी रहती है। कवि द्वारा समस्त गीतों में शान्तरस युक्त 'प्रसाद गुण' की छठा विलसित होती है–

"मृण्मार्गोऽयं गच्छति ग्रामे
विलसति यत्र वटो वृद्धः
चिरात्तपस्यां कुरुते मनसा
यथा वने कश्चित् सिद्धः।।"[3]

कवि का पारम्परिक छंद प्रेम भी प्रत्यक्ष होता है। यति–गति, वर्ण–मात्रा से सुशोभित 19 वर्णों वाले शार्दूलविक्रीडित छन्द की छठा उल्लेखित है–

"कुवलाश्व उपमन्युरारुणिस्तथास्तिकः प्रह्लादः।
इत्यादिभिः स्वजीवनमार्गो बालैर्विहितोऽबाधाः।।

दिव्यपद्धतिं रचयामो नः परंतपा मेधाविनः।
वयं बालका भारतभूताः, शूरा वीरा मनस्विनः।।"[4]

यह यथार्थ सत्य है कि बच्चे की दुनिया निराली होती है। कवि को बालकों को मनोरंजन के साथ सद्गुणों के प्रति प्रेरित करना चाहिए, न कि सद्गुणों को थोपना चाहिए।

---

1. चित्वा तृणं तृणम्, सूर्य बालकविता, पृ.–26
2. चित्वा तृणं तृणम्, यदा भविष्यत्यवकाशो मे, पृ.–28
3. चित्वा तृणं तृणम्, 'वृद्धो वटः', पृ.–42
4. चित्वा तृणं तृणम्, वयंबालका भारतभूता कविता, पृ.–82

जैसाकि खलील जिब्रान का कथन है– "बच्चे आपके बच्चे नहीं है, अपितु वे जीवन की स्वयं की जिजीविषा के बेटे–बेटियाँ है।"

कवि द्वारा सद्य प्रकाशित प्रस्तुत बालगीतिसंग्रह में बालक की मनोगत भावनाओं, सामाजिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक भावनाओं एवं उसकी सहज क्रियाओं का सम्यक् ध्यान रखा गया है। बाललीला से लेकर किशोरावस्था की स्वाभाविक मनोवृत्तियों को गीतों में गुम्फित करने का कवि द्वारा सफल प्रयत्न किया गया है। प्रथम गीत 'शारदास्तवनम्' में बालक के मुखमण्डल से उसके अन्तर्मन की अज्ञान–तिमिरान्धता को दूर करने हेतु भगवती वीणापाणि की उपासना की गई है–

"अज्ञानतमोनिखिलं दूरीकुरुस्व शारदे
जाड्यं धियो द्रुतं मे दुरीकुरुस्व शारदे।।
त्वां शुद्धचेतसाहं बालस्तव स्मरामि
मृदुभावरम्यपुष्पैर्नित्यं सुपूजयामि।
लोके प्रतीयते मे निःसारजीवनं
वीणारवैः प्रभूतं सफलीकुरुस्व शारदे।।"[1]

'स्मितं तवेदं वत्स!' एवं 'हे पितः! श्रुयताम्' रचना कवि के सामाजिक भाव को प्रखर रूप से उद्घाटित करती है। पिता–पुत्र का यह संवाद अत्यन्त प्रेम–मार्मिकता एवं सामाजिक भाव से ओतप्रोत है यथा– एक पुत्र अपने पिताजी को सम्बोधित करता हुआ कहता है कि हे पिताजी! मेरे लिए एक गाड़ी ला दीजिए, जो परिवार एवं समाज को आनन्द प्रदान करने वाली हो यथा–

"श्रुयतां श्रुयतां हे पितः श्रुयताम्।
मत्कृते यानमेकं महद्दीयताम्।।
यन्नमः संस्पृशेद् यद् धरायां चलेद्
यत् समुद्रेऽपि रम्यं चिरं संतरेत्।
सर्वदा सर्वबालाय यद्रोचतां
तत्कुटुम्बे समाजे मुदं वर्धयेत्।।"[2]

इसी तरह समय की महत्ता को रेखांकित करने वाली **'बालशिक्षा'** कविता की कुछ पंक्तियाँ उल्लेखित है–

"वृथा न समयं यापय मित्र! वृथा न समयं यापय।
समययापने महति हानिः सर्वजनान् विज्ञापय।।"[3]

---

1. चित्वा तृणं तृणम्, पृ.–24
2. चित्वा तृणं तृणम्, पृ.–46
3. चित्वा तृणं तृणम्, पृ.–54

इसी तरह बालकों में राष्ट्रप्रेम एवं देशभक्ति की भावना का संचार करने वाली 'राष्ट्रस्य गौरववर्धनम्' कविता का पद्य उल्लेखित है–

"राष्ट्रस्य गौरववर्धनं देशस्य गौरववर्धनम्।
कुर्महे सर्वे मिलित्वा मातृभूमेर्वन्दनम्।।"[1]

इसी प्रकार 'बालजिज्ञासा' गीत में बालक के मन में उत्पन्न स्वाभाविक भावों को प्रश्नात्मक शैली में निबद्ध किया गया है–

कथमुज्जवलं दुग्धं माताः?
नीलोऽयं कथमाकाशः?
दूरे कथं हि चन्द्रास्तिष्ठति?
गगने तस्य कथं वासः?[2]

कवि का सर्वोत्तम प्रिय गीत जिसमें कवि चिड़ियों की चहचहाहट, उनके द्वारा तिनकों को एकत्र कर नीड़ का निर्माण करना, वायु की गति से स्पर्धा करना, जैसी विशेषताओं से युक्त 'चित्वा तृणं तृणं' गीत कवि के सुन्दरतम काव्य का भाग है–

"चित्वा तृणं तृणं रचयन्ति नीडकं
स्पर्धां प्रकुर्वते वायुना समम्।।"

कवि ने प्रकृत गीतों में प्रकृति और पर्यावरण संरक्षण पर भी दृष्टिपात किया है। कवि कहीं पर धूर्त बगुले का चित्रण करता है, तो कहीं पर उल्लू का, कहीं पर कोयल, दर्दूरकस्य विवाह (मेढक का विवाह) का सुन्दर वर्णन बालमन को रोमांच से ओत–प्रोत कर देता है। यथा–

"डिम् डिम् डिम् डिम् डिम् डिम् डिम् डिम्
शृण्वन्तु ग्रामवासिनः! नगरवासिनः।
बन्धवः। तटाकस्य कूपवासिनः।
अद्य मेघनाम दर्दूरस्य विवाहः।
दर्दूरकूले ननु महोत्साहः।।"[3]

अन्ततः आचार्य डॉ. संजय कुमार चौबे द्वारा सरल और गेय स्वरों में उपर्युक्त बालगीतों का प्रणयन कर बालकों के लिए बहुत ही उपयोगी साहित्य की रचना की है। आपके द्वारा संस्कृत गीतों के साथ ही, उनका जो हिन्दी काव्यानुवाद किया गया है, वह अत्यन्त मनोहर एवं रमणीय है।

1. चित्वा तृणं तृणम्, पृ.–76
2. चित्वा तृणं तृणम्, पृ.–38
3. चित्वा तृणं तृणम्, दर्दूरस्य विवाहः, पृ.–78

बालगुंजनम्

अर्वाचीन संस्कृत साहित्य की काव्यविधाओं में 'अभिनवगीतविधा' में बालसाहित्य विधा का अनुसरण करते हुए 'कविकुल कुमार' की उपाधि से सुशोभित डॉ. अरविन्द कुमार तिवारी द्वारा एकपंचाशत् (51) बालगीतों का गुम्फन करते हुए 'बालगुंजनम्' शीर्षक से प्रस्तुत काव्य का प्रणयन किया है। प्रस्तुत काव्य में कवि द्वारा आधुनिक मोबाइल तकनीक में संचालित आमुखपटल (Facebook) नाम के सामाजिक मंच (Social Media) का प्रयोग करते हुए संस्कृत भाषा के प्रचार–प्रसार हेतु शास्त्रलोचन, काव्यपाठ, श्लोक एवं छन्द प्रतियोगिता जैसे कार्यक्रमों से निसृत कविताओं का संग्रह किया है।

सामान्यतः 'बालगुंजनम्' शब्द का व्युक्तिपरक अर्थ है– 'बालाय भ्रमराय गुंजनम्' अर्थात् बालावबोध हेतु कवि का गुंजन करना 'अथवा बालाः भ्रमराः तेषाम् गुंजनम् इति' अर्थात् बालक या भ्रमरो का गुंजन करना। यहाँ व्याकरणात्मक रूप से मध्यमपदलोपी तत्पुरुष समासान्त पद बालगुंजनम्' पद की उत्पत्ति हुई है।

दशवर्षीय कविपुत्र आयुष्मान् 'विभव तिवारी' प्रस्तुत काव्य का मुख्य पात्र है। इसके क्रियाकलाप या बालगतिविधियाँ प्रस्तुत काव्य संग्रह में भ्रमर सदृश सर्वत्र गुंजायमान है।

कवि द्वारा काव्य रचना का प्रारम्भ अप्रैल माह की तृतीय दिनांक, 2018 ई. की कांचीपुरम् यात्रा (संस्कृत बालसाहित्य परिषद सम्मेलन) से होता है। इसका समापन 19 अप्रैल 2018 को एकपंचाशत बालगीतों की रचना के साथ होता है। कवि द्वारा अत्यल्प अवधि में ही बालकों के लिए सुन्दर काव्य रचना का सम्पन्न करना अत्यंत प्रशंसा का विषय है।

प्रस्तुत काव्य का प्रारम्भ 'गजानन वन्दना' एवं मंगलाचरण से होता है। कवि काव्य की निर्विघ्न समाप्ति के लिए यहाँ विघ्नहर्ता गणेश जी की वन्दना करते है। द्वितीय बालगीत में कवि द्वारा अपने गुरु एवं बालसाहित्य के पुरोधा आचार्य वासुदेव द्विवेदी जी को प्रणाम करते हुए 'बालगुंजनम्' काव्य को उनके करकमलों में समर्पित किया गया है–

"दिशि गीयते सुगीतं
मधुरं विनीतसृष्टम्।
तव बालगीतिमेनां
करयोः समर्पयेऽहम्।।
गुरुवर्यवासुदेवं
हृदयेन पूजयेऽहम्।।"[1]

1. 'बालगुंजनम्', पृ.–14

प्रस्तुत काव्य की भाषा शैली सरल–सरस, सुमधुर एवं लयात्मक है। कवि स्वयं बालमनोगत् भावों को आत्मसात् करता हुआ साक्षात् बालकों के व्यवहारऽनुकूल भाषा का प्रयोग करता है। आधुनिक विषयों को ग्रहण करने के साथ ही 'विदेशज्' शब्दों का ग्रहण भी कवि के द्वारा किया गया है। यथा **'गन्त्री'** कविता में उल्लेखित विदेशी शब्दों का प्रयोग उद्धृत है–

आयाति टीटी द्रष्टुं मां
पृच्छति टिकटं कुत्र तव।
वदामि सद्यः अंकल नैतत्
बालोऽहं मम स्वल्पवयः।।[1]

इसी तरह सोशल मीडिया के विभिन्न रूपों में वाट्सअप, फेसबुक, टिविट्र शब्दों का प्रयोग भी प्रत्यक्ष होता है।

कवि द्वारा प्रस्तुत काव्य की कविताओं का नामकरण प्राचीन महापुरुषों श्रीराम, कृष्ण, भरत, बालक ध्रुव, अभिमन्यु, कौटिल्य, हनुमान, विनोदी प्रवृति वाले गणपति, के साथ ही भिक्षुक, दरिद्रबालक, सैनिक, पिता, विभव आदि सम्बोधात्मक शब्दों को भी काव्य का विषय स्वीकार किया गया है। है। इसके अतिरिक्त पुत्तलिका, गजराज, वानर, शकट, गन्त्री, मेला, प्रहेलिका, वर्ष, स्वच्छता, तिरङ्गाा जैसे चराचर जगत् को भी कविताओं का शीर्षक स्वीकार किया गया है।

श्रीकृष्ण बाललीला को कविताओं का विषय स्वीकार करते हुए अनेक बालगीतों की रचना की गई है जिनमें है– बालकृष्ण, चतुरकृष्ण, नटवर, नवनीत चौर, श्रीकृष्ण, बलरामकृष्णौ इत्यादि कुल छः बालगीत लिखे गए है। यथा–

"उत्तिष्ठ प्रिय भासते रविरहो मातः शिरोवेदना,
एवं किं विपिनं गतस्य शिरसि प्रीतस्य पक्वं फलम्।
दौर्भाग्यात्पतितं ततः वद फलं जम्बुः विशालं सुत
शीघ्रं पृच्छ मदम्ब मेऽग्रजवरं कृष्णोऽनृतं भाषते?।।"[2]

प्रस्तुत पद्यांश में श्रीकृष्ण माता यशोदा से शिरोवेदना के बारे में बहाना बनाता हुआ कहता है कि हे माता! अरण्य में जाते समय अचानक जम्बु (जामुन) फल दुर्भाग्य से मेरे सिर पर गिर गया, इसलिए मेरे शिरोवेदना हो रही है। अतः मैं सो रहा हूँ।

कवि द्वारा प्रस्तुत काव्य में सर्वत्र बालमनोऽनुकूल माधुर्य गुण की छठा परिलक्षित होती है। अनुरणात्मक, गेयात्मक, अनुनासिक वर्ण एवं बालकों के चित्त को द्रवीभूत करने वाले, शान्त व हास्य रस से युक्त माधुर्य गुण की छठा से सुशोभित उदाहरण उल्लेखित है–

---

1. 'बालगुंजनम्', पृ.–17
2. 'बालगुंजनम्', पृ.–23

"पिको वसन्ते गायते गीतं
पितामहि प्रियमातनुते।
कूकूकूकूमधुरो रावः
मनो मदीयं चाहरते।।"[1]

कवि द्वारा पारम्परिक छन्दों के साथ–साथ आधुनिक सवैया, गीतिका, जैसे छन्दों का भी प्रयोग किया गया है। पारम्परिक छन्दों में द्रुतविलम्बित, भुजङ्गप्रयातम्, वसन्ततिलका एवं शार्दूलविक्रीडितम् छन्दों का प्रचुरतया प्रयोग किया गया है। 'सरस्वती वन्दना' बालकविता में सर्वत्र द्रुतविलम्बित छन्द की छटा बिखरी है यथा–

"विमलहंससुखासनवर्तिनि
मृदुलरावमनोहररूपिणि।
निजकटाक्षकवित्वविकासिनि
हर मृतिं मम बुद्धिविवर्धिनि।।"[2]

प्रस्तुत पद्य के प्रत्येक चरण में 14–14 वर्ण है तथा नगण–भगण–भगण–रगण के रूप में गणव्यवस्था विद्यमान है। प्रत्येक पाद के अन्तिम लघु (I) वर्ण को दीर्घ (S) वर्ण के रूप में माना गया है। कवि प्रस्तुत पद्य में वीणापाणी माँ भगवती से बुद्धि (ज्ञान) के विवर्धन की प्रार्थना करता है।

इसी तरह 12 वर्ण से युक्त, प्रत्येक चरण में यगण–यगण, यगण–यगण की गणव्यवस्था से सुशोभित भुजङ्गप्रयातम् छन्द का सुन्दर उदाहरण द्रष्टव्य है–

"अयं सैनिकः सम्भविष्यामि मातः
स्वदेशस्य शत्रून् हनिष्यामि जातः।
पितुः काङ्क्षितं पूरयिष्यामि गुप्तः
पितर्भाषते श्रूयते चाद्य सुप्तः।।"[3]

इसी प्रकार 'चतुरकृष्णः' कविता के दोनों पद्यों में वसन्ततिलका छन्द प्रत्यक्ष होता है–

"सुप्ता मदीयजननी कृतगेहकार्या
सुप्तः पिता कृतसमस्तविशिष्टकृत्यः।
गन्तुं वने सुसमयः समुपागतोऽयं
साकं चलेयमधुना सुहृदा विचिन्त्य।।"[4]

---

1. 'बालगुंजनम्', पिकः कविता, पृ.–66
2. 'बालगुंजनम्', पृ.–15
3. 'बालगुंजनम्', पृ.–19
4. 'बालगुंजनम्', पृ.–24

'बालगणेशः' रचना में गणेश की बाललीला को द्योतित करने हेतु 'शार्दूलविक्रीडितम्' छन्द का प्रयोग किया गया है। 19 वर्णों एवं मगण–सगण–जगण–सगण–तगण–तगण–तगण–गुरु गणव्यवस्था के लक्षण से युक्त शार्दूलविक्रीडितम् छन्द में बालगणेश एवं भगवान शिव के कण्ठाहार के रूप में विराजित सर्पराज की लीलाओं का सुन्दर वर्णन किया गया है, यथा–

"मुग्धो रोहति कर्णयोः शिवशिरोदेशे तथा स्कन्धयोः,
पृष्ठे सर्पति फुत्करोति सहसा लीनो जटाजूटके।
क्रोडस्थो गणनायकः स्पृशति तं बालो गणेशो यदा,
शम्भोः व्यग्रमनाः अहिः स हरते क्रीडन् मनः योगिनः।।"[1]

इसी तरह लेखक द्वारा नटवरः, नवनीतचौरः, बालकृष्णः, दरिद्रार्भकः, बलरामकृष्णौ, प्रहेलिका क, प्रहेलिका ख, द्रव्यहीनबालः, बालमनोविनोदः इत्यादि कविताओं में भी शार्दूलविक्रीडितम् छन्द का प्रयोग किया गया है।

आधुनिक परिवेश में बालक और बालिकाओं में अत्यधिक भेदभाव व्याप्त है। प्रत्येक पिता सन्तान के रूप में पुत्र की प्राप्ति चाहता है। कन्या (पुत्री) को लेकर समाज में अनेक दुर्गुण विद्यमान है। इन्हीं के सन्दर्भ में लेखक द्वारा कन्याभ्रूण हत्या जैसी सामाजिक समस्याओं को प्रस्तुत काव्य में स्थान दिया है। 'कन्याभ्रूणध्वनिः' कविता में गर्भस्थ कन्या के द्वारा पिता को इस निन्दित कर्म को त्यागने का आह्वान् किया गया है–

अहो मत्पितर्दृश्यसे लोकभीतो
यतो कोमलांगीं निहन्तुं प्रवृत्तः।
त्यजैतत् कुकृत्यं जघन्यं विनिन्द्यं
न मारय पितर्मां त्वदीया सुताहम्।।[2]

कन्यारूपी भ्रूण अपने पिता से प्रार्थना करता है कि हे पिताजी! आप इस जघन्य एवं निन्दित कार्य का परित्याग कर दो। मुझे मत मारो। मैं आपकी ही सन्तान हूँ।

कवि भारत की सांस्कृतिक धरोहर को अक्षुण बनाये रखते हुए श्रीकृष्ण, गणेश, श्रीराम, अभिमन्यु, कौटिल्य, बालक ध्रुव जैसे पात्र आधारित कविताओं के माध्यम से प्राचीन एवं पवित्र भारत भूमि में जन्में महापुरुषों के दिव्य कार्यों से भी बालकों को परिचय करवाता है। 'श्रीरामः' (पृ.–28) कविता बालकों में मातृभक्ति, पितृभक्ति, वचनपरायणता, सत्य जैसे नैतिक मूल्यों का संचार करती है। इसी तरह 'भारतम्' (पृ.–25), 'तिरङ्गाध्वजमानम्' (पृ.–31), 'सैनिकः' (पृ.–32)

---

1. 'बालगुंजनम्', पृ.–13
2. 'बालगुंजनम्', पृ.–54

कविताएँ बालकों में देशप्रेम, अनुशासन एवं कर्तव्यपरायणता का सन्देश देती है। राष्ट्रीय भावना का सुन्दर दिग्दर्शन करवाने वाली 'भारतम्' कविता की कुछ पंक्तियाँ उल्लेखित है–

"मम देश एष भव्यः
बहु रोचते सुरम्यः
विविधाश्च वेशभूषाः
नैकाश्च श्रव्यभाषाः।
पूजाविधिः प्रशस्यः
बहुधर्मजातिसेव्यः।।"[1]

'पिपीलिका' (पृ.–43) कविता के माध्यम से कवि बालकों को संघटित रहने, सहयोग की भावना एवं 'संघे शक्ति' की भावना को अपनाने का सन्देश प्रदान करता है–

"पिपीलिकां सम्पश्यतुबन्धो!
संघे याति सदा मुदिताः,
शिक्षयतीव सखे लघुदेहा
संघे निवसतु सा तृषिताः।।"

लेखक ने प्रस्तुत काव्य के मुख्य पात्र दशवर्षीय बालक विभव की मनःस्थिति को प्रकट करते हुए उल्लेख किया है कि, यह जीवन रूपी चक्र रेल की यात्रा के सदृश निरन्तर परिवर्तनशील है। यथा–

"दशवर्षीयो न्यगदत् पुत्रः
निशि विभवो मां मनोगतम्
रेलयात्रासमतुल्यम्
जीवनमस्ति पितः निखिलम्।।"[2]

अन्त में लेखक वर्तमान भारतीय सरकार द्वारा प्रायोजित 'स्वच्छ भारत अभियान' की संकल्पना को चरितार्थ करता हुआ 'स्वच्छता' बालगीत के माध्यम से सम्पूर्ण परिवेश को स्वच्छ एवं साफ रखने का नैतिक उपदेश प्रदान करता है–

"मा क्षिप कच्चरमेवं मातः
स्वच्छः देशः करणीयः।
तोयं शुद्धं शुद्धो वायुः
अस्माभिः सङ्कल्पनीयः।।"[1]

---

1. 'बालगुंजनम्', पृ.–25
2. 'बालगुंजनम्', पृ.–46

गुण्डमि गणपय्य विरचित : बालकवितासंग्रह

संस्कृत बाल साहित्य परिषद के फेसबुक पेज पर डॉ. सम्पदानन्द मिश्र द्वारा प्रतिदिन उभरते हुए बाल–कवियों की मुक्तक छन्द में निबद्ध कविताओं को दर्शकों के मध्य रखा जा रहा है। आमुखपटल के उपर्युक्त पेज पर गुण्डमि होळ की अनेक बाल–कविताएँ प्राप्त होती है, जिनको यहाँ 'बालकवितासंग्रह' के रूप में परिलक्षित एवं समीक्षा के लिए ग्रहण किया गया है।

इन बालगीतों में, 'एहि एहि चन्दिर', 'नमामि–गणपं–नमामि शुभदं', 'रक्षत वृक्षानस्मान्', 'संस्कृतदीपं ज्वालयामः', 'मातः चन्दिर एकाकी', 'संख्यापरिचय', 'कृष्णः नृत्यति हृदये', 'कोकिलः कूजतु पंचमरागम्', 'अस्मद् गृहस्य विडालः', 'चलति वाष्पयानं झटिति' एवं 'वर्णमाला' इत्यादि सरल–सरस बालसुलभ गीतों की रचना की गई है।

प्रस्तुत बाल–कविताओं का मुख्य प्रयोजन बालकों को चर–अचर जगत् की वस्तुओं से परिचय करवाना है। कवि 'अस्मद्गृहस्य विडालः' कविता में घर में पालित बिल्ली की विभिन्न गतिविधियों का उल्लेख करता है। कवि कहता है कि मेरे घर की बिल्ली दिन में तो शांत अवस्था में किसी कोने में बैठी रहती है तथा रात्रि को यदि चूहाँ दिखाई देता है तो उसे मन्द चाल से पकड़ लेती है किन्तु मार देती है–

"अस्मद्गृहे निवसत्येकः स्थूलो विडालः।
दिवा सा मौनी कोणे तिष्ठति नेत्रे सम्मील्य।।
रात्रौ मन्दं संचरति मूषकं यदा पश्यति।
क्रूरः सन्नुत्पतति तदा स किल शार्दूलः।।"

इसी प्रकार कवि सरल–सरस, अनुरणात्मक एवं गेयात्मक भाषा शैली में 'चलति वाष्पयानम् झटिति' कविता के माध्यम से बालकों वाष्पयान (रेल) से परिचय करवाता है। यथा–

"चक भक चक भक
चलति वाष्पयानम्।
झटिति रचयति
पेटीरूपां मालाम्।।"

कवि का कथन है कि रेलगाड़ी दिन–रात यात्रा करती है। उसमे भिन्न–भिन्न भाषा–भाषी वाले व्यक्ति यात्रा करते है। वह सभी एक भाव से भाईचारे व सद्भाव का संचार करते है।

इसी प्रकार 'नमामि गणपं' कविता में कवि स्वाभाविक रूपधारी से भगवान गणेश की दिव्य मूर्ति को प्रणाम करता है–

---

1. 'बालगुंजनम्', पृ.–64

"मधुरं मोदकमतुलं खादसि
मूषकेण त्वं मन्दं चलसि।
पतेयमितीक्षुदण्डं श्रयसि,
भिन्द्यादुदरमित्युरगं धरसि।।"

'स्वरमाला' कविता के माध्यम से कवि बालकों को एकादश स्वरों (11) का काव्यमय भाषा में परिचय करवाता है–

"अ अम्बा अस्माकम्, आ आदरपात्रम्
इ इहलोके सा तु, ई ईश्वरीय पूज्या।।
उ उदारचरितम्, ऊ ऊनभावरहितम्।
ऋ ऋजुना सह जीवनम् अस्माकं भवतु।।
ए एक सूत्रबद्धता ऐ ऐक्यमस्तु सकलानाम्।
ओ ओजसा च जनता, औ औन्नत्यं प्राप्नोतु।।"

इसी तरह विभिन्न मंत्रात्मक वाक्यों के माध्यम से बालकों को असत् मार्ग को त्यागकर कल्याणकारी सन्मार्ग पर चलने की शिक्षा प्रदान की गई है। कवि समस्त मानवजगत् को आह्वान करता है कि, संस्कृत रूपी दीपक को पुनः प्रज्ज्वलित करना होगा। कवि, 'संस्कृतदीपं ज्वालयामः' कविता में 'असतो मा सद्गमय', तमसो मा ज्योतिर्गमय, 'तेजस्विनामधीतमस्तु मा विद्विषावहै', मंत्र का प्रयोग करते हुए प्रस्तुत कविता की रचना करता है–

"संस्कृतदीपं ज्वालयामः
भारतीयनिर्मलहृदये।
साधयामः सकलजनानां
विश्वबन्धुतामिह भुवने।।"

इसी तरह लघु–लघु बालकों को संख्या ज्ञान करवाने के उद्देश्य से संगीतात्मक भाषा शैली में कविता की रचना की गई है, यथा–

एकं द्वे त्रीणि आगच्छन्ति मित्राणि।
क्रीडितुमत्र क्रीडाङ्गणे एकत्र मिलन्ति सर्वाणि।।
चत्वारि पंच षट् सप्त क्रीडनेन बहु सन्तृप्ताः।
सर्वे बाला आयासेन सूर्यातपेन च सन्तप्ताः।।
अष्ट नव दश सर्वान् गणयति नरेशः।
धावन्ति बाला स्वगृहं गन्तुं तान् अनुधावति लोकेशः।।

पर्यावरण की रक्षा करना सम्पूर्ण मानव सृष्टि का नैतिक दायित्व है। 'रक्षत वृक्षानस्मान्' कविता बालकों में प्रकृति प्रेम की भावना उत्पन्न करने में पूर्णतया समर्थ है, यथा–

"रक्षत वृक्षानस्मान्
भवतां रक्षां कर्तुम्।
भवता सृष्टं मालिन्यं
निधाय हृदयेऽशेषाम्।
निर्मलसर्गं रचयित्वा
विदधामो बहुसन्तोषम्।।"

बालकों के मन में आह्लाद एवं सत्व गुण को जाग्रत करने वाली 'कृष्णः नृत्यति' बाल–कविता बच्चों को कृष्ण के परम वैभव का ज्ञान करवाने में पूर्णतया समर्थ है। मधुर रस की छठा से ओत–प्रोत एवं भाव–विभोर करने वाली कविता उल्लेखित है–

"कनक–पुरस्कृता–मणिमय–भूषं
राधा–राग–विराजित–वेषम्।
वेणु–निनाद–विलासित–लास्यं
नक्तानवरदं कलयतु नित्यम्।।"

अन्ततः सुसभ्य समाज का सर्जन करने, राष्ट्र की नैतिक अभिवृद्धि करने में उपर्युक्त बालकविताएँ यथार्थतः चिरस्मरणीय रहेगी, ऐसा मेरा दृढ़ मत है।

'बालगीतानि'

संस्कृत बाल–साहित्य परिषद, पुण्डुचेरी के आमुखपटल पृष्ट पर डॉ. सम्पदानन्द मिश्र द्वारा दिन–प्रतिदिन कुछ–न–कुछ लघु–लघु बाल–कविताओं को बाल–पाठकों के लिए प्रस्तुत किया जाता रहा है। हमें इस पृष्ठ के माध्यम से संस्कृत बाल–साहित्य के आधुनिक लेखकों से परिचित होने का अवसर मिलता है। डॉ. शशिपाल शर्मा के नाम से इस पृष्ठ पर 'बालगीतानि' शीर्षक से अनेक सरस–सरल बालगीतों का संग्रह प्राप्त हुआ है जो मनोरंजन, प्रकृति परक, पशु–पक्षी पात्र आधारित सुन्दर वर्णन से युक्त है।

बालकों में संस्कृत भाषा का अवबोध करवाने एवं उपदेशात्मक गुणों का संचार करवाने वाली कविता का सुन्दर प्रयोग द्रष्टव्य है–

अहम् आवाम् वयम्
वदामि वदावः वदामः सत्यम्।

कवि प्रस्तुत कविता में 'अस्मद्' सर्वनाम शब्द की सातों विभक्तियों के साथ ही उपदेशात्मक तरीके से विभक्ति ज्ञान करवाने में पूर्णतया सक्षम है। कवित द्वारा हिन्दी बाल

साहित्य की 'मछली जल की रानी' कविता के समान ही बालकों को सरल–सरस, सुन्दर कविता का परिचय करवाया है–

मत्स्यी मत्स्यी जलस्य राज्ञी
सदा हि नीरे प्राणमयी रे
स्पर्शं प्राप्ता यास्यति भीता
अजलं मीना प्राणविहीना
मत्स्यी मत्स्यी जलस्य राज्ञी।।

कवि ने बालकों को प्रकृति के अवबोध हेतु लघु–लघु कविताओं का प्रयोग किया है, यथा प्रातःकाल का वर्णन करवाने वाली 'उदयति सूर्यः विकसति कमलं', भारतभूमि की पवित्रता का ज्ञान करवाने वाली 'अखिले भुवने भारतदेशः' कविता बुद्धि की अधिष्ठात्री सरस्वती का 'सलिले हंसः हंसे कमलं' कविता के माध्यम से सुन्दर वर्णन किया गया है। इसी तरह मनोरंजन पक्ष से युक्त **'गजः'** कविता की कुछ अनुरणात्मक भाषा शैली में पंक्तियाँ उल्लेखित है–

"शृण्डात् शुं शुं शब्दं कृत्वा
मन्दं मन्दं चलति गजः।
घण्टाभिः टन् टन् टन् कृत्वा
अग्रे अग्रे चलति गजः।
मन्दं मन्दं चलति गजः।।"

प्रस्तुत काव्य–पंक्तियों में वर्णानुप्रास (मन्दं मन्दं) का सुन्दर प्रयोग किया गया है।

इसके अतिरिक्त डॉ. सम्पदानन्द मिश्र के संस्कृत बाल–साहित्य परिषद् के आमुख पटल पृष्ट पर आधुनिक लेखकों की बाल–कविताएँ स्वतन्त्र रूप से प्राप्त हुई है। यह बाल कविताएँ या गीत संस्कृत बाल–साहित्य के भण्डार में अभूतपूर्व वृद्धि कर रहे है। इन बाल कविताओं में आचार्य लक्ष्मीकान्त जाम्बोकर द्वारा रचित 'जन्मदिनम्' बालगीत, ए. वासुदेवलाल प्रणीत 'सरल–वार्तालापः' गीत, नरसिंह एम. भट्ट प्रणीत 'वीर रे पुरश्चल' बालगीत, डॉ. राजकुमार मिश्र प्रणीत', 'डयते–कथमाऽऽाकाशम्', एस. हेमलता विरचित, 'राजण्णस्य पार्श्वगृहे', तथा डॉ. विश्वास लिखित, 'रे–रे मशक' बालगीत अत्यन्त प्रसिद्ध है।

इसी तरह डॉ. विश्वास द्वारा 'भवतां रक्षां कर्तुम्', तथा 'विचरसि वायो कुत्र?' बालगीत, श्रीधर भास्कर वर्णेकर प्रणीत, 'लोकहितंममकरणीयम्' बालगीत, प्रो. बनमाली विश्वाल द्वारा रचित, 'नृत्यति वर्षा राज्ञी' एवं 'सुन्दरो में प्रियः ग्रामः' तथा 'आयाति रेलः', 'जनार्दन हेगड़े प्रणीत', 'मम अङ्गानि' बालगीत, आशा अग्रवाल प्रणीत, 'शिशुगीतम्', नारायण दाश प्रणीत 'आम्रम् आम्रे आम्राणि', डॉ. अंजुबाला प्रणीत', 'गायन्ति चटका', युवा लेखक कौशल तिवारी प्रणीत', शीघ्रमेवागच्छेद् ग्रीष्मावकाशः', 'भास्करः' तथा 'कियान् सुन्दरोऽसि त्वं मातुलः' बाल कविताएँ,

तरुण मित्तल 'तारा' प्रणीत, 'नूतनयानम्', 'बालः चलति चलति माता', आचार्य डम्बरुधरपति विरचित, 'बालजीवनम्' इत्यादि बालगीत बाल भावों को ध्यान में रखते हुए प्रणीत किए गए हैं।

(ख) बाल कथासाहित्य

विश्वकथासाहित्य में भारतीय कथासाहित्य का स्थान सर्वोत्कृष्ट एवं सर्वोपरी रहा है। अतः भारतीय कथासाहित्य को विश्वकथासाहित्य का जनक भी कहा जाता है। अधिकांश कथासाहित्य में किसी व्यक्ति विशेष का वर्णन न करके जलचर–नभचर पशु–पक्षियों को संकेत के रूप में उपस्थित करके बालकों एवं किशोरों को नीतिप्रद, आचार–विचार, कर्त्तव्य–अकर्त्तव्य का उपदेश प्रदान किया गया है। भारतीय कथासाहित्य माधुर्य, मनोहरता, भावप्रवणता एवं उपदेश परक होने के कारण संसार के समस्त कथाप्रेमियों के द्वारा प्रशंसित एवं समादृत है। वस्तुतः ऋग्वेद के सरमा–पणि संवाद सूक्त (10/108) से संस्कृत कथा–साहित्य का उद्गम माना जाता है। इसके अनन्तर छान्दग्योपनिषद के सत्यकामजाबाल उपाख्यान में भी कथासाहित्य का आविर्भाव देखा जाता है। यहाँ हंस तथा मृदगु जलचर पक्षी द्वारा ब्रह्मविद्या का उपदेश प्रदान किया गया है।

महाभारत में हमें पशु–पक्षी कथाओं का अत्यन्त विकसित रूप प्राप्त होता है। यहाँ श्वान–हस्ति–कछुआ–मत्स्य–बिल्ली जैसे प्राणियों के माध्यम से नीति आधारित कथाएं कहीं गई है। इसके अनन्तर पं. विष्णु शर्मा विरचित 'पंचतन्त्र' एवं नारायण पण्डित विरचित हितोपदेश में कथासाहित्य का परिपक्व रूप प्राप्त होता है।

वस्तुतः पंचतन्त्र नीतिशास्त्र परक ग्रन्थ होने के साथ ही मनोरंजन, हास–परिहास, ललित एवं हृदयग्राही तत्वों से युक्त है।

वस्तुतः 20वीं शताब्दी के अनन्तर संस्कृत बाल–साहित्य की कथा–विधा के अन्तर्गत अनेक बालकथाओं का प्रणयन किया गया है। सम्पूर्ण लिखित बालकथाओं का प्रयोजन संस्कृत भाषा का ज्ञान करवाने के साथ ही मनोरंजन एवं उपदेश प्रदान करना भी है। वस्तुतः इस सदी में लिखित अधिकांश बालकथाएँ सम्भाषण शैली में अत्यन्त सरल रूप में प्रणीत की गई है। इन बालकथाओं में प्रमुख है– डॉ. केशवचन्द्रदाश द्वारा प्रणीत ''एकदा'' एवं ''महान्'' डॉ. अभिराजराजेन्द्रमिश्र द्वारा प्रणीत, ''अभिनवपंचतन्त्रम्'', प्रो. जनार्दन हेगड़े विरचित, ''बालकथासप्ततिः'' डॉ. पूजा उपाध्याय द्वारा लिखित ''बालकथा'', प्रो. सुकान्तसेनापति द्वारा प्रणीत, ''सुकान्तकथाविंशतिः'' स्व. पद्मशास्त्री विरचित, ''विश्वकथाशतकम्'' भि. वेलणकर विरचित, ''बालकथाकुंजम्'' एवं ऋषिराज जानी द्वारा रचित ''चमत्कारिकः चलदूरभाषः'' प्रमुख है।

डॉ. केशवचन्द्र दाशः

(i) महान्

आधुनिक संस्कृत रचनाकारों में विद्वन्मणि आचार्य डॉ. केशवचन्द्रदाश का नाम आदर के साथ लिया जाता है। आपके द्वारा लिखित एवं प्राप्त रचनाधर्मिता में काव्य, लघुकथा, बालकथा तथा आख्यायिका प्रमुख है। बालकथा विधा में आपके द्वारा ''महान्'' तथा ''एकदा'' यह दो लघुकाव्य प्राप्त होते है। ''महान्'' बालकथा में(1991 ई.) बालमन को केन्द्रबिन्दू मानते हुए एकादश (11) लघुकथाओं का संग्रह किया गया है। प्रस्तुत ग्रन्थ का नामकरण 'महान्' बालकथा के आधार पर किया गया है। महान् शब्द 'महत्' शब्द से प्रथमा विभक्ति एकवचन में निष्पन्न हुआ है। जिसका शाब्दिक अर्थ है– बड़ा, विस्तुत, व्यापक, विशाल आदि। यहाँ 'महान्' शब्द सम्राट अशोक महान् के सदृश गुणों वाले किसी सामान्य बालक 'अशोक' नामधारी के महान् कार्यों से सम्बन्धित है।

कथाकार द्वारा प्रत्येक कथा में सामान्य बालकों के चरित्र को उपदेशात्मक आधार पर चरितार्थ किया गया है। कथा का प्रत्येक पात्र अपने महान् कार्यों से बालकों को सद्मार्ग की शिक्षा देते है। प्रथम बालकथा 'स्वराज्यम्' में अयोध्या नरेश मर्यादा पुरुषोत्तम राम, दृढ़ प्रतिज्ञा सम्पन्न लक्ष्मण तथा क्रोधी प्रवृत्ति वाले ऋषि दुर्वासा के चरित्र का स्वाभावोक्तिपूर्ण वर्णन किया गया है। वस्तुतः प्रत्येक पात्र अपने–अपने कार्य में प्रतिज्ञाशील है। लक्ष्मण, राम की आज्ञा का पालन करते हुए द्वार पर उपस्थित ऋषि दुर्वासा को राम से मिलने हेतु रोक लेता है। तब दुर्वासा लक्ष्मण से क्रोधपूर्ण तरीके से कहता है कि– "अरे.......। न मां वेत्सि? मामपि वारयसि? कियति मे शक्तिरिति जानासि? निमेष मात्रेणैव त्वं, रामम्, अयोध्यानगरीं च भस्मात् करिष्यामि।"[1] किंतु अंततः लक्ष्मण राज्यहित को प्राथमिकता देते हुए दुर्वासा ऋषि को प्रवेश करने देता है। लक्ष्मण का कथन है कि– "निजजीवनविनिमयेन देश एव रक्षणीय इति विचिन्त्य लक्ष्मण प्रवेशाय महर्षिमनुमतवान्।"[2] यहाँ लक्ष्मण कठोपनिषद् के नचिकेता के समान है जो पिता के हित मृत्यु को भी स्वीकार कर लेता है। कथा के अन्त में बालकों को उपदेशित किया गया है कि विवेकशील पुरुष स्वयं अपने हाथों से कभी भी राज्य का विनाश नहीं करता है। अतः अच्छी तरह सोच विचारकर ही कार्य को सम्पन्न करना चाहिए।

द्वितीय कथा ''शेषस्मितम्'' की कथावस्तु महाभारत के कौरव–पाण्डव युद्ध प्रसङ्ग से अनुगृहीत की गई है। कथा के अनुसार कुरु अधिपति दुर्योधन मरणासन्न स्थिति में है। कथा का नामकरण भगवान श्रीकृष्ण की दुर्योधन के प्रति की गई अंतिम मुस्कान (स्मितम्) से है। दुर्योधन श्रीकृष्ण को कपटी एवं पाखण्डी जैसे शब्दों से सम्बोधित करता है। कथा के अन्त में दुर्योधन

---

1. 'महान्', पृ.–3
2. 'महान्', पृ.–3

मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। भगवान् श्रीकृष्ण की विनय ध्वनि तथा ध्वज पताका से कथा का समापन होता है। वैदिक वाक्य का प्रयोग करते हुए बालकों को उपदेशित किया गया है कि– "पृथ्वी मेरी माता है और मैं पृथ्वी का पुत्र हूं।"[1]

तृतीय कथा ''संघं शरणं गच्छामि'' कथा में बौद्ध संन्यासिनी पारमिता के उदार चरित्र का वर्णन किया गया है। प्रस्तुत कथा में बौद्ध भिक्षुओं के निवासस्थान 'संघ' की पवित्रता एवं महत्ता का वर्णन है। बौद्ध भिक्षुणी पारमिता मितभाषी, उदार ह्रदया एवं स्वभाव से व्यवहारकुशल है। पारमिता संघ की महत्ता प्रतिपादित करते हुए उपदेश देती है, "प्रत्येकं जनः स्वयमेकः संघः। तस्य निष्ठा संघस्य नीतिः। तस्या सुचिन्ता संघस्य आदर्शः। संघः सत्यस्य आधारः। सत्यप्रतिष्ठापनाय प्रतिगृहं च शान्तिप्रापणाय संघस्य स्थापना।।"[2] प्रस्तुत कथा में सत्य को त्रिकालबाधा रहित (भूत–भविष्य– वर्तमान) के रूप में प्रतिपादित किया गया है। यथा– "सत्यं तत् त्रिकालबाधारहितम् तदेव हितं साधय। नाहितम्। व्यवहारे सत्यं प्रतिफल। सत्यं शरणं गच्छ। तयेव धनम्। तदेव रत्नम् नान्यत्।"[3] कथा के अन्त में सम्पूर्ण जगत् को सत्य की शरण में जाने का नैतिक उपदेश दिया गया है– "सत्यं शरणं गच्छामि।"[4]

चतुर्थ कथा ''पिशाचः'' का नामकरण कवि आधुनिक परिवेश में निवासरत सम्पूर्ण पुष्फल गतिवान मनुष्यों के लिए किया गया है। कवि उल्लेख करता है कि आज का मनुष्य चोरी, निन्दा, परपीड़ा, घृणा जैसे बुरे कार्यों को करने में लगा हुआ है। वह अपनी बुद्धि का प्रयोग प्रतिदिन कलह करने, विवाद एवं मृत्यु का मार्ग निर्मित करने में कर रहा है। कथा का प्रारम्भ परदेश गए किसी साधु के 2 वर्ष पश्चात् अपने निवासस्थान लौटने से होता है। कथाकार का कथन है कि अब गाँव का परिवेश परिवर्तित हो गया है। अब गाँव आधुनिक नगर बन चुके है। आजीविका के साधन भी परिवर्तित हो गए है। कवि का मत है कि विकास की अंधी दौड़ में वृक्ष ठूँठ में बदल गए है। यह स्थाणू (ठूंठ) रात्रि में पिशाच बनकर मनुष्यों को डराते है। कवि ने प्रस्तुत कथा में पर्यावरणीय पक्ष को भी उजागर किया है। स्वार्थ के वशीभूत होकर पिशाच रूपी मानव प्रतिदिन वनों का विनाश कर रहा है।

पंचम कथा ''तमसा'' का नाम रात्रि के पर्यायवाची के रूप में किया है। कथा की मुख्य पात्र बालिका कुमुदिनी (कुमी) को रात्रि में अत्यधिक डर लगता है। वह प्रत्येक रात्रि को उल्लू के बच्चे की आवाज सुनकर उसे देखने के लिए बाहर जाती है। उसकी माता उसे बाहर निकलने से रोकने के लिए तरह–तरह के उपाय करती है। माता उससे कहती है कि निशाचर

---

1. अथर्ववेद, 12.1.12
2. 'महान्', पृ.–7
3. 'महान्', पृ.–7
4. 'महान्', पृ.–7

रात्रि में सर्वत्र विचरण करते है। किंतु कुमी जिज्ञासा वश माता से निशाचरों के सन्दर्भ में प्रश्न करती है कि–

"– को नाम निशाचरः?
– निशाचरो नाम यः रात्रौ विचरति।
– चन्द्रोऽपि रात्रौ विचरति। स किं निशाचरः?
– न....न....। निशाचराः दुष्टाः। ते न कदापि
प्रकाशं वांछन्ति। तमसि सदा निवसन्ति।"[1]

कथा के अन्त में कोओं द्वारा पेचकशिशु को मार दिए जाने पर कुमी अत्यन्त दुःखी हो जाती है। फिर भी कुमी प्रत्येक रात्रि को उनको देखने हेतु बाहर निकलती है। कुमी के अन्तर्मन में अभी भी पेचक शिशु है।

षष्ठ कथा ''याञ्चा'' का कथानुसार अर्थ है कि सन्तान को अपने पिता से किसी भी अप्राप्य वस्तु की मांग नहीं करना चाहिए। मनुष्य को निरंतर कर्म पथ पर अग्रसर रहना चाहिए। प्रस्तुत कथा में दो मुख्य पात्र है, माला एवं मालती। कवि काल परिवर्तन की तुलना कन्या की अवस्था से करता है। कवि का कथन है कि जिस प्रकार मनुष्य की अवस्था परिवर्तित होती रहती है उसी प्रकार जीवन में समय भी अवश्य परिवर्तित होता है, यथा–

"कन्या तु सदा कन्यात्वेन न तिष्ठति। अवश्यं सा वधूः भवति। जननी च भवति। जीवने समयः परिवर्तनमानयति।"[2] कवि गुणों एवं कार्यों के अनुरूप ही पात्रों का नाम निर्धारित करता है। माला का स्वभाव उदार है। वह कृषि कर्म में निपुण है। वह उद्यान की वृद्धि हेतु प्रत्येक दिन परमात्मा से वर्षा की कामना करती है यतोहि कवि जल पर ही निर्भर है। दूसरी तरह मालती का व्यवसाय घट–निर्माण करना है। वह सूर्यदेव से प्रखर ताप की याचना करती है।

सप्तम कथा ''महान्'' का नामकरण बालक अशोक के द्वारा अपने जीवन में सम्पन्न महान् कार्यों के आधार पर किया गया है। कथा के प्रारम्भ में बालक अशोक को चण्ड, दुर्दन्ड शब्दों से सम्बोधित करते हुए उसका अपमान किया जाता है। बालक अशोक के बुरे कार्यों को देखकर उसके पिता दिवंगत हो चुके है। कथा के मध्य में एक घटना के कारण अशोक के व्यवहार में अकस्मात् परिवर्तन होता है। अब वह अशोक महान् के नाम से प्रसिद्ध हो गया है।

अष्टम कथा ''संगतस्वप्नः'' का कथानक कवि द्वारा मुद्राराक्षस नाटक के चाणक्य–राक्षस संवाद से ग्रहण किया गया है। चाणक्य अपने स्वप्न के अनुसार राक्षस को चन्द्रगुप्त का अमात्य बनाना चाहता है। चाणक्य चन्दनदास के माध्यम से अंततः राक्षस को चन्द्रगुप्त मौर्य का प्रधान

---

1. 'महान्', पृ.–11
2. 'महान्', पृ.–13

अमात्य बनने हेतु विवश कर देता है। कवि प्रस्तुत कथा में हास्य रस के छः प्रकारों का सुन्दर प्रयोग करता है। जिनका संक्षिप्त प्रयोग द्रष्टव्य है–

(क) हसितः – चाणक्यः विकटहास्यमुखेन अवदत्।[1] (ख) अवहसितः – कुटिलरीत्या चाणक्यः अहसत्।[2] (ग) अतिहसित – चाणक्यः – अट्टहास्यमकरोत्।[3] (घ) अपहसित् – चाणक्यः ह्रन्मुक्तमहसत्।[4] (ङ) स्मित् – चाणक्यः सहासमबोधयत्।[5] (च) अतिस्मित् – चाणक्य–मनाग् विहस्य अवदत्[6] प्रस्तुत कथा में राक्षस के स्वभाव में सत्य, कर्तव्यपरायणता एवं स्वामिभक्ति के गुण परिलक्षित होते है। वह अपने प्राणों को देकर भी मित्र चन्दनदाश के प्राणों की रक्षा करना चाहता है। यथा– "अहं तु दण्ड्य एव। मित्रनिमित्तं यदि मे जीवनं समर्पितुं स्यात् तर्हि अहं धन्यो भवेयम्। मामेव व्यापदयतु। मम मित्रं परित्यजतु।"[7]

नवम कथा, ''वेतालगुहा'' का नामकरण किसी पर्वतप्रदेश पर स्थित कल्याणकारी गुफा के आधार पर किया गया है। कवि वेतालगुहा स्थित पर्वत का स्वाभाविक वर्णन करते है–

''अदूरे पर्वतो भयङ्करः। धूसरोऽयम् पाषाणमयस्तूपः। पाषाणानांविमुक्तसन्धयः साक्षात् राक्षसाः। पर्वतस्य असृणप्रदेशा निष्पादयाः। उपत्यक्तायां गुल्मराशिः जटिलः। अधित्यकायां कण्टकलता जालमयी। उपरि निर्झरधाराः। मार्गस्तु वक्रः अत्र।"[8] प्रस्तुत कथा में गुफा को वेताल का निवासस्थान, डोरा नाम वाली कन्या की दिवंगत आत्मा के रूप में तथा महान् योगी के निवासस्थान के रूप में चित्रित किया गया है।

दसवीं कथा ''दक्षिणा'' का नामकरण भारतीय गुरुजनों के माध्यम से दक्षिणा के बदले मलेच्छों को विद्या प्रदान करने के आधार पर किया गया है। अन्तिम कथा ''उमा'' का नामकरण लघुबालिका 'उमा' के नाम पर किया गया है। 'उमा' माध्यमिक विद्यालय की अन्तिम कक्षा की छात्रा है। कवि प्रस्तुत कथा के माध्यम से एकल परिवार की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति का सुन्दर वर्णन करता है। उमा के माता–पिता सुबह से शाम तक आजीविका के लिए घर से बाहर रहते है। उमा का लालन–पालन धाय माँ के द्वारा किया जाता है। उमा का मन दिनभर अकेले रहने से विखण्डित हो गया है। कवि उमा के माध्यम से समाज एवं राष्ट्र को सन्देश देता है–

---

1. 'महान्', पृ.–17–20
2. 'महान्', पृ.–17–20
3. 'महान्', पृ.–17–20
4. 'महान्', पृ.–17–20
5. 'महान्', पृ.–17–20
6. 'महान्', पृ.–17–20
7. 'महान्', पृ.–19
8. 'महान्', पृ.–21

"यदि व्यक्तिः खण्डिता तर्हि परिवारोऽपि खण्डिताः।

विखण्डिते परिवारे देशोऽयं खण्डितः। समाजश्च तथा।"[1]

कथा का अन्त शुक्ल यजुर्वेद के शिवसंकल्पसूक्त से होता है जिसके माध्यम से कवि प्रार्थना करता है कि सम्पूर्ण प्राणियों का मन कल्याणकारी संकल्पों से युक्त हो जावे।

(ii) एकदा

प्रस्तुत बालकथा काव्य में निबद्ध सम्पूर्ण कथाएँ प्रश्नात्मक एवं संवादात्मक शैली में प्रस्तुत की गई है। सभी कथाएँ लघुकथा काव्य की सभी विशेषताओं से युक्त है। मार्मिकता का पुट सभी लघुकथाओं में व्याप्त है। सभी लघुकथाओं की परिणति अद्भुत रस में होती है। एक–दो पात्रों का चरित्र चित्रण ही मुख्यतया परिलक्षित होता है। सभी लघुकथाओं में बालोपयोगी सरल–सरस, भाषा शैली एवं लघु–लघु वाक्यों का प्रयोग किया गया है।

प्रत्येक कथा का प्रारम्भ आश्चार्योंमूलक 'एकदा' शब्द से होता है। 'एकदा' पद बालकों के कोमल पटल को ध्यान में रखते हुए समावेशित किया गया है। यथा–

"पितामही जलं पीत्वा प्रथमतः गलकं परिष्कारोति।

तदन्तरमारभते एकदा........एकदा कश्चिद् वनेचरः मृगयां

समाप्य गृहं प्रत्यागच्छति स्म।"[2]

एकदा शब्द के साथ ही कथाओं में कल्पना का पुट सर्वत्र परिलक्षित होता है। सभी कथाओं में प्रश्नात्मक एवं सम्भाषणात्मक शैली का प्रयोग किया गया है। ''विवादः'' प्रस्तुत कथा में वनेचर की वृक्षतुल्य कल्पना का सुन्दर वर्णन प्राप्त होता है–

"शरीरं तस्य पर्णमयम्। तस्य मस्तकं यथा वृक्षस्य अग्रभागः। तस्य चरणद्वयं तु साक्षात् शालवृक्षद्वयम्। अन्धकारे मुखं तस्य न दृश्यते। स्वरस्तु श्रुयते।"[3]

प्रत्येक कथा के अन्त में कवि कथा का मर्म समझाने हेतु द्रष्टान्त अलङ्कार का सुन्दर प्रयोग करता है। व्याघ्र, वनदेवता एवं वनेचर के पारस्परिक वार्तालाप में कवि पर्यावरण के मार्मिक पक्ष को रेखांकित करता है। साथ ही मानव की भौतिकवादी सोच को भी परिलक्षित करता है–

---

1. 'महान्', पृ.–25
2. 'एकदा', पृ.–29
3. 'एकदा', पृ.–29

"अहं मनुष्यः। अहमेव महान्। मयि महती शक्तिरस्ति। अधुनैव वनं भस्मसात् करिष्यामि। वनं यदि दग्धं भविष्यति व्याघ्रोऽपि मरिष्यति। इदानीं युवयोः एकः एव मम वशवर्ती भवतुं अहं सुखी स्याम्। अन्यथा उभयस्य प्राणहानिः भविष्यति।"[1]

बालकों के भाषा कौशल में अभिवृद्धि करने हेतु अर्थान्तरन्यास अलङ्कार युक्त सूक्तियों का प्रयोग भी प्रत्यक्ष होता है–

"यद् भवितव्यमासीत् तत्तु घटितमेव।"[2]

"सन्तोषः परमं सुखम्।"[3]

"सत्यस्य वचनं श्रेयः सत्यादपि हितं भवेत्।"[4]

'सत्यम्' कथा के माध्यम से कवि नदी संरक्षण एवं नदियों की सफाई का भी उपदेश देता है। बालक कृष्ण के आह्वन पर सम्पूर्ण ग्रामवासी मिलकर पद्मिनी नदी को साफ करके फिर से उसे जीवंत कर देते है। कवि सत्य की परिभाषा देता है कि, जो केवल सच बोला जाए, वहीं सत्य नहीं होता है, अपितु अच्छी बात कहना भी सत्य होता है, यथा–

"सत्य कथनेन केवलं सत्यं न भवति। यत् कल्याणकरं वचनं तदपि सत्यम्।"[5]

"अभिमानम्" कथा के माध्यम से कवि भालूओं के राजा की अहंकार मनोवृत्ति का उल्लेख करता है। साथ ही बालकों को त्यागी मनुष्य से भी परिचय करवाता है– "यो मनसा व्यवहारेण च शुद्धो भवति, यो वा अभिमानम् अनिष्ठचिन्तां च परिहरति सः एव त्यागी भवति। य गृहं परित्यज्य पलायते सः कदाचिदपि त्यागी न भवति।"[6]

''मृदु'' प्रस्तुत कथा का शाब्दिक अर्थ है मधुर बोलना। प्रस्तुत कथा में कवि पथिक एवं वृक्ष के वार्तालाप के माध्यम से बालकों को मधुर बोलने एवं मधुर व्यवहार करने का उपदेश देता है। ''अहिंसा'' कथा में कवि बालकों को अहिंसा का महत्त्व बताते हुए उसे 'प्रार्थना' का पर्याय मानता है यथा– "प्रार्थनया किं भवति? प्रार्थनया मनः शुद्धं शान्तं च भवति। हिंसा च दूरीभवति। अहिंसायाः आविर्भावे परस्परविवादोऽपि नश्यति।"[7]

प्रस्तुत कथा के माध्यम से कवि बालकों को हिंसा को त्यागकर अहिंसा के मार्ग पर चलने का नैतिक उपदेश देता है। ''तिरस्कारः'' कथा के माध्यम से कवि अपराधी को दण्ड देने की अपेक्षा क्षमा करके उसे सत्कर्म करने का उपदेश देता है। ''अभयम्'' कथा में कवि दानकर्म

---

1. 'एकदा', पृ.–36
2. 'एकदा', पृ.–33
3. 'एकदा', पृ.–36
4. 'एकदा', पृ.–38
5. 'एकदा', पृ.– 36
6. 'एकदा', पृ.–38
7. 'एकदा', पृ.–41

की महत्ता प्रतिपादित करते हुए सत्पात्र को परिभाषित करता है। प्रस्तुत कथा में एक वृद्ध अपनी सत्पत्ति को उस बालिका के नाम करता है, जो बिना किसी प्रयोजन के वृद्ध के बगीचे में लगे हुए वृक्षों–वृक्षलताओं को सींचने का कार्य करती है। ''समदर्शी'' कथा के माध्यम से कवि लड़का–लड़की के मध्य किए जाने वाले भेदभाव को इंगित करता है। पितामही माधव व पुलोमजा के प्रति समान व्यवहार करता है।

"अहं तु समदर्शी। मम दृष्टिः सर्वत्र समानुभावेन निपतति।"[1]

''दैनन्दिनी'' बालकथा के माध्यम से कवि बालकों को उपदेशित करता है कि मनुष्य को कोई भी कार्य करते समय उसका विधिवत नियोजन कर लेना चाहिए। क्योंकि बिना योजना के किए गए कार्यों की परिणति वैसे ही होती है जैसे किसी किसान द्वारा अपने दैनन्दिन कार्य का उल्लंघन किए जाने पर उसके दोनों बैल काल के ग्रास बन जाते है। इसलिए कहा गया है–

"प्रतिदिनं कर्म समीक्षणीयम्। अन्यथा महति हानिः भवेत्।"[2]

प्रो. अभिराजराजेन्द्र मिश्र[3] के कथा लक्षण के अनुरूप 'एकदा' बालकथा में निबद्ध सम्पूर्ण सम्पूर्ण बालकथाएँ सुन्दर गद्य से युक्त।

प्रो. अभिराज राजेन्द्र मिश्र

(i) अभिनवपंचतन्त्रम्

प्रो. राजेन्द्र मिश्र द्वारा यद्यपि पं. विष्णु शर्मा रचित 'पंचतन्त्र' के कथानक का अनुकरण अवश्य किया गया है, किंतु यह अनुसरण पाश्चात्य लेखक प्लेटो प्रतिपादित नकल से साम्यता नहीं रखता है, अपितु अरस्तू के अनुकरण को आत्मसात करता है। अरस्तू का अनुकरण आदर्श प्रतिरूपण है, जिसमें कवि प्रकृति का हूबहू चित्रण नहीं करता है अपितु उसमें अपनी ओर से कुछ नया जोड़ता है। प्रो. मिश्र ने 'अभिनवपंचतन्त्र' में पंचतन्त्र के यथार्थ को अधिक प्रशस्य रूप में अभिव्यक्त किया है।[4] अभिनवपंचतन्त्र नये विष्णु शर्मा सदृश अभिराजराजेन्द्र मिश्र के गद्य साहित्य की कथा विधा का अभिनव सारस्वत साधना है। साहित्यदर्पणकार विश्वनाथ जी ने गद्य का लक्षण प्रतिपादित किया है– कथायां सरसं वस्तु गद्यैरेव विनिर्मितम् (षष्ठ परिच्छेद)। अभिनवपंचतन्त्र में कथावस्तु अत्यन्त सरल–सरस एवं बालसुलभ है। प्रो. मिश्र ने कथाओं को इतिहास के गह्वर से निकालकर मानवेतर पात्रों के साथ–साथ मानव पत्रों के माध्यम से भी बालकों को नीति एवं लोकव्यवहार का अमूल्य बालोपदेश प्रदान कर बाल–साहित्य में नवीन प्रणों का संचार किया है।

---

1. 'एकदा', पृ.–49
2. 'एकदा', पृ.–52
3. अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, निर्मितितत्त्वोन्मेष, पृ.–240
4. पाश्चात्य काव्यशास्त्र, देवेन्द्रनाथ शर्मा, पृ.–69

'अभिनवपंचतन्त्रम्' में 'अभिनव' पद का व्युत्पत्तिपरक अर्थ है, यौवन, वयस्क, नवीन। पंचतन्त्रम् का अर्थ है पाँच तन्त्रों का समाहार अर्थात् यस्मिन् काव्यं अभिनवानि 'पंचतन्त्राणि समाहारः क्रियते तत् काव्यं अभिनवपंचतन्त्रम् इति।

पंचतन्त्र सदृश कथाकार ने प्रस्तुत ग्रन्थ में पाँच तन्त्रों– मित्रसम्प्राप्ति, मित्रभेद, काकोलूकीयम्, लब्धप्रणाश एवं अपरीक्षितकारकम् का प्रयोग किया है, किंतु कवि ने यहाँ पंचतन्त्र की 75 कथाओं को मात्र पंचदश (15) कथाओं में निबद्ध करके ग्रन्थ को नवीनता प्रदान की है। कथाओं में सर्वत्र सामाजिक–नैतिक–सांस्कृतिक पक्ष को ध्यान में रखा गया है। 'मित्रसम्प्राप्तिः' तंत्र में लेखक बालकों को जीवन में सद्गुणों से युक्त मित्र बनाने का उपदेश देते हुए 'मित्र' की परिभाषा देता है–

"मिष्ठभाषी मिताकांक्षी मितव्ययो मिताक्षरः।
त्रस्तशत्रुस्त्रपाशीलो मित्रसंज्ञोऽभिधीयते।।"[1]

कथाकार बालकों को उपदेश देता है कि अच्छी तरह से सोच–विचार कर ही मित्र बनाने चाहिए। शीघ्र अनायास एवं किंकर्तव्यविमुढ़ होकर मित्रता नहीं करनी चाहिए। जैसे–

"विना प्रीतिं विना जातिं विना भावं विना मतिम्।
अकस्माज्जायते यद्धि तद्विनाशाय सौहृदयम्।।"[2]

'काकमैत्रीकथा' के माध्यम से कवि बालकों को समाज में मित्रता के नाम पर किए जाने वाले छल–कपट एवं स्वार्थभाव से सर्वथा दूर रहने का नैतिक उपदेश देता हुआ समान गुणों वाले मनुष्यों से ही मित्रता करने की शिक्षा देता है। वह दुष्ट पुरुषों को कदलीफल के समान मानता है। 'कृतज्ञशल्कीकथा' द्वारा कथाकार बालकों को दैव (भाग्य) की प्रबलता का अवबोध करवाता है–

"मित्रे पराङ्मुखे बन्धौ दूरे पितरि बान्धवे।
सहायो जायते देवं देवेऽरो को नु संश्रयः।।"[3]

'शाकविक्रेतृपुत्रकथा' में कवि बालकों को समाज में विद्यमान ऊँच–नीच, अमीर–गरीब, छुआछूत, भेदभाव इत्यादि असामाजिक तत्त्वों से परिचय करवाता हुआ इनसे दूर रहने की नैतिक शिक्षा देता है। साथ ही वर्तमान सामाजिक वातावरण की संकीर्ण सोच पर भी प्रहार करता है। **'अभिशप्तवानरीकथा'** में कवि देवलोक एवं मृत्युलोक का एक साथ वर्णन करते हुए बालकों को अप्सराजगत् की सामाजिक गतिविधियों का बोध करवाते है। 'दुर्हृद्वणिक्कथा' के माध्यम से कवि वर्तमान प्रशासनिक तंत्र में अतिव्याप्त भ्रष्टाचार जैसे स्वार्थपरक एवं घृणित तत्वों का

1. 'अभिनवपंचतन्त्रम्', प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–9
2. 'अभिनवपंचतन्त्रम्', प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–9
3. 'अभिनवपंचतन्त्रम्', प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–18

उल्लेख करता है। कवि उल्लेख करता है कि मानव के बाल्यकाल में जो संस्कार प्रदान किए जाते हैं वहीं संस्कार अग्रिम अवस्थाओं में परिलक्षित होते है। कवि इसके साथ ही वर्तमान समाज में व्याप्त बाह्य आडम्बरों एवं अंधविश्वासों से भी बालकों को दूर रहने की शिक्षा देता है। 'दस्युप्रणयकथा' में कथाकार बालकों को समाज में विद्यमान दस्युता (लूट, डकैती कर्म) से अवगत करवाते हुए इसके मूलकारणों की और संकेत करता है।

अभिनवपंचतन्त्रम् कथाग्रन्थ के तृतीय तन्त्र 'काकोलूकीयम्' में कवि राजकुमारों को वर्तमान कार्यालयी व्यवहार में निहित भ्रष्टाचार जैसे समाजविरोधी दुर्गुणों से दूर रहने का उपदेश देता है। साथ ही कवि शिक्षा देता है कि अकारण ही मनुष्य को समाज में किसी से विद्वेष नहीं रखना चाहिए। 'उत्कोचकीटाधिकारिकथा' में कवि समाज में विद्यमान व्याभिचार जैसे घृणित कार्यों पर तीव्र प्रहार करता है–

"द्वितीयजीवितभूतायाः भार्यायाः पुरुषान्तररतिवृत्तं श्रुत्वैव विधाधरो ज्वलदग्निपिण्डस्संजातः। स खलु व्यभिचारिणीं पत्नीं ताडयित्वा गृहान्निष्कासितवान्"।[1]

'नाकुलिकाहितुण्डिककथा' के माध्यम से कवि बालकों को विपरीत परिस्थितियों में भी क्रोध एवं आवेग त्यागकर समरसतापूर्ण व्यवहार करने का उपदेश देता है यथा–

"क्रोधान्धो न नरः पश्येदतीतं प्रेम नो भयम्।
भावि, पश्येदसौ स्वीयं केवलं मनसोरयम्।।"[2]

प्रस्तुत ग्रन्थ के चतुर्थ तन्त्र ''लब्धप्रणाशः'' में कवि बुद्धि की प्रबलता का महत्त्व प्रतिपादित करता हुआ चन्द्रगुप्त मौर्य के प्रधानमन्त्री चाणक्य के बुद्धि कौशल की प्रशंसा करता हुआ कहता है कि किस प्रकार चाणक्य ने अपने बुद्धि चातुर्य से नन्द वंश का समूल नाश कर दिया, यथा–

"बुद्धयैव जीयते सर्व सर्वं बुद्धयैव भुज्यते।
बुद्धिनाशेऽखिलं नष्टं तस्माद् बुद्धिर्विशिष्यते।।"[3]

कवि बुद्धिबल के आधार पर सामान्य सेवक द्वारा राजा से अपार भूमि एवं धन–धान्य प्राप्त करने वाली **'तेङ्गनाननायककथा'**को राजकुमारों को सुनाता हुआ कहता है कि संकट के समय बुद्धि ही मनुष्य की सच्ची सहायिका होती है। 'वृद्धबलिनिवारणकथा' में भी कवि किसी

1. 'अभिनवपंचतन्त्रम्', प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–26
2. 'अभिनवपंचतन्त्रम्', प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–63
3. 'अभिनवपंचतन्त्रम्', प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–64

नवयुवक की बुद्धिचातुरता का उल्लेख करता है। कवि कहता है कि बुद्धि प्राणों से भी बढ़कर है, यथा– "प्राणेषु सत्सु मा यातु किन्तु बुद्धिरियं सताम्।"[1]

पंचम तन्त्र 'अपरीक्षितकारकम्' में कवि बालकों को उपदेश देता है कि मनुष्य जो भी कार्यं करे, अच्छी तरह विचार करके ही करे। यथा– "तद्वत्साः। ग्रन्थिं बध्नीत परिणामं परीक्ष्यैव किमपि कार्यं धीमतां करणीयं भवति। अत्रोच्यते न श्रेयसे भवत्येव अपरीक्षितकारकं।"[2]

'भेकभुजङ्गकथा' के माध्यम से कवि बालकों को सीख देता है कि मनुष्य को अपने कुलगुरुओं की शक्ति पर अविश्वास नहीं करना चाहिए, क्योंकि शास्त्रों में भी उल्लेखित है– 'अविचारणीया गुरुर्वाज्ञा'।

कथाकार अभिराजराजेन्द्र मिश्र ने सम्पूर्ण कथाओं का निबद्धन बालकों की अवस्था, उनके वातावरण, रहन–सहन, बुद्धि एवं जिज्ञासा प्रवृत्ति जैसे बालमनोवैज्ञानिक तत्त्वों के आधार पर किया गया है। प्रो. मिश्र द्वारा बाल्यावस्था में पदासिन शिशुओं, बालकों एवं किशोरों को नीति एवं लोकव्यवहार में कुशल बनाने हेतु प्रस्तुत कथाग्रन्थ को **मनोविनोदपूर्ण** शैली में अभिव्यक्त किया गया है। कवि ग्रन्थ के प्रारम्भ में ही कहता है कि– "अयमहं भवतां परिज्ञानाय मनोविनोदाय चाभिनवं पंचतन्त्रम् उपदिशामि।"[3]

वस्तुतः प्रत्येक बालक में जन्मजात रूप में ही जिज्ञासा मूलसंवेदना निहित रहती है। इसके द्वारा वह प्रकृति के तत्त्वों को जानने की इच्छा करता है। कथाकार 'कृतज्ञशल्कीकथा' के माध्यम से बालकों के मन में कर्तव्य–अकर्तव्य कर्म रूपी बुद्धि जाग्रत करता है। 'शाकविक्रेतृकथा' के माध्यम से कवि बालकों के मन में कोमलमति जाग्रत करते हुए दुष्कार्यों से दूर रहने की सीख देता है।

कवि का मानना है कि बालकों का भविष्य, उनके बचपन के संस्कारों पर निर्भर है। जैसाकि प्रेमसिंह के बचपन में प्रदत्त बुरे संस्कार ही उसके भविष्य को निर्धारित करते है। यथा–

"बाल्यकाले दुर्ललितत्त्वाद् विद्यालयम् गत्वा मध्येमार्गं स्थिते ग्रामहट्टे नानाविधानि दुश्चेष्टानि प्रत्यहमकार्षीत्। एवं कुर्वाणोऽसौ कामपि परीक्षामुत्तर्तुं नाशकत्। शनैः शनैः स्वदुराचारैः परिपुष्टः सन् दस्युराजो जातः।"[4]

इसके साथ ही किशोरावस्था में उत्पन्न कामभावना के ज्वार से पीड़ित सरदार सिंह प्रेमसिंह की बहन पर आसक्त होकर मृत्यु को प्राप्त हुआ, इसकी भी बालकों को शिक्षा दी गई

1. 'अभिनवपंचतन्त्रम्', प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–74
2. 'अभिनवपंचतन्त्रम्', प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–83
3. 'अभिनवपंचतन्त्रम्', प्रो. राजेन्द्र मिश्र, प्रस्थावना भाग से उद्धृत
4. 'अभिनवपंचतन्त्रम्', प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–44

है। इसी तरह बालकथाएँ बालकों की कल्पनाशक्ति के विकास के साथ ही उनमें सकारात्मक एवं सन्तुलित भाव जाग्रत करने में भी अत्यन्त उपयोगी है।

पंचतन्त्र का प्रमुख उद्देश्य जहाँ बालकों को नैतिक, धार्मिक एवं व्यावहारिक शिक्षा प्रदान करना है। दूसरी तरफ 'अभिनवपंचतन्त्रम्' का प्रमुख उद्देश्य पंचतन्त्र को नवीन कलेवर में सृजित करके पशु–पक्षियों के साथ–साथ मानव पात्रों के माध्यम से बालकों को दैनिक वाग्व्यवहार, करणीय–अकरणीय कर्त्तव्यपालन, मित्र निर्माण, मित्र रक्षा, वचनपालन इत्यादि गुणों की शिक्षा देना है। इसके साथ ही अन्तःपुर में सम्पन्न छलकपट, अहंकार, छद्मपूर्ण व्यवहार एवं स्त्रियों की चरित्रहीनता से भी बालकों को अवगत करवाया गया है। प्रस्तुत ग्रन्थ की सभी कथाएँ बालकों को मातृदेवो भव, पितृदेवो भव, आचार्य देवोभव एवं अतिथि देवोभव के पवित्र संस्कार प्रदान करती है।

प्रो. मिश्र जी ने अभिनवपंचतन्त्र में कल्पना का भरपूर प्रयोग किया है। कथाओं का प्रारम्भ आश्चर्य एवं कल्पना पूर्ण भावों से किया गया है, यथा– आसीद् उत्तरप्रदेशराज्यास्थिते...., कस्मिंश्चिद् गहनाराण्ये......., अस्ति हरियाणाराज्यस्थे.....,प्राचीनकाले बाली आख्याजातिषु......, पुरा बालीदीपे मयदानवः प्रशशास.....; इत्यादि काल्पनिक संवादों से कथाओं का प्रारम्भ किया गया है।

कथाकार मानवसंस्कृति के साथ–साथ पृथ्वीलोक पर स्थित अरण्य संस्कृति के पशु–पक्षी पात्रों के माध्यम से भी कथा को मनोरंजनात्मक पुट प्रदान करने में सिद्धस्थ है। कवि की बुद्धि भारत देश के साथ–साथ सुदूर बाली द्वीप की भूमि तक विचरण करती है। इसी प्रकार **'अभिशप्तवानरीकथा'** में अप्सरा लोक का भी कल्पनात्मक वर्णन प्राप्त होता है। प्रस्तुत कथा में पशु–पक्षी भी मानवीय भाषा का प्रयोग करते हुए मानवीय संबंधों का निर्वाह करते है। वृक्षः, नद्यः, लताएँ भी मानवीय भाषा का प्रयोग करते हुए देखे जाते हैं।

कवि प्रस्तुत ग्रन्थ का कथन राजकुमारों को राजप्रसाद के राजनीतिक वातावरण से निकालकर खुले आकाश में राजमहल की छत पर करता है। कथाकार द्वारा प्रस्तुत ग्रन्थ में पर्यावरण के विविध रूपों (सामाजिक पर्यावरण–सांस्कृतिक पर्यावरण–नैतिक पर्यावरण–राजनैतिक पर्यावरण) का सहज वर्णन करता है। 'सुरावायकथा' में कवि प्रशान्त महासागर के मध्य सुशोभित जावा द्वीप की भूमि का वैचित्र्यपूर्ण वर्णन करता है। यथा–

"अस्ति भारतवसुन्धराङ्गभूतान्दमान–नीकोबार द्वीपप्रतिवेशिभूतं यवाकारसुभयं यवद्वीपम्। तस्य रमणीयद्वीपस्य ईशानकोणे राराज्यतेतरां सुरावायाख्यं नगरं यवद्वीपलक्ष्मीनिलयभूतम्।"[1]

---

1. 'अभिनवपंचतन्त्रम्', प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–79

कवि काकमैत्रीकथा के माध्यम से ज्योतिष एवं खगोल विज्ञान का भी उल्लेख करता है। कथाकार कहता है कि कृष्ण पक्ष में चन्द्रमा की कलाएँ घटती है तथा शुक्लपक्ष में वह पुनः वृद्धि को प्राप्त हो जाती है। यथोहि–

"कृष्णपक्षोऽपि मासस्य शुक्लतामेति निश्चितम्।"[1]

वस्तुतः आलोचक या समीक्षक काव्य के भाव पक्ष के साथ ही कला पक्ष का भी ध्यान रखता है। वह काव्य में संवाद, वाक्यविन्यास, भाषा शैली, गुण, रस, अलंकार, छन्द एवं पात्रचरित्रचित्रण, भाषा शैली, गुण, रस, अलंकार, छन्द एवं पात्रचरित्रचित्रण को अपनी शास्त्रबुद्धि से खोजने की चेष्टा करता है। प्रस्तुत ग्रन्थ में कथाओं का नामकरण पात्रों के आधार पर किया गया है, यथा–काकमैत्रीकथा, शाकविक्रेतृपुत्रकथा, नाकुलिकाऽहितुण्डिककथा, तेंगनानायककथा, सुरावायकथा किया गया है। यथार्थतः कवि बालमनोविज्ञान के आधार पर ही कथाओं का नामकरण पात्रों के आधार पर करता है।

कथाकार द्वारा प्रस्तुत ग्रन्थ में प×चतन्त्र के समान ही एक आधारित कथा को प्रथमतः अभिव्यक्त किया है, तदनन्तर इसमें अनेक प्रासंगिक कथाओं को जोड़ दिया गया है। मानवेतर एवं मानव पात्राधारित कथाओं का प्रयोग बालकों में बालमन को ध्यान में रखते हुए किया है। प्रस्तुत ग्रन्थ में स्वयं प्रो. मिश्रजी विष्णु शर्मा के रूप में राजकुमारों को कथावाचन करते है। 'मित्रभेद' तन्त्र में संकलित 'सुहृदवचनकथा' के मुख्य वक्ता स्वयं प्रो. मिश्र जी है। इन कथाओं में मानवेतर पशु–पक्षी जगत के माध्यम से भी मानव स्वभाव एवं संसार का यथार्थ ज्ञान प्रदान किया गया है।

'ध्वन्यालोक' के रचयिता आचार्य आनन्दवर्धन ने वाक्यविन्यास या संवाद को 'प्रतिबिम्ब' शब्द से सम्बोधित किया है। वह संवाद को जीवात्मा के शरीर सदृश मानते है, यथा–

"संवादास्तु भवन्त्येव बाहुल्येन सुमेधसाम्।
नैकरुपतया सर्वे ते मन्तव्या विपश्चिता।।
संवादो ह्यन्यसादृश्यं तत्पुनः प्रतिबिम्बिवत्।
आलेख्याकार वस्तुल्यदेहिवच्च शरीरवत्।।"[2]

वस्तुतः संवादों की बहुलता ही कथा की साम्प्रतिकता एवं प्रासंगिकता की द्यौतक है। प्रस्तुत कथाग्रंथ में संवाद अत्यन्त सरल, सरस, बोधगम्य एवं बालसुलभ तथा सम्प्रेषणीय प्रकृति से युक्त है। चूर्णक गद्य से युक्त इन संवादों में सम्प्रेषणीयता का भाव पूर्ण रूप में परिलक्षित होता है यथा 'काकमैत्रीकथा' का उदाहरण द्रष्टव्य है–

1. 'अभिनवपंचतन्त्रम्', प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–12
2. 'ध्वन्यालोक', आचार्य आनन्दवर्धन, श्लोक 11–12

"काको मृगमपृच्छत् – भो वयस्य! कोऽयं नूतनः प्राधुणिकः?

मृगोऽवदत् – शृङ्गालोऽयं दुग्धदन्तः।

काकोऽपृच्छत्–दुग्धदन्तो दग्धदन्तो वा?

'नहि नहि। दुग्धदन्त एव।'

'कथं भवता ज्ञातमस्य दुग्धदन्तत्वम्?'

'इदमेवास्याभिधानम्।'

'अभिधानेन किं कस्यचित् कर्मापि प्रमाणीक्रियते?'

न खल्वगच्छामि। मृगोऽवदत्।"[1]

प्रायशः मनोवैज्ञानिक आभा से युक्त संवाद ही इन कथाओं के प्राण है। कथाकार गद्यात्मक संवादों के मध्य पद्यात्मक श्लोकों का भी प्रयोग करता है। इससे कथा में तनिक भी प्रवाहावरोध नहीं होता है। कथाकार प्रत्येक कथा के समापन में ही अग्रिम कथा के बीज रोपित कर देता है। प्रस्तुत ग्रंथ में सरल–सहज सुमधुर, विभक्ति–वचन–क्रियाओं के बोझ से रहित एवं बालमनोऽनुकूल भाषा–शैली का प्रयोग किया गया है। पद्यों की भाषा भी सम्भाषणात्मक शैली में प्रयुक्त है। कथाओं के पात्र भी बालकों के कोमल मानसपटल को ध्यान में रखते हुए प्रयुक्त किए गए हैं।

काव्यशास्त्रीय नियमों का पालन करते हुए सभी कथाओं का प्रारम्भ भूतकाल की क्रियाओं से होता है। भूतकाल की क्रिया का प्रयोग करने हेतु कवि ने लङ्लकार एवं लट लकार की क्रियाओं के साथ 'स्म' रूप का प्रयोग किया है। कथाकार ने लिट् लकार का प्रयोग कथा के प्रवाह को आगे ले जाने हेतु किया है। कवि बालकों की जिज्ञासा शान्त करने के लिए 'वच्' धातु के लिट्लकार एकवचन के रूप 'उवाच' का प्रयोग करता है, यथा–

"विष्णुशर्मोवाच–वत्सकाः तदेव वर्णयामि। शृणुत।"[2]

इसी प्रकार राजपुत्र विष्णु शर्मा से कथा का मर्म पूछने हेतु उत्सुकतावश लिट्लकार प्रथमपुरुष के बहुवचन का प्रयोग करते है–

"राजपुत्राः सविस्मयमूचुः कथमिदम्?।"[3]

पं. विष्णु शर्मा के माध्यम से प्रो. राजेन्द्र मिश्र कथाओं में बालकों के सम्बोधनार्थ अनेक बहुवचन शब्दों का प्रयोग करते है–

यथा– वत्सकाः (काकमैत्रीकथा), कुमाराः, दारकाः (शाकविकेतृपुत्रकथा), आयुष्मन्तः (उत्कोचकीधिकारीकथा), पुत्रकाः (वृद्धबलिनिवारणकथा), माणवकाः (मृतभूपोज्जीवनकथा) इत्यादि।

---

1. 'अभिनवपंचतन्त्रम्', प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–11
2. 'अभिनवपंचतन्त्रम्', प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–9
3. 'अभिनवपंचतन्त्रम्', प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–9

कथाकार ने लोक न्याय, लोकव्यवहार को समझाने हेतु अर्थान्तरन्यास अलंकार युक्त आभाणकों का सुन्दर प्रयोग किया है–

"अभिधानेन किं कस्यचित् कर्मापि प्रमाणीक्रियते?"[1]

"कृष्णपक्षोऽहं कामं शुक्लपक्षतां न वृणोमि।"[2]

"द्राङ् न मैत्री विधातव्या भंजनीया न वा तथा।
मणिकांचनसंयोगा मुद्रिकैव हि शोभते।।"[3]

"सहायो जायते दैवं दैवेऽरो को नु संक्षयः।।"[4]

आचार्य भरत के मतानुसार कि रस के बिना किसी भी अर्थ की प्रवृत्ति प्रत्यक्ष नहीं होती है, को ध्यान में रखते हुए प्रो. मिश्र ने प्रत्येक कथा के अन्त में अद्भूत रस को स्वीकार किया है। यह कथाकार का सौभाग्य है कि राजपुत्रों में कथा सुनने की जिज्ञासा कूटकूटकर भरी रहती है। वस्तुतः बालक सहृदय सामाजिक प्राणी है। उनमें सात्विक भाव पूर्णतया विद्यमान रहता है।

कथाकार शान्त रस से युक्त सभी पद्यों में प्रसाद एवं माधूर्य गुण का भरपूर प्रयोग करता हैं प्रसादगुण बालकों के चित को व्याप्त कर लेता है। सुनने मात्र से ही बालकों को अर्थ की प्रतीति हो जाती है। कथाकार का मुख्य प्रयोजन भी बालकों को सुलभ रूप से अर्थ का अवबोध करवाना है। 'काकमैत्रीकथा' के अन्तर्गत कवि काक एवं श्रृगाल की लड़ाई में वीर रस आश्रित ओज गुण का सुन्दर प्रयोग करता है– कथाकार ओजगुण के अनुरूप ही ठ वर्ण, ष वर्णों का बार–बार प्रयोग करता है। इसी तरह दीर्घ समास युक्त भाषा भी दृष्टिगोचर होती है।

अभिनवपंचतन्त्र एक उपदेशात्मक काव्य है। कवि ने निपुणता से अनुष्टुप छन्द का बहुलतया प्रयोग किया है। अभिनवपंचतन्त्र में कथाकार ने कुल 50 पद्यों का प्रयोग किया है। जिनमें कुल 10 छन्दों (अनुष्टुप, उपजाति, उपेन्द्रवज्रा, वंशस्थ, मालिनी, हरिणी, शिखरिणी, द्रुतविलम्बित, वसन्ततिलका) का प्रयोग किया है। बालमनोविज्ञान के अनुसार कथाकार ने सर्वादिक पद्य अनुष्टुप छन्द में प्रयुक्त किए है।

त्रिवेणी कवि प्रो. राजेन्द्र मिश्र ने बाणभट्ट की गद्य शैली का अनुकरण करते हुए कहीं–कहीं पर अलंकृत भाषा का भी प्रयोग किया है। कथाकार ने प्रमुख रूप से दृष्टान्त, उपमा, अनुप्रास अलंकारों का प्रयोग किया है। उपमा अलंकार का सुन्दर प्रयोग उद्धृत है–

1. 'अभिनवपंचतन्त्रम्', प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–11
2. 'अभिनवपंचतन्त्रम्', प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.– 15
3. 'अभिनवपंचतन्त्रम्', प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.– 15
4. 'अभिनवपंचतन्त्रम्', प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.– 15

"अनुदिनं कदलीव विवर्धते, तुहिनबिन्दुततीव च शोभते।
परिणतिं समुपेत्य विनश्यति ननु समूलमियं खलमित्रता।।"[1]

इसी प्रकार वर्णों की बारम्बार आवृत्ति युक्त अनुप्रास अलंकार का सुंदर प्रयोग किया है–

"मिष्टभाषी मिताकांक्षी मितव्ययो मिताक्षराः।
त्रस्तशत्रुस्त्रपाशीलो मित्रसंज्ञोऽभिधीयते।।"[2]

प्रो. मिश्र ने कथालक्षणों के अनुसार भूतकाल का अधिकांश प्रयोग किया है। कथा का प्रारम्भ भी भूतकाल की घटना से किया गया है– "आसीद् सागरसलिलपरिवृत्ते शंखाकारे बालीद्वीपे देव इत्युपनामा कश्चिन्नरपतिः।"[3] यह सम्पूर्ण कथाएँ बालकों के कोमल मन को इहलोक से काल्पनिक लोक में भ्रमण करवाने में पूर्णतया सक्षम है। कवि द्वारा प्रस्तुत कथाग्रंथ में केवल कथान्विति का ही पूर्णतया प्रयोग किया है। स्थानान्विति एवं कालान्विति का यहाँ अभाव देखने को मिलता है। कथाकार वर्षों की घटनाओं को क्षणभर में ही समाप्त कर देता है।

डॉ. सुकान्त कुमार सेनापति : सुकान्तकथाविंशति

कथाकार सुकान्तकुमारसेनापति ने अपने नाम की सार्थकता सिद्ध करते हुए सुकान्त कोमल बुद्धियुक्त बालकों को व्यावहारिक शिक्षा प्रदान करने वाले विभिन्न उपदेशात्मक गुणों से युक्त 'सुकान्तकथाविंशतिः' बालकथा का सर्जन किया है। प्रस्तुत कथाग्रन्थ बालकों में विभिन्न उपदेशात्मक गुणों–ईश्वर भक्ति, त्याग, दया, परोपकार, क्षमा, सदाचरण, पवित्रता, मैत्रीभाव, बुद्धि प्रवीणता का नैतिक उपदेश देने के साथ ही कथा के अन्त में बालकों के बुद्धि कौशल हेतु भाषा अभ्यास प्रदान किया गया है।

वस्तुतः भाषा प्रत्येक मानव के लिए एक प्रमुख साधन है। जन्म लेने के अनन्तर शिशु सर्वप्रथम शब्द माता के मुख से ही सीखता है। यह उस शिशु का प्रथम अभ्यास होता है। कथाकार प्रस्तावना में उल्लेख करता है कि श्रवण–विधाओं में कथाश्रवण की परम्परा भारतीय संस्कृति में अतीव प्राचीन परम्परा है। कथाश्रवण का प्रयोजन मात्र बालकों का मनोरंजन करना ही नहीं अपितु उनको सुसंस्कृत, उत्तम भावी जीवन के निर्माण के लिए प्रेरणा प्रदान करना भी है। प्रस्तुत कथाग्रन्थ का प्रमुख उद्देश्य परस्पर मित्रता, सद्भाव, सत्यम्, अहिंसा, नैतिकता, पवित्रता, धैर्य, क्षमा आदि बालमूल्यों का विकास करना है। साथ ही छात्रों में श्रवणकौशल, शब्दकौशल, अभिव्यक्ति कौशल का विकास करना भी है।

1. 'अभिनवपंचतन्त्रम्', प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–11
2. 'अभिनवपंचतन्त्रम्', प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–9
3. 'अभिनवपंचतन्त्रम्', प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–83

प्रस्तुत कथाग्रन्थ में विंशति (20) कथाओं का सङ्कलन है। सभी कथाएँ कथापुनर्लेखनशैली में लिखी गई है। कथाकार भारतीय संस्कृत साहित्य में प्राप्त आख्यानों को कथाशैली में निबद्ध करता है।

'सुकान्तकथाविंशतिः' शीर्षक का अर्थ है, "शोभनः कान्तः सुकान्तः इति सुकान्तः युक्तैः कथा सुकान्तकथा, सुकान्तकथां अधिकृत्य विंशतिकथा विरचिता सन्ति यस्मिन् काव्ये तत् सुकान्तकथाविंशतिः इति। यहाँ 'सु' अव्यय या निपात है जो बहुव्रीहि अथवा कर्मधारय समास युक्त शब्द निर्माण हेतु प्रयुक्त हुआ है। 'कान्त' शब्द का अर्थ है सुखकर, रूचिकर, मनोहर, सुन्दर। महाकवि कालिदास 'मालविकाग्निमित्रम्' में 'क्रान्त' शब्द को परिभाषित करते हुए कहते हैं, 'अभिमतक्रान्तं ऋतुं चाक्षुषं'।" आचार्य मम्मट के काव्यप्रयोजन 'कान्तासम्मितयोपदेश युजे' को अङ्गीकार करते हुए कथाकार सरल–सरस भाषा शैली में कथाओं का सृजन करते है।

'परमेश्वरभक्तः' प्रस्तुत कथा में कथाकार एक बाल शिवभक्त का उल्लेख करता है। बालक के अन्तःकरण में परमात्मा को लेकर द्वैतभाव विद्यमान है। वह बालक शिव के अतिरिक्त अन्य किसी देवता के प्रति श्रद्धाभाव नहीं रखता था। तीर्थाटन में भी वह शिवालय में ही दर्शन करता है। प्रस्तुत कथा में विष्णु के प्रति उसकी द्वेष बुद्धि दिखाई देती है। मार्ग में स्थित हरि और हर की मूर्ति को देखकर वह उन दोनों को कल्पनात्मक रूप से पृथक् करने की कल्पना करता है। कथाकार कहता है, तं हरिहरं विग्रंह दृष्ट्वा विस्मितः सन् स चिन्तितवान्–इदानीं किं करोमि? यदि पूजां करोमि तर्हि विष्णुः अपि पूजितः भवति। यदि धूपार्पणं करोमि तर्हि स धूपः विष्णोः नासिकाम् अपि प्रविशति। अन्ते विष्णोः नासिकायाः विधानं नैत्रे निमील्य प्रार्थनाम् अकरोत्।[1] अन्त में कवि कहता है कि परमात्मा एक ही है। कथाकार संधि समास रहित लघु–लघु संवादों का प्रयोग करता है। कथाकार ने कथा नियमों का सम्यक् पालन करते हुए भूतकालार्थ क्त एवं क्तवतु प्रत्यय युक्त पदों का प्रयोग किया है यथा– कृतवान् कल्पितवान्, पूजितः, आगतवान्, आहूतवान्, अनुभूतवान् आदि।

'बुद्धया शक्यम्' कथा बालकों को बुद्धिपूर्वक व्यवहार करने का सन्देश देती है। मनुष्य बुद्धि के बल पर समाज एवं देश में अपेक्षित परिवर्तन कर सकता है। प्रस्तुत कथा में सामाजिक–सांस्कृतिक एवं नैतिक तत्त्वों का सम्यक् पालन किया गया है। कन्या को विदाई वेला में दिया गया पित्रुपदेश अभिज्ञानशाकुन्तल के कण्व–शकुन्तला उपदेश से साम्यता रखता है यथा– "कन्यायाः श्वशुरगृहं प्रति प्रेषणसमये पिता एवम् उपदेशं कृतवान्– 'पुत्रि! भवति तत्र ज्येष्ठानाम् आदरं करिष्यति, ज्येष्ठैः उक्तं वचनं श्रोष्यति, सर्वेषां सेवां करिष्यति' इति। प्रस्तुत

---

1. 'सुकान्तकथाविंशतिः', प्रो. सुकान्तकुमार सेनापति, पृ.–1

वचनानुसार सास, ससुर तथा गुरुजनों एवं पति की सेवा करना और सेवकों का पालन करना 'स्त्रियों का परम धर्म' है। कथाकार कथा के अन्त में बालकों को कथा का मूल भाव स्पष्ट करता है कि बुद्धि के द्वारा यदि आचरण करे तो समाज एवं राष्ट्र में अपेक्षित परिवर्तन किया जा सकता है।

'सुवर्णमार्जारः' प्रस्तुत कथा में बालकों को श्रम के महत्त्व से अवगत करवाया गया है। एक पुत्र मनसा–वचसा–कर्मणा भावना से अपने पिता की आज्ञा का पूर्ण पालना करता है। **'धेनोः प्रतिश्रुतिः'** कथा के माध्यम से कवि बालकों को मधुरालाप युक्त आचरण करने हेतु शिक्षित करता है। यहाँ गाय के व्यवहार में वचन–परायणता देखने को मिलती है। उसके व्यवहार में तनिक भर भी छल–कपट नहीं है। 'ईश्वरानुग्रहः' कथा में प्रतिपादित किया गया है कि परमात्मा सभी मनुष्यों की इच्छा को पूर्ण करने वाला है। यहाँ भगवान् शिव एक वृद्धदम्पती की पुत्र प्राप्ति की इच्छा को पूर्ण करते है।

"ईश्वस्य वरदानेन ब्राह्मणी एकं सुन्दरं शिशुपुत्रं प्रसूतवती। सः शिशुः शङ्कर (जगतः पितृरूपेण) एव आसीत्। पिता शिवगुरुः माता आर्याम्बा च आस्ताम्।"[1]

कथाकार का मत है कि ईश्वर पर पूर्ण श्रद्धा रखनी चाहिए। ईश्वर सर्वव्यापक है, सर्वज्ञ है तथा सम्पूर्ण लोक का मित्र है। इसके अतिरिक्त कवि लोक में सन्तानरहित माता–पिता के दुःख को भी प्रकट करता है– "सन्तानं नास्ति इति चिन्तया चिन्ताग्रस्तौ तौ दम्पती। एकस्मिन् दिने सा ब्राह्मणी भर्तारम् एवमवदत् "श्रीमन्! आवयोः वृद्धावस्था जाता, एतावत्पर्यन्तम् आवयोः कुलरक्षणार्थं सन्ततिः एव नास्ति। अतः भगवतः अर्चनां कुर्वः।"[2]

'भगवान् भक्ताधीनः' प्रस्तुत कथा में भक्त प्रह्लाद के चरित्र से बालकों को परिचय करवाया है। कवि का मत है कि मनुष्य के पूर्वजन्म के संस्कार ही उसके वर्तमान जीवन के व्यवहार एवं चरित्र को निर्धारित करते है। भक्त प्रह्लाद का जन्म यद्यपि असुर कुल में हुआ है किंतु फिर भी वह प्रत्येक क्षण हरि के नाम का स्मरण करता रहता है। प्रस्तुत कथा में बालकों को भक्त प्रह्लाद के जीवन से सत्य, दया, परोपकार, धैर्य, क्षमा एवं सहनशीलता इत्यादि गुणों को जीवन में आत्मसात करने हेतु उपदेशित किया गया है।

'कीदृशी मैत्री' प्रस्तुत कथा में उमेश एवं हरिश नामक दो बालकों के चरित्र का वर्णन किया गया है। कथा में उमेश एवं हरिश की मित्रता नीतिशतक[3] में वर्णित छाया के समान (दिन के पूर्वार्द्ध में बढ़ने वाली एवं सांयकाल में कम होने) बताया गया है। 'जार्ज वाशिंगटन' प्रस्तुत कथा में 18 वर्षीय किशोर जॉर्ज वाशिंगटन के साहस एवं सत्यवादिता का वर्णन किया गया है।

---

1. 'सुकान्तकथाविंशतिः', प्रो. सुकान्तकुमार सेनापति, पृ.–20
2. 'सुकान्तकथाविंशतिः', प्रो. सुकान्तकुमार सेनापति, पृ.–20
3. भर्तृहरि विरचित, नीतिशतक, श्लोक–60

वृक्ष को काटने पर भी वह पिता से झूठ नहीं बोलता है। किशोर जार्ज वाशिंगटन की इसी सत्यवादी प्रवृत्ति का परिणाम था कि वह आगे जाकर संयुक्त राज्य अमेरिका का राष्ट्रपति बनता है। कवि का प्रयोजन है कि बालकों को भी असत्य नहीं बोलना चाहिए। **'पतिव्रता नारी'** प्रस्तुत कथा का कथानक रामायण का सावित्री उपाख्यान है। चित्रसेन की पत्नी सावित्री स्वभाव से व्यवहारकुशल, नैपुण्य एवं पतिव्रता है। वह श्रद्धा एवं विश्वास के बल पर अपने पति चित्रसेन को यमराज के मुख से निकालकर जीवनदान प्रदान करती है। प्रस्तुत कथा बालकों को शिक्षित करती है कि वह श्रद्धा एवं विश्वास के बल पर संसार की किसी भी वस्तु को प्राप्त कर सकते है।

'कोऽहम्' प्रस्तुत कथा में महर्षि दयानन्द सरस्वती के ऐतिहासिक जीवन को कथानक के रूप में प्रस्तुत किया गया है। दयानन्द सरस्वती अपने गुरु विरजानन्द से जिज्ञासावश स्वयं के बारे में जानने हेतु प्रश्न करते है। वस्तुतः 'कोऽहम्' कथा बालकों के मन में उठने वाले दुःखत्रय (आधिदैविक, आधिभौतिक एवं आध्यात्मिक) का निवारण करने में सर्वथा प्रशंसनीय है। **'बुद्धिमान् विनायकः'** प्रस्तुत कथा बालकों के अन्तर्मन में 'मातृ देवो भव, पितृ देवो भव' की भावना जाग्रत करने में पूर्णतया सक्षम है। यह लघुकथा बालकों को नीतिपूर्वक व्यवहार करने का उपदेश देती है।

'न त्यक्तव्यः अभ्यासः' प्रस्तुत कथा तैत्तिरियोपनिषद् के शिक्षावल्ली के 'स्वाध्यायान्न प्रमादितव्यम्' के वाक्य से समानता रखती है। कथाकार का कथन है कि मनुष्य को बिना आलस्य किए निस्वार्थ भाव से निरंतर कर्म में रत रहना चाहिए। 'एकमतिः विजयते' प्रस्तुत कथा में बालकों को एकमति होने का उपदेश दिया गया है। कवि का कथन है कि भिन्न–भिन्न मति का मनुष्य उसी प्रकार काल कवलित हो जाता है जैसे शशक, सर्प, कुर्म दावाग्नि में जलकर मृत्यु का ग्रास बन जाते है।

इसी तरह 'शिवाजेः औदार्यम्' कथा के माध्यम से उदारता, 'भामतिः भामतिः अभूत्' कथा के माध्यम से विधा का उपदेश, 'ब्रह्मनिष्ठः बालकः' प्रस्तुत कथा के माध्यम से बालकों को आत्मविषयक ज्ञान, 'स्वभावः दुरतिक्रमः' कथा के माध्यम से स्वभाव की महत्त्वता, 'लोभः न कर्तव्यः' कथा के माध्यम से लोभ नहीं करने का उपदेश दिया गया है। अतः सभी–कथाएँ भारतीय परम्पराओं से सम्बन्धित है।

प्रो. जनार्दन हेगड़े

(i) बालकथासप्ततिः

प्रो. जनार्दन हेगड़े द्वारा विरचित प्रस्तुत कथाग्रन्थ न केवल बालकों के लिए अपितु सभी अवस्था वाले मनुष्यों के लिए अनुकरणीय है। कथाकार द्वारा प्रस्तुत ग्रन्थ में कान्तासम्मित मधुर कथानकों से युक्त बालकथाओं का संग्रह किया गया है। सभी कथाओं में किसी न किसी

महापुरुष की जीवन घटना को उपदेशात्मक गुणों से युक्त करके प्रस्तुत किया गया है। सत्तर (70) कथाओं के संग्रह से युक्त ग्रंथ को कवि द्वारा 'बालकथासप्ततिः' नाम से सम्बोधित गया है।

'सरलता' इस प्रस्तुत कथा का कथानक काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के संस्थापक मदनमोहन मालवीय के जीवन के लघु वृतान्त से ग्रहण किया गया है। कवि का कथन है कि जीवन में सरलता एवं उदारता कभी भी नहीं त्यागना चाहिए। कवि बालकों को मदनमोहन मालवीय जैसे श्रेष्ठी पुरुष के जीवन की सरलता एवं महानता से अवगत करता है। 'गुरोः वचनस्य पालनम्' प्रस्तुत कथा में सिक्ख धर्म के तीसरे गुरु अमरदास के जीवन का वर्णन किया गया है। प्रस्तुत कथा में गुरु–शिष्य परम्परा का सुन्दर वर्णन किया गया है। कथाकार का कथन है कि "गुरु परमात्मा का स्वरूप है यथा गुरुः तु भगवत्स्वरूपः। गुरोः आज्ञा सर्वदा भवति शिरोधार्या। आज्ञा गुरुणाम् अविचारणीया इति वचनं किं भवता न श्रुतम्?"[1]

'भवान् अस्ति महापुरुषः' प्रस्तुत कथा में कथाकार द्वारा आश्चर्यात्मक रूप में मुम्बई उच्च न्यायालय के न्यायाधीश महादेव गोविन्द रानाडे के मृदु स्वभाव, उदारता, परोपकार, सदाचार इत्यादि का सरल–सरस वर्णन किया गया है। प्रस्तुत कथा में थूत्कार, गद्गद्, अम्ब जैसे स्थानीय शब्दों का प्रयोग किया गया है। 'दृष्टः प्रभुः रामचन्द्रः' प्रस्तुत कथा में कथाकार गोस्वामी तुलसीदास के जीवन चरित्र का उल्लेख किया गया है। 'मुख्यवस्तुनः रक्षणम्' प्रस्तुत कथा वेदान्त दर्शन के अनुयायी भारतीय संन्यासी स्वामी रामतीर्थ की जापान के टोकियो नगर में सम्पन्न विश्व धर्म सम्मेलन के यात्रा वृतान्त से ग्रहण किया गया है। प्रस्तुत कथा के माध्यम से कवि का कथन है कि मूल्यवान वस्तु की रक्षा समय रहते कर लेना चाहिए। क्योंकि यदि मुख्य वस्तु नष्ट हो गई तो, फिर विलाप करने से वह वस्तु पुनः प्राप्त नहीं हो सकती है।

'कूपसह्नितं गृहम्' प्रस्तुत कथा में कश्मीर देश के राजा यशस्करदेव के जीवन वृत्तांत का उल्लेख किया गया है। कथा में राजा यशस्करदेव की न्यायप्रियता का उल्लेख किया गया है। 'हेतुस्त्वं सर्वदेशिक!' प्रस्तुत कथा में एक बालक के न्यायदर्शन के हेतु एवं प्रमाण समुच्चय का सुन्दर वर्णन किया गया है। यहाँ शब्द प्रमाण का सुन्दर उल्लेख किया गया है। बालक किसी वस्तु विशेष की ध्वनि को सुनकर अकस्मात् बोलता है कि–

"अहो, शब्दो महाशब्दः। इति।"[2]

इसके साथ ही कथाकार का कथन है कि वस्तु जहां–जहां पलायन करती है, शब्द भी उसके साथ ही गति करता है। वस्तु या व्यक्ति विशेष की गति के बिना शब्द की गति भी सम्भव नहीं है। अतः हेतु (कारण) सर्वत्र विद्यमान होता है। किसी कारण विशेष से ही शब्द की

1. 'बालकथासप्ततिः' प्रो. जनार्दन हेगड़े, पृ.–3
2. 'बालकथासप्तति', प्रो. जनार्दन हेगड़े, पृ.–9

उत्पत्ति होती है। ''शान्तिसङ्गतः कपोतः'' प्रस्तुत कथा में बालकों को कपोत (कबूतर) की शान्तिप्रयता का परिचय तथा युद्ध की विभीषिका का उल्लेख किया गया है। कवि का कथन है कि युद्ध के कारण असंख्य सैनिक मारे जाते हैं। विवेकशील पुरुष भी अविवेकी की तरह व्यवहार करते हुए देखा जाता है। अतः मनुष्य को सर्वदा जीवन में अहंसा का व्यवहार करना चाहिए। 'प्रतिष्ठापनं व्यक्तित्वस्य' प्रस्तुत कथा में राज प्रताप वर्मा के व्यक्तित्व का वर्णन किया गया है। कवि बालकों को उपदेश देता है कि 'प्रतिमाओं की स्थापना करने से अच्छा है कि लोगों के ह्वदय में उन महापुरुषों की व्यक्तित्व रूपी प्रतिमा की स्थापना की जाए। 'दाता तु भगवान् एव' प्रस्तुत कथा में कथाकार राजा इब्राहिम के राज्य में स्थित दास–प्रथा का उल्लेख करता है। यहां दास को कथा के अंत में गुरु के समान माना गया है। कवि कहता है कि दास भी गुरु के समान शिष्य को यथेष्ठ वस्तु प्रदान करता है।

वस्तुतः कथाकार सम्पूर्ण कथाओं का नामोल्लेख सामान्य वाक्य के रूप में करता है, किंतु प्रत्येक कथा का 'शीर्षक' बालकों को सरल–सरस एवं मनोरंजनात्मक रूप में कोई न कोई उपदेश देती है। यथा–

'समानवृत्तिकौ आवां भ्रातरौ' कथा में ईश्वरचन्द्र विद्यासागर की उदारता, 'भगवान् किम् अस्ति?' कथा में भगवत न्याय का, 'अधीरता न शोभायै' कथा में राजा रणजीत सिंह के धैर्यपूर्ण शौर्य का, **'वाणिज्यकौशलम्'** प्रस्तुत कथा में बालक के व्यापार कौशल का सुन्दर उपदेश दिया गया है। इसी तरह 'धर्मस्य सारः' कथा में धर्मादि व्यवहार करने का, 'महात्मनां भूमिः एषा' कथा में भारतीय संस्कृति एवं भारत की पवित्र भूमि के महत्त्व से भी बालकों को अवगत करवाया गया है। प्रस्तुत कथा में एकनाथ–ज्ञानेश्वर–तुकाराम आदि मराठी सन्तों से भी बालकों को अवगत करवाया गया है। **'राममन्दिरस्य अन्वेषणम्'** कथा में भगवान् राम के अयोध्या स्थित भगवान् राम के भव्य मन्दिर निर्माण से भी बालकों को परिचय करवाया गया है।

इसी प्रकार 'देवदर्शनाय योग्यता.....' कथा में भक्ति, त्याग–तपस्या की योग्यता से ईश्वर दर्शन का, 'कार्यसंस्कृतिः' कथा में कार्य पूजा का, 'कृष्णभक्तः रसखानः' कथा में सहयोग एवं सदाचार का सुन्दर वर्णन किया गया है। इसी तरह 'मया कार्यं करिष्यते अत्रैव' प्रस्तुत कथा में सर् सि.वि. रमन की विज्ञान के प्रति रूचि का सुन्दर वर्णन किया गया है। 'चण्डप्रतिज्ञः चण्डः' प्रस्तुत कथा में मेवाड़ प्रान्त के महाराणा लाखा के युद्धकौशल एवं कीर्ति का वर्णन किया गया है। प्रस्तुत कथा में राजा चुडा के विवाह न करने की भीष्म प्रतिज्ञा का भी उल्लेख किया गया है।

'अहो, प्रशंसायाम् अरुचिः!!' प्रस्तुत कथा में रानी अहिल्याबायी होल्कर की दानशीलता एवं परोपकारिता का सुन्दर वर्णन किया गया है। साथ ही उल्लेखित किया गया है कि रानी को किसी भी प्रकार की प्रशंसा में रूचि नहीं थी। वह परिश्रम को ही पुरस्कार के रूप में स्वीकार

करती थी। 'योग्यः पुरस्कारः' प्रस्तुत कथा में राजा की दानशीलता एवं निपुणता का सुन्दर वर्णन किया गया है। 'तं वीरं द्रष्टुं इच्छामि....' प्रस्तुत कथा में बालकों को महाराणा प्रताप की वीरता एवं शौर्य, भामाशाह की दानशीलता एवं राणा अमर सिंह की निपुणता का परिचय करवाया गया है।

'कृतज्ञताभावः कथम् उह्येत?' प्रस्तुत कथा में दयानन्द सरस्वती की भारतदेश की स्वतन्त्रता के लिए किए गए कार्यों का सुन्दर वर्णन किया गया है। **'सुखं मृगमरीचिकायते'** प्रस्तुत कथा में कथाकार 'सुख' को मरुस्थल में दृश्यमान मृगमरीचिका के समान क्षणिक बताता है। इसके साथ ही 'संसार' को नीम के वृक्ष के समान तिक्त बताया गया है। जैसे प्रार्थना करने से, दान देने से, पूजा करने से भी नीम के मधुर फल नहीं लगते है वैसे ही संसार भी है। **'चतुरः टोडरमलः'** प्रस्तुत कथा में अकबर वित्त विभाग के प्रधान टोडरमल की निपुणता का सुन्दर एवं सरस वर्णन किया गया है। 'पापभीतेः मुक्तिः' प्रस्तुत कथा में भगवान राम की उदार भावना का सुन्दर वर्णन प्राप्त होता है। कथा का मुख्य उद्देश्य बालकों के मन में दान की महत्ता की प्रतिष्ठापना करना है। कथाकार दान को सभी व्यसनों को हरने वाला मानता है। **'सा अवध्या वन्द्या च'** प्रस्तुत कथा में गाय को माता के रूप में स्वीकार करते हुए उसे अवध्या (न मारने योग्य) बताया गया है। यहाँ हिन्दी के प्रसिद्ध उपन्यासकार प्रेमचन्द की गौ–भक्ति का सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत किया गया है। **'प्रशंसायाः प्राप्त्यर्थम्.....'** प्रस्तुत कथा में बालकों को अहंकार या गर्व को त्यागने का उपदेश दिया गया है। कवि का मत है कि अहंकार मनुष्य की सफलता के सभी मार्गों को बन्ध कर देता है।

इसी प्रकार **'जननी जन्मभूमिश्च'** कथा का कथानक बंगाल के नवाब सिराजुदोला के जीवन वृतांत से ग्रहण किया गया है। कवि यहाँ सिराजुदोला एवं ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी के मध्य हुए प्लासी के युद्ध (1757 ई.) का वर्णन प्रस्तुत करता है। सिराजुदोला मातृभूमि की रक्षा के लिए अपने प्राणों को त्यागने के लिए दृढ़संकल्प है।

भाषा की सरलता एवं कथावस्तु की रोचकता यहाँ प्रत्येक बालकथा में देखने को मिलती है। प्रत्येक बालकथा में बालकों के मन में जिज्ञासा समाहित रहती है। वस्तुतः प्रत्येक कथा सम्भाषण शैली में रचित की गई है। कथाकार द्वारा प्रस्तुत सभी कथाएँ आज भी जीवन्त एवं उपयोगी है।

(ii) बालकथास्रवन्ती

प्रो. जनार्दन हेगड़े द्वारा सम्भाणसन्देश मासिक पत्रिका के बालमोदिनी विभाग में स्वरचित कथाओं का संग्रह करते हुए चित्रात्मक रूप से प्रस्तुत कथाग्रन्थ का प्रणयन किया गया है। प्रस्तुत कथाग्रन्थ में निबद्ध कथा न केवल बालकों के लिए अपितु ज्येष्ठ मनुष्यों के लिए भी अत्यन्त उपयोगी है। प्रत्येक बालकथा नीतिबोधक सन्देशों से युक्त है। प्रस्तुत कथाग्रन्थ बालकों

में कथाओं के पठन–पाठन की रूचि जाग्रत करने में पूर्णतया समर्थ है। प्रस्तुत कथाग्रन्थ में 65 कथाओं का संग्रह किया गया है। कथाकार द्वारा कश्चन् (पु.), काश्चन् (स्त्री.), कि×चन् (नपु.) जैसे शब्दों का प्रयोग करके कथाओं को रोचकता प्रदान की है। वस्तुतः प्रत्येक कथा का प्रारम्भ इन्हीं जिज्ञासा वाचक शब्दों से होता है यथा–

"किंचन राज्यम्"। (भयं नश्यति धैर्यात् कथा, पृ.–3)

"कश्चन राजा।" (सत्यनिष्ठता कथा, पृ.–5)

"दशवर्षीयः कश्चन बालकः।" (कियत् देयम्? कथा, पृ.–15)

"कश्चन राजा। तस्य शासनं दुर्बलम्। (पृ.–21).....इत्यादि।

"न भुज्यते मही सम्पत्तिः वा" प्रस्तुत कथा में किसी संन्यासी द्वारा जयदेव नामक राजा के भूमिमोह एवं सम्पत्तिमोह की अवधारणा को त्याग कर सुख–समृद्धि एवं शान्ति को अपनाने का उपदेश दिया गया है। 'भयं नश्यति धैर्यात्' प्रस्तुत कथा के माध्यम से बालकों को भय का धैर्यपूर्वक सामना करने का उपदेश दिया गया है।

'सत्यनिष्ठता' प्रस्तुत कथा में राजा द्वारा चयनित युवा मंत्री की सत्यनिष्ठता का वर्णन किया गया है। 'प्रशंसार्हं धैर्यम्' प्रस्तुत कथा में देश के प्रथम सेनाध्यक्ष ले.ज. नाथूसिंह राठौर की निर्भीकता एवं धैर्य का सुन्दर वर्णन किया गया है।

'बुद्धिं दर्शयत' प्रस्तुत कथा में आत्मा को लेकर विद्यार्थियों एवं भूतपूर्वराष्ट्रपति डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्ण के मध्य सम्पन्न दार्शनिक संवाद को अत्यंत सरलता से प्रस्तुत किया गया है। सर्वपल्ली राधाकृष्णन जी विद्यार्थियों के आत्मा के अस्तित्व सम्बन्धी प्रश्न का दार्शनिक उत्तर देते है कि– आत्मा तु अनुभवगम्यः। सनातनसत्यरूपः सः। सः त्रिकाल स्थायी शाश्वतः च। अस्माकं द्वारा याः क्रियाः प्रवर्तन्ते तासां कारणरूपेण या शक्तिः स्यात् तामेव वयम् 'आत्म' शब्देन निर्दिशामः।[1]

'वास्तविकं वाणिज्यम्' प्रस्तुत कथा का कथानक सिक्ख धर्म के संस्थापक गुरुनानक देव के वास्तविक व्यापार सम्बन्धी घटना से ग्रहण किया गया है। गुरुनानक देव के अनुसार वास्तविक व्यापार वही है, जिससे भूखे प्राणियों की भूख शान्त होती है।

'रथः नाम कः? आत्मस्वरूपं किम्?' प्रस्तुत कथा में नागसेन द्वारा राजा मिलिन्द के आत्मा विषयक प्रश्न का उत्तर दिया गया है। नागसेन के अनुसार आत्मा रूप, वेदना, संज्ञा, संस्कार एवं विज्ञान इन पाँच स्कन्धों का समूह है। वस्तुतः पंचमहाभूत (आकाश, पृथ्वी, जल, तेज, वायु) अवयवों का समूह ही शरीर है।

---

1. 'बालकथास्रवन्ती', प्रो. जनार्दन हेगड़े, पृ.–11

'श्रेष्ठं दानम्' प्रस्तुत कथा में श्रेष्ठ दान की परिभाषा बताते हुए कहा है कि मनुष्य द्वारा अर्जित 'पुण्य' उसके प्रारब्ध संस्कारों का फल है। इसे धन के द्वारा भी नहीं खरीदा जा सकता है। प्रस्तुत कथा में किसी वृद्ध महिला के दान पुण्यों का वर्णन किया गया है। **'अन्नदानस्य कारणम्'** प्रस्तुत कथा में सूर्यपुत्र कर्ण की धन एवं स्वर्ण दान की तुलना में अन्नदान की महत्ता प्रतिपादित की गई है। लेखक का मत है कि मनुष्य को पितृपक्ष में अपने पितरों को अन्नदान करना चाहिए, क्योंकि धनदान की अपेक्षा, अन्न का दान करना यमलोक में भी सुख प्रदान करने वाला होता है।

'निर्लोलुपता' प्रस्तुत कथा द्वारा बालकों को लोभ नहीं करने का नैतिक उपदेश दिया गया है। इस कथा में किसी निर्धन किसान की धन के प्रति निर्लोलुपता को प्रकट किया गया है। निर्धन का कथन है कि धन के प्राप्त होने पर मनुष्य में लोभ की प्रर्वृत्ति बढ़ती है, जिससे वह दुर्गति को प्राप्त करता है। धनाढ्य होने पर व्यक्ति का स्वभाव परिवर्तित हो जाता है। अतः निर्धनता की स्थिति में भी जो व्यक्ति शुद्ध मन से दान करता है, वह महान् फल को प्राप्त करता है। **'पुस्तकोद्यमस्य संस्थापकः'** प्रस्तुत कथा में एबेल हिग्गी बाथम के पुस्तक प्रेम को सुन्दर एवं सरल शब्दों में प्रकट किया गया है। एबेल हिग्गी द्वारा इंग्लैण्ड से भारत आकर यहाँ विशाल पुस्तकों के पुस्तकालयों का निर्माण किया गया तथा भारतीयों में पुस्तक पढ़ने की रूचि जाग्रत की गई।

'श्रेष्ठतायाः अभिज्ञानम्' प्रस्तुत कथा में यूनान देश में जन्में प्रसिद्ध दार्शनिक 'पैथागोरसः' की कुशलता एवं एकाग्रता का सुन्दर वर्णन प्राप्त होता है। **'नामख्यापनं न श्रेयसे'** प्रस्तुत कथा में बालकों को गुप्तदान की महत्ता से अवगत करवाया है। कराची स्थित जमजेदजी मेहता का दान के सन्दर्भ में मत है कि शिलापट्ट पर दानदाता का नामोल्लेख करने पर दान का महत्त्व कम हो जाता है। बिना किसी प्रसिद्धि के जो दान दिया जाता है, उससे प्राप्त आनन्द किसी शिलाफलख पर नाम लिखने से भी नहीं प्राप्त होता है। **'आचरणमेव श्रेष्ठम्'** प्रस्तुत कथा में उपदेशित किया गया है कि महापुरुषों के जीवनकाल एवं जन्मस्थान को जानने हेतु समय व्यर्थ करने से अच्छा है उनके गुणों को जीवन में अपनाकर श्रेष्ठ आचरण करे। 'देवदर्शनम्' प्रस्तुत कथा में बालकों को नैतिक उपदेश दिया गया है कि माता–पिता की सेवा करना ही वास्तविक रूप से परमात्मा की सेवा करना के समान है। माता–पिता का दर्शन ही देवदर्शन के तुल्य है। 'जीवनदर्शनम्' प्रस्तुत कथा में लेखक बालकों को दर्पण, कपाल एवं लघुप्रतिमा के माध्यम से जीवनदर्शन का उपदेश देता है। लेखक का कथन है कि दर्पण वर्तमानकाल का बोध करवाता है। अतः प्रतिदिन दर्पण में देखकर मनुष्य को आत्मस्वरूप के बारे में विचार करना चाहिए। 'कपाल' मनुष्य को यह बोध करवाता है कि भविष्य में मनुष्य की मृत्यु निश्चित है। लघुप्रतिमा मनुष्य को बोध करवाती है कि वह दिव्य है। अतः मनुष्य को स्वयं को नाशवान मानकर निरन्तर दिव्यत्व की प्राप्ति हेतु प्रयास करना चाहिए। यही वास्तविक जीवन दर्शन है।

'भारतं नाम.....' प्रस्तुत कथा में भारतभूमि को लेकर यूनान के शासक विश्वविजेता सिकन्दर महान् एवं उसके गुरु अरस्तू के मध्य सम्पन्न तार्किक वार्तालाप का वर्णन किया गया है। अरस्तू सिकन्दर के भारत भूमि के जितने के प्रश्न का उत्तर देता है कि आप भारतभूमि को तो जीत सकते हो, किंतु 'भारतत्व' को नहीं जीत सकते हो। क्योंकि भारतत्व का अभिप्राय आध्यात्मिकता से है तथा यह आध्यात्मिकता यहाँ के निस्पृह संन्यासियों में निवास करती है।

'यशस्वितायाः रहस्यम्' प्रस्तुत कथा के माध्यम से बालकों को यश प्राप्त करने के उपाय बताये गए है। कार्य के प्रति श्रद्धा, प्रयत्न, परिश्रम एवं संघर्ष यह सब यश प्राप्ति के उपाय है। जैसाकि प्रस्तुत कथा में उल्लेख किया गया है– "यशस्विता परिश्रमम् अपेक्षते, संघर्षप्रवृत्तिम् अपेक्षते। परिश्रमात्, सततपरिश्रमात्, अखण्डपरिश्रमात्, श्रद्धायुक्तात् परिश्रमात् च यशस्विता प्राप्यते। श्रद्धा प्रयत्नः परिश्रमः, संघर्षप्रवृत्तिः इत्येते एव यशस्विता प्राप्तेः उपायाः।"[1]

'ज्ञानी नाम..... प्रस्तुत बालकथा बालकों को ज्ञानी शब्द से अवगत करवाती है। कथाकार के अनुसार ज्ञानी वह व्यक्ति होता है जो हमेशा सदाचार का पालन करता है सभी प्राणियों के प्रति दयाभाव रखता है। प्रशंसा एवं निन्दा का उस पर कुछ भी प्रभाव नहीं होता है। वह हमेशा विश्वकुटुम्बकम् की भावना रखता है। वहीं वास्तविक रूप में ज्ञानी पुरुष है।[2]

वस्तुतः सभी बालकथाये किसी न किसी नैतिक उपदेश से युक्त है। कथाकार का मुख्य प्रयोजन सरल–सरस एवं मनोरंजनपूर्ण तरीके से बालकों के अन्तर्मन में नैतिक उपदेशों का समावेश करना है। लघु–लघु बालकथाएँ कथाकार के उद्देश्य को अभिव्यक्त करने में पूर्णतया समर्थ है। 'हस्ते प्रकाशः' बालकथा बालकों को वर्तमान में जीवन–जीने का उपदेश देती है। यथा– "हस्ते विद्यमानान् विषयान् स्वीकृत्य जीवनीयम् इति तु जीवनतत्त्वम्। भूतकालस्य, भविष्यत्कालस्य वा विषये चिन्ताम् अकृत्वा वर्तमान प्रकाशे जीवितुं प्रयत्नः करणीयः इति।"[3]

कथाकार द्वारा प्रस्तुत कथाग्रन्थ में संकलित बालकथाओं का कथानक न केवल भारतभूमि से अपितु यूनान, पर्शिया, अमेरिका, सुदूर–पूर्व के देशों में प्रचलित कथाओं से ग्रहण किया गया है। 'संजीविनी नाम........' कथा की घटना पर्शिया देश के वैद्य 'बुर्जोय' के जीवनवृतान्त से ग्रहण की है। 'मास्तु भवतः आगमनम्' कथा इस्तांबुल् देश के ओटोमन साम्राज्य से ग्रहण की गई है। 'श्रेष्ठतायाः अभिज्ञानम्' कथा यूनान के प्रेस प्रदेश से उद्ग्रहीत है। 'पुस्तकोद्यमस्य संस्थापकः' कथा इंग्लैण्ड देश से ग्रहण की गई है। इसी तरह कुछ कथाएँ महाभारत एवं भागवत पुराण से भी उद्ग्रहीत है।

1. 'बालकथास्रवन्ती', प्रो. जनार्दन हेगड़े, पृ.–60
2. 'बालकथास्रवन्ती', प्रो. जनार्दन हेगड़े, पृ.–62
3. 'बालकथास्रवन्ती', प्रो. जनार्दन हेगड़े, पृ.–79

अतः आचार्य हेगड़े द्वारा विरचित सम्पूर्ण बालकथाओं के अध्ययन से न केवल बालकों के अपितु ज्येष्ठ मनुष्यों के जीवन में भी अविस्मरणीय परिणाम देखने को मिलेंगे ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है।

डॉ. पूजा उपाध्याय : बालकथा

बालकों को शिक्षा प्रदान करने की विविध विधियों में कथाविधि सर्वश्रेष्ठ मानी जाती है। बाल मन पर जितना प्रभाव कथाओं के श्रवण एवं पठन से होता है, उतना व्याख्यानों के सुनने से कदापि नहीं हो सकता है। डॉ. पूजा उपाध्याय द्वारा बाल्यकाल में जो कथाएँ पितामह से सुनी गई, उन सब कथाओं को कवयित्री द्वारा लघुपुस्तक के रूप में संग्रहित किया गया है।

बालकों के व्यक्तित्व के सर्वाङ्गीण विकास के लिए लेखिका द्वारा प्रस्तुत ग्रन्थ में 20 कथाओं का संकलन किया गया है। सम्पूर्ण कथाओं का नामकरण भारतीय संस्कृति के जीवनमूल्यों के नाम पर किया गया है। सभी बालक–बालकों के सामाजिक, सांस्कृतिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक विकास करने में पूर्णतया सक्षम है।

'मानव धर्म;' कथा के माध्यम से कवि रङ्गाचार्य योगी एवं उसके तीन शिष्यों–कनक, भानु एवं जय के चरित्र को उल्लेखित करता है। कवि शिष्य कनक के मुख से 'पुण्य' शब्द का अर्थ प्रतिपादित करता है।– 'पुण्यं प्राप्य मनसि यथा सन्तोषः अनुभूयते तथैव अहम् अनुभवन् अस्मि।'[1] कथाकार का कथन है कि भगवान न तो लकड़ी में है, न ही पत्थर में है। अपितु वह तो सम्पूर्ण जीवों में विद्यमान है। अतः ईश्वर द्वारा सृजित सभी जीवों के प्रति दयाभाव या श्रद्धाभाव रखना ही मानव धर्म है। 'सत्सङ्गतिः' कथा के माध्यम से कवि बालकों को सज्जन एवं दुर्जन में अन्तर बताते हुए सज्जन को चन्दन के समान हितकारी तथा दुर्जन को कोयले के समान दुर्गुण चिह्नों से संलिष्ठ मानते है। कवि का कथन है कि मनुष्य को हमेशा सज्जनों से ही संगति करना चाहिए। कवि कहता है कि– सज्जनों की संगति से मूर्ख भी प्रवीणता को प्राप्त हो जाता है।

'ज्ञानात् शीलं विशिष्यते' कथा के माध्यम से कवि बालकों को उपदेशित करता है कि मनुष्य की सद्प्रवृत्ति उसके ज्ञान से बढ़कर होती है। पुस्तक ज्ञान तो विषयों को पढ़कर प्राप्त किया जा सकता है किंतु शील या नैतिकता मनुष्य के संस्कारों में प्रत्यक्ष होती है। 'विद्याधनं सर्वधन प्रधानम्' सूक्ति के समान कवि यहाँ शील को ही उत्कृष्ट धन मानता है, यथा–

"शीलं सर्वत्र वै धनम्।"[2]

1. 'बालकथा', डॉ. पूजा उपाध्याय, पृ.–26
2. 'बालकथा', डॉ. पूजा उपाध्याय, पृ.–4

'क्लिश्यन्ते लोभमोहिताः' कथा में कवि मनोरंजनात्मक शैली में बालकों को मोह से अवगत करवाता हुआ उपदेश देता है कि मनुष्य को अत्यधिक लोभ कभी नहीं करना चाहिए, क्योंकि भगवद्गीतानुसार मोह से मनुष्य की स्मृति नष्ट हो जाती है तथा बुद्धि के नाश होने पर मनुष्य भी गहनतम मृत्युरूपी सागर को प्राप्त हो जाता है। यथा–

"क्रोधाद्भवति संमोहः संमोहात्स्मृतिविभ्रमः।

स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिर्नाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति।।2.63।।"

'ज्ञानात् शीलं विशिष्यते' कथा के माध्यम से कवि बालकों को उपदेशित करता है कि मनुष्य की सद्प्रवृत्ति उसके ज्ञान से बढ़कर होती है। पुस्तक ज्ञान तो विषयों को पढ़कर प्राप्त किया जा सकता है किंतु शील या नैतिकता मनुष्य के संस्कारों में प्रत्यक्ष होती है। 'विधाधनं सर्वधन प्रधानम्' सूक्ति के समान कवि यहाँ शील को ही उत्कृष्ट धन मानता है यथा–

"शीलं सर्वत्र वै धनम्।"[1]

नीतिशतक में भी शील (चरित्र) को मनुष्य का सबसे बड़ा आभूषण कहा है– 'शीलं परं भूषणम्' (नीतिशतक–83) पंचतन्त्र में भी शील को सभी आभूषणों से बढ़कर बताया है– 'विभूषणं शीलसमं न चान्यत्।' (पंचतंत्र, मित्रसंप्राप्ति)

'क्लिश्यन्ते लोभमोहिताः' कथा में कवि मनोरंजनात्मक शैली में बालकों को मोह से अवगत करवाता हुआ उपदेश देता है कि मनुष्य को अत्यधिक लोभ कभी नहीं करना चहिए क्योंकि भगवद्गीतानुसार मोह से मनुष्य की स्मृति नष्ट हो जाती है तथा बुद्धि के नाश होने पर मनुष्य भी गहनतम मृत्युरूपी सागर को प्राप्त हो जाता है। यथा– हितोपदेश ग्रन्थ में कहा गया है– **'लोभात्क्रोधः प्रभवति लोभात्कामः प्रजायते।**

लोभान्मोहश्च नाशश्च लोभः पापस्यकारणम्।।' (हितोपदेश, मित्रलाम, 27)

'यथाभावः तथा फलम्' कथा के माध्यम से कवि कहता है कि मनुष्य जिस भावना से जो कुछ भी सत्कर्म करता है, उसी भावना के अनुरूप उसका फल वह भोगता है। यदि उत्तम भाव से कोई कर्म सम्पादित किया जाए तो उसका फल भी उत्तम ही होता है। 'यः क्रियावान् सः पण्डितः' प्रस्तुत कथा का भावार्थ है कि जो मनुष्य अपने अन्तर्मन से किसी कार्य को निर्मलतापूर्वक सम्पन्न करता है वही सच्चा विद्वान, ज्ञानी एवं पण्डित होता है। जैसाकि भगवान् बुद्ध के मतानुसार गरीब किसान देवीलाल का वर्णन प्राप्त होता है।[2] 'मित्ररत्नम्' कथा के माध्यम से बालकों को सच्चे मित्र के लक्षण प्रतिपादित किए है। यथा–

"आपत्काले तु सम्प्राप्ते यन्मित्रं मित्रमेव तत्।

---

1. 'बालकथा', डॉ. पूजा उपाध्याय, पृ.–4
2. 'बालकथा', डॉ. पूजा उपाध्याय, पृ.–6

वृद्धिकाले तु सम्प्राप्ते दुर्जनोऽपि सुहृद् भवेत्।।"

सन्तोषः परमं सुखम्' कथा में गुरुनानक जी एक धनिक पुरुष को जीवन का उद्देश्य बताते हुए कहते है कि जीवन में सन्तोष बहुत आवश्यक है। धन का उपयोग निर्धनों को दान देने के लिए करना चाहिए। उनके द्वारा प्रदत्त आशीर्वाद ही आगामी जीवन में मनुष्य के साथ रहेगा। यथा–

"जीवने सन्तोषः बहु आवश्यकः। भवता प्रभूतं धनं सम्पादितं वर्तते इदानीं तत् धनं निर्धानानां बुभुक्षितानां विकलाङ्नानां च कृते दानाय उपयोगं करोतु। तेषां आशीर्वादाः आगामि जन्मनि अपि भवता सह भविष्यन्ति।"[1] 'सौन्दर्यम्' कथा के माध्यम से कवि समाज में विद्यमान काले–गोरे के भेदभाव का इंगित करते हुए लावण्या एवं पवित्रा के चरित्र का चित्रण करता है। लावण्या वर्ण से सुन्दर है किंतु मन से दूषित एवं घृणित प्रवृत्ति से युक्त है। जबकि पवित्रा वर्ण से कृष्ण वाली है किंतु मन से नाम के अनुरूप पवित्र है। उष्ण दुग्ध से जलने पर लावण्या की माता उसको सुन्दरता की परिभाषा देती है कि– "यत् सौन्दर्यं तु हृदये भवति। मनुष्यः सद्गुणैः सुन्दरः भवति न तु शरीरेण। भवती बाह्या सौन्दर्यस्य कृते किमर्थ रोदिति?"[2] वस्तुतः यह सत्य है कि सद्गुण ही व्यक्तित्व के सौन्दर्य के आधायक है।

'पुरुषकारमनुवर्तते दैवम्' कथा के माध्यम से बालकों को भाग्य की अपेक्षा पुरुषार्थ (कर्म) की महत्ता बताई है। प्रस्तुत कथा में विनायक एवं सर्वेश नामक दो बालकों के चरित्र का वर्णन किया गया है। कवि का कथन है कि 'कोई सा भी कार्य छोटा नहीं होता है।'[3] कथाकार आगे कहता है कि मनुष्य स्वप्न जरुर देखे किंतु भविष्य का भी ध्यान रखे, क्योंकि भविष्य का मार्ग वर्तमान से होकर ही जाता है। अतः स्वप्न देखने के साथ–साथ पुरुषार्थ अवश्य करना चाहिए।

जैसाकि हितोपदेश में भी कहा है कि पुरुषार्थ यानी उद्यम के बिना वांछित फल नहीं मिल सकता है–

'न दैवमपि संचित्य त्यजेदुद्योगमात्मनः।
अनुद्योगेन कस्तैलं तिलेभ्यः प्राप्तुमर्हति।' (हितोपदेश–मित्रलाभ, 30)

इसी प्रकार 'परोपकारार्थमिदं शरीरम्' कथा में परिश्रमी नन्दिता बालिका के द्वारा सम्पन्न सेवाभाव का सुन्दर वर्णन किया गया है। कवि का कथन है कि दूसरों की सेवा के लिए जो जीवनयापन करता है, वही वास्तविक जीवन है। 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' इस नीतिपरक वचन से बालकों को अवगत करवाने हेतु कवि वीरेश नामक बालक की कहानी कहता है। वीरेश प्रतिदिन विद्यालय से आकर बंदूक या गुलिका द्वारा पक्षियों का शिकार करता था। उसके मित्र तथा

1. 'बालकथा', डॉ. पूजा उपाध्याय, पृ.–22
2. 'बालकथा', डॉ. पूजा उपाध्याय, पृ.–25
3. 'बालकथा', डॉ. पूजा उपाध्याय, पृ.–28

माता–पिता उसको उपदेशित करते है कि– "यथा अस्मासु प्राणाः भवन्ति तथैव पशुपक्षिषु भवन्ति। यथा पीडा भवतः शरीरे भवति तथैव एतेषां शरीरे अपि भवति, अतः....कदापि निर्दोषजीवान् न पीडयिष्यामि इति।"[1] अतः मनुष्य को सभी प्राणियों के प्रति आत्मवत् व्यवहार करना चाहिए।

इसी तरह 'आपदर्थे धनं रक्षेद्' कथा धनसंरक्षण का, 'बालवीरः' कथा वास्तविक वीर पुरुष का, 'श्रद्धा' तथा 'निर्भयता' कथा बालकों के सामाजिक एवं नैतिक मूल्यों की शिक्षा देने में पूर्णतया समर्थ है। कवयित्री सम्पूर्ण कथाओं में उपदेशात्मक शैली का प्रयोग करती है। सभी कथायें कल्पनाश्रित, देश–काल–क्रिया के समन्वय से युक्त एवं प्रेरणात्मक उपदेशों से युक्त है।

डॉ. ऋषिराज जानी –चमत्कारिकः चलदूरभाषः

प्रस्तुत बालकथा ग्रन्थ कथाकार ऋषिराज जानी द्वारा विरचित एकादश (11) कथाओं का संग्रह है। कथाकार द्वारा बचपन में पिताजी गुरुवर हर्षदेव माधव जी द्वारा कथित कथाओं को ही जिज्ञासा एवं कल्पना का पुट देते हुए एक लघुकथा काव्य के रूप में निबद्ध किया गया है। प्रस्तुत कथाग्रन्थ में कल्पना का प्रवाह सम्पूर्ण काव्य में दृश्यमान होता है। प्रस्तुत काव्य का नामकरण काव्य की प्रथम कथा **'चमत्कारिकः चलदूरभाषः'** के नाम पर किया गया है। पुस्तक की भाषा शैली सरल–सरस एवं बाल मन के अनुरूप है। कथाओं की रोचकता में वृद्धि करने हेतु कथाओं के मध्य में चित्रों का समावेश भी किया गया है।

प्रथम कथा 'चमत्कारिकः चलदूरभाषः' का मुख्य पात्र अमित नामक एक बालक है। यहाँ चमत्कारिक शब्द आधुनिक जङ्गम दूरवाणी (मोबाइल) के विशेषण के रूप में प्रयुक्त हुआ है। अमित को प्रत्येक रात्रि को अपने पिता के चलदूरभाष पर एक सन्देश प्राप्त होता है। यह सन्देश किसी मनुष्य के नाम से नहीं अपितु पशु–पक्षी एवं वृक्षों के द्वारा प्रेषित किया जाता है। अमित जिज्ञासा के साथ प्रत्येक सन्देश को अच्छे से पढ़ता है। सन्देश के अन्तर्गत में अमित के लिए परीक्षा की तैयारी हेतु शुभ–कामना और परीक्षा में आने वाले प्रश्नों के बारे में पूर्व में ही सूचना दे दी जाती है।

द्वितीय कथा 'वृक्षहीनं नगरम्' में कवि प्रकृति का अत्यन्त मार्मिक एवं सजीव वर्णन करता है। लेखक पर्यावरण के विनाश को लेकर अत्यन्त चिंतित है। कथा में पर्यावरण में विद्यमान वृक्ष, नदियाँ इत्यादि तत्त्व अपनी–अपनी पीड़ा को व्यक्त करते हुए देखे जाते है यथा–

"निम्बः अवदत् अहं नगरात् त्रस्तः। नगरे सर्वेऽपि जनाः मम उपेक्षां कुर्वन्ति। करंजः उक्तवान्, 'एते नागरिका मम नामापि न जानाति। पिपलोऽपि सावेगम् अकथयत्' मां वीक्ष्य जनाः

1. 'बालकथा', डॉ. पूजा उपाध्याय, पृ.–34

छेत्तुम् इच्छन्ति। चंपकः सहसैव अवदत् 'मम पुष्पाणां गन्धं घ्रातुं न कस्यापि समीपे समयः। सर्वत्र प्रदूषणम् मलिनयन्त्रधूमाः, वाहनानां नादाः–नगरे जीवनम् अर्थत् पापानि भोक्तुं वासः। इति।"[1]

इसी तरह लेखक आज के नगरों की दैनिक जीवनचर्या एवं भौतिकवादी दृश्य उपस्थित करता है। जहाँ बालक टी.वी. पर क्रिकेट देखने में अपना समय गुजारते है। गृहणीयां किटी–पार्टी के नाम पर महिला–सम्मेलन में व्यस्त है। वृद्ध–जन धीरे–धीरे मृत्यु के ग्रास बन रहे है। नगरवासी वृक्षों को काटकर भूमि प्राप्त कर रहे है। संतुलित भोजन के अभाव में बालक कुपोषण के शिकार हो रहे है। नगरों में सर्वत्र प्रदूषण व्याप्त हो गया है। जल के अभाव में सभी मनुष्य आपस में लड़ रहे है।

तृतीय कथा 'सङ्गीतकारस्य गौरवम्'[2] में सङ्गीत की वैज्ञानिकता का सुन्दर वर्णन किया गया है। यह सार्वभौमिक सत्य है कि सङ्गीत में अद्भुत शक्ति होती है। सङ्गीत की ध्वनि सुनकर वृक्ष पुष्पों से युक्त हो जाते है। पक्षी नृत्य करने लगते है। बादल बारिश करने हेतु आकाश से पृथ्वी पर उतर जाते है। अकाल में भी वृष्टि हो जाती है। रोगी स्वस्थ हो जाते है। रोते हुए बालक चुप हो जाते है। भोंकते हुए कुत्ते शांत हो जाते है। सभी दुःखी प्राणी प्रसन्न हो जाते है।

'संगणकज्ञाता अजितदर्दुरः'[3] प्रस्तुत कथा में अजित नामधारी दर्दुरक (मेढ़क) के कम्प्यूटर ज्ञान का मनोहारी वर्णन किया गया है। अजित नामक मेढ़क अपने निवासस्थान कूप को ही पृथ्वी पर सर्वाधिक सुरक्षित स्थान मानता है। किंतु दो हंसों के माध्यम से उसे यह बोध करवाया जाता है कि यह पृथ्वी अत्यन्त सुन्दर एवं व्यापक है। हंसों के द्वारा मेढक को आकाश का भ्रमण करवाया जाता है। मेढक को हंसों के द्वारा आकाश भ्रमण करवाने में अत्यन्त काल्पनिक एवं मनोहारी वर्णन किया गया है। वस्तुतः यह पृथ्वी नाना प्रकार के नगरों, रमणीय नदियों, विशाल सागरों, मनोहारी तालाबों एवं विविध तीर्थस्थानों से युक्त है।

हंस अजीत नामक मेढ़क को कम्प्यूटर की शिक्षा देते है। कथा में कम्प्यूटर का महत्त्व प्रतिपादित किया गया है कि जो कम्प्यूटर को चलाना जानता है वही सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को जान सकता है।

'प्राणिनां परोपकारः' प्रस्तुत कथा में षड्वर्षीय अनील, मोन्टु कुत्ता, श्यामा बिल्ली एवं नयन मूषक (चूहा) मुख्य पात्र है। प्रस्तुत कथा में परोपकार का अत्यन्त सुन्दर वर्णन है। प्रत्येक पात्र दूसरे की भूख शांत करने हेतु अपने भोजन का सहर्ष त्याग करने में तत्पर दिखाई देते है। यद्यपि प्रत्येक पात्र एक दूसरे के स्वाभाविक शत्रु है जैसे कुत्ता बिल्ली का, बिल्ली चूहे की

1. 'चमत्कारिकः चलदूरभाषः', ऋषिराज जानी, पृ.–2–3
2. 'चमत्कारिकः चलदूरभाषः', ऋषिराज जानी, पृ.–22–23
3. 'चमत्कारिकः चलदूरभाषः', ऋषिराज जानी, पृ.–24–25

स्वाभाविक शत्रु है। किंतु फिर भी एक–दूसरे की भूख मिटाने हेतु उत्सुकता दिखाते है। प्रस्तुत कथा बालकों में परोपकार की भावना का समावेश करने में पूर्णतया समर्थ है।

'जलदस्य यात्रा' प्रस्तुत कथा में बादल निर्माण की वैज्ञानिक प्रक्रिया का अत्यन्त ललित वर्णन प्राप्त होता है। कवि का कथन है कि भूमि में स्थित मिट्टी के कण परस्पर मिलकर सर्वप्रथम जल के कणों को अपने अन्दर समावेशित करते है। अनन्तर यज्ञ का धुआँ भी उन कणों को व्याप्त कर लेता है। इसके पश्चात् वायु उनको एक स्थान से दूसरे स्थान पर प्रवाहित करते है। अन्ततः एक मेघ का निर्माण होता है। प्रस्तुत कथा में 'मेघ' को घनश्याम नामधारी मनुष्य के समान चित्रित किया गया है। यहाँ मेघ सभी प्राणियों का कल्याण करने वाला है। हंस, मयूर, चन्द्रमा, चिड़िया, किसान, बालक इत्यादि सभी प्राणी मेघ का स्वागत करते है। बालक भी मेघ का आह्वान करते है–

"आगच्छ मेघ!
आगच्छ मातुल!
आगच्छ मातुल! रोटिका उष्णा।
उष्णं च शाकम्।....
वृष्टिं कुरु मातुल!
भगिन्या धरित्र्या दुःखं हर मेघ!" (पृ.–35)

'सुकुमारस्य प्रावीण्यम्' प्रस्तुत बालकथा में मानवेतर सुकुमार नामक कोयल के शावक 'सुकुमार' द्वारा गोरे–काले वर्ण को लेकर समाज में प्रचलित भेदभाव का उल्लेख किया गया है। कवि का कथन है कि यह सम्पूर्ण सृष्टि परमेश्वर की कृति है। सभी प्राणियों में कुछ न कुछ वैशिष्ट्य अवश्य है। कवि आगे कहता है कि कुछ पुष्प देखने में अत्यन्त मनोहर लगते है किंतु उनमें सुगंध नहीं होती है। बादल भी श्यामवर्ण वाले होते है यदि वर्षा नहीं होगी तो जीवन कैसे संभव होगा? भगवान शिव भी अपने गले में कृष्ण सर्प को धारण करते है। कृष्ण भगवान भी श्याम वर्ण के है। अंगूर भी काले होते है। अतः तुम्हें (सुकुमार) कुरूपता को लेकर विलाप नहीं करना चाहिए।

'ऐरावतः मोनां त्रातुम् आगतः' प्रस्तुत कथा में सप्तवर्षीया 'मोना' द्वारा आलेखित चित्रकला का सुन्दर वर्णन किया है। साथ ही मोना की वन्य–प्राणियों के प्रति उदारता का भी अत्यन्त मार्मिक वर्णन किया गया है। यहाँ बालकों को ऐरावत गजराज से भी परिचय करवाया गया है। वस्तुतः ऐरावत हाथी देव और दानवों द्वारा सम्पन्न समुन्द्रमंथन से निकले 14 रत्नों में से प्राप्त, छः शूण्डों वाला श्वेत वर्णन वाला एक हाथी है, जो बाद में देवराज इन्द्र का वाहक बनता है।

'रूपगर्वितः कुक्कुटः' कथा के माध्यम से बालकों को कुक्कुट के रूप सौन्दर्य के अहंकार से अवगत करवाते हुए शिक्षा दी गई है कि रूप को लेकर कभी अहंकार नहीं करना चाहिए।

डॉ. सम्पदानन्दमिश्र –सप्तवर्ण चित्रपतङ्गः

"रत्नं रत्नेन समागच्छति इव'' अर्थात् योग्य व्यक्ति की योग्य के साथ ही संगति होती है। बाल–साहित्य सर्वथा चित्रों से युक्त होना चाहिए तथा चित्र हमेशा रङ्गमय होते है। डॉ. सम्पदानन्द मिश्र विरचित 'सप्तवर्ण–चित्रपतङ्गः' नामक वर्णमय पुस्तक, स्वयं बालकों के द्वारा लिखित कथाओं का संग्रह है। मूलतः यह कथाएँ आङ्गलभाषा में लिखी गई है, जिसको मिश्र जी द्वारा संस्कृत में अनुवाद करके प्रकाशित किया गया है। प्रायशः उत्तर बाल्यावस्था में पदासीन बालकों के लिए यह पुस्तक अत्यन्त उपयोगी है। प्रस्तुत पुस्तक में रमणीय–मनोहारी–बालमनोऽनुकूल एवं कल्पनामयी गुणों से युक्त चित्रावली युक्त कथा है।

कवि कल्पना करता है कि एक बार चार बालक वन में विचरण कर रहे थे। वह वहाँ एक सुन्दर जलाशय को देखते है। कवि जलाशय का वर्णन करता है कि, वह जलाशय विविध वर्णों वाले पुष्पों से युक्त है। उसको देखते ही बालक प्रफुल्लित हो जाते है। अचानक ही श्वेतवर्ण वाले हाथी का वहाँ आगमन होता है। आनन्द मग्न बालक यह देखकर डर जाते है। किंतु हाथी द्वारा बालकों को यह कहने पर की आप मुझसे डरो मत, डरो मत। पलभर में ही वह परस्पर मित्र बन जाते है। आगे कवि कल्पना करता है कि वह बालक हाथी की पीठ पर सवार होकर सम्पूर्ण वन का अवलोकन करते है। मार्ग में उन बालकों को विचित्र वर्णधारी पतङ्गा (तितली) मिलती है। कवि वर्णन करता है कि वह पतङ्गा पिपीलिका के समान लग रही थी। वह चित्रपतङ्ग देखने में अत्यन्त आकर्षक थी। परस्पर वार्तालाप के मध्य चित्रपतङ्ग बालकों से पृथ्वी का वर्णन करने का आग्रह करती है। तब बालक उत्साह के साथ पृथ्वी का मनोहारी वर्णन करते है, कि– "तत्र वृक्षाः पुष्पाणि, पक्षिणः, जलाशयाः, पर्वताः, पशवः, वनानि, नद्यः च सन्ति।"[1] तदनन्तर चित्रपतङ्गा द्वारा सम्पूर्ण पृथ्वी का अवलोकन करने की जिज्ञासा व्यक्त करने पर बालक चित्रपतङ्ग के साथ हाथी पर सवार होकर प्रसन्नता के साथ सम्पूर्ण वन का अवलोकन करते है।

प्रस्तुत कथा तमिलनाडु राज्य के सत्यमङ्गलम् के मंगलापुरम् में चालित बालकेन्द्र में अध्ययनरत बालकों द्वारा रचित है। जिसका चित्रात्मक वर्णन ओरगन विश्वविद्यालय, सं.रा.अ. के विद्यार्थियों द्वारा किया गया है। संस्कृत के प्रति बालकों में रूचि जाग्रत करने हेतु डॉ. सम्पदानन्द मिश्र द्वारा प्रस्तुत कथा का संस्कृत में अनुवाद किया गया है।

आचार्य पद्म शास्त्री –संस्कृतकथाशतकम्

1. 'सप्तवर्ण चित्रपतङ्गः', डॉ. सम्पदानन्द मिश्र, पृ.–13

आचार्य पद्म शास्त्री द्वारा संस्कृत भाषा के प्रचार–प्रसार एवं बालकों के ज्ञानवर्धन एवं समग्रजीवन की शिक्षा प्रदान करने हेतु मनोरंजन शैली में संस्कृतकथाशतकम् की रचना की है। कवि द्वारा प्रस्तुत कथाओं के माध्यम से बालकों को सदाचार, नैतिकता, सामाजिकता का उपदेश दिया गया है। ये कथाएँ सरल, बोधगम्य एवं रोचक कथा–शैली में प्रस्तुत की गई है। प्रस्तुत कथाग्रन्थ में विभिन्न कथासूत्रों को आधार बनाकर संस्कृत गद्य में 100 कथाओं का प्रणयन किया गया है जिनका प्रकाशन दो भागों में हुआ है।

प्रस्तुत कथाग्रन्थ की शैली सजीव व कल्पना पर आश्रित है। कथाकार द्वारा कथा के कहने तथा श्रोता द्वारा उनके सुनने के दौरान ऐसा अनुभव होता है कि कथा जीवंत होकर सामने घटित हो रही है। यद्यपि सम्पूर्ण कथाएँ कवि की कल्पना पर आधारित है किंतु वह इस लोक से परे नहीं है। सभी कथाओं का कथानक इसी पृथ्वीलोक से सम्बन्धित है। 'उपकारपरायणः सिंहः' तथा 'सत्यपरीक्षणम्' कथा का कथासूत्र मणिपुर राज्य से ग्रहण किया गया है। 'सरस्वत्या वरदपुत्रः' कथा में काशी नरेश जयन्तचन्द के दरबारी कवि श्रीहर्ष की विद्वता का वर्णन किया गया है। इसी तरह 'जीवनरत्नम्' कथा में विजयनगर राज्य के नरेश विनयकान्त की कृपणता का सजीव वर्णन किया गया है। 'अहंकारः' कथा में काबुल नरेश नमरूद के अहंकार का तथा इब्राहिम नामक बालक द्वारा उसके अभिमान को दूर करने का वर्णन प्राप्त होता है। इसी तरह 'मंगलसिंहस्य तीर्थयात्रा' में मारवाड़ प्रान्त के राजपूत मंगलसिंह की दुर्व्यसनी एवं दुराग्रही प्रवृत्ति का सुन्दर वर्णन किया गया है।

इसी प्रकार **'राज्ञः प्रापं प्रजा भुङ्क्ते'** कथा में वर्णन किया गया है कि राष्ट्र का राजा जैसा विचार करता है वैसा ही फल प्रजा पर पड़ता है। अतः राजा की भावना पवित्र होनी चाहिए। **'गणकस्य भाग्यम्'** कथा में मणिपुर राज्य के किसी ज्योतिषी की चमत्कारपूर्णता का वर्णन प्राप्त होता है। 'प्रस्तरशय्या' कथा में जड़भरत के नैतिक आचरण का उपदेश दिया गया है। इसी तरह 'लियूवीरः' नामक कथा में फ्रांस के सेनाधिपति लियू के शौर्य का वर्णन किया गया है। **'विक्रमादित्यस्य न्यायाप्रियता'** कथा में उज्जैन के पराक्रमी राजा विक्रमादित्य की न्यायपूर्ण शासन व्यवस्था का मनोहारी तरीके से वर्णन किया गया है। इसी तरह **'स्वर्णपुरुषः'** कथा में विक्रमादित्य की सत्यवादिता का सुन्दर वर्णन है।

'जिह्वालोल्यान्मृतो राजा' प्रस्तुत कथा में पंच ज्ञानेन्द्रियों के अन्तर्गत परिगणित रसना इन्दिय के लोभी बने हुए किसी राजा की रसना लोलुपता का वर्णन किया गया है। साथ ही 'केवलाघो भवतिकेवलादी' के विपरित व्यवहार करने का दुष्परिणाम भी अभिव्यक्त किया गया है। **'शिक्षया किन्न साध्यते'** कथा में जहाँ पहले वर्तमान समाज में प्रचलित शिक्षित बेरोजगारी का वर्णन किया गया है, वहीं दूसरी और शिक्षा के अच्छे परिणाम भी अभिव्यक्त किए गए है। प्रस्तुत कथा में बंगाल प्रान्त के प्रतिष्ठित सामाजिक भूदेव मुखोपध्याय की सत्यनिष्ठता का सुन्दर वर्णन

किया गया है। 'मायाविनी' कथा में कवि सुन्दर कल्पना करता है। कवि कल्पना करता है कि मायाविनी द्वारा छल से बड़ी बहिन कोमतरहप् के सिर को काटकर उसे नदी में बहा दिया है तथा अब वह छोटी–बहिन जरथहप् को भी मारने हेतु उद्दत है। अंत में राजा लयांगवार द्वारा अंत में मायाविनी को मारकर दोनों बहिनों की रक्षा करते है।

'वेणुवादकः राजपुत्रः' प्रस्तुत कथा में सिक्किम प्रान्त के किसी राजा के दो पुत्रों का तुलनात्मक वर्णन है। ज्येष्ठ पुत्र चेसप्पा सरल एवं दयालु स्वभाव का है तो कनिष्ठ पुत्र चमीसप्पा स्वभाव से क्रूर एवं स्वार्थी है। कथाकार कथा में वैचित्र्य उत्पन्न करने के लिए सूक्तियों का भी प्रयोग करता है, यथा–

"भाग्ये विधात्रा यल्लिखितुं तन्मार्जितुं कः क्षमः।"[1]

"सर्वं भाग्याधीनं वर्तते।"[2]

'पशुपक्षिणां भाषा' कथा में कवि अफ्रीका देश में निवासरत एक भाग्यहीन दम्पती का वर्णन करता है। पति ओहियो, हरिण–चीते की कृपा से पक्षियों की भाषा जानने में निपुण हो जाता है। किंतु पक्षियों की भाषा जानने की बात उसने अपनी पत्नी से नहीं बताई, जिससे वह मृत्यु को प्राप्त हो गया है। वस्तुतः बालक अनेक भावों की कथा सुनकर प्रसन्न होते है। बालकों में कथाओं के सुनने से एकता की भावना आती है।

'फू–श्याङ्गः' कथा में श्यांग नामक एक आलसी एवं मूर्ख बालक का वर्णन किया गया है। मूर्ख श्यांग द्वारा किए गए कार्य पाठकों का खूब मनोरंजन करते है। वस्तुतः कथाकार द्वारा सभी कथाओं का अंत भारतीय परम्परा के अनुरूप सुखांत किया है। कथा में अंत के प्रधान पात्र को अपने उद्देश्य की प्राप्ति हो जाती है। कथाओं में तात्कालिक समय की राजनैतिक, ऐतिहासिक, धार्मिक एवं आर्थिक स्थिति का सुन्दर वर्णन किया गया है।

(ग) बालनाटकम्

संस्कृत साहित्य में वैदिक युग से ही नाटकों की परम्परा विद्यमान है। ऋग्वेदीय सूत्रों में विद्यमान सरमा–पणि संवाद दृश्य काव्य के उद्भव का प्रथम प्रमाण है। यम–यमी संवाद भी नाटक साहित्य की उत्पत्ति को स्वीकार करता है। संहिता और ब्राह्माण ग्रन्थों में प्रयुक्त शैली रूपक के अस्तित्व को प्रमाणित करता है। संस्कृत साहित्य में नाटक रमणीय काव्य है। संस्कृत नाटक अभिनय प्रधान होता है। भरतमुनि ने नाट्यशास्त्र में नाटक के तीन प्रयोजन बताये है– हितोपदेशजननं अर्थात् समाज व मानव जाति के लिए कल्याणपरक उपदेश प्रदान करना, विश्रान्तिजननम् अर्थात सामाजिकों को मानसिक शांति प्रदान करना तथा मनुष्यों का मनोरंजन करना। संस्कृत बाल–साहित्य में नाटक के केवल एकांकी भेद के ही दर्शन होते है। प्रो.

1. 'कथाशतकम्' (द्वितीयो भाग), पदम् शास्त्री, पृ.–12
2. 'कथाशतकम्' (द्वितीयो भाग), पदम् शास्त्री, पृ.–12

अभिराजराजेन्द्र मिश्र द्वारा भी एकांकी काव्य का मुख्य लक्षण केवल बाल–दर्शकों का मनोरंजन करना मात्र बताया है। वस्तुतः इन बाल–एकांकियों में एक ही दिन की घटना का वर्णन देखा जाता है। साथ ही भाषा, संवाद बहुल एवं मनोरंजन प्रधान होती है।

बाल एकांकी में राजा, पण्डित, ग्राम्यजन, दिव्य अथवा अदिव्य, शिक्षक, भिक्षुक, संन्यासी या पशु–पक्षी इत्यादि कोई भी पात्र हो सकते है। एकांकी का इतिवृत वेद, पुराण, महाभारत या कुछ भी हो सकता है किंतु वह नाट्यकार की कवि प्रतिभा से अद्भुत हो जाता है। एकांकी में प्रधान रस कथावस्तु के अनुकूल ही होता है किन्तु अधिकांश एकांकियों का मुख्य प्रयोजन उपदेश प्रदान करने के कारण प्रसादगुण युक्त शान्त रस ही मुख्य रस होता है।

आधुनिक संस्कृत बाल नाटकों में मुख्यतया प्रो. राजेन्द्र मिश्र प्रणीत 'नाट्यनवग्रहम्', एच. आर. विश्वास प्रणीत 'मार्जालस्य मुखं दृष्टम्', पूजा लाल डालवाडी कृत 'बालनाटकानि', श्री रामचन्द्र अम्बिकादत्त शाण्डिल्य कृत 'बालनाट्यावलि', डॉ. रामकिशोर मिश्र प्रणीत, 'बालनाट्यसौरभम्', सौ. दुर्गा पारखी प्रणीत, 'बालनाट्यवल्लरी', तथा रवीन्द्र पण्ड्या कृत 'यो मद्भक्तः सः मे प्रियः' इत्यादि प्रमुख बाल नाटकों के उदाहरण है।

प्रो. अभिराज राजेन्द्र मिश्र –नाट्यनवग्रहम्

प्रो. अभिराजराजेन्द्र मिश्र द्वारा लिखित 'नाट्यनवग्रहम्' काव्य शिशुओं के लिए उपयोगी लघु नाटकों का सङ्कलन है। कवि द्वारा प्रस्तुत नाटकों की रचना सन् 1987–88 के बालीद्वीप की यात्रा के दिनों में की गई थी। प्रस्तुत सभी एकाङ्की पुराण तथा रामायण–महाभारत के ज्ञात–अज्ञात कथा–सूत्रों पर आधारित है। परन्तु इन्हें बालकों की दृष्टि से लिखा गया है। इन लघु रूपकों का आकार–प्रकार अत्यन्त लघु है। किंतु फिर भी प्रस्तुत एकांकियों में नाट्य साहित्य के अधिकांश लक्षणों की पूर्ति की गई है। यथा सर्वप्रथम नाट्य की निर्विहन समाप्ति के लिए नान्दी पाठ का प्रयोग करना, नेपथ्ये (जवनिका) शब्द का प्रयोग करना हो या सूत्रधार के द्वारा नाटक का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत करना हो, यथा–

"सूत्रधारः (प्रविश्य सप्रणामं सपुष्पवर्षं च" मान्याः सहृदयाः! एषोऽहं सविनयं विज्ञापयामि यदद्य परिषन्मनोरंजनाय ईश्वरान्वेषणम् नाम शिशुजनोचितमेकाङ्करूपकमभिनवं प्रस्तोष्यते। कर्ता त्वस्य विक्षुतचरस्समेषामभिराजराजेन्द्रो यस्यायं संक्षिप्तपरिचयः।"[1]

नाट्यनवग्रहम् में संकलित प्रथम सात एकांकियों की कथावस्तु पुराण–रामायण एवं महाभारत से ग्रहण की गई है। प्रथम एकांकी 'ईश्वरान्वेषणम्' का मूल स्त्रोत श्रीमद्भागवतपुराण से, द्वितीय एकांकी, 'श्वेतोद्धारः' एकांकी का कथानक रामायण के विदर्भ नरेश श्वेत के शिक्षाप्रद वृतान्त से ग्रहण किया गया है। 'सत्यकामजाबालः' एकांकी का शीर्षक महाभारत से ग्रहण किया

---

1. 'नाट्यनवग्रहम्', प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–20

गया है। इसी तरह 'रत्नप्रत्यभिज्ञानम्' एकांकी का कथासूत्र महाभारत से ग्रहण किया गया है। 'नामकरणम्' एकांकी में लंकापति रावण के 'रावण' नामकरण की कथा वर्णित की गई है। इसका भी मूलस्त्रोत वाल्मीकिरामायण ही है। इसी प्रकार 'गुरुदक्षिणा' एकांकी का कथानक शतसाहस्त्री संहिता 'महाभारत' से लिया गया है। 'दास्यमुक्तिः' एकांकी का मूल स्त्रोत महाभारत एवं श्रीमद्भागवत पुराण से लिया गया है। अन्तिम दो एकांकियों में परिगणित 'सिंहजम्बुकीयम्' का कथानक पंचतंत्र से ग्रहण किया गया है तो अन्तिम एकांकी 'गुणाः पूजास्थानम्' में एक दरिद्र शाकविक्रेता के बेटे सोम की विनम्रता, मित्रता, प्रतिभा एवं सेवाभावना का सुन्दर वर्णन किया गया है। यह यथार्थ सत्य है कि अधिकांश एकांकियों का कथानक इन वृहद् उपजीव्य ग्रंथों से ग्रहण किया गया है किंतु प्रो. मिश्र ने अपनी प्रतिभा एवं नाट्यशिल्पता से उन्हें अत्यन्त बालोपयोगी बनाया है। इन एकांकियों से सुकुमार मति युक्त बालकों का भरपूर मनोरंजन किया गया है।

प्रस्तुत बाल एकांकी 'नाट्यनवग्रहम्' का नामकरण अत्यन्त सारगर्भित है। प्रस्तुत एकांकी में नो एकांकियों का संकलन अत्यन्त सारगर्भित ढंग से किया गया है। कवि एकांकी को दृश्यों में इस प्रकार विभाजित करता है कि आगामी घटना–चक्र पर उसका प्रभाव पड़ता चला जाता है। 'ईश्वरान्वेषणम्' एकांकी के प्रथम दृश्य में उतानपाद की दो रानियाँ–सुनीति एवं सुरुचि तथा उनके पुत्र ध्रुव एवं उत्तम का साङ्गोपांग वर्णन किया गया है। प्रो. मिश्र द्वारा कथोपकथन के स्वगत या अश्राव्य प्रकार का सर्वत्र प्रयोग देखने को मिलता है। 'स्वगत' का अर्थ है जो बात दूसरों को सुनानी अभीष्ट न हो, मन ही मन कहने योग्य हो। यथा–

द्रोणाचार्यः – (आत्मगतम्)

दुर्योधनः – (साभिमानम्)

इसी तरह सबको सुनाने योग्य 'प्रकाशम्' (सर्वक्षाव्य) कथोपकथन का भी सुन्दर प्रयोग देखने को मिलता है। एकांकी में प्रत्येक दृश्य की समाप्ति क उपरान्त 'जवनिकापातः' शब्द का प्रयोग करता है। जवनिका का अर्थ है, "रङ्गमंच पर दृश्य की समाप्ति होने पर पर्दे का गिराया जाना।" इसी तरह प्रत्येक एकांकी का प्रारम्भ 'नेपथ्ये' शब्द से होता है–

"नेपथ्ये विविधवाद्यध्वनिः। ततश्च नान्दीपाठः श्रुयते।"

यहाँ 'नेपथ्य' शब्द का अर्थ है 'रङ्गमंच का पृष्ठ भाग'। जहाँ पात्र अपनी वेशभूषा आदि परिवर्तित करते है। प्रो. मिश्र द्वारा नाटक के अनुरूप ही प्रस्तुत एकांकियों के प्रारम्भ में पात्रों का नामोल्लेख किया गया है।

चरित्र–चित्रण की दृष्टि से भी 'नाट्यनवग्रहम्' एक सफल बाल–एकांकी है। 'ईश्वरान्वेषणम्' में राजा उत्तानपाद जहाँ बिना भेदभाव किए ध्रुव एवं उत्तम दोनों पुत्रों से समान

स्नेह करता है। तो बालक ध्रुव में नारायण को प्राप्त करने की दृढ़ प्रतिज्ञा भी दिखाई देती है। 'गुरुदक्षिणा' एकांकी में आचार्य द्रोण की धनुर्विधा, अर्जुन की गुरुभक्ति तथा दुर्योधन के अहंकार एवं हठधर्मिता का सुन्दर वर्णन किया गया है। 'दास्यमुक्तिः' एकांकी में महर्षि कश्यप की दोनों पत्नियाँ–कद्रू एवं विनता के स्वभाव का वर्णन किया गया है। कद्रू स्वभावतः ईर्ष्या–द्वेष, क्रोध, मोह तथा तामस स्वभाव की है तो विनता अत्यन्त शान्त, आर्जवशील, सत्वगुणसम्पन्न तथा ममतामयी है।

'श्वेतोद्धारः' एकांकी में विदर्भ नरेश श्वेत के धर्मपूर्वक प्रजापालन का अत्यन्त मार्मिक एवं शिक्षाप्रद चरित्र का वर्णन किया गया है। 'सत्यकामजाबालः' शीर्षक लघुनाट्य में जाबाल ऋषि के पुत्र सत्यकाम की सत्यनिष्ठा का सुन्दर वर्णन किया गया है। 'रत्नप्रत्यभिज्ञानम्' एकांकी में गुरु द्रोणाचार्य की धनुर्विधा–कौशल, अश्वत्थामा की हठ्धर्मिता, पितामह भीष्म की दृढ़ प्रतिज्ञा एवं अर्जुन की गुरुभक्ति का सुन्दर वर्णन मिलता है। 'नामकरणम्' एकांकी में लंकाधिपति रावण के पराक्रम, दुराभिमान तथा शिव के प्रति दृढ़ भक्ति–भाव का वर्णन किया गया है। 'सिंहजम्बुकीयम्' एकांकी में श्रृंगाल के बुद्धि–वैभव का माहात्म्य रेखांकित किया गया है। तथा 'गुणाः पूजास्थानम्' एकांकी में गरीब बालक सोम की सिंधु नामक धनाढ्य बालक के साथ की गई मित्रता का सुन्दर वर्णन किया गया है।

'नाट्यनवग्रहम्' एकांकी काव्य की भाषा अत्यन्त सरल है। संवाद एवं वाक्यविन्यास भी लघु है। किंतु संवाद अत्यन्त छोटे–छोटे होते हुए भी सहज, बोधगम्य तथा बड़े–बड़े अर्थों की अभिव्यक्ति करते है। जैसे 'गुणाः पूजास्थानम्' एकांकी में सिन्धु का सोम! त्वया गृहकार्यं कृतम् यत् गणिताध्यपकेन दत्तमासीत? पूछना, सोम का अथ किम्। किं त्वया न कृतम्? यह कहना, उनके सारगर्भित कथनोपकथनों के सुन्दर उदाहरण है।

कवि एकांकी के मध्य में भाव प्रकटन हेतु पद्यों के प्रयोग में भी सिद्धस्थ है। यथा 'सत्यकामजाबालः' कथा में 'सत्य' का अत्यन्त ही सुन्दर वर्णन किया गया है–

"सत्यं श्रद्धा सत्यं भक्तिः
सत्यमेव तत्प्रियाऽनुरक्तिः
सत्येनैव विभाति जीवनं देवकरुणया त्रातम्!!"[1]

वस्तुतः प्रो. मिश्र की शैली में भाषा और भाव का अद्भुत सामंजस्य है। उनकी भाषा विषयानुसारिणी है। वे भयावह दृश्यों के वर्णन में समास संकुल ओजोगुणविशिष्ट पद्य का सुन्दर वर्णन करते है–

"ज्वलल्ललाटलोचनोदिरत्कृशानुसंचयै–
र्विकीर्णचिट्चिटारवैर्ज्वलतत्रिलोकमण्डलम्।

---

1. 'नाट्यनवग्रहम्', प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–50

प्रदाहयन्तमीश्वरं युगान्तसान्ध्यनायकं
दधत्पिनाकसायकं भजे मदिष्टदायकम्।।"[1]

इसी तरह कोमल प्रसङ्गो में असमस्त और सरल रचना भी कर सकते है। यथा–

"ममेकां गीतिकां श्रुत्वा यथा कूजति कोकिलः।
तेन सिद्धिमहं मन्ये विद्यायाः कुलपाश्रमे।।"[2]

'नाट्यनवग्रहम्' में अलङ्कारों का स्वतः ही प्रयोग देखने को मिलता है। प्रत्येक एकांकी के मंगलाचरण में प्रो. मिश्र 'अनुप्रास' शब्दालंकार का सुन्दर प्रयोग करते है। यथा–

"दिशतु मङ्गलं करिवरवदनो गणाधिपः
दिशतु मङ्गलं वरटवाहिनी सरस्वती।
दिशतु मङ्गलं जगद् वन्दितो महेश्वरः
दिशतु मङ्गलं गिरिशगेहिनी महेश्वरी।।"[3]

प्रस्तुत एकांकी का भावपक्ष अत्यन्त प्रबल है। प्रत्येक एकांकी भिन्न–भिन्न प्रकार के उपयोगी सन्देश से युक्त है। किंतु सबका मुख्य प्रयोजन बालकों का मनोरंजन करना ही है। 'ईश्वरान्वेषणम्' एकांकी के माध्यम से बालकों को लक्ष्य प्राप्त करने के लिए निष्ठा तथा कर्त्तव्यपरायणता का उपदेश दिया गया है। वस्तुतः सभी एकाकिंयाँ विभिन्न नैतिक उपदेश प्रदान करने में पूर्णतया समर्थ है। साथ ही नाम के अनुरूप ही प्रत्येक एकांकी बालकों को शिक्षित करती है। 'गुणाः पूजास्थानम्' कथा में अमीर–गरीब के भेदभाव को सुन्दर ढंग से प्रस्तुत किया गया है। प्रस्तुत एकांकी में कवि सामाजिक भेदभाव पर कड़ा प्रहार करता है। साथ ही कवि उल्लेख करता है कि गुण ही मनुष्य की पूजा का एकमात्र कारण है न कि धन–वैभव अथवा ऊँचा कुल–खानदान।

'सत्यकामजाबालः' एकांकी बच्चों के मन में मातृभक्ति तथा सत्य के प्रति अविचल निष्ठा का भाव जाग्रत करती है। सत्य भले ही समाज एवं लोक की स्वार्थसिद्धि के विपरित हो, ग्राह्य है। क्योंकि सत्य को किसी के सहारे की आवश्यकता नहीं पड़ती है। 'नाट्यनवग्रहम्' एकांकी काव्य में यद्यपि रामायण–महाभारत के वृतान्तों को ग्रहण किया गया है किंतु यह मनुष्य के जीवन के अत्यन्त निकट है। प्रस्तुत एकांकी में कवि समय, स्थान तथा कार्य की एकता, इन तीनों का सम्यक् पालन करता है।

डॉ. रामकिशोर मिश्र –बालनाट्यसौरभम्

1. 'नाट्यनवग्रहम्', प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–63
2. 'नाट्यनवग्रहम्', प्रो. राजेन्द्र मिश्र, पृ.–50
3. प्रो. राजेन्द्र मिश्र प्रणीत, 'नाट्यनवग्रहम्', में संकलित प्रत्येक एकांकी के नान्दी पाठ से उद्धृत।

डॉ. रामकिशोर मिश्र द्वारा प्रणीत प्रस्तुत बाल–नाटक में छः नाटकों का संग्रह किया गया है। कवि का मानना है कि जो बाल रचना बालकों को सन्मार्ग पर अग्रसर करे तथा सहृदय सामाजिकों के हृदय को हरने में सफल होती है, वही सफल बाल रचना है।

(i) अङ्गुष्टदानम्

प्रस्तुत बाल काव्य में संकलित सभी नाटक महाभारत एवं रामायण के कथासूत्रों पर आधारित है। प्रथम बाल नाटक 'अङ्गुष्टदानम्' में नाटक के सभी लक्षण घटित होते हैं। कविराज विश्वनाथ द्वारा प्रतिपादित नाटक के लक्षण के अनुरूप यहाँ सभी लक्षणों का पालन किया गया है। प्रस्तुत नाटक की कथावस्तु महाभारत के एकलव्य–गुरु द्रोण के कथानक पर आधारित है। किंतु कवि ने अपनी कल्पना एवं नाट्यशिल्पता का प्रयोग करते हुए इसे सरल–सरस भाषा में बाल–पाठकों के लिए मनोहर ढंग से अभिव्यक्त किया है।

'पंचादिका दशपरास्तत्रांकाः परिकीर्तिताः'[1]

अर्थात् नाटक के लक्षण के अनुरूप प्रस्तुत नाटक में 5 अङ्क हैं। इन पाँच अङ्कों में शिष्य एकलव्य के गुरु–द्रोण के प्रति सच्ची श्रद्धा एवं गुरु भक्ति का वर्णन किया गया है।

प्रथम अंक में कवि सर्वप्रथम मंगलाचरण के रूप में निर्धनों के सहृदय में स्थित, कमलाशन पर सुशोभित, मधुर शब्दों से अलंकृत देवी सरस्वती को नमस्कार करता है।

"मधुरशब्दैरलंकारैः, सद्विचारैश्च बुद्धिभिः।

सा कविख्यापयित्री मे, भारते भातु भारती।" (बालनाट्यसौरभम्, 1/1, पृ.2)

नाटक की कथावस्तु को धारण करने वाले सूत्रधार द्वारा सर्वप्रथम 'अङ्गुष्ठदानम्' नाटक को अभिनय हेतु दर्शकों के समक्ष प्रदर्शित किया जाता है। भिल्लकराजपुत्र एकलव्य एवं दो सहपाठियों के परस्पर वार्तालाप से पता चलता है कि इस समय एकलव्य की उम्र षोडश वर्ष की हो चुकी है। एकलव्य का कथन है कि उसका मन अध्ययन में नहीं लगता है। यह देखकर एकलव्य के पिताजी हिरण्यधनु अत्यन्त चिन्तित है। हिरण्यधनु का मत है कि अभी तक एकलव्य द्वारा धनुर्विद्या ग्रहण नहीं की गई है। अन्ततः माता का आशीर्वाद प्राप्त करके एकलव्य धनुर्विद्या हेतु घर से प्रस्थान कर जाता है। जवनिका के गिरने के साथ ही प्रथम अंक की समाप्ति हो जाती है।

द्वितीय अंक का प्रारम्भ रणविद्यापीठ, हस्तिनापुर में पाण्डव–कौरवादि विद्यार्थियों के विद्या अध्ययन के साथ होता है। यहाँ गुरु द्रोण द्वारा सर्वश्रेष्ठ धनुर्धर घोषित करने के लिए परीक्षा का आयोजन करवाया जाता है जिसमें अर्जून को सर्वश्रेष्ठ धनुर्धर घोषित किया जाता है। द्वितीय

1. 'साहित्यदर्पणम्', पं. विश्वनाथ, षष्ठ परिच्छेद/277, पृ.–240

दृश्य में एकलव्य का प्रवेश होता है। वह गुरुद्रोण का शिष्य बनने की इच्छा करता है किन्तु क्षत्रिय नहीं होने से गुरु द्रोण एकलव्य को शिष्य के रूप में स्वीकार नहीं करते है।

तृतीय अंक का प्रारम्भ वनमार्ग, आकाश मार्ग में गायन के साथ होता है। कवि वर्णन करता है कि शूद्र एवं निम्न वर्ग में जन्म होने से गुरु द्रोण द्वारा एकलव्य को शिष्य के रूप में स्वीकार नहीं किया गया। यथा–

"अहो! परमेश! किमहं हतभाग्यं एवास्मि? किमत्र एव मे शूद्रगेहे जन्मऽभूत्? हा! प्रतिकूल!! दैव!! किमित्थं कृतम्? मानवसृष्टौ जातीनां किमन्तरमेतत्? तेषां गुरुणां मम च परस्परं काऽन्या विभिन्नता? तान्येव शरीराणि, त एवाऽवयवाः तावेव वर्णौ गौरः कृष्णश्चेति न किमपि तत्र वैभिन्नयम्। पुनः कथमयं जातिभेदः?"[1]

वस्तुतः गुरुद्रोण द्वारा एकलव्य को धनुर्विद्या की शिक्षा देने का कारण जो कुछ भी रहा हो, किंतु कवि द्वारा प्रस्तुत वर्णन से आधुनिक समाज में प्रचलित ऊँच–नीच, जातिवाद, वर्ण भेदभाव, गौरे–काले का भेद इत्यादि सामाजिक विषमता का भयावह रूप परिलक्षित होता है। एकलव्य का मन इसलिए भी दुःखी है कि यह सामाजिक विभेद भारत की चिरस्थायी एकता को खोखला कर रहा है। शिक्षित समाज में ऐसा भेदभाव होना बिल्कुल भी उचित नहीं है। शिक्षित सभ्यता में क्या गुरु की परिभाषा यही है कि वह शिष्यों में भेदभाव करे।

तदनन्तर महर्षि मुनि द्वारा एकलव्य को अभ्यास की महत्ता बताते हुए आचार्य द्रोण द्वारा धनुर्विद्या प्रदान नहीं करने का कारण भी बड़ी सुन्दरता से वर्णित किया गया है। कवि का कथन है, कि अभ्यास वह वस्तु है, जिसके सहारे सभी व्यक्ति सभी प्रकार की निपुणता प्राप्त कर लेता है। अभ्यास गुरुओं का भी गुरु है। आगे नारद जी कहते है कि अपने मनोरथ की सिद्धि के लिए उनके शिष्य बनकर परमपिता परमात्मा की अनुकम्पा से समुचित फल प्राप्त करो।

'अङ्गुष्ठ–दानम्' नाटक के चतुर्थ अङ्क में एकलव्य नारद जी के उपदेशानुसार श्रद्धा और भक्ति के साथ हृदय में गुरु द्रोणाचार्य की मूर्ति प्रतिष्ठापित कर तत्परता के साथ धनुर्विद्या का अभ्यास करता है। प्रस्तुत अङ्क में एकलव्य का पाण्डवों के साथ सुन्दर संवाद परिलक्षित होता है। साथ ही एकलव्य की धनुर्विद्या से अर्जुन अत्यन्त आश्चर्यचकित तथा ईर्ष्याग्रस्त हो गया है। वह गुरुद्रोण को एकलव्य की धनुर्विद्या की निपुणता से भी अवगत करवाता है। यहाँ स्वगत या अश्राव्य कथनोपकथन का सुन्दर वर्णन किया गया है। गुरुद्रोण मन ही मन यह विचार कर रहे है कि मैं एकलव्य को किस प्रकार महाभारत के युद्ध में धनुर्विद्या के प्रयोग करने से मना करु? किस प्रकार उसकी धनुर्विद्या कभी अपनी सिद्धि को प्राप्त ही न करे। अन्ततः वह (गुरु द्रोण) दुःखी मन से तथा भाग्य का अवलम्बन लेते हुए एकलव्य से गुरुदक्षिणा में सीधा अंगूठा देने के लिए विचार करते है।

1. 'बालनाट्यसौरभम्', डॉ. रामकिशोर मिश्र, पृ.–32

पंचम अङ्क का प्रारम्भ एकलव्य की कुटियाँ से होता है। गुरु द्रोण पाण्डवों के साथ एकलव्य की परीक्षा लेने के लिए एकलव्य की कुटिया में जाता है। अन्ततः गुरु द्रोण द्वारा एकलव्य से गुरुदक्षिणा में दायें हाथ का अंगूठा मांगने पर एकलव्य सीधे हाथ के अंगूठे को चाकू से काटकर गुरु द्रोण के हाथ पर रख देता है। यहाँ कवि द्वारा बालकों के मनोऽनुकूल लघु–लघु संवादों का सुन्दर प्रयोग किया है। यथा–

एकलव्यः – (सहर्षम्) भवानेव गुरुदेव!

द्रोणः – (साश्चर्यम्) अहम्?

एकलव्य : – (विनम्रम्) आम्, गुरुदेव! भवानेव।

द्रोणः – (साश्चर्यम्) तत्कथम्?[1]

सारगर्भित सुभाषितों का सुन्दर प्रयोग भी बालनाट्यसौरभम् की अनन्य विशेषता है। इन सूक्ति रत्नों से नाटक की मंजूषा दमक रही है। यथा–

"आः! जीवनेऽस्मिन् खलु जनश्चिन्त्या परिवृतोऽस्ति सततम्"[2]

"साफल्यं स एव प्राप्स्यति, येनैकाग्रचित्तेन तत्राऽभ्यासः भवेत्।"[3]

"अभ्यासोऽस्येकं तद्वस्तु यस्याऽऽश्रयेण जनः सर्वविधमेव नैपुण्यं प्राप्नोति।"[4]

"हिंसकपशौ तु समये प्राप्त उचितदण्ड एव विधेयः।"[5]

"अभ्यासः एव गुरुः"[6]

"स्वकार्यं साधयेद् धीमान्"[7]

प्रस्तुत नाटक में बालमनोवैज्ञानिक पक्ष का भी सुन्दर वर्णन किया गया है। यहाँ एकलव्य की षोड्शवर्षीय कामासक्त अवस्था का बालवैज्ञानिक वर्णन प्राप्त होता है। कवि वर्णन करता है कि षोडश वर्षीय अवस्था में पदासीन एकलव्य को शास्त्राध्ययन में रूचि नहीं होने का कारण कामासक्तता के अतिरिक्त और कुछ नहीं हो सकता। यह अवस्था स्वभाव से ही कामावस्था की है। इसी प्रकार कवि सामाजिक वर्ण–विभेद को भी पाटने की कोशिश करता है–

"ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्रा वा प्रजा राजः।

स्वदेशीया विदेशीयाः सन्ति सर्वे तुल्यभाजः।।

वयं सर्वे मनोः पुत्रास्ततः कोऽयं जाति–भेदः?

कृतं मध्ये तं विहातुं नाद्य सज्जोऽसीति खेदः।।

---

1. 'बालनाट्यसौरभम्', डॉ. रामकिशोर मिश्र, पृ.–64
2. 'बालनाट्यसौरभम्', डॉ. रामकिशोर मिश्र, पृ.–08
3. 'बालनाट्यसौरभम्', डॉ. रामकिशोर मिश्र, पृ.– 15
4. 'बालनाट्यसौरभम्', डॉ. रामकिशोर मिश्र, पृ.– 34
5. 'बालनाट्यसौरभम्', डॉ. रामकिशोर मिश्र, पृ.– 42
6. 'बालनाट्यसौरभम्', डॉ. रामकिशोर मिश्र, पृ.– 66
7. 'बालनाट्यसौरभम्', डॉ. रामकिशोर मिश्र, पृ.– 70

ऐक्यमधुना शिक्षयेः नर!

देहि विद्यावरं गुरुवर!।"[1]

'सहसाविदधीत न क्रियाम्' प्रस्तुत एकांकी में कवि द्वारा बालकों को किसी भी कार्य को अच्छी तरह विचार करके ही करने की सलाह दी है। प्रस्तुत एकांकी का कथासूत्र महाकवि भारवि कृत 'किरातार्जुनीयम्' महाकाव्य से ग्रहण किया गया है। एकांकी के प्रारम्भ में ही मंगलाचरण के रूप में कवि–भारवि को चक्रवती कवि व राजा के रूप में वर्णित किया गया है। कवि कहता है कि वह चक्रवती सम्राट भारवि सम्पूर्ण लोक की रक्षा करने वाला है। प्रस्तुत नाटक में कवि भारवि व उसके पिता के मध्य सम्पन्न वार्तालाप का सरल–सरस भाषा में उल्लेख करता है। कवि **'भारवि'** नाम की निष्पत्ति बताता है कि जिसका प्रकाश रवि (सूर्य) के समान है, जो अपने यश रुपी प्रकाश से सम्पूर्ण जगत को सूर्य के समान प्रकाशित करता है। वही भारवि है।

यस्याऽर्थो भवति–भा प्रकाशस्तस्या रविरिति भारविः।

अर्थात्स्वकार्यप्रकाशे यो रवि तुल्यः, स भारविः।

प्रस्तुत एकांकी में कवि बाल–मनोऽनुकूल सरल–सुन्दर भाषा–शैली एवं लघु–लघु नाटकीय संवादों का प्रयोग करता है–

"पिता – "केन शस्त्रेण मे वधं कर्तुं त्वया निश्चयः कृतः पुत्र!

भारविः – "कुठारेण पितः।

पिता – "स कुठारः क्व?

भारविः – "तस्मिन् कोणे स्थापितः सः"।

पिता – "तमत्रानय पुत्र!"

भारविः – अयमस्ति पितः।"[2]

अन्ततः प्रस्तुत एकांकी के कथनोपकथन में कौतूहल, जिज्ञासा, गति की तीव्रता का प्रवाह निरंतर बना रहता है। प्रस्तुत एकांकी में मुख्यतः भारवि के प्रारम्भिक जीवन की किसी एक घटना मात्र को कथासूत्र के रूप में ग्रहण करके कवि द्वारा कौतूहलवर्द्धक नाटकीय शैली में उसका चरम सीमा तक विकास किया है।

(ii) एकाङ्कावलिः – 'ध्रुवम्' (एकाङ्कनाटकम्)

डॉ. रामकिशोर मिश्र द्वारा प्रणीत 'ध्रुवम्' रूपक विधा के अन्तर्गत 'अङ्क' का भेद है। वस्तुतः यह एक अङ्क का रूपक है। नाटक से भेद दिखलाने के लिए इसे 'उत्सृष्टिकाङ्क भी

1. 'बालनाट्यसौरभम्', डॉ. रामकिशोर मिश्र, पृ.–60
2. 'बालनाट्यसौरभम्', डॉ. रामकिशोर मिश्र, पृ.–39

कहा जाता है। दशरूपककार के अनुसार 'अङ्क' रूपक में कथासूत्र इतिहास प्रसिद्ध होना चाहिए। कवि ने प्रस्तुत 'अङ्क' रूपक में विष्णुपुराण और भागवत पुराण में प्राप्त भगवान विष्णु के महान भक्त ध्रुव की ऐतिहासिक कथा को अपने एङ्काक का कथासूत्र बनाया है। विष्णुपुराण से प्राप्त कथा के अनुसार भक्त ध्रुव उत्तानपाद राजा की रानी 'सुनीति' का पुत्र था। बाल्यकाल से ही वह भगवान विष्णु की भक्ति में लीन हो गया था। बाद में वह ध्रुव तारे के रूप में संसार में प्रसिद्ध हो गया।

एकाङ्क के प्रथम दृश्य में वर्णन किया गया है कि माता की सीख पर अमल करने का कठोर व्रत लेकर ध्रुव ने पाँच वर्ष की अवस्था में ही राजमहल त्याग दिया था। वह अब महर्षि अत्रि के आश्रम में विधा अर्जन कर रहे है। कवि ने अपने नाट्यकौशल से इसे पाँच दृश्यों में विस्तृत कर दिया है। प्रस्तुत एकाङ्क में भक्त 'ध्रुव' नायक के रूप में प्रतिष्ठापित है। वस्तुतः यहाँ महारानी सुरुचि एवं माता सुनीति का विलाप भी प्रस्तुत किया गया है, यह वस्तुतः अङ्क के लक्षणानुरूप है। कवि द्वारा महारानी सुरुचि एवं राजा उत्तानपाद के मध्य संपन्न वाग्युद्ध का भी सुन्दर वर्णन किया गया है। किंतु अंततः सुरुचि के क्षमा याचना के पश्चात् ध्रुव को राजा के पद पर आसीन किया जाता है। यथा–

"ध्रुवमिव ध्रुवो राजा राजतां गगने भुवि।
उद्भावयेत् स्वकृतैर्यः प्रजायां नवजीवनम्।।"[1]

(iii) अभिशप्तदशरथम्

डॉ. रामकिशोर मिश्र द्वारा रचित प्रस्तुत एकाङ्क नाटक का इतिवृत्त रामायण से ग्रहण किया गया है। प्रस्तुत एकाङ्क में अयोध्या नरेश दशरथ द्वारा भ्रमवश की गई श्रवण कुमार की मृत्यु की घटना को सरल एवं लघु–लघु संवादों में बालकों के समक्ष प्रस्तुत किया गया है।

यहाँ प्रथम दृश्य में राजा दशरथ एवं सारथि का परस्पर संवाद परिलक्षित होता है। दोनों के कथनोपकथन से ज्ञात होता है कि दशरथ के बाण–सन्धान से श्रवणकुमार मृत्यु शय्या पर विराजमान है। द्वितीय दृश्य के प्रारम्भ में राजा दशरथ के शोक (पिड़ा) तथा श्रवण कुमार के माता–पिता के प्रति कर्त्तव्यपालन की भावना का अत्यन्त मार्मिक वर्णन है। राजा दशरथ अपने द्वारा किए गए कार्य से अत्यन्त दुःखी है। पुत्र श्रवणकुमार के मृत्यु के समाचार सुनकर अन्धे माता–पिता अत्यन्त विलाप करते है। वस्तुतः विलाप की घटना एकाङ्क का प्रधान लक्षण है। अन्ततः अन्धे माता–पिता द्वारा राजा दशरथ को अभिशाप दे दिया जाता है कि तुम भी (दशरथ) अपने पुत्रों के वियोग से मृत्यु को प्राप्त करोगे।

---

1. 'ध्रुवम्', डॉ. रामकिशोर मिश्र, पृ.–13

कवि अपने भावों को अभिव्यक्त करने हेतु सारगर्भित सूक्तियों का भी सुन्दर तरीके से प्रयोग करता है। जैसे दशरथ का कथन है–

"दैवस्याऽग्रे किं कर्तुं शक्नोमि मनुष्यः?"[1]

(iv) चण्डप्रतिज्ञानम्

नाटककार डॉ. रामकिशोर मिश्र द्वारा प्रणीत प्रस्तुत नाटक का कथानक चित्तौड़ नरेश राणा लाखा के पुत्र राजकुमार चूड़ा (चण्ड) के जीवन की मुख्य घटना से ग्रहण किया गया है। प्रस्तुतः एकाङ्क में कवि 'सूत्रधार' शब्द के स्थान पर 'निर्देशकः' शब्द प्रयुक्त करता है। प्रस्तावना में उद्धृत घटना के अनुसार जोधपुर नरेश श्री रणमल अपनी पुत्री के विवाह का प्रस्ताव लेकर मेवाड़ नरेश राणालाखा के दरबार में आता है। यद्यपि विवाह का प्रस्ताव राजकुमार चूड़ा के लिए प्रेषित किया गया था, किंतु चूड़ा की अनुपस्थिति में विवाह का नारियल स्वयं राणा लाखा ग्रहण कर लेता है। जिसके फलस्वरूप द्वादशवर्षीय कन्या का विवाह पचास वर्षीय राणा लाखा के साथ सम्पन्न होता है। कुछ समय पश्चात् राजकुमार मोकल के रूप में राणा लाखा को पुत्र रत्न की प्राप्ति होती है। यहाँ राजकुमार चण्ड (चूड़ा) महाभारत कालीन भीष्म पितामह के समान राज्य नहीं करने की प्रतिज्ञा करता है। वह सम्पूर्ण साम्राज्य अपने अनुज मोकल के लिए समर्पित करके आजीवन उसके सेवक के रूप में कार्य करता है।

तृतीय दृश्य में वर्णित है कि कुछ समय पश्चात् राणा चूड़ा सम्पूर्ण राज्य रानी श्रीदेवी एवं राजकुमार मोकल को सौंपकर दुर्ग से चला जाता है। राजमाता जोधपुर से अपने भाई रणमल को बुलाकर उसकी सहायता से राज्य करने लगती है। किंतु कुछ समय पश्चात स्वार्थ के वशीभूत होकर राणा रणमल राजकुमार मोकल को मारने का षडयन्त रचता है किंतु राजमाता को ज्ञात होने पर वह चित्तौड़ राज्य की रक्षा के लिए राजकुमार चण्ड़ को पत्र लिखकर सहायता मांगती है। पत्र वाचन के अनन्तर राणा चूड़ा सैना सहित चित्तौड़ को प्रस्थान करता है। जहाँ राणा रणमल के साथ सम्पन्न युद्ध में वह विजय प्राप्त होता है। अन्ततः वह अपनी प्रतिज्ञा का पालन करते हुए पुनः चित्तौड़ राज्य को मौकल को सौंपकर आजीवन उसकी सेवा में रत रहता है।

प्रस्तुत एकाङ्क में राजाचण्ड़ नायक के रूप में उपस्थापित किया गया है। धीरोदात्त गुणों से सम्पन्न राणाचण्ड़ को यहाँ भीष्म पितामह के समान दृढ़ प्रतिज्ञा सम्पन्न नायक के रूप में चित्रित किया गया है। कवि ने अपनी प्रतिभा से एक विशेष ऐतिहासिक घटना को अत्यन्त ही सरल–सरस एवं मनोहारी ढंग से पाठकों के समक्ष रखा है। राजकुमार चण्ड एवं राणा लाखा तथा राजकुमार चण्ड़ एवं श्रीदेवी के मध्य परस्पर प्रयुक्त संवादों में अत्यन्त सजीवता देखने को मिलती है। कथावस्तु में प्रवाह निरन्तर बना रहता है।

---

1. 'अभिशप्तदशरथम्', डॉ. रामकिशोर मिश्र, पृ.–51

(v) कचदेवयानीयम्

विद्यावाचस्पति आचार्य रामकिशोर मिश्र द्वारा प्रणीत प्रस्तुत एकाङ्क में बृहस्पति के पुत्र कच के जीवन–वृतांत के अंश का सांगोपांग वर्णन किया गया है। कच, बृहस्पति एवं देवयानी का पुत्र है। वह संजीवनविद्या की शिक्षा लेने हेतु शुक्राचार्य के गुरुकुल में प्रवेश करता है।

छः परिदृश्यों में विभक्त प्रस्तुत एकाङ्क रूपक में अत्यन्त रोचक एवं सजीव नाटकीय संवादों का कुशल प्रयोग देखने को मिलता है। पुत्र कच, जितेन्द्रिय चित्त होकर एवं दैत्यगुरु शुक्राचार्य का शिष्यत्व ग्रहण करके संजीवनविद्या प्राप्त करने में सफल होता है। नाट्यकार ने अपनी नाट्यकला से पात्रों का सुन्दर प्रयोग किया है। प्रथम दृश्य में कच, शुक्राचार्य एवं माता देवयानी के परस्पर कथनोपकथन का मनोहारी वर्णन देखने को मिलता है।

यहाँ द्वितीय दृश्य में दैत्यराज वृषपर्वा का षडयन्त्र भी देखने को मिलता है। किंतु शुक्राचार्य कृतज्ञता का स्मरण करते हुए आङ्गिरस के पौत्र मय को संजीवनी विद्या देने हेतु दृढ़संकल्प है। नाट्यकार यहाँ सारगर्भित सूक्तियों का भी सुन्दर प्रयोग करता है–

"वंशनाशेन सह वंशीनाशोऽपि भवति।"[1]

देवयानी–कच संवाद में अत्यन्त ही लघु–लघु वाक्यविन्यास एवं संवादों का प्रयोग किया गया है–

देवयानी–अस्तु, कच! दैत्यैस्त्वं क्व मारितः?

कचः – तत्र देवयानि! यत्राऽहं गाश्चारयन्नासम्।

देवयानी – मारका दैत्याः कियन्त आसन्?

कचः – पंचषा आसन्।

देवयानी – अस्तु, एहि कच! दुग्धपानं कुरु, ज्ञायसे त्वं क्षुधाकुलोऽसि[2]

प्रस्तुत एकाङ्क बालकों को ब्रह्मचर्यपालन की शिक्षा देता है तथा अध्ययन काल में नारी प्रेम के जाल में नहीं पड़ने की नैतिक शिक्षा भी देता है।

डॉ. विश्वास –मार्जालस्य मुखं दृष्टम्

डॉ. विश्वास द्वारा प्रणीत प्रस्तुत लघुनाट्य पुस्तक में सम्भाषण शैली में संस्कृत भाषा विषयक, आधुनिक जीवन से सम्बद्ध, लोककथा आधारित, पौराणिक वृतान्तों पर आधारित लघु–लघु नाटकों का संग्रह किया गया है। पुस्तक का नामकरण प्रस्तुत लघुनाटय में संकलित 'मार्जालस्य मुखं दृष्टम्!' लघु नाटक के आधार पर किया गया है। प्रस्तुत काव्य में 25 लघुनाटकों का संग्रह किया गया है।

---

1. 'कचदेवयानीयम्', डॉ. रामकिशोर मिश्र, पृ.–78
2. 'कचदेवयानीयम्', डॉ. रामकिशोर मिश्र, पृ.–80

'संस्कृतं सम्प्रतिः च' प्रथम लघुनाट्य में संस्कृत भाषा एवं भारतीय संस्कृति को एक–दूसरे का अनुपूरक बताया गया है। कवि का कथन है कि दोनों एक–दूसरे के बिना आगे नहीं बढ़ सकते है। कवि यहाँ संस्कृत एवं संस्कृति को अन्धे व लगड़े (अन्धः–पङ्गुः) के रूप में चित्रित करता है। दोनों (अन्धः एवं पङ्गुः) का परस्पर सुन्दर संवाद प्रस्तुत एकांकी में वर्णित है। सारांश के रूप में संस्कृत एवं संस्कृति को एक–दूसरे का सहायक बताया गया है–

"संस्कृतेन विना संस्कृतिः पङ्गुः!

संस्कृत्या विना संस्कृतम् अन्धम्!!"

'संस्कृतसैन्यम्!' द्वितीय लघुनाटय में संस्कृत भाषा को माता के समान जीवन्त एवं मार्मिक वर्णन किया गया है। यहाँ संस्कृत भाषा विलाप करती हुई स्वयं अपनी वर्तमान स्थिति का अत्यन्त मार्मिक वर्णन करती है। साथ ही भारत की भव्य विरासत का भी स्मरण करवाती है। अपनी दुरावस्था का उल्लेख करती है कि– "किमिति वदामि मम दुरवस्थाम्! यस्यां भूमौ मम जन्म अभवत्, यत्र च वेद–पुराण–उपनिषदः विलपसन्ति, यस्मिन् देशे व्यास–कालिदासादयः महाकवयः विराजन्ते तत्रैक जनाः मां विस्मृतवन्तः।"[1]

'संस्कृतेन समैक्यम्' प्रस्तुत नाटक में कमला एवं विमला नामक स्त्री पात्रों के माध्यम से उपदेश दिया गया है कि संस्कृत भाषा लोगों में 'वसुधैवकुटुम्बकम्' की ऐक्य भावना उत्पन्न करने में पूर्णतया समर्थ है। साथ ही सम्भाषण शिविर के द्वारा ही संस्कृत भाषा का संरक्षण हो सकता है।

'रोदिषिकुतः?' प्रस्तुत लघुनाट्य में मनोरंजनात्मक रूप से भगवान गणेश एवं स्कन्ध कार्तिकेय का माता पार्वति के साथ हास्यात्मक संवाद वर्णित है। दोनों एक–दूसरे की शिकायत माता पार्वती से करते है। प्रस्तुत लघुनाट्य में माता पार्वती में मातृ–स्नेह का सुन्दर वर्णन किया गया है। सम्पूर्ण लघुनाट्य में प्रश्नात्मक भाषा–शैली का प्रयोग देखने को मिलता है–

"गणेशः – ऊ......ऊ.......(रोदिति)

पार्वती– वत्स गणेश! किमर्थं रोदिषि?

गणेशः – ऊ....ऊ.... (इतोऽपि उच्चैः रोदिति)

पार्वती– (वात्सल्येन) गणेश....! किम् अभवत्?

गणेशः – सः....सः मम कर्णौ लुठति।

पार्वती– कः सः?"[2]

'कुरु कृषिम्' प्रस्तुत लघुनाट्य का कथानक पौराणिक घटनाक्रम पर आधारित है। माता पार्वती व्यङ्ग्यात्मक ढंग से भगवान शिव से भिक्षाटन कार्य को त्यागकर कृषि कर्म करने का

1. 'मार्जालस्य मुखं दृष्टम्', डॉ. विश्वास, पृ.–2
2. 'मार्जालस्य मुखं दृष्टम्', डॉ. विश्वास, पृ.–6

आग्रह करती है। प्रस्तुत लघुनाट्य में कृषि कार्य में सहायक वस्तुओं क्षेत्र, बीज, हल, वृषभ्, परिश्रम जैसे तत्त्वों से भी बालकों को परिचय करवाया गया है। **'पुरोहितः उवाच'** प्रस्तुत लघुटनाट्य में पुरोहित वर्ग को उनके कार्य से अवबोध करवाया गया है।

'गुरुशिष्यसम्भाषणम्' प्रस्तुत लघुटनाटक गुरु–शिष्य के संवाद के माध्यम से बालकों का मनोरंजन करता है।

'पादांशुकप्रकरणम्' प्रस्तुत लघुनाट्य में बालक नारायण द्वारा बाजार से नये जूते खरीदने का मनोरंजनात्मक ढंग से वर्णन किया गया है। यहाँ नारायण द्वारा खरीदे गए जूतों को छोटा करने हेतु काटने एवं पुनः उनको सीलने की प्रक्रिया को अत्यन्त ही मनोहारी तरीके से वर्णन किया गया है। 'श्वाश्रवाः याजमान्यम्!' प्रस्तुत लघुनाटक में भिक्षुकी लता तथा सास के मध्य सम्पन्न वार्तालाप का सुन्दर एवं सरस वर्णन प्राप्त होता है। यहाँ घर पर भिक्षा हेतु आने वाली भिक्षुकी से लता यह कहते हुए भिक्षा देने से मना करती है, कि घर में कुछ भी नहीं है– 'किमपि नास्ति'। **'अनुरूपवेषः'** प्रस्तुत लघुनाट्य में भारती तथा नलिनी बालिकाओं के परस्पर संवाद में विवाह के अनुरूप वस्त्र क्रय करने का मनोरंजनात्मक वर्णन किया गया है। लेखक यहाँ आंग्ल भाषा के 'म्याचिङ्ग' (Matching) शब्द का सुन्दर प्रयोग करता है। यथा– "नलिनी–अद्य आरभ्य मातुलस्य विवाहपर्यन्तं दन्तधावनं मा करोतु। तदा दन्तानां वर्णः अपि म्याचिङ्ग भविष्यति!!" (पृ.–19)

'पायसप्रहसनम्' प्रस्तुत कथा में पति–पत्नी के हास्यपरक संवाद के माध्यम से बालकों को पायस (खीर) निर्माण की विधि का ज्ञान करवाया गया है यथा– "पतिः – हू....महता प्रयत्नेन षट्–रूप्यकाणां संचयनं कृत्वा तेन धनेन पादकिलोपरिमितं गुडं, पादकिलोपरिमितं मुद्गधान्यं, किंचित् एलां च आनीतवान्।"[1]

'वैद्यरोगिसम्भाषणम्' तथा 'वंचितः कः?' कथाओं का मुख्य प्रयोजन बालकों का मनोरंजन करना है। लेखक लघु–लघु दैनन्दिन वाक्यों के माध्यम से बालकों का हास–परिहास करने में पूर्णतया सक्षम है। 'मार्जालस्य मुखं दृष्ट्वा' प्रस्तुत कथा में शकुन शास्त्र की शिक्षा दी गई है। वस्तुतः संसार में यह धारणा प्रचलित है कि यदि प्रातःकाल किसी बिल्ली का दर्शन हो जाए, तो पूरा दिन शंकाओं से भरा होता है। यथा–

"नागराजः – अहो, तावदेव इति....! मार्जालस्य मुखं दृष्टं मोः,
मार्जालस्य मुखम्! न जाने अद्य किं भविष्यति इति।"[2]

यहाँ नागराज, श्यामला तथा वीरभद्रः पात्रों के मध्य सम्पन्न वार्तालाप का सरल–सरस भाषा–शैली में सुन्दर वर्णन किया गया है।

---

1. 'मार्जालस्य मुखं दृष्टम्', डॉ. विश्वास, पृ.–20
2. 'मार्जालस्य मुखं दृष्टम्', डॉ. विश्वास, पृ.–37

(घ) बाल–उपन्यास

संस्कृत बाल–साहित्य की अन्य विधाओं की तरह ही बाल उपन्यास का जन्म भी बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में हुआ। बालकों के लिए मौलिक उपन्यास लिखने का आरम्भ डॉ. केशवचन्द्रदाश ने किया। उनका उपन्यास 'पताका' सन 1990 ई. में लोक भाषा प्रचार समिति, शारधावली, पुरी से प्रकाशित हुआ। प्रो. राजेन्द्र मिश्र ने उपन्यास का लक्षण प्रतिपादित किया है कि कथा एवं आख्यायिका का मिला–जुला रूप अर्वाचीन संस्कृत साहित्य में उपन्यास के नाम से जाना जाता है। वस्तुतः कथाधारित इस उपन्यास विधा में किसी कालखण्ड विशेष का सांगोपांग वर्णन विस्तारपूर्वक उपन्यस्त होता है। साथ ही बालोपन्यास में सामाजिक क्रान्ति से उपजी नवीन सामाजिक व्यवस्था का भी सुन्दर वर्णन होता है।

डॉ. केशवचन्द्र दाश –पताका (बाल–उपन्यास)

डॉ. केशवचन्द्रदाश द्वारा प्रणीत 'पताका' संस्कृत बाल–साहित्य की उपन्यास विधा का ग्रन्थ है। प्रस्तुत उपन्यास में स्वतन्त्रता दिवस के उपलक्ष में ध्वजायमान पताका (तिरंगे) के सांगोपांग वर्णन के साथ ही बालकों को इसकी महत्ता से अवगत करवाया गया है। उपन्यास का प्रारम्भ स्वतन्त्रता दिवस के प्रातःकालीन आभा युक्त प्रकृतिमय वातावरण से हुआ है। सर्वत्र आनन्द का परिवेश दृश्यमान हो रहा है।

प्रस्तुत उपन्यास में सीमी एवं जितेन्द्र नामक बालपात्रों के परस्पर वार्तालाप का सुन्दर एवं मार्मिक वर्णन किया गया है। सीमी जन्म से ही अन्धी है। स्वतन्त्रता दिवस के इस मनोहर वातावरण में वह कुछ भी नहीं देख सकती है, यह सोचकर वह दुःखी है। जितेन्द्र भी उसका इस स्थिति से अत्यन्त दुःखी महसूस करता है।

"सीमीहस्तं धृत्वा जितेन्द्रः चलति। परं जितेन् दुःखी। सः चिन्तयति–सीमी किमपि न पश्यति। तस्याः नयनं नास्ति। अद्य तु सर्वत्र पताका शोभते। मार्गे, गृहे, विद्यालये, कार्यालये, चतुस्पथे–सर्वत्र। किन्तु सीमी न पश्यति।"[1]

जितेन्द्र सीमी को तिरंगे से अवगत करवाता है। तिरंगे में विद्यमान केशरिया, श्वेत तथा हरा रंग भारत भूमि की समृद्धि शान्ति तथा प्रगति के प्रतीक है। यथा– "केशरं समृद्धेः प्रतीकम्। श्वेतं शान्तेः चिह्नम्। हरितं प्रगतेः प्रतीकम्। पुनश्च केशरं अग्नेः वर्णम्। सूर्यस्य उदयरागः अस्तरागः अपि केशरतुल्यम्। अग्निः सूर्यश्च अस्माकं परम्परायाः मूलाधारः। अतः केशरं सर्वदा अग्रे इति गुरुजनाः वदन्ति।"[2]

---

1. 'मार्जालस्य मुखं दृष्टम्', डॉ. विश्वास, पृ.–96
2. 'मार्जालस्य मुखं दृष्टम्', डॉ. विश्वास, पृ.–96

कवि स्वतन्त्रता से पूर्व भारतभूमि की दासता का भी वर्णन करता है। स्वतन्त्रता से पूर्व भारत पर आंग्ल साम्राज्य का शासन था। भारतभूमि पृथक–पृथक थी। मनुष्यों के मध्य एकता का अभाव था। मनुष्य सर्वत्र दास के रूप में जीवनयापन कर रहे थे। किंतु अंग्रेजी शासन से मुक्ति के साथ ही सर्वत्र आनन्द का वातावरण निर्मित हो जाता है। सर्वत्र तिरंगा पहराया जाता है। 'जनगणमन' की जयध्वनि से भारतभूमि पर नवीन सूर्य का उदय होता है।

वस्तुतः प्रस्तुत उपन्यास में स्वतन्त्रताकालीन कालखण्ड विशेष का सांगोपांग वर्णन है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के साथ ही प्रत्येक वर्ग का अभ्यूदय हो जाता है। यथा विद्यालय में आयोजित स्वतन्त्रता दिवस के आतिथेय भाषण से पता चलता है– "श्रद्धेयाः अन्तेवासिनः। अद्य पुण्यदिवसः। अस्मिन् दिवसे वयं मुक्ताः। दिवसेऽस्मिन् च अस्माकं मुक्तिसमरः समाप्तः। मुक्तिसमरस्य प्रतीकम् इयं पताका। पताकाकाले सर्वे वयं समानाः। सर्वे आत्मीयाः। पताकायाः मर्यादा अस्माकं सर्वस्वम्।"[1]

यहाँ स्वतन्त्रता दिवस को 'पुण्यदिवस' संकल्पदिवस तथा प्रतिज्ञादिवस के संकेत के रूप में सम्बोधित किया गया है। लेखक 'पताका' शब्द का अर्थ स्पष्ट करता है। वस्तुतः स्थान विशेष के आधार पर पताका भिन्न–भिन्न होती है। पताका तो प्रतीक मात्र है। समय विशेष के आधार पर पताका का भावार्थ भी भिन्न होता है। यथा–

"पताकायां विभिन्ननिर्देशो वर्तते। यथा न्यायालये सर्वदा अस्माकं, राष्ट्रीय–पताका उड्डीयते। किन्तु यदा मृत्युदण्डविधानं भवति तदा कृष्णपताका उड्डीयते। एवम्। अन्यत्र नानानिर्देशाः सन्ति। पताका तु प्रतीकमात्रम्। कृष्णपताकाअशुभस्य। रक्तपताका विपदः। हरितपताका आरम्भस्य.......गतिशीलस्य च।"[2]

लेखक द्वारा उपन्यास के भीतर ही लघु नाटक की सुन्दर कल्पना की है। 'भारतमाता' नाटक में जितेन्द्र भारतभूमि का पवित्रता से सीमी को परिचित करवाता है। वस्तुतः भारतभूमि की जीवंतता ही भारतीयों की पराकाष्ठता का प्रतीक है। यह भारतभूमि पवित्रभूमि है। यहाँ षड्ऋतुओं का कालक्रम घटित होता है। इसी तरह 'किमर्थं पाषाणः' नाटक में रङ्गमंच पर प्रतिष्ठापित सैनिक, प्रतिक्रिया युवक, बापुजी महात्मा गाँधी, किसान तथा बुद्धिजीवी प्राणियों की प्रतिमाओं के इतिहास का सांगोपांग वर्णन प्राप्त होता है। प्रत्येक प्रतिमा भारतभूमि के इतिहास का परिचय करवाती है। मानवजाति की उन्नति, आत्मा का विकास, त्याग यही हमारे आदर्श तथा पवित्र परम्परा है। प्रथम प्रतिमा के रूप में विराजित सैनिक अपना परिचय करवाता हुआ, अंग्रेजी शासन के आततायी अत्याचारों से आक्रांत भारतभूमि का सजीव वर्णन करता है। सैनिक

1. 'पताका', डॉ. केशवचन्द्रदाश, पृ.–98
2. 'पताका', डॉ. केशवचन्द्रदाश, पृ.–99

भारतभूमि का दास (सेवक) बनकर जन–जीवन की रक्षा करता है। अनुशासन स्थापित करता है। 1857 ई. में घटित प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम की सैनिक क्रान्ति के समय प्रथम बार विदेशी शासकों को भय का अहसास हुआ। सफलता की देशमातृका पताका पहराई गई, किंतु स्वतन्त्रता हाथ नहीं लगी। रियासतों के विश्वासघात, धन–लोलुपता तथा स्वार्थ के कारण सैनिक क्रांति असफल हो गई। इस तरह वर्णन करता हुआ सैनिक पाषाण की प्रतिमा बन गया।

1875 के स्वतन्त्रता संग्राम के अनन्तर फिर से अंग्रेजी शासन का अत्याचार बढ़ता गया। सर्वत्र अंधकार व्याप्त हो गया। स्वतन्त्रता का भाव विस्मृत हो गया। इसी समय अंग्रेजी शासन का विरोध करने वाले प्रतिक्रियाशील युवा (क्रांतिकारी) भारतभूमि की स्वतन्त्रता के लिए एकत्रित होते है। लेखक बालकों को क्रान्तिकारियों की रक्तपात, विरोध, विवादपूर्ण नीति से परिचय करवाता है। यथा– "विना रक्तपातं स्वाधीनता निष्फला। विना विवादं समाधानम् असम्भवम्। विना युद्धं शान्तिः अस्पृश्या।"[1] किंतु क्रांतिकारी नीति के माध्यम से भी भारत भूमि मुक्त नहीं हुई।

लेखक इसके साथ ही महात्मा गांधी द्वारा चालित असहयोग आंदोलन तथा सविनय अवज्ञा आंदोलन का भी वर्णन करता है। क्रांतिकारी आन्दोलन के पश्चात स्वतन्त्रता के निमित्त अहिंसा का मार्ग अपनाया गया। अहिंसा के मार्ग के शस्त्र के रूप में सत्याग्रह को स्वीकार किया गया। अनशन नैतिक बल के रूप में अपनाया गया। इन सबकी सफलता के लिए लोगों को इकटठा किया गया। किंतु अंग्रेजों द्वारा इस सभा (जलियांवाला बाग हत्याकाण्ड) को निरिह वन्य पशुओं के समान अत्यन्त ही भयानक तरीके से कुचल दिया गया है। किंतु फिर भी स्वतन्त्रता प्राप्ति का प्रयास अवरुद्ध नहीं हुआ। इसके अनन्तर अंग्रेजी सरकार से असहयोग की नीति प्रारम्भ हुई। बाहरी वस्तुओं को त्याग दिया गया। स्वदेशी वस्तुओं को अपनाने पर बल दिया गया। किंतु अंततः सविनय अवज्ञा का प्रयास भी विफल हो गया।

इसके पश्चात बुद्धिजीवियों का एक वर्ग सामने आता है। उन सबका एक मात्र उद्देश्य भारतभूमि को स्वतन्त्र करवाना है। यथा– "अस्माकं चिन्ता देशस्य चिन्ता। अस्माकं कल्पना देशस्य मानचित्रम्। अस्माकं नीतिःदेशस्य भविष्यत्। अस्माकं निर्माणे देशस्य सुरक्षा।" (पृ.–104)

लेखक के प्रस्तुत वाक्यों में ऋग्वेद के 'संज्ञान सूक्त' के संगच्छध्वं संवदध्वं संवोमनांसिजानताम्' के एकात्मवाद की गुंज सुनाई देती है–

"देशस्य सर्वत्र एक एव विचारः। एका च स्वाधीनचिन्ता। एक एव ध्वनिः। एकं च संगीतम्। एका च पताका।" (पृ.–104)

---

1. 'पताका', डॉ. केशवचन्द्रदाश, पृ.–102–103

प्रस्तुत उपन्यास में लेखक सामाजिक एवं बाल–मनोसंवेदनाओं का भी सांगोपांग वर्णन करता है। जितेन्द्र सीमी की अस्वस्थता में अत्यन्त मार्मिक एवं दुःखी हो जाता है। उपन्यास में वैज्ञानिक पक्ष को भी उपस्थापित किया गया है। यथा– "तत्र नीरवसमुद्रं वर्तते। तत्र पुनः यदा सूर्यस्य रश्मिः प्रतिफलति तदा पृथिवीपृष्ठे रात्रिः आलोकिता भवति। ज्योत्स्नामयी रजनी नितराम् उपभोग्या भवति। अतः वैज्ञानिकाः चिन्तयन्ति।" (पृ.–109)

इसी तरह लेखक मानवजीवन की वास्तविकता से परिचय करवाता है। लेखक का मत है कि, यह मानवजीवन केवल कुछ दिनों, महिनों तथा कुछ वर्षों की कथा मात्र है। अतः मनुष्य को प्रत्येक पल का सदुपयोग करना चाहिए। सदुपयोग से ही मनुष्य सुखी रहता है। इस जीवनपथ पर अनेक विघ्न, बाधाएँ आती है किंतु, मनुष्य को कभी भी धैर्य नहीं छोड़ना चाहिए।

अतः प्रस्तुत बालोपन्यास में लेखक कान्तासम्मित रीति से बालकों का जहां एक तरह मनोरंजन करता है, वहीं दूसरी और जीवनमूल्यों की शिक्षा भी प्रदान करता है। जितेन्द्र एवं सीमी पात्रों के माध्यम से उपन्यास में लैङ्गिक भेदभाव को भी दूर किया गया है।

≈≈≈≈

षष्ठ अध्याय

अनूदित संस्कृत बालसाहित्य की समीक्षा

(क) अनूदित गीतकाव्य

(ख) अनूदित कथासंग्रह

(ग) अनूदित उपन्यास

(घ) अनूदित नाट्यसंग्रह

षष्ठ अध्याय

अनूदित संस्कृत बालसाहित्य की समीक्षा

ऋग्वेद में 'अन्वेको वदति यद् ददाति' (2.13.3) और 'रोचनादधि' (8.1.18) कथन अनुवाद के सन्दर्भ में प्राप्त होते है। 'रोचनादधि' पर आचार्य सायण का कथन है 'अधिः पंचम्यर्थानुवादी' अर्थात् 'अधिः' शब्द पंचमी के अर्थ को ही दोहराता है। वस्तुतः वैदिक संस्कृत में 'अनुवाद' के 'अनु' और 'वद' का प्रयोग पृथक् रूप से प्राप्त होते हैं।[1]

'वद्' धातु में 'घञ्' प्रत्यय करने पर 'वाद' शब्द निष्पन्न होता है। इस 'वाद' शब्द में 'अनु' उपसर्ग संयुक्त होकर 'अनुवाद' शब्द की उत्पत्ति होती है। जिसका अर्थ है– 'किसी के बाद कहना' या 'फिर से कहना'।[2] इसी तरह 'शब्दार्थ चिन्तामणि' कोश में अनुवाद का अर्थ 'प्राप्तस्य पुनः कथने' या 'ज्ञातार्थस्य प्रतिपादते' अर्थात् 'पहले कहे गए अर्थ जो फिर से कहना' दिया गया है।[3]

अनुवाद प्रत्येक भाषा को अपने–अपने क्षेत्र को व्यापक करने का अवसर प्रदान करता है। इससे भारतीय और वैश्विक बाल साहित्य के विकास में मदद मिलती है। सभी भारतीय भाषाओं के बाल साहित्य का यदि संस्कृत में अनुवाद करने की व्यवस्था कर ली जाए तो वैश्विक साहित्य में संस्कृत बाल साहित्य की प्रतिष्ठा स्थापित की जा सकती है।

आज संस्कृत बाल साहित्य की सभी साहित्यिक विधाओं में विभिन्न भाषाओं के साहित्य का अनुवाद कार्य किया जा रहा है। डॉ. रामगोपाल सिंह ने साहित्यिक विधा के आधार पर अनुवाद को भिन्न–भिन्न क्षेत्रों में वर्गीकृत किया है जिनमें प्रमुख है– (क) काव्यानुवाद (ख) नाटकानुवाद (ग) कथासाहित्यानुवाद (घ) निबंधानुवाद (ङ) आलोचनावाद (च) रेखांकित, संस्मरण आदि का अनुवाद।[4] वर्तमान में संस्कृत बाल–साहित्य में लेखकों द्वारा काव्यानुवाद के अन्तर्गत अन्य भाषाओं में लिखित कविता, गीत या सम्पूर्ण मूल काव्य का संस्कृत में अनुवाद किया जा रहा है। इसी तरह नाटकानुवाद के अन्तर्गत अन्य भाषाओं में रचित नाटकों का लघु एकांकी, लघुनाटक आदि बाल–साहित्य विधा में अनुवाद किया जा रहा है। कथासाहित्य अनुवाद के अन्तर्गत बाल–सुलभ,

---

1. अनुवाद विज्ञान : स्वरूप और समस्याएँ, डॉ. रामगोपाल सिंह, पृ.सं.–10
2. संस्कृत–हिन्दी शब्दकोश, वामन शिवराम आप्टे, पृ.
3. अनुवाद विज्ञान, डॉ. भोलानाथ तिवारी, पृ.–9
4. अनुवाद विज्ञान : स्वरूप और समस्याएँ, डॉ. रामगोपाल सिंह, पृ.–25

सरल–सरस भाषा शैली में अनुवाद कार्य किया जा रहा है। यह बालकथाएँ बालकों में नैतिक–सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक विकास में अपना समग्र योगदान दे रही है।

अनुवाद की परम्परा में नारायण बालकृष्णन गोडबोले द्वारा मराठी भाषा में प्राप्त ईसप की दंतकताओं का संस्कृत में अनुवाद किया गया है। ये दंतकथाएँ आजकल के बच्चों के लिए नैतिक शिक्षा का लोकप्रिय माध्यम है। अनुवाद के इस कार्य में सर्वप्रथम 60 कहानियों का संस्कृत अनुवाद किया गया। तदन्तर द्वितीय भाग में 61 से 135 कथाओं का संस्कृतानुवाद कार्य सम्पादित किया गया है। वस्तुतः ईसप की कथाएँ पंचतंत्र की कथाओं के समान मनोरंजन के साथ ही नीति और व्यवहारकुशलता की शिक्षा देती है।[1]

इसी तरह नारायण दाश द्वारा सची रोटरी द्वारा लिखित एवं उड़िया भाषा में प्राप्त शहीद किशोर बाजी राउत की कहानी का संस्कृत भाषा में 'बाजीराउत' कविता के रूप में अनुवाद किया गया है। वस्तुतः बाजी राउत ओडिसा का 12 साल का एक किशोर है जो 1938 को अंग्रेजों के खिलाफ लड़ता हुआ शहीद हो गया था। आजादी की लड़ाई के इतिहास में बाजीराउत को देश का सबसे कम उम्र का शहीद बताया गया है। इसी प्रकार 1984 ई. में अलीपुर पाकिस्तान में जन्में ओमप्रकाश ठाकुर द्वारा क्रीतदास ईशप के विद्रोह की कथा में 'ईसपकथानिकुंजम्' शीर्षक से संस्कृत में अनूदित किया गया है। इसमें कुल 111 लघुकथाओं का संकलन है।

अनुवाद के क्रम में त्रिवेणी कवि प्रो. राजेन्द्र मिश्र द्वारा आंग्ल लेखक रुडयार्ड किपलिंग द्वारा लिखित 'The Jungle Book' का संस्कृत में ''कान्तारकथा'' शीर्षक से अनुवाद किया है। यह पुस्तक सन् 2009 ई. में वैजयन्त प्रकाशन, इलाहबाद से प्रकाशित हुई। यह पुस्तक बालकों को मनोरंजक शैली में वन तथा वन्य संस्कृति से अवगत करवाती है।

नन्दन पत्रिका में जयप्रकाश भारती ने हिन्दी भाषा में कुछ नैतिक कथाएँ प्रकाशित की थी। इसका मधुर शास्त्री ने संस्कृत में अनुवाद किया है। दिल्ली संस्कृति अकादमी से प्रकाशित **'ते के आसन् डायनासोराः'** भी बच्चों के लिए अत्यन्त ज्ञानवर्द्धक है। इसी तरह कृष्णचन्द्र पाण्डेय द्वारा हिन्दी भाषा में अनेक सरल–सरस बालगीतों की रचना की गई है जिनका विभिन्न शीर्षकों से आचार्य रंजीत वोहरा द्वारा संस्कृत में अनुवाद किया है, इनमें प्रमुख है– अस्माकं पतङ्गिका, भुट्टाकम्, चुन्नी मुन्नी च, दोला, गोधूमाः, गोलगप्पकम्, गुल्ली दण्डः च, हर्षः जातः, हिक् हिक् हिक्का इत्यादि।

इसी तरह हिन्दी के प्रख्यात विद्वान मनु शर्मा द्वारा हिन्दी भाषा में लिखित महाभारत की नीतिकथाओं का, विद्वान् उदयन द्वारा सरल सरस, बाल–सुलभ भाषा में संस्कृत में अनुवाद किया

---

1. 'ईसप कथाकुंजम्' नारायण बालकृष्णन गोडबोले, पाण्डुरंग जावाजी प्रकाशन, 1923 ई.

गया। इसी तरह अशोक कौशिक द्वारा हिन्दी में लिखित विभिन्न जातक कथाओं का डॉ. संजीव द्वारा 'बोधकथा' (2011 ई.) शीर्षक से संस्कृत में अनुवाद किया गया है। यह **'बोधकथा'** ग्रन्थ भारतीय इतिहास में सत्य तथा यथार्थ बोधकथाओं का भण्डार है। ये कथाएँ बालकों को परम सत्य के प्रति प्रेरित करती है। अनुवाद की परम्परा में डॉ. सम्पदानन्द मिश्र का योगदान अविस्मरणीय है। आपके द्वारा गठित संस्कृत बाल साहित्य परिषद द्वारा बाल–साहित्य सम्मेलनों के आयोजन, बाल साहित्य के संग्रह एवं नवीन बाल साहित्य के लेखन के लिए बालकों, किशोरों एवं विद्वानों को जो प्रेरित करने का कार्य किया जा रहा है वह अद्वितीय है। आपके द्वारा स्वयं ओरगन विश्वविद्यालय (स.रा.अ.) के छात्रों द्वारा आंग्ल भाषा में लिखित बालकथा का 'सप्तवर्ण–चित्रपतङ्गः' (2016 ई.) शीर्षक से संस्कृत में, जो चित्रात्मक एवं चिताकर्षक अनुवाद किया गया है वह अद्भुत है।

इसी प्रकार लेखक ओमप्रकाश ठाकुर द्वारा दक्षिण भारत के विजयनगर साम्राज्य के राजा कृष्णचन्द्र के प्रधान सलाहकार तेनालीरामा के राजकार्य एवं व्यवहारकुशलता से सम्बन्धित एवं चर्चित छोटी–छोटी कहानियों का अनुवाद 'तेनालीकौतुकम्' शीर्षक से किया गया है। कवि ने प्राक्कथन में प्रस्तुत पुस्तक की उपादेयता तथा समीचीनता का संदर्भ संस्कृत भाषा की कालजयी रचना पंचतंत्र के फलक पर माना है– एता परिस्थितिषु संस्कृत–सुभाषितानि पंचतन्त्रादये नीति कथाग्रन्थाः मानवस्य माग्रं प्रशस्तं कुर्वन्ति। तेनालीरामस्य कथा अपि अनया परम्पराऽनुस्युताः सन्ति। (प्राक्कथनम्) वस्तुतः तेनालीराम की कहानी मात्र कहानी नहीं अपितु तात्कालीन सामाजिक, धार्मिक, रीतिरिवाजों के मिथक तथा अंधविश्वासों का भी पर्दाफाश करती है। 'कण्टकेनैव कण्टकम्' बालकथा में विजयनगर साम्राज्य के ब्राह्मणों की धन लोलुपता का सुन्दर वर्णन किया गया है। यथा–

तेनालीराम उवाच–ममाम्बा सा पीडया आर्ताऽऽसीत्। मरणकालेऽपि सा सन्धिवेदनया शांतिं नाप। अन्तकाले तयाऽहम् आदिष्टः यद् यस्मिन् अङ्गे वेदनास्ति, तत्र शलाकया अङ्कं विधेहि, येन वेदनारहित सती अहं शान्त्या प्राणत्यागं कुर्याम्। तस्मिन् काले तस्या अभिलाषाः पूर्णता न गताः। इदानीं आत्मनः शान्त्यर्थम् एते ब्राह्माणाः शलाकाभिः गात्रेषु अङ्किताः।[1]

इसी तरह डॉ. विश्वास द्वारा बालकों को पंचतंत्र में निहित नीतिशास्त्र एवं व्यवहारकुशलता की शिक्षा देने के लिए तथा काव्यों के पठन–पाठन में निपुण बनाने के प्रयोजन से संस्कृत भाषा के प्राथमिक अभ्यास के रूप में 'संक्षेपपंचतन्त्रम्' (सन् 2014 ई.) की रचना की गई है। इसी तरह डॉ. विश्वास द्वारा संस्कृत भाषा के प्राथमिक अभ्यास की दृष्टि से अत्यन्त सरल भाषा में पंचतन्त्र की कुछ कथाओं का ''पंचतन्त्रकथाः' (2014 ई.) शीर्षक से निरूपण किया है। कर्नाटक की प्रसिद्ध

1. तेनालीकथाकौतुकम्, डॉ. ओमप्रकाश ठाकुर, पृ. 153

साप्ताहिक विक्रम पत्रिका में 'सुगन्ध' शीर्षक से यह कथाएँ सर्वप्रथम प्रकाशित हुई थी। कवि ने कथाओं के प्रथम–प्रकाशक श्री बे.सु.ना. माल्य महोदय के प्रति आभार व्यक्त किया है।

इसी तरह महामहोपाध्याय पण्डित विष्णुशर्मा द्वारा विरचित 'पंचतन्त्र' को आचार्य पद्मशास्त्री महोदय द्वारा पद्यात्मक विधा में 'पद्य–पंचतन्त्र' (2012 ई.) शीर्षक से अनूदित किया है। प्रस्तुत ग्रन्थ में प×चतन्त्र के पाँचों तंत्रों (मित्रभेद, मित्रसम्प्राप्ति, काकोलूकीयम, लब्धप्रणाश तथा अपरीक्षितकारक) में निबद्ध 72 कथाओं को प्रसाद गुण सम्पन्न रोचक शैली में पद्यों में निबद्ध किया गया है। कवि द्वारा प्रस्तुत ग्रन्थ को बाल–मानस के अनुकूल विविध प्रकार के चित्रों से सुसज्जित किया गया है।

इसी प्रकार पर्यावरण संरक्षण के प्रतीक एवं राजस्थान में विश्नोई धर्म में जन्मी अमृतादेवी द्वारा खेजड़ली (जोधपुर) ग्राम में वृक्षों की रक्षा के लिए अपने प्राणोत्सर्ग करने वाली ऐतिहासिक घटना को प्रो. ताराशङ्कर शर्मा पाण्डेय द्वारा लघुनाटक विधा में 'वृक्षरक्षणम्' (2013 ई.) शीर्षक से प्रणयन किया है।

इसी तरह आज विश्व पटल पर पर्यावरण संरक्षण एवं जलवायु संकट को लेकर जिस तरह विरोधाभास देखने को मिल रहा है, ऐसे समय मानव एवं प्रकृति में संतुलन बनाना अत्यन्त आवश्यक है। मनुष्य को स्वार्थवादी सोच को त्यागकर प्रकृति, वन एवं वन्य प्राणियों के संरक्षण के बारे में सोचना अत्यन्त अनिवार्य हो गया है। ऐसे समय प्रो. ताराशङ्कर पाण्डेय द्वारा प्रणीत ''हंसरक्षणम्'' (2010 ई.) लघुनाटक जीव–रक्षा के लिए समस्त लोगों का मार्ग प्रशस्त करेगा। प्रस्तुत लघुनाटक में गौतम बुद्ध द्वारा स्वाभाविक रूप से की गई हंस–रक्षा की घटना एक आदर्श प्रस्तुत करती है।

अनुवाद की परम्परा में ''बालस्य चक्षुषा समीक्षामहे'' इस लौकिक समस्या को उद्दिष्ट करके गीतासुब्बाराव महोदय द्वारा बालकों की समस्या का समाधान करने के प्रयोजन से तेलुगु भाषा में विभिन्न रोचक कथाओं से निबद्ध 'गोरुमुद्दलु' (अङ्गुलिफलानि) नामक पुस्तक की रचना की गई। इसका डॉ. के. वरलक्ष्मी द्वारा 'शिशुस्वान्तम्'' (2016 ई.) शीर्षक से संस्कृत में अनुवाद किया गया। प्रस्तुत पुस्तक में 50 बालकथाओं का संग्रह है। प्रत्येक बालकथा आधुनिक शिक्षा व्यवस्था, संस्कार लैङ्गिक भेदभाव से रहित तथा पर्यावरण संरक्षण जैसे विविध विषयों को सरल–सरस एवं सुगम भाषा शैली में बालकों को अवगत करवाती है। इसी तरह गीतासुब्बाराव का ही किसी अन्य पुस्तक का आचार्य मोहन राव द्वारा 'पलायितश्चणकः' शीर्षक से संस्कृत में अनुवाद किया गया है।[1]

इसी तरह भारतीय भाषाओं में प्राप्त बाल–साहित्य से इतर फ्रेंच भाषा में लेखक 'आन्त्वान द सेंत्–एक्जुपेरी' द्वारा रचित साहित्य का गोपबन्धु मिश्र महोदय द्वारा **'कनीयान्–राजकुमारः'** (2013ई.)

1. 'शिशुस्वान्तम्; डॉ. के. वरलक्ष्मी, पुरोवाक् भाग से उद्धृत

शीर्षक से संस्कृत में अनुवाद किया है। यह पुस्तक समस्त प्रौढ़ मनुष्यों को यह स्मरण करवाती है कि वह सभी भी पहले एक बालक ही थे। अतः बालकों के प्रति सहानुभूति, स्नेह एवं प्यार की भावना प्रकट करना अत्यन्त आवश्यक है। कवि ने 'उत्सर्गः' आमुख भाग से प्रस्तुत पुस्तक का मूल भाव अभिव्यकत किया है–

"मया एतत् पुस्तकं तस्मै बालाय उत्सर्गीक्रियते यस्य बाल्यावस्थां कदाचिद् एषः प्रौढ़ः जनः आसीत्। सर्वे प्रौढ़ाः जनाः आदौ बालाः एव तु आसन्। अतः किंचित् परिवर्तनं विधाय एषः उत्सर्गः–

लेओं वर्थस्य कृते
यदा सः बालः आसीत्।"[1]

(क) अनूदित गीतकाव्य

अनूदित बाल–कविताओं में आचार्य शशिपाल शर्मा 'बालमित्र' की पुस्तक में कुल तेरह (13) बालकवितायें प्राप्त होती है जिनका हिंदी अनुवाद भी साथ में ही किया गया है। ये संस्कृत कविताएं इतनी सरल और सहज भाषा शैली में लिखी गई है कि पढ़ते ही याद हो जाती है। इन कविताओं के शीर्षक है– **'अहम् आवाम् वयम्, भारतदेशः, युगं युगं परिवर्तितं,सलिले हंसः, मत्स्यी मत्स्यी, उदयति सूर्यः विकसति कमलं,अग्रे गच्छति पृष्ठे धावति एवं श्रृण्डात् शुं शुं इत्यादि।'**

इसी तरह डॉ. नागराज द्वारा कुछ बालगीतों का संस्कृतानुवाद किया गया है जो 'सामविद्' पत्रिका में प्रकाशित हुए है। इसी प्रकार बालकों को संस्कृत भाषा का प्राथमिक ज्ञान प्रदान करने के उद्देश्य से आचार्य वासुदेव द्विवेदी महोदय द्वारा अनेक बालकविताओं की रचना की गई है जो हिन्दी अनुवाद सहित प्रकाशित हुई है। यथा– ''बालशब्दकोशः'' पुस्तक बालकों को तुकबन्दी शैली में वस्तुवाचक संज्ञा, भाववाचक संज्ञा, विशेषण, अव्यय आदि मनोहर शब्दों से अवगत करवाती है–

कथन कहना श्रवण सुनना
चलन चलना तपन सहना
लम्ब लम्बा स्थूल मोटा
ह्रस्व छोटा सूक्ष्म पतला
अत्र यहाँ तत्र वहाँ
कुत्र कहाँ यत्र जहाँ।[2]

इसी तरह बच्चों को संस्कृत वर्णमाला एवं लघु–लघु वाक्यों को याद करवाने वाली 'बालसंस्कृतम्' पुस्तक अत्यन्त उपयोगी है यथा–

---

1. 'कनीयान् राजकुमारः' उत्सर्ग भाग से उद्धृत, डॉ. गोपबन्धु मिश्र, पृ.सं.–3
2. 'बालशब्दकोशः', आचार्य वासुदेव द्विवेदी शास्त्री

किं करोषि क्या करते हो?

किं कथयसि क्या कहते हो?

कथं विलम्बं कुरुषे क्यों देरी करते हो?[1]

आदि मनोहारी तुकबन्दी वाक्य बच्चों के सुकोमल मन को छू लेते है।

पंचतन्त्र की कथाएँ सहस्त्राब्दियों से संस्कृत में सुप्रसिद्ध रही है। पंचतन्त्र की इन गद्यबद्ध कथाओं को पद्यबद्ध करने की प्रेरणा राजस्थान के सुप्रसिद्ध कवि पं. पद्मशास्त्री महोदय द्वारा अनुष्टुप् छंद में 'पद्यपंचतन्त्रम्' के नाम से की है। जिसका सम्पादन डॉ. शिवचरण शर्मा के द्वारा 2012 ई. में राष्ट्रीय संस्कृत साहित्य केन्द्र, जयपुर से किया गया। कवि द्वारा पंचतन्त्र की 72 कथाओं को ज्यों का त्यों पद्यों में निबद्ध किया है। प्रत्येक पद्यात्मक कथा के बाद उसका हिन्दी में गद्यानुवाद भी दिया गया है। एक अथवा दो पृष्ठों में ही कवि द्वारा सम्पूर्ण कथा का भाव अत्यन्त मनोहर एवं चित्रों के माध्यम से वर्णित किया है।

'मित्रभेद' नामक प्रथम तन्त्र की कथा 'कीलोत्पातिवानरकथा' के माध्यम से एक मूर्ख वानर की कथा को 10 अनुष्टुप छन्द युक्त श्लोकों में निबद्ध किया गया है। कवि का सन्देश है कि मनुष्य को बिना किसी प्रयोजन एवं सोच विचार किए बिना किसी भी कार्य को नहीं करना चाहिए, नहीं तो हानि होना निश्चित है। जैसाकि मूर्ख बन्दर द्वारा बिना मतलब के कीली उखाडने पर स्वयं काल का ग्रास (मृत्यु) बन गया। जैसाकि नीतिशतक में भी भूखे व्यक्ति के सम्बन्ध में उल्लेख है–

"ज्ञानलवदुर्विदग्धं ब्रह्मापि नरं न रंजयति।"[2]

'गोमायुश्रृगालकथा' प्रस्तुत कथा में भूख से पीड़ित एक गोमायु नामक श्रृगाल की कथा को पद्यों में निबद्ध किया गया है। श्रृगाल भूख से व्याकुल होकर इधर–उधर विचरण कर रहा है। अचानक उसे मांस–मज्जा से युक्त चमड़े का ढोल दिखाई देता है जिसके भक्षण के दौरान उसके दांत उस ढोल में फंसकर टूट जाते है। कवि का सन्देश है कि सन्देह परक वस्तु या प्राणी पर कभी विश्वास नहीं करना चाहिए अन्यथा मनुष्य दुःख का भागी बनता है। जैसाकि कहा गया है–

"सहसा विदधीत न क्रियामविवेकः परमापदां पदम्।"[3]

'दन्तिलवैश्यकथा' प्रस्तुत कथा में गोरम्भ नामक सेवक द्वारा दन्तिल नामक वैश्य एवं वर्धमान नगर के राजा की मित्रता में भेद करवाने का वर्णन है। वस्तुतः मनुष्य को अच्छी तरह सोच–विचार कर ही मित्र बनाना चाहिए, जैसाकि हितोपदेश में उल्लेख है–

---

1. 'बालसंस्कृतम्', आचार्य वासुदेव द्विवेदी शास्त्री
2. नीतिशतक, आचार्य भर्तृहरि, श्लोक संख्या–3
3. किरातार्जुनीयम्, महाकवि भारविः, 2/30

"उत्सवे, व्यसने चैव दुर्भिक्षे राष्ट्रविप्लवे।
राजद्वारे श्मसाने च यस्तिष्ठति स बान्धवः।।"[1]

'विष्णुरूपधारिकौलिकरथकारकथा' प्रस्तुत पद्यात्मक कथा में विष्णुरूपधारी कौलिक एवं रथकार नामक दो महाबली योद्धाओं की कथा है। रथकार की सहायता से कौलिक द्वारा विष्णु का रूप धारण करके किसी राजकन्या को छलकपटपूर्वक पत्नी के रूप में वरण करने का योजनामय वर्णन किया गया है। कवि का सन्देश है कि यदि कार्य की सिद्धि के लिए उपाय–चतुष्ट्य (साम–दाम–दण्ड–भेद) को भी अपनाना पड़े तो वह किसी भी प्रकार अनुचित नहीं है अपितु उचित ही है जैसाकि हितोपदेश में वर्णित है–

"साम्ना दानेन भेदेन समस्तैरथवा पृथक्।
साधितुं प्रयतेताऽरीन् न युद्धेन् कदाचन्।।"[2]

इसी प्रकार 'वायसदम्पतीकथा' पद्यात्मक कथा में भी एक काकदम्पती द्वारा उपाय के माध्यम से किसी काले साँप को मारने का सुन्दर वर्णन किया गया है। वस्तुतः मनुष्य का मायावी मनुष्यों के साथ मायावी व्यवहार करना सर्वथा उचित ही है। जैसाकि विदुर नीति में उल्लेख किया गया है–

कृते प्रतिकृतिं कुर्याद् हिंसने प्रतिहिंसनम्।
तत्र दोषं न पश्यामि शठे शाठ्यं समाचरेत्।।[3]

'वृद्धवककुलीरककथा' प्रस्तुत श्लोकबद्ध कहानी में वृद्ध बगुले एवं केकड़े नामक जलचर प्राणी की कहानी का सुन्दर वर्णन है। यहाँ धूर्त बगुले द्वारा अनावृष्टि की झूठी योजना बनाकर स्वभाव से ही चंचल मच्छलियों के भक्षण करने का वर्णन है। किंतु अंत में केकड़े को बगुले की धूर्तता का पता चल जाता है। वह अपने नुकिले दाँतों से बगुले को मार देता है। कवि का उपदेश है कि अपनी कुल एवं जाति से भिन्न किसी नृशंस प्राणी पर कभी विश्वास नहीं करना चाहिए। 'भासुरकसिंहकथा' प्रस्तुत कथा में भी कवि चतुर खरगोश द्वारा भासुरक नामक विशाल एवं पराक्रमी सिंह को बुद्धि चातुर्य से मारने का सुन्दर वर्णन किया है। कवि का कथन है कि जिसके पास बुद्धि है उसके पास बल होता है–

"यस्य बुद्धिर्बलन्तस्य निर्बुद्धेस्तु कुतो बलम्।
वने सिंहो मदोन्मत्तः शशकेन निपातितः।।"[4]

---

1. हितोपदेश, नारायण पण्डित, 1/77
2. हितोपदेश, नारायण पण्डित, 3/42
3. महाभारत–विदुरनीति
4. पद्यपंचतन्त्रम्, पद्मशास्त्री, 8/16, पृ.सं.–36

चाणक्य नीति (10/36) तथा पंचतन्त्र (मित्रभेद/239) में भी समानार्थी श्लोक प्राप्त होता है।

इसी तरह पंचतन्त्र में निबद्ध 'मन्दविसर्पिणीयूकाअग्निमुखमत्कुणकथा' कथा का नामकरण कवि द्वारा 'मन्दविसर्पिणीयूकाकथा' किया है। कवि द्वारा मन्दविसर्पिणी यूका एवं अग्निमुख नामक खटमल जैसे सूक्ष्म जीवों के माध्यम से बालकों को उपदेश दिया गया है कि कुल, जाति एवं नाम को जाने बिना किसी को आश्रय नहीं देना चाहिए। हितोपदेश में भी वर्णित है–

"अज्ञातकुलशीलस्य वासो देयो न कस्यचित्।"[1]

'चण्डरवश्रृगालकथा' में भी चण्डरव नाम वाले धूर्त श्रृगाल की कथा वर्णित है। प्रस्तुत कथा में भी कवि मनुष्यों को आगाह करता है कि बिना जाने पहचाने लोक में किसी पर विश्वास नहीं करना चाहिए। यथा–

"विना ज्ञात्वा च लोकेऽस्मिन् स्थानं देयं च कस्यचित्।"[2]

'टिट्टिभदम्पती' प्रस्तुत कथा में टिट्टिभ दत्पती एवं सागर के मध्य सुन्दर संवाद देखने को मिलता है। एक तरफ जहां टिट्टिम के अहंकार को रेखांकित किया गया है दूसरी तरफ बालकों को उपदेशित किया गया है कि मनुष्य को बलवान के साथ अकारण वैर नहीं रखना चाहिए।

इसी तरह 'कम्बुग्रीवकच्छपकथा' तथा 'अनागतविधातादिमत्स्यत्रयकथा' कथाओं का मूलभाव यह है कि मनुष्य को कल्याण चाहने वाले मित्रों की वाणी पर कभी संशय नहीं करना चाहिए। जैसाकि कहा गया है–

"सुहृदां हितकामनां यः श्रृणोति न भाषितम्।
विपत्संनिहिता तस्य, स नरः शत्रुनन्दनः।।"[3]

इसी प्रकार 'सूचीमुखवानरयूथकथा' में कवि उल्लेख करता है कि जो सत्पात्र है, उसी को उपदेश देना चाहिए। अपात्र एवं मूर्ख व्यक्ति को कभी भी ज्ञान की बात नहीं कहना चाहिए। यहाँ सूचीमुख पक्षी द्वारा मूर्ख बन्दरों को उपदेश देना किसी भी तरह से नीति युक्त नहीं है। जैसाकि नीतिशतक में उल्लेखित है कि मूर्ख व्यक्ति को समझाना असंभव–सा कार्य है–

"अज्ञः सुखमाराध्यः सुखतरमाराध्यते विशेषज्ञः।
ज्ञानलवदुर्विदग्धं ब्रह्मापि तं नरं न रंजयति।।"[4]

---

1. हितोपदेश, नारायण पण्डित, मित्रलाभ/56
2. पद्यपंचतन्त्रम्, पद्मशास्त्री, 10/10, पृ.सं.–41
3. हितोपदेश–1/77, नारायणपण्डित
4. भर्तृहरि विरचित नीतिशतकम्, श्लोक–3

'शाखामृगचटकदम्पतीकथा' प्रस्तुत कथा में भी मूर्खों को उपदेश देना प्राणों को मौत के मुँह में डालने के समान बताया गया है। यथा–

"उपदेशो हि मूर्खाणां प्राणनाशाय जायते।"[1]

'धर्मबुद्धिपापबुद्धिकथा' प्रस्तुत पद्यात्मक कथा में दो पात्र–धर्मबुद्धि एवं पापबुद्धि के चरित्र का सुन्दर वर्णन किया गया है। 'यथा नाम तथा गुणाः' के अनुरूप धर्मबुद्धि धर्म के अनुरूप आचरण करने वाला है तो पापबुद्धि छल–कपट से युक्त दुराचार करने में तथा पाप कर्म से युक्त है। 'वानरहतनृपकथा' प्रस्तुत कथा में शत्रु एवं हितकार मूर्ख में शत्रु को श्रेष्ठ बताया गया है।

जैसा कि–

"पण्डितोऽपि वरं शत्रुर्न मूर्खो हितकारकः।।"[2]

पद्यपंचतन्त्रम् के 'मित्रसम्प्राप्ति' नामक द्वितीय तंत्र की प्रथम पद्यात्मक कथा 'काककपोतमूषककथा' में कौवे, कबूतर तथा चूहे जैसे पशु–पक्षी पात्रों के माध्यम से बालकों को संगठित रहने का उपदेश दिया गया है। क्योंकि छोटे–छोटे प्रयासों के संगठित होने पर भी कार्य की सिद्धि हो जाती है। जैसाकि शिशुपालवधम् महाकाव्य में उल्लेखित है–

"बृहत्सहायः कार्यान्तं क्षोदीयानपि गच्छति।
संभूयाम्भोधिमभ्येति महानद्या नगापगा।।"[3]

इसी तरह 'तृष्णाभिभूतश्रृगालकथा' में लोभ के वशीभूत श्रृगाल की कथा के माध्यम से बालकों को तृष्णा या लोभ को त्यागने का नैतिक उपदेश दिया गया है। जैसाकि ईशावस्योपनिषद् में मनुष्य को भौतिक संग्रह करने की अपनी लालसा पर नियंत्रण करने का उपदेश दिया गया है–

"ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुंजीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्।"[4]

'प्राप्तव्यमर्थवणिक्कथा' प्रस्तुत कथा में 'प्राप्तव्यमर्थ' नामक श्रेष्ठि पुत्र की कथा का मनोहारी वर्णन है। भाग्य के प्रभाव से **प्राप्तव्यमर्थ** एक सुन्दर एवं राजकन्या चन्द्रावती को पत्नी के रूप में वरण करता है। कवि का कथन है कि इस संसार में सब कुछ भाग्य के अधीन है। जो होना होता है वह होकर ही रहता है। क्योंकि भाग्य के अनेक द्वार है यथा–

---

1. 'पद्यपंचतन्त्रम्', पद्मशास्त्री, 18/7
2. 'पद्यपंचतन्त्रम्' पद्मशास्त्री, 22/5, पृ.सं.–73
3. महाकवि माघ (शिशुपालवध, 2/100)
4. ईशोपनिषद्, मन्त्र 1

"भवितव्यानां द्वाराणि भवन्ति सर्वत्र।"[1]

हितोपदेश में भी वर्णित है–

"अवश्यम्भाविनो भावा भवन्ति महतामपि।"[2]

'काकोलूकीयम्' नामक तृतीय तन्त्र में कोवे एवं उल्लू की पद्यात्मक कथा के माध्यम से कवि उपदेशित करता है कि संसार में विरोधियों पर विश्वास नहीं करना चाहिए, चाहे शत्रु मित्र ही क्यों न हो जाए। 'चतुर्दन्तमहागजलम्बकर्णशशककथा' प्रस्तुत कथा में सन्देश निहित है कि बड़े लोगों का नाम लेने मात्र से ही सिद्धि मिल जाती है। 'रथकारपुंश्चलीजारकथा' प्रस्तुत कथा में कवि द्वारा समाज में प्रचलित जार–प्रथा का उल्लेख किया गया है। कवि उल्लेख करता है कि समाज में नारी को सर्वथा सन्देह की दृष्टि से देखा जाता है। वह कितनी भी पतिव्रता हो, फिर भी समाज द्वारा उस पर आरोप–प्रत्यारोप किए जाते हैं।

'लब्धप्रणाशम्' नामक चतुर्थ तन्त्र में बन्दर के बुद्धिचातुर्य का सुन्दर वर्णन किया गया है। कवि उल्लेख करता है कि बुद्धि के द्वारा ही वानर मगरमच्छ से विपत्ति में भी अपने प्राणों की रक्षा कर पाता है।

'अपरीक्षितकारकम्' नामक पाँचवे तन्त्र में बालकों को शिक्षा दी गई है कि बिना विचार किए कोई भी कार्य नहीं करना चाहिए। जो भी कार्य करो, अच्छी तरह विचार करके एवं योजना बनाकर ही करो, यही उद्देश्य प्रस्तुत कथा का सार है। महाकवि भारवि ने किरातार्जुनीयम् महाकाव्य में उल्लेख किया है कि–

सहसा विदधीत न क्रियामविवेकः परमापदां पदम्।[3]

'देवशर्मब्राह्मणकथा' प्रस्तुत कथा में भी यही सन्देश निहित है। यथा–

"अपरीक्ष्य न कर्त्तव्यं कर्त्तव्यं सुपरीक्षितम्।"[4]

'अतिलोभाभिभूतब्राह्मणपुत्रकथा' प्रस्तुत कथा में बालकों को लोभ नहीं करने का नैतिक उपदेश दिया गया है क्योंकि लोभ के वशीभूत व्यक्ति के मस्तिष्क पर मृत्यु का चक्र निरन्तर गतिमान रहता है। साथ ही शास्त्रों में अत्यधिक लोभ को सर्वत्र बुरा बताया गया है– "अति सर्वत्र वर्जयेत्।" (चाणक्य नीति) अतः अति करना किसी भी बात में उचित नहीं है।

---

1. अभिज्ञानशाकुन्तलम्, कालिदास, 1/16
2. हितोपदेश–कथा मुख भाग
3. किरातार्जुनीयम्, 2/30
4. पद्मपंचतन्त्रम्, पद्मशास्त्री, 5/2/13, पृ.सं.–185

प्रस्तुत ग्रन्थ 'पद्य–पंचतन्त्रम्' में पंचतन्त्र की सभी कथाओं को प्रसादगुणोपेत पद्यों में रोचक व प्रभावी ढंग से पिरोया गया है। पंचतन्त्र का यह पद्यानुवाद सहृदय पाठकों को सरस काव्यात्मक अनुभूति प्रदान करने के साथ ही इसकी कथाओं को सरलतापूर्वक स्मरण रखने में भी सहायक सिद्ध होगा। इस ग्रन्थ का प्रमुख उद्देश्य बालकों को नैतिक, धार्मिक एवं व्यावहारिक शिक्षा प्रदान करना है।

(ख) अनूदित कथासंग्रह

'कथाच्छलेन बालानां नीतिस्तदिह कथ्यते।' अर्थात् कथाओं के व्याज से बालकों को नीति के रहस्यों की शिक्षा देना ही हितोपदेश जैसे कथाग्रन्थ का मुख्य प्रयोजन है।[1]

वस्तुतः कथाओं के प्रति मानव का जन्म से ही आकर्षण होता है। शैशवकाल से ही बालक में कथाश्रवण की प्रवृत्ति पायी जाती है। कथा विधा का प्रयोजन बालकों को मनोरंजन प्रदान करने के साथ ही उनको लोकव्यवहार एवं नैतिक आचार–विचार की शिक्षा प्रदान करना भी है। संस्कृत साहित्य में पंचतन्त्र–हितोपदेश–कथासरित्सागर इत्यादि साहित्य को कथासाहित्य में परिगणित किया जाता है। आज इन प्राचीन कथा साहित्य के साथ ही संस्कृत बाल–साहित्य के अन्तर्गत तमिल–तेलगू–बांग्ला–असमी भाषाओं के साथ ही आंग्ल भाषा में निहित कथाओं का भी संस्कृत भाषा में अनुवाद किया जा रहा है। वर्तमान सन्दर्भ के अनुकूल आज संस्कृत बाल–साहित्य में अनूदित कथा–साहित्य में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है।

प्रो. अभिराज राजेन्द्र मिश्र –कान्तारकथा –प्रो. अभिराजराजेन्द्र मिश्र प्रणीत 'कान्तारकथाकाव्य' आंग्ल लेखक रूडयार्ड किपलिंग द्वारा आंग्ल भाषा में लिखित 'The Jungle Story' का संस्कृत रूपान्तरण है। काव्य का प्रथम संस्करण सन् 2009 ई. में वैजयन्त प्रकाशन, इलाहबाद से हुआ। प्रस्तुत पुस्तक में एक वृकमानव (मोगली) के उन महान् कृत्यों का वर्णन है जो उसने, शान्ति एवं न्याय–धर्म की स्थापना के लिए किये हैं।

वृकमानव मौद्गलि (मोगली) गाँव के मुद्गल पण्डित का बच्चा है, जिसे दो माह की अवस्था में ही भेडिया उठा ले जाता है परन्तु ममतामयी, वत्सला भेडियानी उसे खाती नहीं, प्रत्युत अपना दूध पिलाकर पालने–पोसने लगती है। बड़ा होने पर मोगली में मनुष्यों जैसी विद्या–बुद्धि एवं संवेदनाओं का तथा जंगली पशुओं जैसे शारीरिक बल का उद्गम एक ही साथ होता है। फलतः वह सारे जंगल का महानायक बन जाता है। कथा के अन्त में जन्तुशाला के कर्मचारी उसे पकड़

1. हितोपदेश, प्रस्तावना भाग

कर ले जाते है परन्तु वन्य–पशु संघटित होकर एवं आक्रमण करके उसे छुड़ा लेते है। अन्ततः पशुओं द्वारा नारा उद्घोषित किया जाता है–

"बन्धनं न सहामहे।"

अर्थात बन्धन में नहीं रहेंगे। कथाकार प्रो. मिश्र अरण्य संस्कृति को मानवीय संस्कृति से बेहतर बताते है, क्योंकि वन्य–जीव जंतु कभी भी प्रकृति के नियमों को तोड़ते नहीं है। किन्तु मनुष्य स्वार्थ के वशीभूत होकर निरंतर प्रकृति के नियमों का उल्लंघन करता है।

"यदि नामारण्यकानां ग्रामनगरप्रवेशो ग्रामिणैर्नागरिकैर्वा नाभिनन्द्यते न सह्यते तत्तेषां कान्तारप्रवेशः कथमस्माभिर्मर्षितव्यः ?....किं कारागृहसेवनं सर्वसौविध्यसम्पन्नमपि रोचते मानवेभ्यः? यदि नैव रोचते नाम, तर्हि कस्मात्तदेव दुःखमस्मभ्यं दीयते तैर्नृशंसैः"[1]

वस्तुतः कान्तारकथा में अरण्य–धर्म का सम्यक् पालन किया गया है। मोगली के माध्यम से अरण्य–संस्कृति में निवासरत जीवों के मध्य सहयोग–समन्वय, भाईचारा एवं एकता के भावों को भी यहाँ चरितार्थ किया गया है। साथ ही जंगल के पर्यावरण को सुरक्षित एवं भयरहित बनाने में मोगली की मनःस्थिति का भी सुन्दर वर्णन किया गया है।

प्रस्तुत काव्य में प्राकृतिक पर्यावरण का सुन्दर वर्णन किया गया है। कवि का प्रकृति परक ज्ञान कृषि शास्त्र के समस्त पक्षों को आच्छादित करता है। कवि वर्षा ऋतु में उगने वाली फसलों का वर्णन करता है–**"श्रावणमास आसीत् वर्षर्तोः। शस्यवृद्धया मार्गोऽपि विलुप्तप्राय आसीत्। कृषिक्षेत्राणि शस्यसङ्कुलान्यासन्। क्वचिन्माषाः क्वचिद् वज्रान्नानि, क्वचित्तिलानि, क्वचित् श्यामकाः क्वचिद् मुद्गाः क्वचिदभुट्टाः, क्वचिदिक्षवः, क्वचित् शणाः, क्वचिज्जलधान्यानि, क्वचित्पुनः कर्पासाः।"**[2]

कवि वन में उत्पन्न भिन्न–भिन्न प्रकार की वनस्पतियों का भी सुन्दर वर्णन करता है। प्रस्तुत ग्रन्थ में नागर मोथा घास, पीपल, वटवृक्ष, पाकड़, सेमर, वेणु (बांस), जंगली परमल, सरपेत के वन तथा कसेरु की कन्द जैसी दुर्लभ वनस्पतियों का वर्णन देखने को मिलता है। प्रकृति के न्याय के अन्तर्गत कवि वन में नियमबद्ध परभक्षण श्रृंखला (खाद्य श्रृंखला) का भी वर्णन करता है। वस्तुतः जंगल का यह नियम है कि अधिक शारीरिक बल से युक्त वन्य–जीव, कम शरीर बल वाले जीव–जंतुओं का भक्षण करता है। यथा–

"पितामह। काऽस्ति कान्तारसंस्कृतिः? कीदृशोऽस्तिकान्तारन्यायः? कथमत्र बन्धुत्वं सहिष्णुत्वं संख्यं वा स्थापयितुं शक्यते? सर्वेऽप्यत्र अन्येषां भक्षका एवं दृश्यन्ते न तावद्रक्षकाः। कस्मात्? आंखु

1. कान्तारकथा, प्रो. मिश्र, पृ.सं.–80
2. कान्तारकथा, प्रो. मिश्र, पृ.सं.–20

निगिरति नागः। नागमश्नाति नकुलः। नकुलं भक्षयति श्येनः। श्येनं भक्षयति मकरः। परभक्षणपरम्परेयं शृङ्खलेव दृश्यते विजनेऽस्मिन्।"[1]

इसी तरह प्रस्तुत ग्रन्थ में कवि का सृष्टिविषयक दार्शनिक ज्ञान भी परिलक्षित होता है। वस्तुतः परमेश्वर द्वारा निर्मित यह सृष्टि वैकारिक–प्राकृत–वैकृत के भेद से तीन प्रकार की होती है। वैकारिक सृष्टि के अन्तर्गत देव–पितर–असुर–गन्धर्व–अप्सरा–सिद्ध–यक्ष–राक्षस–भूतप्रेतपिशाच, विद्याधर एवं किन्नर सम्मिलित है। प्राकृत सृष्टि के तहत बुद्धि–अहंकार–पंचमहाभूत–दश इन्द्रिया और मन से संयुक्त प्राणी वर्ग सम्मिलित है। इसी तरह वैकृत सृष्टि के अन्तर्गत स्थावर (वनस्पति, ओषधि, लता, वृक्ष) तिरश्चीन (गौ, बकरी, भेस, सूकर, भेड़, ऊँट, घोड़ा, कुत्ता, शृगाल, सिंह, बिल्ली, बन्दर, हाथी, भालू, सारस, चकवा, कौआ, उल्लू पशु–पक्षी आदि जीव सम्मिलित है। यथा–

"एवं हि, सृष्टौ विद्यमानाः सर्वेऽपि गोचरा अगोचरा वा प्राणिनः परमेश्वरेणैव निर्मिताः। वत्स मौद्गले! सर्वाऽपि सृष्टिः देवमानवपशुपक्षिजन्तुकृमिवनस्पतिमयी एकस्यैव जगन्निर्मातुः करुणाया आकाङ्क्षाया वाऽभिव्यक्तिः। इदमेव सृष्टिरहस्यम्। विवेकिनो बुद्धिमन्तो जनाः समष्टिं पश्यन्ति मूर्खाः पुनर्व्यष्टिम्। अयमेव भेदः अस्यां सृष्टौ वत्सः!"[2]

अतः कवि का समष्टि–व्यष्टि वेदान्त विषयक ज्ञान अत्यन्त श्लाघनीय है। इसी प्रकार महर्षि कश्यप का सृष्टि–उत्पत्ति विषयक पौराणिक ज्ञान का भी अत्यन्त सरल–सरस शब्दों में यहाँ वर्णन किया गया है। प्रस्तुत ग्रन्थ में मोगली के साथ ही 21 पशु–पक्षी पात्रों के चरित्र का सुन्दर वर्णन किया गया है। कवि ने गुणों के अनुरूप ही पात्रों का नाम–निर्धारण किया है। यथा मन्द चाल से युक्त अजगर का नाम 'मन्दग', तीक्ष्ण दृष्टि वाले गिध का नाम 'सुदृष्टि', वन के ज्ञाता भल्लूकराज का नाम 'सर्वज्ञ', महाबलशाली हाथी का नाम 'महाबल', वज्र के समान कठोर अङ्गो व्याघ्र का नाम 'वज्राङ्गः', वज्र के समान तीक्ष्ण चोंच वाले कौएं का नाम 'वज्रचंचु', तीक्ष्ण श्रवणशक्ति से युक्त खरगोश का नाम 'सुकर्ण', एवं तीक्ष्ण दांतों से युक्त मगरमच्छ का नाम 'नृशंस' रखा गया है। कवि का ऋतु ज्ञान भी अत्यधिक वैज्ञानिक है। ग्रंथ का प्रारम्भ जहां वर्षा ऋतु से होता है। वही ग्रंथ का समापन ग्रीष्म ऋतु में बांस के वन में प्रज्ज्वलीत दावानल के भयंकर वर्णन से होता है इस तरह एक वर्ष में सम्पन्न षड्–ऋतुओं का सुन्दर प्रयोग यहाँ परिलक्षित होता है।

अतः कान्तारकथा में जहाँ एकतरफ कवि द्वारा मनुष्य के सामाजिक, सांस्कृतिक–नैतिक–आध्यात्मिक एवं पर्यावरणीय पक्षों का सम्यक ध्यान रखा गया है। वहीं काव्यशास्त्रीय दृष्टि से कवि द्वारा बालमानस पटल के अनुरूप कथा में रोचकता, प्रवाह एवं

1. कान्तारकथा, प्रो. मिश्र, पृ.सं.–31
2. कान्तारकथा, प्रो. मिश्र, पृ.सं.–32

मनोरंजन के पक्षों का भी सम्यक् पालन किया गया है। यद्यपि कथाग्रन्थ में बाल स्वभाव के अनुकूल व्याकरण रहित सरल–सरस भाषा का प्रयोग नहीं किया गया है। किंतु कथा का मूलभाव सर्वथा बाल–मनोरंजन ही है।

डॉ. संजीव –बोधकथा ग्रन्थ

हिन्दी भाषा में अशोक कौशिक द्वारा प्राचीन एवं अर्वाचीन भारतीय इतिहास के महानायकों के जीवन–चरित्र एवं उनके सद्कार्यों के आधार पर अनेक रोचक एवं प्रेरणादायक कहानियों का प्रणयन किया गया है। जिनका डॉ. संजीवद्वारा सम्भाषण शैली में संस्कृत अनुवाद किया गया है। डॉ. संजीव महोदय द्वारा अनूदित यह ग्रन्थ 'बोधकथा' शीर्षक से संस्कृत–भारती, नवदेहली से प्रथम संस्करण के रूप में 2011 ई. में प्रकाशित हुआ। प्रस्तुत ग्रन्थ में 37 कथाओं का संकलन किया गया है।

प्रथम कथा 'दया धर्मस्य मूलम्' में तीर्थराज प्रयाग में आयोजित कुम्भमेले का अत्यन्त मार्मिक वर्णन किया गया है। इस कथा में जहाँ एक तरफ तीर्थयात्रा के बहाने कुम्भ मेले में आने वाले सैंकड़ों तीर्थयात्रियों के पाप एवं पुण्य कर्मों को लेकर एक साधु द्वारा स्वप्न में देवताओं से प्रश्न करने का सुन्दर एवं रोचक वर्णन किया गया है, तो दूसरी तरफ केरल प्रदेश में निवास करने वाले चर्मकार राम के उदार एवं सेवाभावी चरित्र से भी बाल–पाठकों को अवगत करवाया गया है।

वस्तुतः राम के लिए तीर्थयात्रा से अधिक स्वयं के परिवार एवं घर आए अतिथि की सेवा करना ही परम कार्य है। अतः दया भाव को प्रस्तुत ग्रन्थ का मूल भाव बताया गया है जैसाकि स्कन्ध–पुराण में उल्लेखित है–

"धर्मो जीवदया तुल्यो न क्वापि जगतीतले।

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन कार्या जीवदया नृभिः।।"[1]

अतः जगत् में जीवदया से बढ़कर कोई धर्म नहीं है। ये जानकर सभी जीवों पर दया करनी चाहिए, एक जीव की रक्षा करने से भी त्रैलोक्य की रक्षा होती है।

'दया एव श्रेयसे' प्रस्तुत कथा में आखेट (शिकार) को क्षणभर की खुशी देने वाला कार्य बताया गया है किन्तु शिकार से वन्य–प्राणियों को होने वाले दुःख का भी अत्यन्त मार्मिक वर्णन किया गया है। **'प्राणाः हुताः, किन्तु धर्मो न त्यक्तः'** प्रस्तुत कथा में मुगल शाहजहाँ के काल की घटना वर्णित की गई है। इस कथा में बालक हकीकतराय की सत्यता एवं धर्मपरायणता का वर्णन किया गया है। हकीकतराय का मत है कि क्षुद्र लोभ के लिए धर्म का त्याग करना मरने के समान है। वह अपने

1. स्कन्दपुराण / खण्ड 4 / अध्याय 58 / 85

प्राणों को देकर भी स्वधर्म को नहीं छोड़ता है। यथा– "क्षुद्रलोभलालसादिनिमित्तं स्वस्य धर्मस्य विक्रयणं कृत्वा जीवनात् अपि स्वधर्मे एव मरणं श्रेयस्करम्।"[1]

मनुस्मृति में भी उल्लेख किया है कि जो धर्म की रक्षा करता है, धर्म स्वयं उसकी रक्षा करता है–

"धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः।

तस्माद्धर्मो न हन्तव्यो मा नो धर्मो हतोऽवधीत्।।"[2]

'मूर्तिपूजा विश्वासप्रतीकरूपा' प्रस्तुत कथा में स्वामीविवेकानन्द द्वारा अलवर प्रान्त के महाराज मङ्गलसिंह के मूर्तिपूजा विषयक समस्या का अत्यन्त तार्किक ढंग से समाधान किया गया है। स्वामी विवेकानन्द का मत है कि पृथ्वी की प्रत्येक वस्तु में परमात्मा का स्वरूप विद्यमान है। वस्तुतः श्रद्धा ही परमात्मा के स्वरूप को द्योतित करती है। विश्वास ही जीवन है। अविश्वास करना मृत्यु के समान है। 'जगतः स्वरूपम्' कथा में एक संन्यासी के माध्यम से संसार की वास्तविकता से बालकों को अवगत करवाया गया है। वस्तुतः यह संसार मोह एवं स्वार्थ से आच्छादित है। प्रत्येक प्राणी मोह में जकड़ा हुआ है। इस संसार में कोई भी एक–दूसरे का मृत्यु पर्यन्त तक सहचर नहीं है। माता–पिता, पति–पत्नी, पुत्र, भाई आदिसभी एक–दूसरे से स्वार्थ के बंधन में बंधे हुए है। जैसाकि शंकराचार्य का जगत् विषयक मत है–

"ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या जीवो ब्रह्मैव नापरः।"[3]

'अक्षरमेकम्, उपदेशाः त्रयः' प्रस्तुत कथा में देव–मनुज एवं असुरों की दृष्टि में में 'द' अक्षर के तीन प्रकार के भिन्न–भिन्न अर्थ प्रतिपादित किए है। देवताओं के लिए 'द' अक्षर का अर्थ है– 'इन्द्रियदमनं करणीयं संयमः आचरणीयः'। मनुष्यों के लिए 'द' अक्षर का अर्थ है– 'दानात् एव अस्माकं कल्याणं भवेत'। इसी तरह असुरों के लिए 'द' अक्षर का अर्थ है 'दयाकरणादेव वयम् एतेभ्यः दुष्टकार्येभ्यः मुक्ताः भवेम।[4] 'अखिलः संसारः ईश्वरमयः' प्रस्तुत कथा में राजा अश्वपति द्वारा ऋषि मुनियों के ब्रह्मा एवं आत्मा विषयक प्रश्न का समाधान किया गया है। वस्तुतः यह सम्पूर्ण संसार परमात्मा का ही स्वरूप है। अतः आत्मा एवं परमात्मा में कोई भी भेद नहीं है। साथ ही वास्तविक राजा वही है जिसके राज्य में प्रजा हर तरह से सुखी हो, किसी भी तरह का दुःख विद्यमान नहीं हो।

---

1. बोधकथा, पृ.सं.–5
2. मनुस्मृति, 8/15
3. शांकरभाष्य से उद्धृत
4. बोधकथा, पृ.सं.–11

'ब्रह्मज्ञानी याज्ञवल्क्यः' प्रस्तुत कथा में ब्रह्मनिष्ठ ऋषि याज्ञवल्क्य एवं विदूषी गार्गी के मध्य 'आकाश' तत्व को लेकर दार्शनिक तर्क–वितर्क प्रस्तुत किया गया है। वस्तुतः आकाश तत्व विनाशरहित एवं अक्षरब्रह्म से ओतप्रोत है।

'दुर्बलतायाः अभिशापः' प्रस्तुत कथा के माध्यम सेबालकों को उपदेशित किया गया है कि निर्बल प्राणी को सबल प्राणी के साथ कभी भी विरोध भाव नहीं रखना चाहिए नहीं तो स्वयं की ही हानि होती है। जैसाकि पंचतन्त्र में उल्लेख किया गया है–

"अबलः प्रोन्नतं शत्रुं यो याति मदमोहितः।

युद्धार्थं, स निवर्त्तेत शीर्णदन्तो गजो यथा।।"[1]

'ईर्ष्या' प्रस्तुत कथा में दो विद्वान् पण्डितों के स्वभाव का वर्णन किया है। दोनों पण्डित एक–दूसरे से परस्पर ईर्ष्या भाव रखते है। कथा का मुख्य उद्देश्य यह है कि मनुष्य को ईर्ष्या भाव त्यागकर परस्पर मित्रता एवं आदर का भाव ग्रहण करना चाहिए। क्योंकि ईर्ष्या मनुष्य का महान् शत्रु है। जीवनालोक काव्य में ईर्ष्या के प्रभाव के विषय में उल्लेख है–

"ईर्ष्यां वर्जय, रक्ष ध्यानम्
देही न तस्मै हृदये स्थानम्।
ईर्ष्यी क्वापि न लभते शान्तिम्
भजतीर्ष्याऽपि च नो विश्रान्तिम्।
वीक्ष्य परश्रियमुत्कटवेशा
ज्वलयति चान्तः करणं ह्येषा।।"[2]

'जीवन्मुक्तः' प्रस्तुत कथा में यूनान देश के प्रसिद्ध राजा सिकन्दर महान् के राज्य में निवासरत परम त्यागी डायोजिनीयस के जीवन चरित्र का वर्णन किया गया है। **'सिद्धेः किं मूल्यम्?'** प्रस्तुत कथा में स्वामी रामतीर्थ के जीवन चरित्र के माध्यम से बालकों को सफलता के वास्तविक अर्थ से अवगत करवाया गया है। वस्तुतः सफलता वहीं है जो मनुष्य को मनुष्य धर्म का पालन करना सीखाएँ। जो स्वयं के आत्मतत्त्व से परिचय करवा सके।

'यथा अन्नं तथा मनः' प्रस्तुत कथा में अन्न की महता प्रतिपादित की गई है। वस्तुत मनुष्य जैसा भोजन ग्रहण करता है वैसा ही उसका स्वभाव हो जाता है। साधु जब राजप्रसाद का भोजन ग्रहण करता है तो उसमें असत्यता, चौर्यकर्म घृणा इत्यादि अवगुणों का समावेश हो जाता है तथा

1. पंचतन्त्र, मित्रभेद तन्त्र, श्लोक 371, पृ.सं.–322
2. 'जीवनालोकः', पण्डित करुणाकरदाश, काव्य से उद्धृत।

जब वह आश्रम का भोजन ग्रहण करता है तो आगे उसके स्वभाव में सत्य, त्याग, परोपकार जैसे सद्‌गुण परिलक्षित होते है। वस्तुतः भोजन के साथ भाव भी जुड़ा हुआ है। भोजन किस भावना के साथ ग्रहण किया गया है, किस वातावरण में ग्रहण में किया गया है, आदि बातों का सीधा प्रभाव मन पर पड़ता है। **'आहारानुसारं व्यवहारः'** प्रस्तुत कथा का मूलभाव भी यही है कि मनुष्य जिस तरह का आहार (भोजन) ग्रहण करता है। वैसे ही उनके विचार एवं शरीर होता है यदि आहार सात्विक है तो विचार या अन्तःकरण भी शुद्ध ही होगा।

'अभिमानस्य शक्तिः कुतः?' तथा 'अहङकारस्य चिकित्सा' प्रस्तुत कथाओं का मूल भाव यह है कि मनुष्य को कभी भी अभिमान नहीं करना चाहिए। क्योंकि अहङ्कार से मनुष्य की मति शून्य हो जाती है। अह्ङ्कार मनुष्य के अन्तःकरण में विद्यमान अनेक दुःखों की उत्पत्ति का मूल कारण होता है। जीवनालोक काव्य में अहङ्कार के विषय में उल्लेख है–

"अन्धीकरोति चाहंकारः प्राप्ते तस्मिन् नो विस्तारः।
पतनस्यैव स पथ–निर्माता मानवतायाः सोऽपि निहन्ता।।
दूषयति सदा स नर–चरित्रम्।
तत् तं दूरय हृत्तस्त्वरितम्।।"[1]

इसी तरह 'गुरुभक्तिः' कथा में गुरु गोविन्द सिंह के जीवन–चरित से बालकों को उपदेशित किया गया है कि माता–पिता की सेवा करना एवं दीन–दुखियों के प्रति सेवाभाव रखना ही वास्तविक अर्थ में गुरुभक्ति है।

अतः बालकों को भारतीय संस्कृति, परम्परा, नीति एवं जीवनमूल्यों की शिक्षा देने में 'बोधकथा' ग्रन्थ अत्यन्त उपयोगी है।

डॉ. के. वरलक्ष्मी – शिशुस्वान्तम्

डॉ. के वरलक्ष्मी द्वारा अनूदित प्रस्तुत कथा ग्रन्थ में 50 कथाओं का संग्रह है। सम्पूर्ण कथाओं का कथानक काल्पनिक घटनाक्रम पर आधारित है। प्रस्तुत कथाओं का मुख्य प्रयोजन बालकों का मनोरंजन करना है। सम्पूर्ण कथाओं की भाषाशैली बालमनोऽनुकूल, सरल–सरस एवं सम्भाषणात्मक है। कथावार द्वारा कथा में उल्लेखित घटना के अनुरूप कथाओं का नामकरण किया है। यथा 'वर्तुला.......चाणकाः' कथा का नामकरण गोल आकार के चनों के आधार पर रखा गया है। इसी तरह 'विनायकः दृष्टः', 'प्रियसखी', 'पितामह्याः उपदेशः', 'पितामहेन श्राविता कथा', समाचार

1. 'जीवनालोकः', पण्डितः करुणाकरदाश, काव्य से उद्‌धृत।

पत्रवितारकः गोपालः, 'पलायितः मेषः' इत्यादि कथाओं का नामकरण कथा के प्रधान पात्रों के आधार पर किया गया है।

कथाओं की भाषा–शैली अत्यन्त सरल–सरस एवं बोधगम्य है। कथाकार द्वार बालावबोध हेतु लघु–लघु वाक्यों का प्रयोग किया है। ये सम्पूर्ण कथाएँ बालकों को संस्कृत का प्रारम्भिक ज्ञान उपलब्ध करवाती है। कथाकार द्वारा सम्भाषणात्मक भाषा शैली का प्रयोग कथा के प्रवाह को आगे बढ़ाने हेतु अत्यन्त सुन्दरता से किया है, यथा–

'अयि बाले! तव नाम किम्?'
'मम नाम श्वेता।'
'किं पठसि?'
'प्रथमायां कक्षायां पठामि।'
'क्व गच्छसि?'
'पितामह्याः ग्रामं गच्छामि।'
'एकाकिनी गच्छसि किम्?।
'आम्!'[1]

इसी तरह कुछ कथाओं का प्रारम्भ ही सम्भाषणात्मक शैली में पात्रों द्वारा स्वयं के परिचय से होता है। यथा –

"मम नाम राधिका। पंचम्यां कक्षायां पठामि।"[2]
"मम नाम अर्चना। ममसख्याः नाम आरतिः।"[3]
"मम नाम स्वप्ना। छात्रावासे उषित्वा विद्याभ्यासं करोमि।"[4]
"मम नाम गोपालः। पंचम्यां कक्षायां पठामि।"[5]
"मम नाम रम्या। तृतीयाः कक्षायाः उत्तीर्य चतुर्थी कक्षं प्राविशम्।"[6]

इसी तरह 'कः दोषः मया समाचरितः?' तथा, 'अग्रजायाः उपदेशः' कथाओं का कथानक पत्र लेखन शैली में निबद्ध है। लेखक हिन्दी भाषा की पत्रलेखन विधा का अनुसरण करते हुए यहाँ बालकों को प्राचीन भारत में सूचनाओं एवं सन्देशों के आदान–प्रदान के माध्यम के रूप में प्रचलित

---

1. शिशुस्वान्तम्, पृ.सं.–75
2. शिशुस्वान्तम्, कर्मकरी, पृ.–7
3. शिशुस्वान्तम्, पितामही अपेक्ष्यते, पृ.सं.–14
4. शिशुस्वान्तम्, शिष्यवत्सला धात्री, पृ.सं.–12
5. शिशुस्वान्तम्, रहस्यम्!, पृ.सं.–36
6. शिशुस्वान्तम्, विद्यालयस्यूतः, पृ.सं.–64

विभिन्न कल्याण आदायक पत्रों से परिचय करवाता है। 'कः दोषः मया समाचरितः?' कथा में कस्तुरबा गांधी आश्रम में अध्ययनरत अनाथ सुरेखा नामक बालिका परमात्मा को सम्बोधित करते हुए पत्र लिखती है कि मैं अत्यन्त निर्धन हूँ, माता–पिता दोनों नहीं है। अनाथ होते हुए भी यहाँ विद्यार्जन कर रही हूँ। इसमें किसका दोष है?, अतः हे भगवान्! आप इन सबका कारण बताइए। जैसाकि उल्लेखित है–

"प्रियदेवाय नमांसि भूयांसि!
सुरेखाख्याऽहं कस्तूरीबाऽऽश्रमे निवसामि। चतसृषुः कक्षायां
पठामि......। पठनाय विद्यालयं गच्छामि.........। 'कं दोषं समाचरम्?
अत एव हे भगवन्। त्वां प्रति एवं लेखं लिखामि..........।
देवदृष्ट्या सर्वे प्राणिनः सदृशाः इति उक्तिः अस्त्येव..........।
अनाथानां नाथः भगवानेव इति कथ्यते खलु! अस्मदीयाः क्व सन्ति?
त्वदर्थं प्रतीक्षे प्रतिदिनम्।
इति
भवदीया सुरेखा, चतुर्थी कक्षा, कस्तूरिबाऽऽश्रमः।"[1]

इसी तरह 'अग्रजायाः उपदेशः' कथा में ज्येष्ठ बहिन अपने अनुज के कुशलक्षेम पूछने हेतु पत्र लिखती है।

'वर्तुलाः......चाणकाः!' प्रस्तुत कथा में बालक राम की परोपकारिता का सुन्दर वर्णन किया गया है। राम विद्यालय में विलम्ब शुल्क के लिए अपने दादाजी से झूठ बोलकर सौ रुपये ले लेता है। किंतु वह उन सौ रूपयों को याचक एवं निर्धन मित्र भरत के लिए दे देता है। जब दादाजी को राम की इस असत्य बात का पता चलता है तो सर्वप्रथम वह राम पर क्रोध करते है किंतु अगले ही क्षण वह राम के परसेवा भाव से अत्यन्त प्रसन्न होते है। 'वात्सल्यहृदया माता' कथा में लेखिका 'भारयुक्त शिक्षा' के स्थान पर 'भारविहीन शिक्षा' का पक्षधर है। लेखिका भारतीय शिक्षा व्यवस्था का भी विरोध करती है। यथा–

"भारतेतरवासिभिः संस्थापितविद्यालयेषु केवलं शुल्कविषये अमेरिकादेशीयनियमः पाल्यते। विद्याभ्यासस्तु भारायते। पृष्ठभागः वेदनाभरितः अस्ति स्यूतवहनेन।"[2]

लेखिका वर्तमान समाज में विद्यमान नारीगत समस्याओं का भी वर्णन करती है। 'कर्मकरी' कथा में एक ऐसी स्त्री का चित्रण है जो धनाढ्य व्यक्तियों के घर में काम करके भी अपनी पुत्री को

1. शिशुस्वान्तम्, पृ.सं.–67–68
2. शिशुस्वान्तम्, पृ.सं.–6

शिक्षा अर्जन करवाती है। 'शिष्यवत्सलाधात्री' कथा में समाज में विद्यमान धाय माँ की भूमिका का वर्णन किया गया है। इसी तरह 'पितामही अपेक्ष्यते' कथा में पितामही दादी के वात्सल्य भाव का अत्यन्त सुन्दर वर्णन किया गया है– "आरत्याः पितामही सत्यस्वभावा अस्ति। आरतीं स्नापयति। वेणीं रचयति। सुन्दरतया ताम् अलङ्करोति। विद्यालयपुस्तकानि स्यूते स्थापयति। आरतिम् अल्पाहारं भोजयति। अन्नं भोजयति। रात्रौ कथाः श्रावयति।"[1] इसी तरह 'अहो लक्ष्मीः' प्रस्तुत कथा में बाजार में सब्जी बेचने वाली निर्धन स्त्री का अत्यन्त मार्मिक वर्णन किया गया है।

इसी तरह लेखिका बालकों को लोकव्यवहार एवं लोकचेतना का भी सन्देश देती है। 'सङ्घे शक्तिः' कथा में एक शिक्षिका द्वारा प्रेरित करने पर सभी ग्रामीण एकत्रित होकर **ग्रामणी** से अपने परिश्रम का वेतन प्राप्त करने में समर्थ हो पाते है। वस्तुतः इस लोक में सुखपूर्वक जीवनयापन करने के लिए आवश्यक है कि अन्याय का संघटित होकर मुकाबला किया जाए। क्योंकि संघटन में ही शक्ति ही होती है। यथा–सङ्घे शक्तिः कलौ युगे......।

(ग) अनुदित उपन्यास

कु. पराम्बा श्रीयोगमाया –'मृत्युः चन्द्रमसः'

डॉ. गोकुल आनन्द महापात्र द्वारा उत्कल भाषा में लिखित कथाग्रन्थ का कु. पराम्बा श्रीयोगमाया द्वारा संस्कृत भाषा में 'मृत्युः चन्द्रमसः' नाम से अनुवाद किया गया। यह कथाग्रन्थ 2009 ई. में संस्कृत भारती देहली से प्रकाशित हुआ। प्रस्तुत कथाग्रन्थ में 20 वैज्ञानिक कथाओं का संग्रह है। यह पुस्तक बाल–साहित्य को वैज्ञानिक साहित्य में भी परिवर्तित करती है। जनमानस में निवास करने वाला चन्द्रमा किस प्रकार अवसान (मृत्यु) को प्राप्त हो जाता है, यही कल्पना कथाकार द्वारा की गई है। वस्तुतः वैदकालीक पृष्ठभूमिका में कल्पित करके लिखे गए इस कथाग्रन्थ में प्राप्त कथाएँ सर्वत्र प्रचलित है। लेखिका द्वारा यहाँ मोहनजोदड़ों प्रदेश के चन्द्रलोक का भी सुन्दर चित्रण किया गया है। कवि कल्पना करता है कि यदि मोहनजोदड़ों सभ्यता के समय भी मनुष्य चन्द्रमा पर निवास करता होगा तो उनका जीवन किस तरह का रहा होगा।

प्रस्तुत कथाग्रन्थ में लेखक द्वारा पृथ्वीलोक के आधुनिक अमेरिकी एवं भारतीय समाज तथा प्राचीन मोहनजोदड़ों सभ्यता के साथ–साथ चन्द्रलोक की पाँच हजार वर्ष पूर्व की मानव सभ्यता का भी अत्यंत विलक्षण एवं सुन्दर वर्णन किया गया है। कथा का प्रारम्भ अमेरिकी देश के न्यूयार्क प्रांत स्थित केंद्रीय उद्यान के रमणीय वातावरण में प्रधान पात्र रमेशचन्द्र एवं नायिका सेंडी के मनोरम एवं रोचक वार्तालाप से होता है। इसी वक्त नेभाड़–प्रांत में अमेरिकी सामरिक अधिकारियों द्वारा

1. शिशुस्वान्तम्, पृ.सं.–14

चन्द्रलोक से अवतरित किसी 'नवागत' को पकड़ लिया जाता है। वह नवागत केवल वैदिक संस्कृत भाषा में ही बात करने में समर्थ था। आंग्ल भाषा के जानकार अमेरिकी अधिकारी इस प्राचीन आर्य भाषा से अनभिज्ञ थे। अतः नवागत की भाषा के अवबोध हेतु प्रिंसटन विश्वविद्यालय के प्रो. मेकगिल के सुझाव पर योजनान्तर्गत बनारस स्थित हिन्दू विश्वविद्यालय में अध्ययनरत रमेशचन्द्र, वेंकटरमण तथा देशपाण्डेय नामक शोधार्थियों को एक साथ नेभाड़ प्रान्त स्थित सामरिक केंद्र लाया जाता है। वस्तुतः यह तीनों संस्कृत भाषा के अच्छे जानकार थे तथा नवागत की भाषा को समझने में सक्षम थे। रमेशचन्द्र द्वारा नवागत से वार्तालाप करने पर ज्ञात होता है कि वह (नवागत) आज से पाँच हजार वर्ष पूर्व सिंधु नदी के किनारे विकसित मोहनजोदड़ों सभ्यता का अधिवासी है। उसका मूल नाम 'उत्कलावर्त' है। उस समय चन्द्रलोक पर सभ्य तथा विकसित मानव सभ्यता विद्यमान थी। अचानक जल एवं वायु की अल्पता के कारण चन्द्रलोक मृत के समान हो गया। अतः जल एवं वायु के संचय हेतु महाविमान से एक वैज्ञानिक दम्पती (केवलप्राय–शार्ङ्गिना) सैन्धव प्रदेश पर आते है। वह मोहनजोदड़ों के राष्ट्राध्यक्ष की स्वीकृति एवं उत्कलावर्त की सहायता एवं दो वर्ष के अथक प्रयास के उपरान्त वायु एवं जल की अगाध राशि का संग्रहण करके चन्द्रलोक को चले जाते है। उत्कलावर्त के सेवाभाव एवं चन्द्रलोक के राष्ट्राध्यक्ष की स्वीकृति से उत्कलावर्त भी वैज्ञानिक दम्पती के साथ चन्द्रलोक को चला जाता है।

चन्द्रलोक पर आने के छः माह में ही उत्कलावर्त द्वारा विज्ञान, इतिहास, भूगोल आदि विषयों की शिक्षा प्राप्त कर ली है। कथा के माध्यम से ज्ञात होता है कि उत्कलावर्त शाङ्गरीना की बहन रीना से प्रेम करने लगता है किंतु चन्द्रलोकवासी उन दोनों के प्रेम को स्वीकार करने के पक्ष में नहीं है क्योंकि वह दोनों भिन्न–भिन्न लोक से है। साथ ही उनकी भावी सन्तान के प्रजनन में भी अनहोनी की आशंका है। किंतु अंतत दोनों के विवाह को स्वीकार कर लिया जाता है। किंतु होनी को कौन टाल सकता है? रीना के प्रसव के समय उसकी मृत्यु हो जाती है। इस घटना को घटित हुए लगभग 150 वर्ष व्यतीत हो चुके है। दूसरे ग्रह से लौटने के बाद जब उत्कलावर्त को इस दुःखद समाचार का पता लगता है तो वह दुःखी होता है कथा के प्रवाह को आगे बढ़ाने हेतु लेखक पुनः उत्कलावर्त एवं जयशाङ्खा के प्रेम–व्यवहार का सुन्दर वर्णन करता है।

लेखक कथा के प्रवाह के साथ ही रोचक शैली में बालकों के ज्ञानवर्धन हेतु पृथ्वीलोक की सामाजिक–सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के साथ ही मोहनजोदड़ों सभ्यता की सांस्कृतिक स्थिति के बारे में भी वर्णन करता है। आज से पाँच हजार वर्ष पूर्व विकसित मोहनजोदड़ो सभ्यता की आजीविका का प्रमुख स्त्रोत पशुपालन था। उस समय कृषि व्यवस्था उन्नत थी जैसाकि सिंधू सभ्यता के उत्खनन

स्थलों से पता लगता है। इसके साथ ही मोहनजोदड़ों के राजतंत्रात्मक एवं चन्द्रलोक की लोकतन्त्रात्मक शासन व्यवस्था का भी उल्लेख प्राप्त होता है।

लेखक कथा में प्राकृतिक वातावरण के सौन्दर्य का भी कलात्मक वर्णन करता है। कथा में न्यूयार्क के केंद्रीय उद्यान, सैन्धव प्रदेश एवं चन्द्रलोक स्थित 'नन्दन वन' के प्राकृतिक वातावरण का मनोहर वर्णन किया गया है। सैन्धव प्रदेश के सूर्योदय की आभा को देखकर मनुष्य प्रमादित प्राणी के समान व्यवहार करने लगता है– "उषसः अपूर्वेण सौन्दर्येण विमोहिता इव जाताऽस्ति इति। पृथिव्याम् एषः सूर्योदयः वस्तुतः पृथिव्याः अधिवासिनः एव भाग्यशालिनः।"[1] इसी तरह 'नन्दन वन' स्वर्णमयी नगरी के समान अत्यंत विलक्षण एवं आकर्षक है– "विद्यते चन्द्रलोकस्य श्रेष्ठं रमणीयं तपोवनं नन्दनवनम्। तत्र गमनात् दार्शनिकः कवि भूत्वा प्रत्यागच्छति। सङ्गितविषये अनभिज्ञस्य अपि जनस्य कण्ठात् सङ्गीतस्य सुमधुराणि स्रोतांसि प्रवहन्ति। तपोवनस्य अन्धकारं दूरीकर्तुं तपोवने संयोजिताः असंख्याः विचित्रवर्णाः विद्युद्दीपाः नीलहरितपीतादीनाम् आलोकमालानां प्रसारणैः तपोवनं रमणीयम् अकुर्वन्। तत् स्वप्ननगरी इव प्रतीयते स्म।"[2] वस्तुतः नन्दन वन इतना सुन्दर है कि लेखक उसकी रमणीयता को शब्दों में पिरोने में असमर्थ है। इसी प्रकार चन्द्रलोक की राजधानी 'पियूषधारा' सम्पूर्ण सुख–सुविधाओं से सम्पन्न तथा राजप्रासादों से युक्त है। दशमकथा में केवलप्राय के पिताजी द्वारा बालपाठकों को स्वर्ग–नरक, पाप–पुण्य, जीवनमृत्यु, ईश्वर, भगवान एवं आत्मा–परमात्मा के अस्तित्व को लेकर दार्शनिक ज्ञान प्रदान किया गया है। लेखक रोचक शैली में 'वस्तु' शब्द के साथ ही 'वायु तत्त्व' को परिभाषित किया गया है– "यत् दर्शनार्हं स्पर्शनार्हं च, यस्य स्थितिः अनुभवगोचरतां यायात् तदेव वस्तु। भवन्तः किं वायुं न जानन्ति? भवद्भिः श्वासोच्छ्वासाय यः उपयुज्यते, सः एव वायुः नाम।"[3]

लेखक चन्द्रलोक की मानवसृष्टि को पृथ्वीलोक की मानवसभ्यता से पूर्व में उत्पन्न तथा विकसित रूप में वर्णित करता है। चन्द्रलोक पर आज की तरह ही अन्तरिक्ष विज्ञान, प्राणीविज्ञान, कृषिविज्ञान, संचार व्यवस्था, स्थापत्य कला, तकनीकी विज्ञान, भौतिक विज्ञान, भूगोल, पत्रकारिता एवं मीडिया इत्यादि विषय ज्ञान की चरम अवस्था में विद्यमान थे। परिवहन व्यवस्था आज के चीन, जापान जैसे विकसित देशों से भी अधिक उन्नत थी। लेखक द्वारा आनुवांशिक विज्ञान की उन्नत परखनली निषेचन विधि का उल्लेख करता हुआ चन्द्रलोक एवं पृथ्वीलोक के मध्य गुरुत्वाकर्षण शक्ति को ही सम्पूर्ण मानवसंस्कृति एवं चराचर जगत् की उत्पत्ति का एकमात्र कारण मानता है।

1. मृत्युः चन्द्रमसः, पृ.सं.–47
2. मृत्युः चन्द्रमसः, पृ.सं.–81
3. मृत्युः चन्द्रमसः, पृ.सं.–41

यथा– "यतः पृथिव्याः पुरुषस्य पुरुषस्य शुक्राणुः स्त्रियाः डिम्बाणुः वा पृथिव्याः गुरुत्वाकर्षण बलस्य अनुगुणं वर्धनं प्राप्तुम् अर्हति।"[1]

इसी प्रकार पृथ्वी की आयु ज्ञात करने वाली रेडियो एक्टिव विधि से भी पाठकों को अवगत करवाया गया है– "आयुषः निर्द्धारणे सुदक्षाः पंचविंशत्यधिकाः वैज्ञानिकाः परीक्षा कृत्वा स्वाभिप्रायम् अवदन् यत् अस्य आयुः चत्वारिंशत् नाधिकम्।"[2] यह कथाग्रन्थ अन्तरिक्ष के सूक्ष्म विषयों ग्रह–उपग्रह खगोल पिण्डों एवं आइंसटीन के 'सापेक्षता सिद्धान्त' से भी पाठकों को अवगत करवाता है।

लेखक मोहनजोदड़ों सभ्यता एवं चन्द्रलोक के आतिथ्य सत्कार का भी सुन्दर वर्णन करता है। चन्द्रलोक के अधिवासियों के लिए सम्पूर्ण लोक 'वसुधैवकुटुम्बकम्' की भावना से ओतप्रोत है। वह अतिथि को देवता के समान मानते है। लेखक उत्कलावर्त के राष्ट्रीय प्रेम की भावना का भी उल्लेख करता है। उत्कलावर्त मोहनजोदड़ों पर आक्रमण को स्वयं पर आक्रमण समझता था।

कवि द्वारा कथा के प्रवाह की आवश्यकता को मद्देनजर रखते हुए पात्रों का सुन्दर प्रयोग किया है। कथा का प्रारम्भ कथा के प्रधान नायक रमेशचन्द्र एवं नायिका सेण्डी के प्रेमालाप से होता है। इसी प्रसंग में सेण्डी की सहायिका के रूप में मारिया एवं लिज्जा स्त्री पात्रों का भी सुन्दर समन्वय लेखक द्वारा किया गया है। रमेशचन्द्र वनस्पति शास्त्र का शोधार्थी होने पर भी संस्कृत भाषा का अच्छा जानकार है। कथा का प्रमुख पात्र के रूप में यहाँ 'नवागत' के रूप में मोहनजोदड़ों अधिवासी 'उत्कलावर्त' के चरित्र को उपस्थापित किया गया है। रमेशचन्द्र द्वारा उत्कलावर्त की शारीरिक बनावट का सुन्दर वर्णन किया गया है– "सः गौरवर्णः सुदीर्घः प्रशस्तवक्षाः। तस्य नासिका करवालस्य इव तीक्ष्णा। मुखे कृष्णवर्णः वीरकेशाः शमश्रुचा।"[3]

कथा में वेदों के अपौरुषेय का भी उल्लेख किया गया है– "वेदः तु संकलितः न तु रचितः। सः च अपौरुषेयः। संस्कृतभाषा मम मातृभाषा इति।"[4] कथा के पठन से ज्ञात होता है कि कथा में कल्पना लोक का सुन्दर प्रयोग किया है। उत्कलावर्त का मोहनजोदड़ों से चन्द्रलोक को प्रस्थान करना, चन्द्रलोक से जल एवं वायु के संग्रहणार्थ सुरसग्रह को जाना, सुरसग्रह के पाँच वर्षों के अन्तर्गत चन्द्रलोक के पाँच हजार व्यतित हो जाना तथा इसी दौरान चन्द्रलोक की सम्पूर्ण मानव जाति का विनाश होना, अन्ततः उत्कलावर्त का पुनः पृथ्वीलोक पर आना, इत्यादि घटनाओं के प्रवाह में कल्पना का भरपूर प्रयोग किया गया है।

1. मृत्युः चन्द्रमसः, पृ.–91
2. मृत्युः चन्द्रमसः, पृ.–18
3. मृत्युः चन्द्रमसः, पृ.–27
4. मृत्युः चन्द्रमसः, पृ.–14–15

भाषा को अलंकृत करने के लिए उपमा अलंकार की छटा सर्वत्र बिखरी हुई दिखाई देती है यथा– "तस्य नासिका करवालस्य धारा इव तीक्ष्णा।"[1] इसी प्रकार कथा के गूढ़ भावों को अभिव्यक्ति करने वाली 'गागर में सागर' भरने वाली सूक्तियों का प्रयोग भी कथा की विलक्षणता को द्योतित करती है– "समयस्त्रोतः न कमपि प्रतीक्षते इति।" (समय किसी की प्रतीक्षा नहीं करता), प्रमाणं विना कथ्यमाने वचने को विश्वस्यात्। अतः हे रमेश! तुम्हारे द्वारा कही हुई बात पर बिना प्रमाण के कैसे विश्वास किया जाए? वस्तुतः लेखक द्वारा अनूदित यह पुस्तक सरल–सरस एवं मनोरंजक तरीके से बालकों को विज्ञान के गूढ़ ज्ञान को उपलब्ध करवाने में पूर्णतया समर्थ है।

डॉ. गोपबन्धु मिश्र –"कनीयान् राजकुमारः"

बीसवीं शताब्दी के प्रसिद्ध फ्रांसीसी लेखक आन्त्वान द–सेंत एक्जुपेरी का जन्म फ्रांस के लिओ नगर में 26 जून 1900 ई. को हुआ। अपने 44 वर्षीय लघुजीवनकाल में लिओ ने विमानचालक के रूप में कार्य करते हुए अनेक पुस्तकों की रचना की, जिनमें प्रमुख हैं– नाइट फलाइट् (1926ई.) तथा 'विंड् सेंड् एण्ड् स्टार' इत्यादि। 31 जुलाई 1944 ई. की विमान दुर्घटना में लेंओ की मौत हो गई। ओडिसा में जन्में एवं काशी विश्वाविद्यालय से उत्तीर्ण डॉ. गोपबन्धु मिश्र ने 2010 से 2012 ई. तक फ्रांस स्थित सोर्वोन नुवेल विश्व विद्यालय में संस्कृत प्राध्यापक के रूप में कार्य किया। इसी अवधि में डॉ. मिश्र द्वारा 'कनीयान् राजकुमारः' इस फ्रांसिसी भाषा में लिखित पुस्तक का संस्कृतानुवाद किया। लेखक के इस पुस्तक के अनुवाद के पीछे मुख्य उद्देश्य बालकों को फ्रांसिसी लेओं के जीवन वृतान्त से परिचय करवाना है।

लेखक मनुष्य को स्वयं के बचपन के दिनों को याद करवाते हुए लिखता है– "सर्वे प्रौढ़ाः जनाः आदौ बालाः एव तु आसन् किंतु कतिपयाः जनाः एव एतं विषयं स्मरन्ति यत् तेऽपि तस्यां बाल्यावस्थायाम् आसन् इति।" लेखक उत्सर्ग भाग में उल्लेख करता है कि यह पुस्तक मुख्यतः लेओं के बाल्यकाल पर आधारित है–

"लेओंवर्थस्य कृते यदा सः बालः आसीत्।"

प्रस्तुत पुस्तक 27 भागों में विभक्त है। कथा का प्रारम्भ षड्वर्षिय लेओं के बाल्यकाल में घटित कल्पनात्मक अनुभवों से होता है। लेखक ने लेओं के बाल्यकालीन अनुभव को 'अनुभूतसत्यकथा' नाम दिया है। लेओं द्वारा बाल्यकाल में घने जंगल में देखे गए अजगर को पुस्तक में चित्रित करने का प्रयास करता हैं लेओं इस चित्र को 'मम प्रथमं चित्रम्' नाम से सम्बोधित करता है। वस्तुतः यह यथार्थ सत्य है कि बालक सर्वप्रथम लेखनी को पुस्तक पर केवल आड़ी–तिरछी रेखाओं के रूप में ही चलाता है। अतः लेओं द्वारा अजगर का चित्र न बनकर किसी

1. मृत्युः चन्द्रमसः, पृ.–27

हाथी या भेड़ का चित्र बन जाता है। अतः चित्र निर्माण कार्य से हतोत्साहित होकर वह वायुयान चलाने के अभ्यास में संलग्न हो जाता है।

द्वितीय कथा में लेओं अचानक वायुयान दुर्घटना के कारण स्वयं को अफ्रीका महाद्वीप स्थित सहारा मरुभूमि के कठोर वातावरण में प्राप्त होता है। सहारा मरुभूमि की भीषण गर्मी में वह प्यास से व्याकुल हो जाता है तथा जल प्राप्ति के लिए मरुभूमि में सेकड़ों कि.मी. विचरण करता है। इसी समय कल्पना का प्रयोग करते हुए लेखक किसी दूसरे ग्रह के प्राणी को वहाँ उपस्थित कर देता है। वह व्यक्ति एक छोटे राजकुमार के समान प्रतीत हो रहा था। लेखक ने इसी परग्रह प्राणी के आधार पर पुस्तक का नामकरण 'कनीयान् राजकुमारः' रखा है। यथा– "अकस्माद् विद्युता स्पष्ट इवाहम उत्थितः। नेत्रे प्रमृज्य.........स्पष्टं दृष्टं मया मम पुरतः एकः असाधारणतया कनीयान् सखा गाम्भीर्येण सह उपस्थितः। तस्य रूपं स्मृत्वा विशिष्टेन प्रयासेन तस्य यत् चित्रं मया अङ्कितम्........ किन्तु तस्य वास्तविकभव्यतायाः अपेक्षया ममेदम् अङ्कितं चित्रम् अतीव न्यूनम्।"[1]

कनीयान् राजकुमार लेंओ से स्वयं के लिए एक भेड़ का चित्र अङ्कित करने का अनुरोध करता है किंतु लेंओ यह कहकर मना कर देता है कि उसे चित्रकला का ज्ञान नहीं है। किंतु बार–बार अनुरोध करने पर वह भेड का चित्र बनाने हेतु तैयार हो जाता है–

"ततो मया मेषस्य चित्रमेकम् अङ्किकृतम्। नहि नहि! एषः मेषः अतीव रुग्णः। अपरं चित्रम् अङ्कितवान्। एषो मेषो नः अपि तु छागः। एतस्य द्वे शृङगे स्तः....। पुनरेकवारं मेषस्य चित्रम् अङ्कितवान् किंतु.......एषोऽतीव वृद्धो वर्तते। अहं तादृशं मेषं कामये यो दीर्घजीवी स्यात्।"[2]

लेखक प्रस्तुत कथा में बालकों को अभ्यास करने की शिक्षा देता हुआ विपरित परिस्थितियों में भी धैर्य धारण करने हेतु उपदेशित करता है। तृतीय कथा में कनीयान राजकुमार के अधिवास के बारे में उल्लेखित है। वहाँ प्रत्येक वस्तु अत्यन्त क्षुद्र आकार की थी। यथा– "यत्राऽहं वसामि तत्र सर्वं किमपि अतीव लघुकायम एव।"[3]

चतुर्थ कथा में लेखक सौरमण्डल में स्थित ग्रह, उपग्रह, क्षुद्रग्रह उल्कापिण्ड आदि के बारे में वर्णन करता हुआ कनीयान् राजकुमार के ग्रह का नाम उल्लेख करता है। वह 1909 ई. में आविष्कृत बी. 612 अतीव लघुग्रह का निवासी है। लेखक कथा के प्रवाह को निरंतर बनाए रखने हेतु पुनः भेड़ का चित्र उपस्थित कर देता है।

1. कनीयान् राजकुमारः, पृ.सं.–9
2. कनीयान् राजकुमारः, पृ.सं.–12
3. कनीयान् राजकुमारः, पृ.सं.–17

पंचम कथा में लेखक 'बाओबाब' नामक विशाल वृक्ष का उल्लेख करता है– "बाओबाब अफ्रिकादेशे दृश्यभागः विशालाः वृक्षविशेषाः।" यहाँ कनीयान् राजकुमार एक नीतिज्ञ के रूप में व्यवहार करता है– "अहं नीतिवादिरूपेण आत्मनः परिचयं साधयितुं नेच्छामि।"[1]

लेखक बालकों को 'बीज' के रहस्य से अवगत करवाता है– "किन्तु बीजानि तु अदृश्यसि भवन्ति, तानि कोऽपि न पश्यति। यावत्कालं तेषु किंचन् बीजम् आत्मप्रकाशनार्थं निद्रां परित्यज्य जागर्ति तावत्कालं सर्वाणि तानि बीजानि मृत्तिकायाः अधः रहसि शयायानि भवन्ति। तदनन्तरम्....... तदबीजं भूमेः अधः आत्मानं प्रकटयति। किंच..........भूमेः उपरि सूर्यस्य दिशि आत्मानं तनोति।"[2]

षष्ठम कथा में लेखक सौरमण्डल के रहस्य का उल्लेख करता है कि सौरमण्डल में ऐसे अनेक ग्रह है जिनमें एक ही समय अनेकों बार सूर्योदय एवं सूर्यास्त होते है। जैसाकि कनीयान् राजकुमार के निवास ग्रह पर घटित होता है।

"तव लघौ ग्रहे केवलं स्वस्य आसन्दस्य दिशा किंचिदेव परिवर्तनीया भवति। किंच त्वं यावद्वारम् इच्छसि तावद्वारं दिनान्तं सान्ध्यप्रकाशं च द्रष्टुं शक्नोषि।"[3]

लेखक कथा के प्रवाह को पुनः भेड़ के विषय की और मोड़ देता है। यहाँ कनीयान् राजकुमार एवं लेओं के मध्य संवादात्मक शैली में सुन्दर प्रयोग देखने को मिलाता है। यथा– "यदि मेषः अङ्कुरान् खादति तर्हि सः पुष्पिकाः अपि भक्षयेत्? किं ताः पुष्पिकाः अपि सः भक्षयेत् यासु एति कण्टकानि स्युः? तानि कण्टकानि कः उपयोगो भवति? कण्टकानां नास्ति कोऽपि उपयोगः केवलं अपरान् पीडयितुं पुष्पिकाः तानि धारयन्ति।"[4]

अष्ट्म कथा में लेखक कण्टकयुक्त पुष्पिका की सुन्दरता का वर्णन करते हुए उसे सूर्योदय के समान वर्णित करता है– "सूर्यस्य जन्ममूहुर्ते समनन्तरम् एव मम जन्म।"[5] वस्तुतः पुष्प मन को मोहित करने वाली मनमोहिनी के समान अत्यन्त सुन्दर एवं आकर्षक है। वह सूर्योदय के साथ ही नितनूतन वृद्धि को प्राप्त होता है। वह पुष्प निडर है क्योंकि हिंसक जीव भी उसे खाने से डरते है। किंतु वायु का प्रबल वेग उसे डरा देता है। कवि प्रकृति का अत्यन्त मार्मिक वर्णन करता है कि वृक्ष मनुष्य के समान बोलने में समर्थ नहीं होते है, अतः अपनी पीड़ा को भी नहीं बता सकते है। किंतु वृक्षों में वृद्धि, ह्यस, सुगन्ध इत्यादि संवेदनाएँ प्रकट रूप में होती है। यथा– "पुष्पिका अवादीत् अहं व्याघ्रेभ्यः न बिभेमि। किन्तु प्रबलवातप्रवाहाद् मम भीतिरस्ति। वातप्रवाहाद् भयम् वृक्षकस्य कृते तत्त

1. कनीयान् राजकुमारः, पृ.सं.–28
2. कनीयान् राजकुमारः, पृ.सं.–26
3. कनीयान् राजकुमारः, पृ.सं.–31
4. कनीयान् राजकुमारः, पृ.सं.–32
5. कनीयान् राजकुमारः, पृ.सं.–38

कष्टप्रदम् एव। पुष्पिकाणां वचयसि कदापि श्रवणीयानि न सन्ति। ताः केवलं दर्शनीयाः तथा च आघ्रेयाः सन्ति।"[1]

नवम् कथा में लेखक पृथ्वीस्थ भौगोलिक पर्वत, पठार एवं ज्वालामुखी पर्वत श्रृंखलाओं के ज्ञान से परिचय करवाता है–

"सः नियमेन तस्य सुप्तस्यापि आग्नेयगिरेः गर्भं.........उत्तमरीत्या परिष्कृताः आग्नेयगिरयः मन्दं मन्दं ज्वलन्ति कदापि निर्वापिताः न भवन्ति.......आग्नेयगिरीणाम् उद्‌भवः महानसाद धूमनलिकाद्वारा अग्ने उद्‌गमनमिव अस्ति........किंतु तेषाम्.......परिष्कारपूर्वम् संरक्षणाय अस्माकं क्षमता नास्ति,........वयं तेषाम् अपेक्षया अतीव क्षुद्राः स्म।"[2]

वस्तुतः मनुष्य प्रकृति के समक्ष अत्यन्त निर्बल है वह प्रकृति के साथ रहकर तो विकास कर सकता है किंतु प्रकृति का विनाश करके स्वयं का अस्तित्व बनाए नहीं रह सकता है।

लेखक दशमकथा में कनीयान् राजकुमार के निवासग्रह के समीप स्थित लघुग्रहों की विशेषताओं का सुन्दर एवं रोचक वर्णन करता है। लेखक बी. 325 ग्रह पर एक अहंकारी राजा का वर्णन करता है जो रूप, यौवन एवं ऐश्वर्य से सम्पन्न है। लेखक राजतन्त्रात्मक शासन व्यवस्था का वर्णन करते हुए राजा के कर्त्तव्य–अकर्त्तव्य, शासन व्यवस्था एवं राजत्व धर्म का भी वर्णन करता है। वस्तुतः राजा का राजत्व केवल स्वयं के राज्य पर ही नहीं अपितु सम्पूर्ण ब्रह्मण्ड पर उसका राजत्व विस्तृत होता है। लेखक प्रजा को उपदेश देता है कि राजा के वहीं आदेश आज्ञा पालन के योग्य है जो उचित एवं युक्तिसंगत हो। प्राकृतिक नियमों का उल्लंघन करने वाले आदेश कभी भी स्वीकार्य नहीं होने चाहिए–

"एवमेव। यो यथाविधम् आदेशं पालयितुं क्षमः तस्मै यथाविधः आदेशः प्रदातव्यः। योऽधिकारी युक्तियुत्तं विचारम् आश्रयते तस्य आदेशं सर्वे अनुमन्यन्ते। यदि सम्राजः आदेशः त्वरितं पालनीय इति भवान् मनुते तर्हि सम्राजः पक्षतः मम कृते एको युक्तियुक्तः आदेशो निर्गमनीयः।"[3]

एकादश कथा में लेखक लघुग्रह बी. 326 पर निवास करने वाले अहड़कारी पुरुष के दर्प का वर्णन करता हुआ मनुष्यों को लोभ, मोह, मद, अहमभाव को त्यागने का सदुपदेश देता है। वस्तुतः स्वार्थी मनुष्य अन्य प्राणियों से सर्वदा स्वयं के हित की ही कामना करता है। स्वहित एवं स्वकल्याण ही उसके लिए सर्वोपरि होते है–

"मम 'प्रशंसा' इत्यस्याः अयमेवार्थो यत् अहं सर्वतोऽधिकः सुन्दरः मम वस्त्राभूषणं सर्वतोऽधिकम् आकर्षकम्........सर्वतोऽधिको धनवान् किं च अस्मिन् गृहे अहमेव सर्वतोऽधिको बुद्धिमान् पुरुषः इति।"[1]

---

1. कनीयान् राजकुमारः, पृ.सं.–41–42
2. कनीयान् राजकुमारः, पृ.सं.–44
3. कनीयान् राजकुमारः, पृ.सं.–57

द्वादश कथा में लेखक ग्रह बी.327 में निवास करने वाले शराबी का उल्लेख करता हुआ मद्यपान की बुराईयों का उल्लेख करता है। त्रयोदश कथा में लेखक बालकों को एक श्रेष्ठी के व्यवहार से अवगत करवाता है। वस्तुतः धनाढ्य व्यक्ति के लिए धन ही सर्वोपरि होता है। वह दिन–रात क्षीणवान् धन के संग्रह में ही लगा रहता है। उके लिए परिवार, मित्र इत्यादि के साथ परस्पर मधुर आलाप करने का थोड़ा भी समय नहीं है। वस्तुतः मनुष्य को प्रकृति के पदार्थों का आवश्यकतानुसार ही उपभोग करना चाहिए। जैसाकि–उपनिषदों में कहा गया है–

"ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुंजीथा मा गृधः कस्यास्विद्धनम्।।" (ईशोपनिषद, मन्त्र–1)

चतुर्दश कथा में लेखक एक दीपप्रज्वालक मनुष्य के दीप–प्रज्वलन कार्य का उल्लेख करता हुआ बालकों को कर्त्तव्य परायणता की शिक्षा देता है। पंचदश कथा में लेखक एक वृद्ध भूगोलवेत्ता का उल्लेख करता है। वृद्ध पुरुष अन्य ग्रहों से आने वाले यात्रियों से भूगोल सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त करके उसे एक पुस्तक के रूप में अङ्कित करता रहता है। यहाँ भूगोल विषय का अर्थ प्रतिपादित किया गया है–

"सः विद्वान् भौगोलिकः कथ्यते यः सर्वेषां समुद्राणां नदीनां नगराणां पर्वतानां मरुभूमिनां या स्थिति सम्यक् जानाति।"[2]

षोडश कथा में लेखक पृथ्वी की विशालता का वर्णन करते हुए पृथ्वी को अन्य ग्रहों से अधिक विस्तृत एवं विचित्र रूप में वर्णित करता है। लेखक कनीयान् राजकुमार एवं सर्प के पारस्परिक संवाद के माध्यम से पृथ्वी की मनोहरता का वर्णन करता है– "अहो! किं पृथिव्यां कोऽपि मनुष्यः न वसति? एषा मरुभूमिः। मरुभूमौ जनाः न वसन्ति। पृथिवी अतीव विशाला विद्यते। एषः एकः सुन्दरो ग्रहोऽस्ति।"[3]

लेखक मानव समाज के सामाजिक एवं सांस्कृतिक सम्बन्धों को परिभाषित करने वाले 'प्रीणन' शब्द की व्याख्या करता है। वस्तुतः समाज में रहने वाला प्रत्येक प्राणी परस्पर 'प्रीणन्' अर्थात् पारस्परिक प्रेम, सहयोग एवं सम्बन्धों के आधार पर ही एक–दूसरे से जुड़े हुए है। लेखक यहाँ कनीयान् राजकुमार एवं शृंगाल के परस्पर वार्तालाप के माध्यम से 'प्रीणन्' शब्द को परिभाषित करता है–

1. कनीयान् राजकुमारः, पृ.सं.–57
2. कनीयान् राजकुमारः, पृ.सं.–72
3. कनीयान् राजकुमारः, पृ.सं.–82

"शृंगालोऽब्रवीत्–इदानीं मम दृष्ट्या त्वम् एको लघुबालकोऽसि, संसारे विद्यमानेषु इतरेषु सहस्रेषु बालेषु कश्चिदेक इव समानः। त्वयि मम किमपि तात्पर्यं नास्ति, किन्तु त्वं मां प्रीणयसि तर्हि उभयोः आवयोः परस्परम् अपेक्षाभावः उत्पत्स्यते। मम कृते त्वम् अस्मिन् संसारे असामान्यः अद्वितीयश्च भविष्यसि।"[1]

लेखक कहता है कि मनुष्य किसी सम्बन्ध के सारतत्त्व को हृदय से ग्रहण करता है न कि नेत्रों से। लेखक को संदेह उत्पत्ति का कारण मानता है–

"भाषा भ्रान्तिनाम् उत्पादनस्य कारणं भवति। इदानीं ममैतद् रहस्यं तथ्यं तवकृते एतद् अतीव सरलमस्ति, वस्तुतः सारतत्त्वं हृदेनैव द्रष्टुं शक्यते। तद् नेत्राभ्यां निरीक्षितुं नैव शक्यते।"[2] तेईसवी कथा में लेखक आधुनिक विज्ञान के नवीन आविष्कार का वर्णन करता है। लेखक प्यास शांत करने वाली औषधी का उल्लेख करता है। लेखक उल्लेख करता है कि लेओं के पास जीवित रहने के लिए जल की बूंद भी नहीं है। कनीयान् राजकुमार लेओं के मनोभाव को समझकर उसके लिए जल की खोज हेतु मरुभूमि में कई कोस की दूरी तय करता है। लेखक जल की महत्ता प्रतिपादित करता है–

"जलं हृदयस्य कृते महान्तम् उपकारं विधातुम् अर्हति। मरुभूमिः कियति मनोरमा अस्ति। सोऽवदत् मरुभूमिः मह्यं चिरकालात् अतीव रोचते। मरुभूमिं किमपि द्रष्टुं शक्यं न च किमपि श्रोतुं शक्यम्। तथापि तां मौनवृत्तिम् आश्रित्य किमपि स्पन्दितं भवति। किमपि उल्लसमितं भवति।"[3]

इसी तरह लेखक अन्तःकरण की दार्शनिकता का वर्णन करता है– "अस्माकं वासभवनम् आत्मनः गभीरेऽन्तःकरणे एकं गोपायितं रहस्यं संदधाति स्मः।"[4] इसी तरह मानव शरीर को वल्कल वस्त्र के समान कोमल बताया गया है। कथा के अन्त में उल्लेख है कि छः वर्ष के परस्पर मिलाप के बादकनीयान् राजकुमार अपने ग्रह को लौट जाता है। लेओं रात्रि में आकाश में तारों को देखकर अपने मित्र का स्मरण करके दुःखी हो जाता है। लेओं आज भी इसी आशा में आशान्वित है कि कैसे भी करके कनीयान् राजकुमार पुनः लौट आए।

लेखक ने अनुवाद की भाषा को अलंकृत एवं वैचित्र्ययुक्त बनाने हेतु उपमा अलंकार का सुन्दर प्रयोग किया है। यथा– "दीपशिखा इव शयितस्यापि तस्य अन्तःकरणं द्योतयन्ति विद्यन्ते।"[5]

---

1. कनीयान् राजकुमारः, पृ.सं.–91–92
2. कनीयान् राजकुमारः, पृ.सं.–98
3. कनीयान् राजकुमारः, पृ.सं.–105
4. कनीयान् राजकुमारः, पृ.सं.–105
5. कनीयान् राजकुमारः, पृ.सं.–106

"अर्धस्मितं हसतस्तस्य ओष्ठौ किंचिदिव मुकुलितौ आस्ताम्।" [1] "तदा सः हिमखण्डः इव श्वेतः आसीत्।"[2]

इसी तरह कल्पना एवं रोचकता का समावेश करते हुए लेओं के संघर्षमय जीवनगाथा का सुन्दर वर्णन किया गया है।

(घ) अनूदित नाट्यसंग्रह

इसी प्रकार अनूदित संस्कृत बाल–साहित्य की परम्परा में प्रो. ताराशंकर पाण्डेय कृत 'हंसरक्षणम्' (2010 ई.) एवं 'वृक्षरक्षणम्' (2013 ई.) नामक लघु नाटकों को भी सम्मिलित किया जा सकता है। लेखक ने स्वयं प्रस्तुत नाटकों का हिन्दी अनुवाद बाल–प्रवृत्ति को दृष्टि में रखते हुए किया है। इसके अतिरिक्त वर्तमान में संस्कृत की अनेक पत्र–पत्रिकाओं में भी अन्य भाषाओं में लिखित कथा नाटक एवं काव्यों का अनुवाद संस्कृत में किया जा रहा है।

≈≈≈≈

1. कनीयान् राजकुमारः, पृ.सं.–106
2. कनीयान् राजकुमारः, पृ.सं.–115

सप्तम अध्याय

संस्कृत पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित बालसाहित्य की समीक्षा

सप्तम अध्याय

संस्कृत पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित बालसाहित्य की समीक्षा

आधुनिक संस्कृत बाल साहित्य में पत्र–पत्रिकाओं का प्रारम्भ उन्नीसवीं सदी के अन्त एवं बींसवी सदी के प्रारम्भ से माना जाता है। सर्वप्रथम 1853 ई. विद्यार्थी हितों को ध्यान में रखकर दामोदर शास्त्री द्वारा बांकीपुर, पटना से 'विद्यार्थी' नामक मासिक पत्रिका का प्रारम्भ किया गया। इस मासिक पत्रिका में अर्वाचीन नाटक, गीतिकाव्य, कथाग्रन्थ आदि विषयों को सरल–सरस संस्कृत भाषा में प्रकाशित किया गया। यह पत्रिका किशोरावस्था आसीन बालक–बालिकाओं के लिए अत्यन्त लाभकारी साबित हुई। कहा भी गया है–

> **"विद्यार्थी विद्यया पूर्णो भवतात्कुरुतान्नरान्।**
> **विदुषां मित्रवर्गाणां संलापैः सहवासतः।"[1]**

वर्ष 1893 में संस्कृतचन्द्रिका नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ। वर्ष 1897 ई. में यह पत्रिका अप्पाशास्त्री राशिवडेकर के सम्पादकत्व में महाराष्ट्र राज्य के कोल्हापुर से प्रकाशित हुई। संस्कृत साहित्य की नवीन विधाओं में रचित ग्रन्थ, कथा–साहित्य एवं सर्जनात्मक साहित्य, इस मासिक पत्रिका के धारावाहिनी के रूप में प्रकाशित हुये। संस्कृतचन्द्रिका मासिक पत्रिका के प्रकाशन का उद्देश्य निम्नलिखित है– "विना क्लेशमुपदेशं च केवलमस्याः पाठमहिम्ना संस्कृतभाषाभ्यासः दार्शनिकविषयादि–परिज्ञानमानन्दं च निरतिशय इति प्रथमो संकल्पः। सम्प्रति प्रायः सर्वस्मिन्नेव देशे संस्कृतशास्त्रं भाषां च संस्कृतां अनेके समाद्रियन्ते। अपि च इंगरेजिशिक्षिता अप्येनेके परिज्ञातुं शास्त्रीयमर्मार्थमभिषन्ति। किन्तु सम्यगुत्साहाभावात् तत्र ते विफलमनोरथा विषीदन्ति। फलतोऽपि शास्त्रीयमर्मार्थं बोद्धुं सरलसंस्कृतभाषैव सम्यगुपायः।"[2]

संस्कृत के विषय में 'मृत भाषात्व' की भ्रान्ति को दूर करने तथा कशमीर से कन्याकुमारी तक तथा कच्छ से कामरूप तक संस्कृत भाषा का प्रचार–प्रसार करने के उद्देश्य से भी बाल–साहित्य में अनेक पत्र–पत्रिकाओं का प्रकाशन किया गया। सूनृतवादिनी (काशी, 1906 ई.), संस्कृतचन्द्रिका (कोल्हापुर, 1897 ई.), संस्कृतम् (काशी), संस्कृत साकेत (अयोध्या), गीर्वाणभारती

---

1. विद्यार्थी, 2.1–8
2. संस्कृतचन्द्रिका, 1.2

(1915 ई.), संस्कृतरत्नाकर। (जयपुर, 1913 ई.), स्वरमङ्गला (जयपुर), आदि पत्र–पत्रिकाओं का प्रकाशन किया गया।

वर्ष 1930 में पण्डित कालीकुमार त्रिपाठी के सम्पादकत्व में अयोध्या से प्रकाशित 'संस्कृतम्' साप्ताहिक पत्र में राजनैतिक, सामाजिक एवं देश–विदेश की जानकारी के साथ–साथ लघु–कविताएँ एवं सरल–सरस निबन्धों का प्रकाशन किया जाता था। पत्रिका के बाल–विनोद स्तम्भ में बालकों के लिए रमणीय, सरल–सरस तथा मनोरंजक सामग्री का भी प्रकाशन किया जाता था। सम्पादक पत्र में बालकों को कमल मानकर संस्कृतम् पत्र की उपमा सूर्य (सर्वत्र आभा बिखेरने वाला) से देता है–

"विकाशयंश्छात्रसरोजवृन्दान्, पद्यांशुभिः पूर्णसुदीप्तिदीप्तैः।
प्रबोधकृद् द्वादशरूपधारी, विद्योततां संस्कृतसूर्य एषः।।"

भारतीय संस्कृति की प्राणभूत संस्कृत भाषा का प्रचार करने वाले 'संस्कृतम्' नामक साप्ताहिक पत्र का उद्देश्य निम्नांकित रहा है–

"संस्कृतभाषाप्रचारार्थाय पत्रमिदं साकेततः प्रकाशयिष्यते साप्ताहिकरुपेण।"[1]

इसी प्रकार वर्ष 1994 में बेंगलुरु से प्रकाशित 'सम्भाषण–सन्देश' मासिक पत्रिका वर्तमान में प्रकाशित मासिक पत्रिकाओं में श्रेष्ठतम स्थान पर है। सरलता और वर्णन की विविधता से सरोबार यह पत्रिका संस्कृत अनुरागियों एवं बाल–पाठकों के ह्रदय को आह्लादित करती है। डॉ. बलदेवानन्द सागर के अनुसार– "संस्कृतस्य प्रचारार्थं हितसाधनार्थं चात्र विशिष्टाः लेखाः प्रकाशयन्ते, युगपदेव संस्कृतं प्रति जनानामभिरूचिं विवर्धयितुं, बालानां च संस्कृतानुरागिणां संस्कृतप्रवृत्तिं प्रोत्साहितुम् अस्यां कथा–आख्यायिका व्यंग्यलेख–प्रहेलिकादयः प्रकाश्यन्ते।।" [2] 'सम्भाषणसन्देश' मासिक पत्रिका के प्रत्येक अंक में 'बालमोदिनी' शीर्षक में बालकों के ज्ञानवर्धन के लिए कथा लघुकथा एवं प्राचीन ग्रन्थों का ग्रन्थावली रूप में प्रकाशन किया जाता रहा है, जो बालकों के लिए अत्यन्त लाभकारी है।

चन्दामामा (मासिकी)

सम्पूर्ण भारतभूमि में संस्कृतमय वातावरण उत्पन्न करने तथा बालकों में संस्कृत भाषा के प्रति रूचि जाग्रत करने एवं संस्कृत को बोलचाल की भाषा बनाने के उद्देश्य को लेकर प्रसिद्ध विद्वान् चक्रपाणी के संस्थापन एवं नागिरेड्डी के प्रधान सम्पादकत्व में अप्रैल 1984 ई. से सन् 2012 ई. तक लगातार मासिक रूप में 'अक्षरम्' बेंगलुरू से 'चन्दमामा' का प्रकाशन किया जा रहा है।

---

1. संस्कृतम्, 1.1
2. संस्कृत पत्रकारिता, डॉ. बलदेवानन्द सागरः, पृ.सं.–41

'चन्दामामा' पत्रिका न केवल संस्कृत में ही अपितु अन्य भारतीय भाषाओं में भी प्रकाशित होती है। 'चन्दामामा' का व्युत्पत्तिपरक अर्थ है– "चन्दस्य मा चन्द्रमा। चन्दमां माति इति चन्दामामा। चन्दः = चन्द्रः, मा=श्रीः, माति=तोलयति अर्थात् जो चन्द्रमा की आभा के समान सम्पूर्ण मानव संस्कृति को प्रकाशित करने वाली है।" वस्तुतः 'चन्दामामा' संस्कृत पत्रिका प्राचीन भारत की भव्यता एवं तेजस्वी छवि को पाठकों के सम्मुख उपस्थापित करती है, जैसाकि इसके प्रत्येक अंक में उल्लेखित होता आया है–

"प्राचीन भारतस्य भव्यता तथा तेजस्विता चन्दमामायाः।"

चन्दामामा के आमुख भाग में श्रीमान् भगत महोदय ने लिखा है कि– "Children are the real wealth of the nation and for their education and entertainment through stories etc. Good magazines are requaired. CHANDAMAMA has been fulfilling this need very effectively during the last four decads for which it deserves all Praise."[1]

संस्कृत 'चन्दामामा' पत्रिका द्वारा प्राचीन भारत देश के आदिग्रन्थ रामायण और महाभारत के साथ ही वेद् उपनिषद, पुराण, स्मृतियों आदि में उपस्थित निगूढ़ ज्ञानराशि को प्रकाश में लाने का कार्य किया है। आदर्श समाज की स्थापना के लिए आवश्यक नियम–उपनियम एवं जीवनमूल्यों से सरोबार, यह ग्रन्थ हमारी सनातन संस्कृति के परिचायक है।

संस्कृत 'चन्दामामा' के सन् 1984 ई. के अप्रैल माह से दिसम्बर 1984 ई. तक के अंकों में विष्णु के दशावतारों की कथा को सरल–सरस रूप में पाठकों के समक्ष उपस्थापित किया गया है। इसी तरह राम एवं कृष्ण के अवतारों पर आधारित रामायण महाभारत एवं भागवत् गीता के कथात्मक ज्ञान को भी बालकों के समक्ष उपस्थित किया गया है। यह कथाएँ 'विष्णुकथा' शीर्षक से अप्रैल 1984 ई. से मार्च 1985 ई. के मध्य प्रकाशित की गई। इसी प्रकार न्याय, राजनीति एवं विषम परिस्थितियों में सही निर्णय लेने की क्षमता का विकास करने वाले राजा विक्रम एवं मंत्री वेताल की पच्चीस कहानियों से युक्त 'वेतालपंचविंशतिका' ग्रन्थ की कथाओं को अलग–अलग शीर्षकों से पाठकों के समक्ष उपलब्ध करवाया गया है। ये कथाएँ राजा विक्रम की न्याय–शक्ति का बोध करवाती है। बेताल प्रतिदिन एक कथा सुनाता है और अन्त में राजा से ऐसा प्रश्न करता है कि राजा को उसका उत्तर देना ही पड़ता है। सन् 1984 ई. में यह कथाएँ क्रमशः पद्मनाभस्य विवाहः, मनुष्यः शुकः च, श्रावणकथा, बुद्धिपरिवर्तनम्, अत्याशा अनर्थाय, कनकसुन्दरी, भिक्षुकस्यभाग्यम्, स्वालम्बनम्, एवं मन्त्राङ्गुलीयकम् शीर्षकों से प्रकाशित हुई है।

---

1. चन्दामामा, अप्रैल 1984 ई., पृसं.–60

सन् 1985 ई. में जनवरी से दिसम्बर के अंकों में यह कथाएँ क्रमशः योग्यशिक्षणम्, विवाह–सम्बन्धः, चोरः उग्रशीलः, अन्धविश्वासः, चित्तसंस्कारः, कविस्पर्धा, दयालुः दयानन्दः, मन्त्रशक्तिः, शापरहस्यम्, वरपरीक्षा स्वरूपज्ञानम्, महिषदर्शनम् इत्यादि शीर्षकों से प्रकाशित हुई। सन् 1986 ई. में वेतालपंचविंशतिका की शेष कथाएँ क्रमशः नटेशस्य सेवकः, स्वप्नस्य साकारता, निदर्शनम् तथा नागकन्या इत्यादि शीर्षकों से प्रकाशित की गई। इसी प्रकार भारत के मध्यकालीन इतिहास से लेकर अर्वाचीन इतिहास के कतिपय प्रसङ्गों को मुगलशासन, टीपू सुल्तानः, लार्ड बैंटिग, लार्ड डलहौजी, कृष्णकुमारी प्रसङ्ग, आङ्ग्लशासनस्य आरम्भः, सैनिकक्रान्तिः तात्याटोपे कुवरसिंहः च, अधिकार–परिवर्तनम् (ईस्ट इण्डिया कम्पनी से भारतीय शासन ब्रिटिश सरकार के पास आना) के रूप में प्रकाशित किया गया। इसी तरह शिवपुराण के कथानक को सरल–सरस कथात्मक रूप में अप्रैल 1985 से जनवरी 1986 के मध्य 10 अंकों में बाल–पाठकों के समक्ष उपस्थित किया गया।

इसी तरह छठी शताब्दी में मालवा के प्रसिद्ध शासक यशोधर्मन् एवं चन्द्र वर्मा की कथा को 'कास्य–दुर्गम्' शीर्षक से फरवरी 1985 से जून 1986 ई. के मध्य श्रेणीवार प्रकाशित की गई। इसी प्रकार प्राचीन दिव्य–अदिव्य पात्रों की कथा को पुराणगाथावली संक्षेप में प्रस्तुत किया गया, यथा–अन्धकासुर'[1] राजा इन्द्रद्युम्नः[2], अनसूया[3], अरिष्टनेमि[4], कार्तवीयार्जूनम्[5], कचः[6], उर्वशी[7], चोलराजः विष्णुदासः च[8], जयन्ती[9], पुरुवंसी राजा रजि[10], मणिपुराधीश मयूरध्वजः[11], कोशलदेशीय राजा सत्यतपा[12], मुनि जाजिलि[13], महर्षि भृगुः[14]।

इसी प्रकार शिवपुराण पर आधारित भगवान शिव की बाल–लीलाओं का 'शिवलीला' शीर्षक से जून 1986 से सितम्बर 1986 के मध्य प्रकाशन किया गया। रामायण के उत्तर भाग का 'उत्तररामायणम्' नाम से नवम्बर 1986 से निरन्तर ग्रन्थावली रूप में सम्पादन किया गया। इसी तरह चन्द्रगुप्त मौर्य की कथा को 'राक्षसमुद्रिका' काव्यकथा के रूप में पत्रिका में धारावाहिनी रूप में

---

1. चन्दामामा, नवम्बर 1985
2. चन्दामामा, जनवरी 1986
3. चन्दामामा, अप्रैल 1986
4. चन्दामामा, जून 1986
5. चन्दामामा, अगस्त 1986
6. चन्दामामा, सितम्बर 1986
7. चन्दामामा, दिसम्बर 1986
8. चन्दामामा, जनवरी 1987
9. चन्दामामा, फरवरी 1987
10. चन्दामामा, मार्च 1987
11. चन्दामामा, अप्रैल 1987
12. चन्दामामा, मई 1987
13. चन्दामामा, जून 1987
14. चन्दामामा, जुलाई 1987

प्रकाशित किया गया है। वर्ष 1987 एवं वर्ष 1988 के अंकों में कृष्ण की बाललीला एवं सम्पूर्ण इतिहास को **'कृष्णावतारः'** कथा ग्रन्थावली के रूप में सम्पादित किया गया है। हनुमान की बाल लीला एवं जीवन–चरित्र को वर्ष 1991 एवं 1992 के मासिक अंकों में 'वीरः हनूमान्' शीर्षक से ग्रन्थावली रूप में प्रकाशित किया गया है। वस्तुतः संस्कृत चन्दामामा का प्रमुख उद्देश्य संस्कृत के प्राचीन एवं अर्वाचीन साहित्य के साथ ही संस्कृत के कालजयी ग्रन्थों रामायण, महाभारत, पुराण आदि को सरल–सरस एवं कथा विधा में संस्कृत अनुरागियों एवं बाल–पाठकों को रसास्वादन करवाना है।

इसी तरह दिल्ली संस्कृत अकादमी की प्रमुख साहित्यिक पत्रिका 'संस्कृत–मंजरी' का मुख्य उद्देश्य संस्कृत में अधिकाधिक नवीनतम् प्रवृत्तियाँ कथा, लघु उपन्यास, एकांकी, कविता, गीत, लेख, प्रहसन आदि विधाओं को प्रकाशन में लाना है। इसी प्रकार डॉ. धर्मेन्द्र कुमार के सम्पादकत्व में दिल्ली संस्कृत अकादमी से प्रकाशित बाल–पत्रिका **'बाल–चन्द्रिका'** का मुख्य उद्देश्य भी बालकों को विभिन्न विषयों के माध्यम से संस्कृत के प्रति रूचि जाग्रत करना है। बनमाली विश्वाल एवं नारायण दाश के प्रधान सम्पादकत्व में प्रयाग से प्रकाशित संस्कृत–कथा–पत्रिका 'कथासरित्' (2005) के प्रत्येक अंक में कथा लघुकथा, बालकथा, उपन्यास आदि धारावाहिनी रूप में प्रकाशित होते है।

बनमाली विश्वाल के प्रधान सम्पादकत्व एवं धर्मेन्द्र कुमार सिंहदेव के सम्पादकत्व में भोपाल से प्रकाशित समकालिक संस्कृत–कविता–पत्रिका (षाण्मासिकी) **'पद्यबन्धा'** के प्रत्येक अंक में कविता (छन्दोबद्ध कविता, अनूदित कविता, मुक्तक), बालकविता, शिशु–गीत, लोकगीत आदि प्रकाशित होते है। इसी प्रकार ओडिशा से प्रकाशित **'सुवर्णा भगिनी'** बाल–पत्रिका भी बाल–साहित्य के प्रकाशन का प्रमुख पत्र है।

इसी तरह जयपुर से प्रकाशित 'स्वरमंगला' पत्रिका भी संस्कृत भाषा के प्रचार–प्रसार में संलग्न है। पत्रिका का प्रधान उद्देश्य है–

"संस्कृतस्य प्रचार–प्रसारायैव सेयं स्वरमंगला पत्रिका प्रकाश्यते इति सर्वे सुपरिचिता।"[1]

सम्भाषणसन्देशः (मासिकी)

संस्कृत भाषा को जन–मन में लोकप्रिय बनाने के उद्देश्य से सर्वप्रथम हिन्दू सेवा प्रतिष्ठान द्वारा 1981 ई. में 'सम्भाषण आन्दोलन' का सम्पूर्ण भारत वर्ष में आयोजन किया गया। बेंगलुरु में कार्यरत 'हिन्दू सेवा–प्रतिष्ठान् और अधुनातन रूप में, 'संस्कृत भारती' तथा लोकभाषा प्रचार समिति आदि द्वारा संस्कृत पत्रकारिता के अधुनातन स्वरूप को व्यवस्थित और व्यापक बनाकर प्रत्येक संस्कृत अनुरागी को आश्वस्त करने की शृंखला में चमु कृष्णशास्त्री के प्रधानसम्पादकत्व में 1991 ई.

---

1. स्वरमंगला, वर्ष–12, अंक 3–4

में अक्षरम्, बेंगलुरु से 'सम्भाषण सन्देशः' का मासिक प्रकाशन आरम्भ हुआ। 1994 ई. से पत्रिका व्यवस्थित रूप से प्रकाशित होती रही है। 'सम्भाषण सन्देश' मासिक पत्रिका अपनी साज–सज्जा, सरल–सरस एवं विषय वैविध्य के कारण देश–विदेश में बहुत लोकप्रिय है।[1]

वर्तमान में पत्रिका के प्रधान सम्पादक जनार्दन हेगड़े एवं परामर्श मण्डल में डॉ. एच.आर. विश्वास है। पत्रिका में 'बालमोदिनी' शीर्षक के अन्तर्गत लघुकथा, लघुउपन्यास, कथानिका एवं बालग्रन्थों का अनवरत रूप में प्रकाशन किया जाता रहा है। पत्रिका को रोचक एवं ज्ञानवर्धित बनाने के उद्देश्य से इसे अनूदितकथा, एहिहसामः, कथा, कुतुककुटी, गीतम्, ग्रन्थपरिचयः, चाटुचणकः, चित्रकथा, धारावाहिनी, निकषोपलः, पदरंजिनी, प्रतिस्पन्दः, बालमोदिनी, भाषापाकः, रूपकम्, लेखनम्, वार्ताः, विज्ञापिकाः, व्यावहारिकशब्दावली, सम्पादकीयम्, स्तम्भलेखः एवं स्मारं स्मारं सुखिनः स्याम इत्यादि प्रधान विभागों में बांटा गया है। यद्यपि पत्रिका के सम्पूर्ण भाग बालकों को संस्कृत भाषा के गूढ़ अवगाहन के लिए अत्यन्त उपयोगी है, किन्तु फिर भी पाठकों को 'बालमोदिनी' विभाग के तहत बालसाहित्य के क्षेत्र में रचना करने वाले लेखकों एवं उनकी बाल–रचनाओं से परिचित होने का यहाँ सुअवसर मिलता है।

'बालमोदिनी' विभाग के अन्तर्गत अब तक प्रकाशित बाल–रचनाओं एवं बाल–लेखकों का परिचय संक्षेप में प्रस्तुत किया गया है–

बालप्रियः –नमोगुणनिधये![2]

डॉ. रवीन्द्रनाथ गुरुः –भगवान् वेदव्यासः,[3] छित्त्वा मायाजालम्[4], आनुकरणस्य फलम्[5], सार्थकं गीताध्ययनम्[6], अखण्डं ब्रह्मचर्यम्[7], श्रेष्ठः भक्तः[8], तपसः महत्त्वम्[9], साधनाबुद्धिः[10], ऋणं गतजन्मनः[11], कोडरुक्?[12], गोमातुः औदार्यम्[13], क्षणस्थापि सौन्दर्यम्[14]

अनन्तनारायणः –अर्हतासम्पादनार्थम्[15]

---

1. डॉ. बलदेवानन्द सागर, संस्कृत पत्रकारिताः इतिहास एवं अधुनातन स्वरूपः
2. सम्भाषण सन्देशः, सितम्बर 1994
3. सम्भाषण सन्देशः, सितम्बर 1995
4. सम्भाषण सन्देशः, नवम्बर 1995
5. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 1996
6. सम्भाषण सन्देशः, जुलाई 1997
7. सम्भाषण सन्देशः, फरवरी 1998
8. सम्भाषण सन्देशः, जुलाई 1999
9. सम्भाषण सन्देशः, मई 1999
10. सम्भाषण सन्देशः, जुलाई 1999
11. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 1999
12. सम्भाषण सन्देशः, दिसम्बर 20002
13. सम्भाषण सन्देशः, नवम्बर 2003
14. सम्भाषण सन्देशः, अगस्त 2004
15. सम्भाषण सन्देशः, जून 1994

सत्यनारायणः –बालभास्करः[1]

गङ्गाराम शर्मा –विचित्रः आशीर्वादः[2], कैयटस्य निस्स्पृहता[3], विचित्रः उपदेशः[4], देशभक्तिः[5], मातुः निमित्तम्[6], कतमः योग्यः[7], विचित्रवनम्[8], रक्षणीया मानवता[9], सत्यं श्रुयात्, प्रियं ब्रुयात्[10], कलायाः सम्माननम्[11], उदारता[12], फलं परनिन्दायाः[13]

वीणापाणिः ' मरणकारणं किम्[14]

चतुरः टोडरमलः[15]

देवर्षिकलानाथशास्त्री – सहकारस्य महिमा[16]

जनार्दन हेगड़े – गुणाः पूजास्थानम्[17]

पराम्बा क्षीयोगमाया – वन्यपशवः भ्रातरः इव[18]

लक्ष्यपथे बधिरता[19]

डॉ. रामकिशोर मिश्र –सुकन्यया निर्मितः आमलकीप्राशः[20]

लोपामुद्रायाः कण्ठामरणम्[21]

---

1. सम्भाषण सन्देशः, सितम्बर 1994
2. सम्भाषण सन्देशः, नवम्बर 1995
3. सम्भाषण सन्देशः, मार्च 1996
4. सम्भाषण सन्देशः, जुलाई 1996
5. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 1996
6. सम्भाषण सन्देशः, मार्च 1997
7. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 1997
8. सम्भाषण सन्देशः, नवम्बर 1997
9. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 1998
10. सम्भाषण सन्देशः, अगस्त 1999
11. सम्भाषण सन्देशः, दिसम्बर 1999
12. सम्भाषण सन्देशः, जून 2001
13. सम्भाषण सन्देशः, दिसम्बर 2000
14. सम्भाषण सन्देशः, दिसम्बर 1994
15. सम्भाषण सन्देशः, मई 2011
16. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 2004
17. सम्भाषण सन्देशः, नवम्बर 1999
18. सम्भाषण सन्देशः, मई 2007
19. सम्भाषण सन्देशः, सितम्बर 2007
20. सम्भाषण सन्देशः, दिसम्बर 2009
21. सम्भाषण सन्देशः, नवम्बर 2008

नारायणशास्त्री काङ्कर –राजसम्भानम[1]

निस्स्पृहतया श्रेष्ठः कः?[2]

परोपकारी फलविक्रेता[3]

निष्टावान् लभते सिद्धम्[4]

सज्जनदुर्जनौ[5], शृगाली चातुर्यम्[6]

सुहृदयः महाशयः[7]

निगृहीतः कः आसीत्?[8]

देवव्रतशास्त्री – भगवान् किम् अस्ति?[9]

चक्रपाणिः –महार्घं तत्....[10], योग्यता[11]

यत् इष्टं तदेव दातव्यम्[12]

यत् स्वीकृतं तत् न अस्मदीयम्[13]

अक्षपरत्नविजयः, मुनिः –समुचितं मूल्यम्[14], योग्यः उतराधिकारी[15],

उत्तमः सेवापाठः[16], वामे विधौ वांछितम् अप्राप्यम्[17]

---

1. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 2008
2. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 2009
3. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 2009
4. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 2009
5. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 2009
6. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 2009
7. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 2009
8. सम्भाषण सन्देशः, फरवरी 2019
9. सम्भाषण सन्देशः, जून 2009
10. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 2011
11. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 2011
12. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 2011
13. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 2011
14. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 2014
15. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 2014
16. सम्भाषण सन्देशः, फरवरी 2015
17. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 2014

वेंकटरामु, हो.सु. –सिंह विजेता पृथ्वीसिंह[1], किं. वयः?[2], पदार्थ निग्रहात् शान्तिः[3], दानस्य माहात्म्यम्[4], माहात्म्यम्[4], समाजसेवातः एव मम सुखम्[5] देवेन्द्रस्य आशा[6], पादुकामहिमा[7], शिवाजेः औदार्यम्[8]

विद्याप्रिया–कर्त्तव्यपालनसमये तृणायते कष्टम्[9], परिवर्तनम्[10], चण्डालकः[11], भारतस्य अन्तरङ्गम्[12] राष्ट्रस्य कृते[13], धिक् कुटिलनीतिम्[14]

लीलावती– मम दुःखम् अल्पं, तेषां तु महत्[15]

मम नाम 'स्वातन्त्र्यम्'[16]

अभिमानधनो हि धीरः[17]

अहम् अस्मि प्रतिभू...[18]

समचितश्च धीरश्च....[19]

अप्रतिमः देशभक्तः[20]

मातृभूम्यै समर्पणम्[21]

आचरणद्वारा बोधनम्[22]

---

1. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 1994
2. सम्भाषण सन्देशः, फरवरी 1995
3. सम्भाषण सन्देशः, मई 1995
4. सम्भाषण सन्देशः, अगस्त 1995
5. सम्भाषण सन्देशः, मार्च 1997
6. सम्भाषण सन्देशः, अगस्त 1998
7. सम्भाषण सन्देशः, मई 2001
8. सम्भाषण सन्देशः, दिसम्बर 2002
9. सम्भाषण सन्देशः, नवम्बर 1994
10. सम्भाषण सन्देशः, अप्रैल 1995
11. सम्भाषण सन्देशः, फरवरी 1995
12. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 1995
13. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 1996
14. सम्भाषण सन्देशः, मार्च 1997
15. सम्भाषण सन्देशः, नवम्बर 1994
16. सम्भाषण सन्देशः, दिसम्बर 1994
17. सम्भाषण सन्देशः, जनवरी 1995
18. सम्भाषण सन्देशः, फरवरी 1995
19. सम्भाषण सन्देशः, मार्च 1995
20. सम्भाषण सन्देशः, अप्रैल 1995
21. सम्भाषण सन्देशः, मई 1995
22. सम्भाषण सन्देशः, अगस्त 1995

असदृशी गणितप्रतिभा[1]

क्रियासिद्धिः सा वे भवति[2]

सर्वस्वं हि राष्ट्राय[3]

अप्रतिमं पाण्डित्यम्[4]

स्वाभिमानी सङ्गीतज्ञ[5]

सत्त्ववान् मार्गदर्शी[6]

स आसीत् तेजस्वी[7]

लोकसेवा हि जीवनम्[8]

मातृसेवकः[9]

कोल्हटकर म.वि. –कृपालुः पाण्डुरङ्गः[10] दानपरीक्षा[11], अन्नदातुः वृत्तिः[12], शोभते तु शर्करा...[13] किं न उदिते श्रृङ्गे?[14] पापस्य कर्त्ता[15], तृतीयं नेत्रम्[16], त्रयः पाषाणखण्डः[17] कीदृशी माता कीदृशः पिता?[18] आत्मघातिका प्रशंसा[19], सा मंजुला कोकिला[20], मूल्यं दूस्य[21], शापिता पुष्पिकाराज्ञी[22], शङ्करः

---

1. सम्भाषण सन्देशः, सितम्बर 1995
2. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 1995
3. सम्भाषण सन्देशः, नवम्बर 1995
4. सम्भाषण सन्देशः, दिसम्बर 1994
5. सम्भाषण सन्देशः, जनवरी 1996
6. सम्भाषण सन्देशः, फरवरी 1996
7. सम्भाषण सन्देशः, अप्रैल 1996
8. सम्भाषण सन्देशः, मई 1996
9. सम्भाषण सन्देशः, अगस्त 1996
10. सम्भाषण सन्देशः, नवम्बर 1996
11. सम्भाषण सन्देशः, मई 2000
12. सम्भाषण सन्देशः, सितम्बर 2000
13. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 2000
14. सम्भाषण सन्देशः, जनवरी 2001
15. सम्भाषण सन्देशः, नवम्बर 2001
16. सम्भाषण सन्देशः, मई 2002
17. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 2004
18. सम्भाषण सन्देशः, दिसम्बर 2004
19. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 2004
20. सम्भाषण सन्देशः, जून 2005
21. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 2005
22. सम्भाषण सन्देशः, मार्च 2006

करुणाकरः[1], पश्य में रूपाणि[2], अर्थहीनं वस्तुजातम्[3], चरणचिह्नचिन्तनम्[4], अन्तर्भागे क्रियाशक्तिः[5], ताः ताः धूमरेखाः[6], पापफलम्[7], विविक्तं स्थानम्[8], सङ्गात् संजायते कामः[9], सा पुष्परागिणी[10], मधुप्रियःमहर्षिः[11], भवेत् को मुक्तिदायकः[12], प्रार्थनायाः विधिः स्थलं च[13], कुटिलः कूपः[14], मयि ते तेषु चाप्यहम्[15], पठितः पाठः[16]

बनमाली बिश्वाल –अ–आ, इ–ई[17], हसति मम जन्मभूमिः[18] (गीत), अशुभमुखः[19], कुदृष्टिः[20], भ्रान्ततारका[21], रहस्यमयं चित्रम्[22], वंशरक्षा[23], वासुदेवस्य जन्मदिनम्[24], स्वाभिमानः[25], हृदयचौर्यम्[26]

नारायणदास – आर्याम्बा[27], चिन्नामायाः[28]

तत्पत्र....स प्रणयः[29]

---

1. सम्भाषण सन्देशः, जुलाई 2006
2. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 2006
3. सम्भाषण सन्देशः, जून 2008
4. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 2008
5. सम्भाषण सन्देशः, जुलाई 2009
6. सम्भाषण सन्देशः, फरवरी 2010
7. सम्भाषण सन्देशः, जून 2010
8. सम्भाषण सन्देशः, जून 2010
9. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 2011
10. सम्भाषण सन्देशः, सितम्बर 2012
11. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 2013
12. सम्भाषण सन्देशः, अप्रैल 2016
13. सम्भाषण सन्देशः, दिसम्बर 2017
14. सम्भाषण सन्देशः, मार्च 2019
15. सम्भाषण सन्देशः, दिसम्बर 2017
16. सम्भाषण सन्देशः, मार्चा 2019
17. सम्भाषण सन्देशः, विशेषांक 2002
18. सम्भाषण सन्देशः, विशेषांक 2001
19. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 1998
20. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 2004
21. सम्भाषण सन्देशः, विशेषांक 1999
22. सम्भाषण सन्देशः, विशेषांक 2004
23. सम्भाषण सन्देशः, अगस्त 2002
24. सम्भाषण सन्देशः, जून 1999
25. सम्भाषण सन्देशः, विशेषांक 2003
26. सम्भाषण सन्देशः, विशेषांक 2002
27. सम्भाषण सन्देशः, अगस्त 2004
28. सम्भाषण सन्देशः, जून 1996
29. सम्भाषण सन्देशः, विशेषांक 2000

निर्वाणमुत जीवनम्[1]

नीलघोटकारोही[2]

लोपामुद्रा[3]

वाग्दत्ता[4]

श्रावणस्य प्रथमदिवसे[5]

सम्पदानंद मिश्र –कः किं कर्तुं न शक्तः[6]

जय संस्कृतजननी[7]

लालनगीतम् (गीता)[8]

कच्छपशशकयोः कथा[9]

इसके अतिरिक्त विवेकानन्द उपाध्याय (प्रतीच्य दिङ्मण्डलम् कथा), डॉ. विश्वास (पायसप्रहसनम् कथा), मैथिली सीतारामः (कलियुगीयः–हरिश्चन्द्रः), राघवेन्द्रः (अहङ्कारः अपमानाय कथा), कृष्णमूर्तिः (उत्तमः भक्तः कः?), सुकान्तकुमारत्रिपाठी (भवद्वस्तु भवद्गृहे), एम. पूर्णिमा (वास्तविकं वयः), मनोरमा (ब्रह्मणः स्यूतः), सुचेता नवरत्न (स्वर्गप्रवेशः कस्य?), अनिता (सायस्य गुलिका), रूपा वि. (अशोकसुन्दरी), स्नेहलता मुठ्ठे (सत्यपूजनम्), विवेकानन्दः (आत्मबोधः), एम.ए. अनन्तसुदर्शन (यथा सङ्गः तथा...), विजयलक्ष्मीः सारस्वतः (परेषां दुःखं स्वदुःखम्), चन्द्रशेखरः (युक्तिः शक्तेः गरीयसी), कोक्कड वेङकटरमण भट्ट (पापं कुर्वन्ति मानवाः), लता विग (धनं तु तव पार्श्वे अस्ति), डॉ. शशिकला जोशी (क्षुल्लकम्–अपि न त्याज्यम्), नागराजराव, सरोज धनपाल, मनोज भा.व.ना., इत्यादि बाल रचनाकारों ने बाल कथाओं एवं बालगीतों के माध्यम से बच्चों को शिक्षाप्रद बाते कही गई है।

1. सम्भाषण सन्देशः, विशेषांक 2001
2. सम्भाषण सन्देशः, फरवरी 2014
3. सम्भाषण सन्देशः, विशेषांक 2007
4. सम्भाषण सन्देशः, दिसम्बर 2003
5. सम्भाषण सन्देशः, जून 2013
6. सम्भाषण सन्देशः, जनवरी 2003
7. सम्भाषण सन्देशः, मार्च 2014
8. सम्भाषण सन्देशः, अक्टुबर 2003
9. सम्भाषण सन्देशः, अप्रैल 2012

बालसंस्कृतम्

बालकों को संस्कृत भाषा का प्राथमिक ज्ञान उपलब्ध करवाने के उद्देश्य से कविराज वैद्य रामस्वरूप शास्त्री 'आयुर्वेदाचार्य' द्वारा 'बालसंस्कृतम्' पत्रिका का सम्पादन किया गया। यह पत्रिका सरल–सरस एवं मनोरंजनपूर्ण तरीके से बालकों को संस्कृत का प्रारम्भिक ज्ञान सिखाने में अत्यन्त उपयोगी है। इस पत्र में रूचिकर शैली में बालोपयोगी निबन्ध, लेख, प्रहेलिकाएँ तथा लघु–लघु कहानियों का प्रकाशन किया गया है। पत्रिका के उद्देश्य को जैसाकि आमुख भाग में उल्लेखित किया गया है–

"पत्रेऽस्मिन् प्रकाशितसाहित्यं सर्वेभ्यः रोचते विशेषेण विद्यालयीयेभ्यश्छात्रेभ्यः। संस्कृतं नाम मुखं द्वारं वा भारतीयानां विज्ञानानां मन्दिरस्य। यावद् भारतीयश्छात्रा संस्कृतं न पठेयुस्तावद् भारतीयविज्ञानस्य द्वारं वर्तते तेषां कृते विहितम्। अतएव बालकानां प्राथमिकज्ञानमपेक्षते। तेषां कृत एव बालसंस्कृतस्य प्रकाशनं प्रामुख्येव क्रियते।"

तथापि–

"बाले वृद्धे नवे यूनि कुट्यां ग्रामे गृहे पुरे
संस्कृतस्य प्रचाराय प्रभूयाद् बालसंस्कृतम्।।"[1]

अतः जनसाधारण को संस्कृत भाषा के प्रति जाग्रत करने एवं संस्कृत के प्रचार–प्रसार के लिए यह पत्रिका बालकों के लिए अत्यन्त उपयोगी साबित हो सकती है।

सहस्रांशु

बालकों के ज्ञानवर्धन एवं उनको विभिन्न प्रकार के विषयों–विज्ञान, धर्म, वैज्ञानिकों का जीवन चरित तथा सामाजिक विषयों से अवगत करवाने के लिए चित्रात्मक रूप में सहस्रांशु पाक्षिक पत्रिका का प्रकाशन किया गया। प्रस्तुत पत्रिका में बालकों के लिए मनोरंजन प्रधान पर्याप्त सामग्री का प्रकाशन किया जाता है। जैसाकि पत्रिका का उद्देश्य है–"पत्रेऽस्मिन् बालकानां विनोदाय ज्ञानाय च या च सामग्री यानि च चित्राणि प्रकाशयन्ते, ये केचन विचित्राः समाचाराः प्रकाश्यन्ते ते प्रायः बालकानां कृत एव।"[2]

'ज्ञानवर्धिनी'

सत्यव्रत सिंह के प्रधान सम्पादकत्व में लखनऊ से प्रकाशित प्रस्तुत पत्रिका में लखनऊ विश्वविद्यालय में अध्ययनरत छात्रों की लघु रचनाएँ–कथा, लघुकथा, बालगीत इत्यादि प्रकाशित

---

1. बालसंस्कृतम्, 1.1
2. सहस्रांशु 1.1

होती थी, इन रचनाओं के पठन–पाठन से छात्रों के ज्ञान स्तर में वृद्धि एवं उत्साह का संचार होता था। यथा–

संस्कृतज्ञानसंवृद्धयै संस्कृतोद्धारकर्मणे।
छात्राणां च तथान्येषां प्रवृत्तिर्जायतामिति।।

बालसंस्कृतम्

बालकों में संस्कृत भाषा के प्रति रूचि जाग्रत करने एवं उनमें संस्कृत सम्भाषण की क्षमता विकसित करने के उद्देश्य से बालोपकारक, ज्ञानवर्धक एवं मनोरंजक विषयों से युक्त 'बालसंस्कृतम्' मासिक पत्रिका का प्रकाशन उत्तरप्रदेश संस्थान से फरवरी 2011 में प्रारम्भ हुआ। पत्रिका के मार्गदर्शक मण्डल में संस्थान के अध्यक्ष डॉ. वाचस्पतिमिश्र तथा प्रधान सम्पादक सुधि सुकुमार मिश्र है। 'बालसंस्कृतम्' पत्रिका का उद्देश्य है–

"सर्वस्य बालहृदयस्य संस्कृतस्पन्दनं स्वस्य नित्य–दैनन्दिन–जीवने संस्कृतवार्तालापः सरलतया, सहजतया च संस्कृतभाषामाध्यमेन स्वविचारस्य प्रकटनं न केवलं अभिव्यक्तिकौशलस्य अपितु सर्वविधः विकासः च भवतु अतः एषा 'बालसंस्कृतम्' नाम्नी एषा पत्रिका प्रस्तुता। बालस्य इच्छा प्रवृत्तिः संस्कृतभाषासामर्थयम् इत्यादीनां बालमनो–वैज्ञानिकानाम् अंशानां दृष्ट्या लखनऊस्थेन उत्तरप्रदेशसंस्कृतसंस्थानेन अस्याः बालपत्रिकायाः रचना कृता अस्ति।"[1]

प्रस्तुत पत्रिका को बालमोऽनुकूल अलग–अलग विभागों में विभाजित किया गया है। लेखा, कथा पठाम्, एहि हसाम्, गीतं गायाम्, क्रीडां करवाम, पूर्वजानां सुचरितं सुविज्ञानं च, भारतीयलोकव्यवहारं पश्याम्, संरलसंस्कृतं भाषामहै इत्यादि विषयों से सुसज्जित प्रस्तुत पत्रिका बालकों को संस्कृत अभ्यास एवं भारतीय संस्कृति का प्रेरक ज्ञान उपलब्ध करवाने में सर्वथा उपयुक्त है।

'बालप्रकृतिः' शीर्षक में 'विशालप्रसादभट्टः' ने बालकों की मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति को उल्लेखित किया है। लेखक ने बालकों के अन्तर्मन को गङ्गा नदी के जल के समान पवित्र तथा राग, द्वेष से रहित बताया है। बालकों का मन श्वेत कागज के समान अथवा दर्पण के समान विशुद्ध होता है। बालकों का प्रत्येक व्यवहार सभी के प्रति आनन्ददायक एवं प्रेरणादायक होता है। जब बालक एकाग्रचित होकर अपने आस–पास के वातावरण का अवलोकन करता है तभी उसमें चिन्तनशक्ति व कल्पनाशक्ति का विकास होता है। वातावरण के प्रभाव से ही बालकों में शारीरिक, मानसिकः एवं बौद्धिक विकास होता है।

---

1. बालसंस्कृतम् 1.1

वस्तुतः लता के विकास एवं वृद्धि के लिए जैसे आवश्यक पोषक तत्त्वों की आवश्यकता होती है, वैसे ही बालक के आगामी जीवन के विकास के लिए यथोचित वातावरण एवं अच्छी शिक्षा–दीक्षा की आवश्यकता होती है। लेखक लिखता है कि– "बालजीवनम् एवं मानवजीवनस्य आधारशिला भवति। यदि आधारशिला सुदृढ़ा भवति तर्हि सम्पूर्णजीवनं तु स्वयमेव आदर्शमयं, सुदृढ़ं च भविष्यति एव। अतः भारतीय परम्परायां उत्सवाचरणम्, ईशः स्मरणम्, व्रताचरणादिकं च भवति येन बालप्रकृतिः स्वतः विकसिता भवति। सा च भारतीयसंस्कृतेः अनुरूपं सर्वेभ्यः सुसंस्कारयुक्ता, प्रेरणास्पदा, शिक्षाप्रदायिका, मार्गदर्शिका, आदर्शान्विता च भवति। तादृशस्य बालस्य राष्ट्रनिर्माणे महती भूमिका भवति। तदा स्वयमेव अस्माकं राष्ट्रमपि सुदृढं सुरक्षितं च भविष्यति।"[1]

'कुतः शिक्षारम्भः?' लेख में आचार्य धनंजयशास्त्री ने शिशु की मातृशिक्षा का उल्लेख करते हुए माता को बालक की प्रथम शिक्षिका के रूप में वर्णित किया है। लेखक बालक के शिक्षा आरम्भ को बालक के दुग्धपान अवस्था से पूर्व माता के गर्भ से ही स्वीकार करता है। लेखक यहाँ शिशु की शिक्षा व्यवस्था के विकास का उल्लेख करता है। यथा–

"शिशुः प्रयत्नपूर्वकं केवलं रोदनं करोति। ततः जननी एव महत्या प्रीत्या नवजात शिशु दुग्धपानं शिक्षयति। तदनन्तरं व्यवस्थया, अव्यवस्थया वा मातृभाषया, परिवेशभाषया वा बालशिक्षायाः शनैः शनैः विकासः भवति।"[2]

वस्तुतः शिक्षा विशेषज्ञ निरन्तर अपनी विशाल दृष्टि एवं हितचिन्तनवादी दृष्टि से बालकों की शिक्षा व्यवस्था के बारे में सोचते है। वह युक्ति–रीति–नीति–उपाय आदि विषयों के माध्यम से अबोध बालकों की शिक्षा व्यवस्था को लेकर विचार करते है।

'सकारात्मकं चिन्तनम्' [3] लघुकथा में लेखक सतीश शर्मा सतीश एवं अजय नामक बाल–पात्राधारित कथा के माध्यम से बालकों को जीवन में सर्वदा सकारात्मक सोचने हेतु प्रेरित करते है।

परस्परं मैत्री रक्षणीया'[4] लघुकथा में लेखिका पूजा शर्मा परस्पर मित्र दो चूहों एवं बिल्ली की प्रवृत्ति का उल्लेख करती है। कथा में बिल्ली चूहों में युक्तिपूर्वक शत्रुभाव उत्पन्न करके उन दोनों को अवसर प्राप्त करके मार देती है। कथा का भाव है कि कभी भी स्वयं से विपरीत एवं स्वाभाव से ही शत्रु वाले प्राणियों पर विश्वास नहीं करना चाहिए। 'आम्लं द्राक्षाफलम्' (शिशुगीत) में लेखक डॉ. नारायणभट्ट एक भूखी लोमड़ी की कथा को सरल–सरस लय युक्त कविता के माध्यम से प्रस्तुत

1. बालसंस्कृतम्, 1.10
2. बालसंस्कृतम्, 1.13 फरवरी 2011
3. बालसंस्कृतम्, 1.15 फरवरी 2011
4. बालसंस्कृतम्, 1.16 फरवरी 2011

करता है। लेखक लोमड़ी की अंगुरों तक पहुँचने की असमर्थता को सुन्दर शब्दों में वर्णित करता है–

> **"आम्लं द्राक्षाफलम्**
> **आम्लं द्राक्षाफलम्**
> **इत्येवं कथयति, पलायते**
> **इत्येवं कथयति पलाऽऽयते।।"**[1]

'समयः एव जीवनम्'[2] प्रस्तुत लघुकथा में आचार्य नेपालदास एक आलसी बालका का उल्लेख करता है। लेखक यहाँ बालक तथा कोआँ, तोता एवं पिपीलिका (चिट्टी) के परस्पर संवादों के माध्यम से बालकों को जीवन में समय पालन का सदुपदेश देता है। 'कुम्भपर्व'[3] लेख में लेखक भट्टाचार्य महोदय बालकों को प्रयाग में आयोजित 'कुम्भ' मेले की सांस्कृतिक विरासत एवं उसके धार्मिक महत्त्व से अवगत करवाते हैं

संस्कृत प्रतिभा

संस्कृत प्रतिभा केन्द्रीय साहित्य अकादमी द्वारा प्रकाशित एक त्रैमासिक पत्रिका है। यह पत्रिका संस्कृत में समकालीन लेखन को समर्पित है। इसका शुभारंभ सन् 1959 में वी. राघवन के संपादकत्व में हुआ था। वर्तमान में इसके सम्पादक प्रो. अभिराज राजेन्द्र मिश्र है। पत्रिका के प्रत्येक अंक में प्रसिद्ध रचनाकारों के काव्यों के कवितांश, कथा भाग, गीत, छन्दोमुक्त काव्य, नाट्य साहित्य, अनुवाद, उपन्यास, बालकाव्य, शिशुकाव्य एवं किशोरकाव्य प्रमुखतया प्रकाशित किए जाते है। पत्रिका के 72वें अङ्क में शिशुकाव्यालोक भाग के अन्तर्गत डॉ. संजय कुमार चौबे कृत 'बालजिज्ञासा' कविता उद्धृत की गई है जिसका पद्य उल्लेखित है–

> **मातर्बोधय कथं च वर्षाः**
> **जायन्ते सुखदाः सत्यम्?**
> **पुष्पे पुष्पे विविधान् वर्णान्**
> **भरते कश्च गुणी नित्यम्?**

यहां बालक अपनी मां से वर्षा के बारे में प्रश्न करता है। इसी तरह प्रो. अभिराज राजेन्द्र मिश्र कृत 'विहगा एवं भवेम' बाल–कविता भी उल्लेखित की गई है। प्रस्तुत कविता में बालक अगले जन्म में पक्षी बनने की परमेश्वर से प्रार्थना करता है।

---

1. बालसंस्कृतम्, शिशुसंस्कृतम्–गीत पुस्तक से उद्धृत, 1.5
2. बालसंस्कृतम्, 1.2
3. बालसंस्कृतम्, 1.7

संस्कृत प्रतिभा के कुछ अंकों में गुरुवर डॉ. पूर्णचन्द्र उपाध्याय कृत बालकथाएँ भी प्राप्त होती है। जिनमें प्रमुख हैं– "आत्मदीपः श्रेयस्कुर्यात्", 'बन्धनम्', 'वरमेको गुणी पुत्रः', तथा 'प्रतिवेशी'। इन बालकथाओं में कथाकार द्वारा आधुनिक भावबोध का भरपूर प्रयोग किया गया है। यहाँ जीवन की गहन एवं जटिल परिस्थितियाँ, यथार्थता, सामाजिक विडम्बना एवं मानवीय संवेदना के गम्भीर भाव देखने को मिलते हैं। यह बालकथाएँ बालकों के मनोवृत्यात्मक विकास के साथ ही बालकों के सर्वाङ्गीण, सकारात्मक एवं सन्तुलित विकास में भी सहायक है।

'आत्मदीपः श्रेयस्कुर्यात्' प्रस्तुत बालकथा का शीर्षक बौद्धदर्शन के सूत्र वाक्य 'आत्मदीपो भव' अथवा 'अप्पदीपो भव' से ग्रहण किया गया है। जिसका अर्थ है, 'अपना प्रकाश स्वयं बने' अर्थात किसी दूसरे से उम्मीद रखने की अपेक्षा अपनी प्रेरणा स्वयं बनो। प्रस्तुत बालकथा में अभिराजराजेन्द्र मिश्र कृत 'कान्तारकथा' काव्य के पात्र मोगली की घटना के सदृश ही किसी सिंहशिशु की पुरातन घटना का उल्लेख किया गया है। कथा में वर्णित है कि यद्यपि सिंहशिशु का जन्म हिंसक एवं पराक्रमी सिंहनी के गर्भ से हुआ है, किन्तु उसका पालन–पोषण मेष समूह के मध्य होने से उसमें अंतर्निहित स्वाभाविक गुण जैसे पराक्रमशालिता, शिकार करना, दहाड़ना इत्यादि गुण कुछ समय के लिए अचेतन अवस्था में चले गए हैं। कथाकार यहाँ बालमनोविज्ञान के सिद्धान्त के अनुसार वर्णन करता है कि सिंहशिशु के कार्य धीरे–धीरे उसके वातावरण द्वारा प्रभावित हो गए है। वह सिंह शिशु अब भेड़ों के समान ही आचरण करने लग गया था–

"तैः साकं तृणादिकस्य भोजनं, तैः विचरणं संक्रीडनं च इत्यादिकं विधाय स आत्मानं तज्जातीयं नाम मेषशिशुम् अमन्यत। मेषाः यथा आचरन्ति सोऽपि तथैव आचरति। परिणामतः आत्मनः वास्तविकं स्वरूपम् असौ पूर्णरूपेण विस्मृतवान्।"[1] कथा के अन्त में सिंहनी द्वारा सिंहशिशु को उसके वास्तविक स्वरूप सिंहत्व से परिचय करवाने पर पुनः स्वाभाविक व्यवहार करने लग जाता है।

'बन्धनम्' कथा में कथाकार वर्णन करता है कि मनुष्यों में स्थापित रक्तसम्बन्ध से पालित सम्बन्ध (संस्कार) अधिक महत्वपूर्ण होता है। जैसाकि कथा में कमलादेवी–सौरभ–रंजिता के रक्तसम्बन्ध से पालित सम्बन्ध अधिक महत्वपूर्ण है। लेखक चिन्ता व्यक्त करता है कि आज मानव भौतिकवाद से आच्छादित होकर अपने संस्कारों, पारिवारिक उत्तरदायित्व तथा सामाजिक सम्बन्धों को भूलता जा रहा है। पुत्र के लिए माता–पिता की सेवा से अधिक महत्त्वपूर्ण स्वयं का कार्य होता जा रहा है। कथाकार ने 'बन्धनम्' कथा में देशकाल का भी सुन्दर प्रयोग किया है। कमलादेवी के जीवन की वर्षों की घटना को पलभर में ही सम्मिलित कर दिया है। यहाँ समय–सीमा का कोई प्रतिबन्ध नहीं है। कथा के पात्रों की परिस्थितियाँ, वेशभूषा, सामाजिक नियम–न्याय इत्यादि सब

1. संस्कृतप्रतिभा उन्मेष : 61, पृ.–119, अक्टुबर–दिसम्बर 2016

कुछ कथाकार के अधीन है। कथा में शगुनशास्त्र का भी सुन्दर प्रयोग देखने को मिलता है। यथा प्रातःकालीन कौए के काऊँ–काऊँ की ध्वनि से अतिथि आगमन तथा स्त्री की दाहिनी आँख फड़कने से किसी बुरी घटना की सूचना पूर्व में ही मालूम हो जाती है– "प्रातरुत्थाय कमलादेव्याः मनश्चंचलायते काकश्च भवनस्य वलभौ उपविश्य वारं वारं काकेति ध्वनति। येन निश्चीयते यदद्य कस्यचित् समाचारोऽवशयमेव आगमिष्यति। प्रातः आरम्भ्य दक्षिणनेत्रमपि नैकवारं स्फुटितम्। किमप्यहेतुकानिष्टाशङ्कया मनः दोलायितं नितराम्।।"[1]

'वरमेको गुणी पुत्रः' प्रस्तुत कथा का शीर्षक नारायण पण्डित कृत हितोपदेश के मित्रलाभ भाग में उद्धृत निम्नांकित श्लोक से लिया गया है–

"वरमेको गुणी पुत्रो न च मूर्खशतान्यपि।
एकश्चन्द्रस्तमो हन्ति न च तारागणोऽपि च।।"

प्रस्तुत कथा में विधवा सुनयना द्वारा पालित–पुत्र सुबोध को सैकड़ों मूर्ख पुत्रों की अपेक्षा योग्य एवं माता–पिता तथा गुरुजनों की सेवा करने वाले पुत्र के रूप में चरितार्थ किया गया है। सुबोध में माता सुनयना तथा गुरु करुणा के प्रति कृतार्थ भाव दिखाई देता है। विधवा सुनयना सैकड़ों कठिनाईयाँ तथा लोगों के ताने सुनने के बाद भी अनाथ सुबोध का पालन–पोषण करती है तथा उसे उच्च शिक्षा उपलब्ध करवाकर योग्य नागरिक बनाती है।

प्रस्तुत कथा में लेखक विधवा स्त्री के प्रति समाज की कठोरता, अंधविश्वास तथा सामाजिक विडम्बना पर करारा प्रहार करता है। लेखक विधवा सुनयना की दयनीय स्थिति का अत्यन्त मार्मिक वर्णन करता है–

"पितामहीपितामहाभ्यां तेऽहमन्तः सत्त्वाऽपि गृहान्निष्कासिता ताड़नभर्त्सनपूर्वकम्, भृशमहं क्रोशिता च ताभ्यां तदवसरे कुलटा कुलक्षयकारिणी, कुलनाशिका, मानुषराक्षसी चेत्यादिभिः श्रुतिकटुभिः शब्दैः।"[2]

'प्रतिवेशी' – प्रस्तुत कथा में लेखक द्वारा पड़ौसी धर्म का सुन्दर प्रयोग किया है। कथाकार वर्णन करता है कि जिस तरह आज पारिवारिक सम्बन्धों में शिथिलता आ रही है, वहाँ पड़ौसी चतुर्वेदी जी द्वारा जिस तरह एक अभागिनी स्त्री सुदर्शना देवी की मदद की जाती है, वह मानवीय संवेदना एवं पड़ौसी धर्म का एक जीता–जागता उदाहरण है। कथाकार शिक्षा के महत्त्व को भी रेखांकित करता है–

1. संस्कृतप्रतिभा उन्मेष : 50, पृ.–78–79, जनवरी–2014–मार्च 2014
2. संस्कृतप्रतिभा उन्मेष–59, पृ. 107, अप्रैल 2016–जून 2016

"सुशिक्षितेयं सम्यगवजानाति शिक्षायाः महत्त्वम् उपादेयत्वं च। समुपयुक्तया च शिक्षया विना नास्ति व्यक्तेः चरमविकासः।"[1]

कथाकार कथा में रोचकता लाने तथा बालमन को आकर्षित करने हेतु रोचक एवं पारम्परिक सूक्तियों का भी प्रयोग करता है–

"कालस्य कुटिला गतिः।"

"रज्जुच्छेदे घटं कः धारयते।"

"हस्तादुड्डीयमानस्य पक्षिणः पुनः हस्तगतकरणम् असम्भवम् एव।"

वस्तुतः गुरुवर डॉ. उपाध्याय द्वारा लिखित इन कथाओं में मानवीय अमानवीय पात्रों के माध्यम से बालकों को धर्म, व्यवहार, जीवनशैली, पारिवारिक उत्तरदायित्व, कर्त्तव्य–अकर्त्तव्य, सामाजिक कर्त्तव्य, अधिकार, विनम्रता, शिष्टाचार, सिद्धान्त, नैतिकता, सदाचार और समस्त सांसारिक सम्बन्धों को निर्वाह करने की शिक्षा दी गई है।

वसन्त अनन्त गाडगिल के प्रधान सम्पादकत्व में पूना से प्रकाशित 'शारदा' पत्रिका बालकों में निरन्तर संस्कृत भाषा के प्रचार–प्रसार एवं सम्भाषण क्षमता विकसित करने में संलग्न है। पत्रिका का उद्देश्य है– "प्रसाराय संस्कृतध्वजम्। प्रताडय संस्कृतदुन्दुभिम्। पठ संस्कृतम्। वद संस्कृतम्। लिख संस्कृतम्।"[2]

अतः कहा जा सकता है कि संस्कृत भाषा के प्रचार–प्रसार, छात्रों में संस्कृत के प्रति श्रद्धा और आस्था उत्पन्न करने, 'वसुधैव–कुटुम्बकम्' की भावना चरितार्थ करने, साहित्यिक ग्रंथों से अवगत करवाने, विज्ञान और अनुसन्धान के प्रति रूचि जाग्रत करने तथा भारतीय संस्कृति के विशाल स्वरूप से परिचय करवाने में संस्कृत बाल–पत्र–पत्रिकाओं का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। वस्तुतः संस्कृत बाल–पत्रिकाओं ने संस्कृत के विषय में प्रचलित 'मृत भाषात्व' की भ्रान्ति को पाटकर इसको पुनः जीवन्त भाषा बनाने का सार्थक प्रयास किया है। जैसाकि मैक्समूलर का मत है कि संस्कृत का प्रचार भारत में सर्वत्र है। कन्याकुमारी से काशमीर तक, कच्छ से कामरूप तक संस्कृत किसी न किसी रूप में जनसाधारण की भाषा हैं यथा– "Sanskrit may be said to be still the only language that is sopken over the whole extent of the vast country."[3]

≈≈≈≈

1. संस्कृतप्रतिभा उन्मेष–54, पृ. 72, जनवरी 2015–मार्च 2015
2. शारदा, 1.1
3. India what can it teach us..P.No. -71

अष्टम अध्याय

संस्कृत बालसाहित्य का संस्कृत साहित्य एवं समाज को योगदान

अष्टम अध्याय

संस्कृत बालसाहित्य का संस्कृत साहित्य एवं समाज को योगदान

जीवनं जीवनं बालजीवनम्। सुन्दरं सुन्दरं बालजीवनम्।
अत्र तत्र इतस्ततः मनः चंचलम्। सुमधुरमानन्दकं बालभाषणम्।।
अवबोधे अबोधे वा बालचिन्तनम्। मातृपितृमनः सदा बालानुकूलम्।।
क्षणे तुष्टाः क्षणे रुष्टाः क्षणे साधवः। क्षणे क्षणे चपलता परिवर्तिताः।।
इह खलु गुणास्तेषां देवप्रदत्ताः। बालगुणाः प्राकृतिकाः सर्वविदिताः।।[1]

वर्तमान सन्दर्भ में प्रस्तुत यह बालगीत 'बालक' शब्द का अर्थ, बाल–मनोवृत्तियों एवं बाल–संवेदनाओं को परिभाषित करने में पूर्णतया समर्थ है। वस्तुतः बालक में जो गुण परिलक्षित होते है, वह प्रकृति–प्रदत्त है। यथा–चंचल मन, मधुर आलाप, अवबोधता, माता–पिता के प्रति स्वाभाविक प्रेम, क्षणभर में रोना एवं हँसना अथवा चपलता इत्यादि गुण जन्मजात एवं स्वाभाविक होते है।

वस्तुतः बालक ही किसी भी देश का स्वप्न या भविष्य होता है। किसी भी देश की उन्नति उस देश के बालकों पर निर्भर होती है। इसीलिए संस्कृत भाषा में काव्य–रचना करने वाले विद्वानों, रचनाकारों द्वारा वर्तमान की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए तथा बालकों में संस्कृत के प्रति रूचि बढ़ाने हेतु बालकों के कोमल मन के अनुरूप सरल–सरस भाषा शैली में बाल–साहित्य का निर्माण किया गया है। संस्कृत बाल–साहित्य को परिभाषित करते हुए आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी का कथन है–

शिशुं वा बालकं वापि समुद्दिश्य सुगुम्फितम्।
बालभावस्य सहजं सर्वथोद्बोधकारकम्।।
चमत्कारस्य सर्वस्वमद्भुतश्च महारसः।
विचित्रं रमणीयं यत् तथा कौतुकवर्धनम्।।
संविधानस्य चातुर्यं कथायां बुद्धिवैभवम्।
सरवं सरलं छन्दः सहजं लयमिश्रितम्।।

---

1. आचार्य डम्बरुधरपति कृत 'बालजीवनम्' कविता से उद्धृत

आनन्दाद् यत् समुद्भुतं सर्वथानन्ददायकम्।
तदेतद् बालसाहित्यं बालकेभ्यः उदीरितम्।।

अर्थात् संस्कृत बाल–साहित्य रमणीय, मनोहर, हृदयग्राह्य, नूतन, दिव्य–अदिव्य या मानवेतर पात्रों से युक्त, मनोरंजक, शिक्षापरक, रूचिकर, चमत्काराधायक, सरल–सरस–लय युक्त, लोक–कल्याणकारी, अल्पाक्षर, अल्पपात्रों से युक्त, चित्रात्मक तथा बालमनोरूप कल्पनात्मक प्रसगों से आच्छादित होता है। जिस प्रकार संस्कृत साहित्य में वैदिक युग के बाद लौकिक प्रार्दुभाव हुआ था, वैसे ही आज संस्कृत बाल–साहित्य रूपी नवीन युग की उत्पत्ति हो चुकी है। जो संस्कृत साहित्य को नवीन मार्ग की ओर अग्रसर कर रहा हैं।

आज विद्वानों द्वारा बालमन के अनुरूप सरल–सरस भाषा में बालगीत–बालकविताएँ, बाल–कथाएँ, बाल–उपन्यास एवं प्रहेलिकाओं की रचना की जा रही है। जिस तरह वैदिक एवं लौकिक साहित्य के परिशीलन से मानव सृष्टि में नैतिक–सामाजिक–राजनीतिक आर्थिक–आध्यात्मिक जीवन मूल्यों का संचार हुआ है। वैसे ही बाल–साहित्य के प्रार्दुभाव से विशेष रूप से बालकों में सम्पूर्ण मूल्यों का समावेश हुआ है। वर्तमान में बाल–साहित्य के अध्ययन या श्रवण से बालकों में विभिन्न सद्गुणों–दया, परोपकार, करुणा, सत्य, अहिंसा, शांति, मैत्रीभाव, सहयोग–समन्वय तथा राष्ट्रभक्ति का संचार हुआ है साथ ही विभिन्न प्रकार के दुर्गुणों–काम, क्रोध, मद, लोभ,मात्सर्य, हिंसा, कपटाचरण एवं दुराचरण के निवारण करने में भी बाल–साहित्य का अत्यन्त महत्त्व है। वर्तमान दौर में संस्कृत बाल–साहित्य की प्रासंगिकता तथा उपादेयता के कारण ही अन्य विधाओं में साहित्य सर्जन करने वाले कवि या लेखक गण भी बाल–साहित्य विधा में काव्य–सर्जना करने में अपना योगदान दे रहे हैं।

वस्तुतः स्वतन्त्रता आंदोलन के समय को केवल राजनीतिक चेतना के लिए ही नहीं जाना जाता है, बल्कि साहित्य चेतना का कालखण्ड भी कहा जाता है। इसी दौर में बालकों में राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक चेतना जाग्रत करने के लिए बाल–साहित्य के रूप में योग्य साहित्य के सृजन का प्रयास किया गया। जब से संस्कृत भाषा का आंदोलन प्रारम्भ हुआ, तब से ही संस्कृत के भाषा मर्मज्ञों एवं भाषा प्रचारकों ने बालक को केन्द्रबिन्दू मानकर बाल–साहित्य की रचनाएँ लिखना आरम्भ किया। इस परम्परा में पं. वासुदेव द्विवेदी का अवदान बहुमूल्य है। वस्तुतः बाल–साहित्य को संस्कृत की मुख्यधारा में लाने का श्रेय आचार्य वासुदेव द्विवेदी को ही जाता है। आपने साहित्य की सभी विधाओं में बाल–साहित्य की रचना की है। आचार्य बाबूराम अवस्थी ने संस्कृत को समाज से जोड़ने के लिए अनेक सरल–सरस बाल–लोकगीतों का प्रणयन किया। इसी तरह आचार्य वीरभद्र मिश्र द्वारा संस्कृत बाल–साहित्य के क्षेत्र में कविता,

बाल–गीत, नाटक, व्यंग्य, चित्र आदि का प्रणयन किया गया। आचार्य मिश्र द्वारा चल मम घोटक, दुग्धं पिब रे, चलति विडालः आदि लगभग 40 शिशुगीतों की रचना की गई।

इसी प्रकार महाराष्ट्र के कोल्हापुर में जन्में पं. भि. वेलणकर ने बालगीतम्, आन्धप्रदेश में 1930 ई. में जन्में ओगेटे परीक्षित शर्मा ने ललितगीतलहरी एवं परीक्षितनाटकचक्रम्, इच्छाराम द्विवेदी की बाल–गीतांजलि, डॉ. केशवचन्द्रदास का महान, पताका, एकदा काव्य, पं. दिगम्बर महापात्र का रङ्गरुचिरम् व ललितलवङ्गम् गीत–संग्रह, अभिराजराजेन्द्र मिश्र कृत कनीनिका, कौमारम्, कान्तारकथा भी प्रमुख बाल–साहित्य आधारित रचनाएँ है। डॉ. उपदेष्ट वेङकटरमण मूर्ति ने विविध चित्रों तथा रंगों से सुसज्जित सरल–सरस बाल–काव्यों की रचना की है। इनमें– अकबर–बीरबल कथा, तेनालिरामालिङ्गमकथा, जातक कथा, बाल–रामायणम् तथा नीति कथाएँ प्रमुख है। 1934 ई. में पाकिस्तान के अलीपुर में जन्में ओमप्रकाश ठाकुर ने 'इन्द्रधनु' (गीतसंग्रह) तथा ईसपकथानिकु×जम् बाल–पुस्तकों की रचना की। इसी प्रकार नन्दन–पत्रिका में जयप्रकाश भारती ने हिन्दी में बाल–कथाएँ लिखी, जिनका मधुकर शास्त्री ने संस्कृत में अनुवाद किया है। इसी प्रकार डॉ. शशिकान्त तिवारी द्वारा भारत सरकार के 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ', की पहल को साकार करने वाले **'रक्ष कन्यां पाठय कन्याम्'** बाल–काव्य का प्रणयन किया है। यह काव्य बेटी को सृष्टिकर्ता ब्रह्म का रूप बताकर उसे मातृ–स्वरूप संसार को गति देने के रूप में चित्रित करता है। यह काव्य वर्ष 2020 में 'सत्यम पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली से प्रकाशित हुआ है। इसी प्रकार नारी शिक्षा को बढ़ावा देने वाला प्रो. रवीन्द्रकुमार पण्डा कृत 'मलालाचरितम्' काव्य भी प्रमुख है। यह काव्य नारी जगत को संदेश देता है कि जीवन में चाहे लाख कठिनाईयाँ आए किंतु मेहनत से सब कुछ हासिल किया जा सकता है। जैसाकि बालकाव्य का आदर्श वाक्य है– 'श्रमेण लभ्यं सकलं'।

इसी तरह डॉ. राजकुमार मिश्र, प्रो. हरिदत्त शर्मा, डॉ. नवलता शर्मा, शशिपाल शर्मा, राधिका रंजन दाश, बुद्धदेव शर्मा, नारायण दाश प्रभृति साहित्यकारों ने बाल–साहित्य के भण्डार को फलीभूत किया है। केन्द्रीय साहित्य अकादमी ने सन 2010 से मान्यता प्रदत्त 24 भारतीय भाषाओं में बाल–साहित्य को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से बाल–साहित्य पुरस्कार देना प्रारम्भ किया है। बाल–साहित्य के लिए पुस्तकों का चयन संबंधित भाषा चयन समितियों की अनुशंसाओं के आधार पर किया जाता है। पुरस्कार स्वरूप एक ताम्रफलक और 50000 रुपये की राशि प्रदान की जाती है। इस पुरस्कार की परम्परा में अब तक 2010 से संस्कृत भाषा में निम्न साहित्यकारों को बाल–साहित्य पुरस्कार से सम्मानित किया जा चुका है। जिनका नामोल्लेख सारणी में निबद्ध है[1]–

---

1. sahitya-akadami.gov.in/awards/balsahitya/suchi

क्र.सं.	लेखक/काव्यकार का नाम	पुरस्कृत रचना	काव्य विधा	वर्ष
1.	पद्म शास्त्री	संस्कृतथाशतकम्	कथा	2010
2.	अभिराजराजेन्द्रमिश्र	कौमारम् (शिशुकाव्य)	कविता–संग्रह	2011
3.	ओमप्रकाश ठाकुर	ईसपकथानिकुंजम्	कथा	2012
4.	एच.आर. विश्वास	मार्जालस्यमुखं दृष्टम्	नाटक्	2013
5.	जनार्दन हेगड़े	बालकथासप्ततिः	कथा	2015
6.	ऋषिराज जानी	चमत्कारिकः चलदूरभाषः	कथा	2016
7.	डॉ. राजकुमार मिश्र	डयते कथमाकाशे	कविता	2017
8.	डॉ. सम्पदानन्द मिश्र	शनैः शनैः	कविता	2018
9.	संजय चौबे	चित्वा तृणं तृणम्	कविता	2019

डॉ. सम्पदानन्द मिश्र प्रभृति विद्वान आज की प्रासंगिकता के अनुरूप विषयों को ग्रहण करते हुए बाल–साहित्य की विभिन्न विधाओं में काव्य रचना कर रहे है। डॉ. सम्पदानन्द मिश्र का नाम संस्कृत बाल–साहित्य के क्षेत्र में अत्यन्त श्लाघनीय है। डॉ. मिश्र द्वारा आज जिस तरह संस्कृत बाल परिषद् की स्थापना करके बाल–साहित्य सम्मेलनों का आयोजन किया जा रहा है, वह संस्कृत की खोई हुई प्रतिष्ठा को फिर से स्थापित करने में अत्यन्त सराहनीय है। आज संस्कृत बाल–साहित्य परिषद् द्वारा बालकों में काव्य रचना की प्रतिभा का विकास किया जा रहा है। यह साहित्य सन्धान का नवीन युग है। वस्तुतः बालकों में ग्रहण एवं धारण करने की कुशलता पायी जाती है। जैसाकि कहा गया है–

"ग्रहणधारणपटु : बाल :"[1]

संस्कृत बाल–साहित्य का समाज एवं साहित्य के क्षेत्र में योगदान को निम्नांकित पक्षों के आधार पर विश्लेषण किया जा सकता है–

(i) **नैतिक पक्ष** –बाल–साहित्य बालकों में नैतिकता का संचार करता है। नैतिक सद्गुणों से युक्त बालक ही समाज को सुव्यवस्थित कर सकता है। समाज में नैतिक मूल्यों के प्रचार–प्रसार से कुव्यवस्था का निवारण होता है। इसीलिए नीति शिक्षा बालसाहित्य का प्राण है। आज जिस तरह भारतीय संस्कृति में निहित नैतिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है, उसकी पुनर्स्थापना हेतु संस्कार संपन्न बालसाहित्य का होना अत्यन्त आवश्यक है। वर्तमान

1. तर्कसंग्रह, 1

में जिस तरह बालकों में आलस्य रूपी दुर्गुण का समावेश हो रहा है, उस समय बालकों में समय की महत्ता का अवबोध करवाने वाला प्रस्तुत मुक्तक अत्यन्त उपादेय है–

"वृथा न समयं यापय मित्र! वृथा न समयं यापय।
समयापने महती हानि : सर्वजनान् विज्ञापय।।
अपरिमितं हि धनं नहि लोके समयक्रयणे क्वचिद्रक्षमम्।
कालक्षेपं कृत्वा देवोऽपीह न लभते महत् पदम्।
कालं नत्वा यतोऽन्तरिक्षे यशः पताकां स्थापय।।"[1]

इसी तरह भाग्यवाद को त्यागकर कर्मवाद की ओर अग्रसर होने हेतु बालकों को उपदेशित किया गया है–

"दैवे न रोदनीयं व्यसनं विसर्जनीयम्।
तन्द्रां विहाय लोके वीर्यं समर्जनीयम्।।"[2]

वस्तुतः बाल–साहित्य बालकों में 'कर्मण्यवाधिकारस्ते' की भावना का संचार करता है। वर्तमान में जिस तरह मनुष्य भौतिकतावाद से आच्छादित होकर अपने जीवन के लक्ष्य को भूल रहा है। ऐसे समय 'अनुशासनम्' कविता बालकों के जीवन को अनुशासित करने में अत्यन्त प्रासंगिक है–

"मा कुरु दर्पं मा कुरु गर्वम्
मा भव मानी मानय सर्वम्
मा भज दैन्यं मा भज शौकं
मुदितमना भव मोदय लोकम्।
मा वद मिथ्यां मा मद व्यर्थं
न चल कुमार्गे न कुरु अनर्थम्।।"[3]

इसी तरह 'सफलाः वयं भविष्यामः' बाल–कविता बालकों को निरन्तर जीवन–पथ पर आगे बढ़ाने में अत्यन्त उपयोगी है–

"सफलाः वयं भविष्यामः
एकस्मिन् दिवसेऽवश्यम्।
दृढोऽयं मम विश्वासः
ध्रुवोऽयं मम विश्वासः।।"[4]

---

1. चित्वा तृणं तृणम् 'बालकाव्य', डॉ. संजय कुमार चौबे, पृ.सं.–54
2. चित्वा तृणं तृणम् 'बालकाव्य', डॉ. संजय कुमार चौबे, पृ.सं.–66
3. 'बालकवितावलि द्वितीय भाग, आचार्य वासुदेव द्विवेदी
4. 'बालगीतम्–अंकगीतम्' काव्य से उद्धृत, डॉ. कृष्णलाल,

वस्तुतः यह बालकविता लेखक गिरिजाकुमार माथुर द्वारा लिखित 'हम होंगे कामयाग' बालगीत का संस्कृतानुवाद है, जो बालकों में दृढ़ कार्यभावना जाग्रत करती है।

इसी तरह बाल–कथा विधा में भी बालकों के भावी जीवन को सफल बनाने हेतु विभिन्न नैतिक मूल्यपरक बालकथाओ का सर्जन किया गया है। 'सरलता' बालकथा बालकों को जीवन में उदारता एवं सद्व्यवहार करने का, 'विनयः विधेयतायाः' बालकथा विनम्र आचरण करने का, 'संकल्पमात्रेणकिम्?' बालकथा दृढ़ संकल्प भाव का, 'अपरिग्रहशीलता' बालकथा सन्तोष प्रवृत्ति अपनाने की शिक्षा देती है।[1]

वस्तुतः आज जिस तरह बालकों में असत्य बोलने एवं चोरी करने जैसे दुर्गुणों का समावेश हो रहा है, उस समय बालकों में सत्यनिष्ठता का संचार करने वाली यह कविता प्रशंसनीय है–

"सृष्टेः सृष्टं सर्वमसारम्
अवेहि सत्यं शाश्वत सारम्।
सत्यबलेन हि धरणी रम्या–
राजति दानव बलै–रदम्या
सत्याश्रयिणं काऽपि न भीतिः
एषा जगतो निश्चल–नीतिः।
सत्यपरायण इह संसारे
भास्वानिव संभाति मुरारेः।"[2]

जिस तरह वर्तमान समाज में सर्वत्र स्वार्थ का बोलबाला देखा जा रहा है, उस समय 'लोभः न कर्तव्यः' कथा में लेखक वृक्षों की उदारता एवं परोपकारी भाव के माध्यम से बालकों में सद्चरित्रता का सन्देश देते हैं–

"मातरं पितरं पुत्रं भ्रातरं वा सुहृत्तमम्।
लोभाविष्टो नरो हन्ति स्वामिनं वा सहोदरम्।।"[3]

वस्तुतः आज लोभ के वशिभूत होकर माता–पिता, भाई–बहिन, स्वामी–सेवक के मध्य परस्पर नफ़रत का वातावरण पांव–पसार रहा है उस समय उदारता एवं परोपकार भाव से युक्त बालकथाएँ अत्यन्त उपादेय है।

---

1. बालकथासप्ततिः, जनार्दन हेगड़े
2. जीवनलोक काव्य से उद्धृत, पण्डित करुणाकर दाश
3. सुकान्तकथाविंशति काव्य, प्रो. सुकान्तकुमार सेनापति, पृ.सं.–79

(ii) **सामाजिक पक्ष** –वर्तमान समाज में जिस तरह मनुष्य–मनुष्य के मध्य परस्पर सहयोग–समन्वय, परस्पर भाईचारा, लोककल्याण तथा ऐक्य–भावना का ह्रास होता जा रहा है, ऐसे समय संस्कृत बाल–साहित्य भारतीय संस्कृति के सामाजिक मूल्यों को जीवंत बनाए रखने में अत्यन्त उपयोगी साबित होगा, ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है। आज समाज में जिस तरह परस्पर धार्मिक वैमनस्य का वातावरण निर्मित हो रहा है उस समय ''सर्वधर्मसमभावः'' बालगीत बालकों एवं सम्पूर्ण मानवसृष्टि को सर्वधर्म समभाव का सामाजिक उपदेश देने में अत्यन्त प्रासंगिक है–

"एकस्यैव जगन्निर्मातुः
सृष्टिरियं सुविशाला।
ख्रिस्तीये धर्मेऽसौ गौड़ः
इस्लामेऽलाताला।।
सिक्खसम्प्रदायेऽसौ ख्यातः
वाहे गुरुरितिनामा।
बौद्धे जैने मते बोधि
सत्त्वस्तीर्थङ्करधामा।।"
सर्वधर्ममूलतां विभर्ति
किन्तु वैदिको धर्मः।
यस्मिन् सर्वधर्मसमभावः
पुरुषार्थोऽसौ परमः।।"[1]

इसी तरह बालकों में एकता की भावना का संचार करने वाली 'पिपीलिका' बालकविता भी अत्यन्त उपादेय है। कवि यहाँ एक सूक्ष्म 'पिपीलिका' के माध्यम से संघटित रहकर बालकों को लक्ष्य प्राप्ति हेतु उपदेशित किया गया है–

"पिपीलिका सम्पश्यतु बन्धो
संघे याति सदा मुदिता।
शिक्षयतीव सखे लघुदेहा
संघे निवसतु सा तृषिता।।"[2]

---

1. कौमारम्, प्रो. मिश्र, पृ.सं.–10
2. बालगुंजनम्, डॉ. अरविन्द कुमार तिवारी, पृ.सं.–43

वर्तमान में जिस तरह तनाव या किसी प्रकार की असफलता के कारण सामाजिक परिस्थितियों में तीव्र गति से बदलाव आ रहे है, उसके कारण समाज में आत्महत्या एवं अव्यवस्था जैसे सामाजिक दुष्परिणाम उत्पन्न हो रहे है। ऐसी परिस्थितियों में ''चित्वा तृणं तृणम्'' बालकविता पक्षियों के माध्यम से सीखने एवं निरंतर मेहनत करने की शिक्षा देती है–

"चित्वा तृणं तृणं रचयन्ति नीडकं
स्पर्धां प्रकुर्वते वायुना समम्।
स्वतन्त्रमानसाः प्रफुल्लिताः खगाः
मधुरकलरवैः शुभमीश्वरं भजन्ते।।"[1]

इसी तरह अभिराजराजेन्द्र मिश्र द्वारा 'अभिनवपंचतन्त्रम्'' कथा काव्य में समाज में विद्यमान भ्रष्टाचार जैसे सामाजिक समस्या को भी पुरजोर तरीके से समाज के सामने रखा है। 'उत्कोचकीटाधिकारिकथा' में कवि द्वारा चकबन्दी अधिकारी या आधुनिक पटवारी तन्त्र द्वारा काम के बदले में ली जाने वाली भारी–भरकम घूस से भी अवगत करवाया है। कवि ऐसे घूसखोर प्राणियों को विधाता द्वारा सृजित किसी विलक्षण जीव की संज्ञा देता है। यथा–

"नाकारणं दंशमुपैति सर्पो
न चापि घातं वसुधा विधत्ते।
अकारणं वैरमुपेत्य जीवन्
विलक्षणौ धातृकृतौ स कश्चित्।।"[2]

प्रस्तुत श्लोक में कवि भ्रष्टाचारियों को बिना किसी कारण के दंश पहुंचाने वाले सर्प की संज्ञा देता है।

'अभिनवपंचतन्त्रम्' में वर्णित 'दुर्हृद्वणिक्कथा'[3] एवं 'सुहृद्वंचनाकथा'[4] के माध्यम से कवि वर्तमान में मानव समुदाय को समानता एवं सम्भाव का सन्देश देते हुए समाज में निहित ऊँच–नीच, जाति–पाति, शोषक–शोषिक तथा अमीर–गरीब जैसी सामाजिक कुरीतियाँ एवं भेदभाव का भी वर्णन करता है। वस्तुतः धन का लोभ मानव को दानव बना देता है। धनाढ्यों के लिए धन ही सर्वस्व होता है। इसी तरह 'वृद्धबलिनिवारणकथा' के माध्यम से कथाकार आदिवासी समाज में प्रचलित बलिप्रथा का घोर विरोध करता हुआ उसके निवारण का पुरजोर समर्थन करता है। वस्तुतः मानव

1. चित्वा तृणं तृणम्, डॉ. संजय कुमार चौबे, पृ.सं.–34
2. 'अभिनवपंचतन्त्रम्', प्रो. मिश्र, पृ.सं.–58
3. 'अभिनवपंचतन्त्रम्', प्रो. मिश्र, पृ.सं.– 32
4. 'अभिनवपंचतन्त्रम्', प्रो. मिश्र, पृ.सं.– 39

समाज में प्रचलित बलि–हत्या, मृत्युभोज, डाकण प्रथा, सति प्रथा या भूत–प्रेत जैसे आडम्बरों एवं अंधविश्वासों को समाप्त करने में यह कथा अत्यन्त प्रासंगिक एवं उपादेय है।

(iii) **आध्यात्मिक पक्ष** –इसी प्रकार बालसाहित्य बालकों में ध्यान, प्रार्थना और चिंतन जैसे आध्यात्मिक पक्षों का संचार करता है। वस्तुतः ध्यान का संबंध किसी धर्म विशेष से नहीं है। ध्यान बालकों को अपने अन्तःकरण में निहित आत्मिक रूप को जानने में मदद करता है। अपने आत्मिक स्वरूप को जान लेने पर बालक प्रभू की अद्‌भूत शक्ति को समझने में भी सक्षम बनता है यथा 'परमेश्वरं न तं जानीथ' बालगीत बालकों को ईश्वर की अपरिमित शक्ति से अवगत करवाता है। इसी तरह 'परमेश्वरं य एकं पश्यति' बालगीत के माध्यम से कवि परमेश्वर के एकत्वभाव की सुन्दर व्याख्या करता है–

"परमेश्वरं य एकं पश्यति
स भवति सुखी निकामम्।
जगदखिलं स्वककुटुम्बं मनुते
समंजसंज ललामम्।।"[1]

आज समाज में लोभ एवं स्वार्थ जैसी अनुचित मनोप्रवृत्तियों का बोलबाला बढ़ता जा रहा है। व्यक्ति किंचित् वस्तु का भी त्याग नहीं करना चाहता है। ऐसे समय मेवाड़ महाराणा राणा लाखा की भीष्म प्रतिज्ञा युक्त 'चण्डप्रतिज्ञः चन्डः' बालकथा वर्तमान समाज में अत्यन्त उपयोगी है।

इसी तरह ''सत्यकामजाबालः''[2] बाल एकांकी बच्चों के मन में मातृभक्ति तथा सत्य के प्रति अविचल निष्ठा का भाव भरती है। वस्तुतः आज जिस तरह समाज में स्वार्थसिद्धि का वातावरण सर्वत्र फैल रहा है, उस समय स्वयं सिद्ध, स्वयंप्रभ एवं स्वावलम्ब गुणों से युक्त प्रस्तुत बाल–एकांकी अत्यन्त उपादेय है।

(iv) **पर्यावरणीय पक्ष**–मानवपर्यावरण वर्तमान समय का बहुचर्चित एवं अत्यन्त प्रासंगिक विषय है इससे मन, शरीर, समाज व प्रकृति प्रभावित होती है। आज जिस तरह मानव भौतिकतावाद का सहारा लेकर पर्यावरण का विदोहन कर रहा है, ऐसे समय मानव संस्कृति को अरण्य–संस्कृति अर्थात वन में निवास करने वाले प्राणियों–जीव जंतुओं से सीखने की अत्यन्त आवश्यकता है। 'कान्तारकथा' काव्य में वर्णित प्रसंग अत्यन्त उपयोगी है–

---

1. कौमारम्, प्रो. मिश्र, 2008 ई.
2. 'नाट्‌यनवग्रहम्', प्रो. मिश्र, पृ.सं.–47 सन 2007 ई.

"अद्य न केवलमस्माकं हृदयस्पन्दभूतो मौद्गलिरेव बन्धनादुन्मोचितोऽपितु शतमिता अत्रत्या एव सदस्या अपि विमोच्य स्वगृहमानीता ये पूर्वं षड्यन्त्रदक्षर्मानवैर्निगृहीता आसन्। चिरकालानन्तरं ते द्रक्ष्यन्ति स्वकुटुम्बिन इत्यहो महदाश्चर्यम्। अतः बन्धनं न सहामहे।"[1] इस प्रकार कान्तारकथा जंगली पशुओं पर हो रहे मानवीय अत्याचारों के विरुद्ध उनके सफल मुक्ति आन्दोलन की गाथा है।

इसी प्रकार ''श्वेतोद्धारः' बाल एकांकी बालकों को शिक्षा देती है कि मनुष्य को मात्र अपने सुख के लिए जीवित नहीं रहना चाहिए। वस्तुतः सम्पूर्ण पर्यावरण हमसे सम्पृक्त है, अतः हमें अपने परिवेश में स्थित पशुओं, पक्षियों तथा वनस्पतियों का भी भरण–पोषण करना चाहिए, तभी सार्थक हो सकेगा हमारा जीवन।

आचार्य बनमाली विश्वाल ने 'वृक्ष' कविता में वृक्ष को साक्षात् धर्म का प्रतिक बताया है क्योंकि जिस तरह धर्म मनुष्यों के जीवन को सत्य एवं न्याय के आधार पर धारण करता है, वैसे ही वृक्ष भी विभिन्न प्राकृतिक बाधाओं को सहन करता हुआ मानव का कल्याण करता है। फिर भी आज प्रकृति दुःखी है, कवि वृक्ष की वेदना का उल्लेख करता है–

"दुःखानि ते न कान् व्यथयन्ति
वृक्षस्य किं सुखं भवेत्।
अपि काचित् तस्यापीह व्यथा
स्वकृतेऽत्र सम्वेदना नूनं स्वपनापिता।।"[2]

प्रो. राजेन्द्र मिश्र ने 'कौमारम्' (शिशुकाव्य) के अन्तर्गत मेघ, नदी, वायु, वर्षा, ग्रीष्म ऋतु, नदी, पर्वत, पहाड़, निर्झर, वृक्ष, वन्य पशु इत्यादि प्रकृति के अनेक तत्वों से बालकों का ज्ञानवर्धन किया है। त्रिवेणी कवि का यह प्रयास पर्यावरणीय ज्ञान का प्रचार–प्रसार करने में अत्यन्त प्रशंसनीय है।

डॉ. उर्वी द्वारा 'वृक्षसंवेदनम्' कविता के माध्यम से वृक्षों की सजीव संवेदना से मानव संस्कृति को परिचय करवाते हुए पर्यावरण दोहन जैसे गंभीर विषय को भी पाठकों के समक्ष रखा है–

सजीवं चिन्तयेद् वृक्षं निर्जीवं न कदाचन्।
रक्षन्तु मानवा सर्वे तरुन् सम्भूय सर्वथा।।

वस्तुतः लेखिका द्वारा यहाँ वृक्षों के मानवीकरण के माध्यम से इक्रोचमेंट के मर्म को बाल–मानस पटल तक पहुँचने का सार्थक प्रयास किया है। इसी तरह म.वि. कोल्हटकर द्वारा अपनी

---

1. 'कान्तारकथा', प्रो. मिश्र, पृ.सं.–83–84, सन 2009 ई.
2. 'वृक्ष' कविता से उद्धृत, प्रो. बनमाली बिश्वाल

रचना 'कथाकुसुमानि'[1] में पर्यावरणीय ज्ञान से युक्त बालोपयोगी कथाओं का संग्रह किया गया है। इनमें प्रमुख है– आदिमः प्रदषि, मृण्मन्दिरम्, कलिका किं रुष्टाः, वसति रोटिकायां, अवतीर्णः श्रीगणेशः, कोऽयं खगः नूतनः तथा कोऽभिक्षार्थी, जैसी तेरह बालकथाओं के माध्यम से प्रकृति के विविध रूपों और सृष्टि–प्रक्रिया को व्यावहारिक रूप से बाल–मानस पटल पर उतारने का सफल प्रयास किया गया है। 'कलिकाः किं रुष्टाः' बालकथा में पौधों की वृद्धि एवं खेती के लिए कलियों और तितलियों की अनिवार्यता का सुन्दर वर्णन किया गया है। वस्तुतः यह घटना पर्यावरण संतुलन तथा स्वच्छता के महत्त्व को अंकित करती है, यथा– "ततः धीरजवर्यस्य वाटिकायाम् घटना प्रवृत्ता। नूतनतया उत्पन्नाः कलिकाः हासं विकसिताः अभवन्। पुष्पपतंगाः तत्र इतस्ततः संचरन्तः क्रीडाम् आरण्धवन्तः।"[2]

(v) बालमनोवैज्ञानिक पक्ष –'बाल आषोड्शातवर्षात्'[3] अर्थात् बाल्यावस्था जन्म से लेकर सोलह (16) वर्ष तक स्वीकार की गई है।

कोष के अनुसार 'बाल' पद का अर्थ है– अबोध, अज्ञ, विवेकरहित या अज्ञानी। डॉ. रामकिशोर मिश्रा ने अपने काव्य 'बालचरितम्' में स्वयं के शिशुवत् बालक राजेश के बाल्यकाल से लेकर 12 वर्ष तक की शारीरिक एवं मानसिक चेष्टाओं का सुंदर वर्णन किया है। कवि बालक की शैश्वावस्था में परिलक्षित 'काम' मनोवृत्ति को सहज स्वीकार करता है। वस्तुतः यह काम मनोवृत्ति ही बालक में परिलक्षित प्रथम संवेदना है। यथा–

"क्षणं त्वङ्के मातुस्तदनु पितुरङ्के गतिमत्तीम्
स्वसुः क्रोडे चेच्छां प्रतिपलमरं दर्शयति यः।
जनानामन्येषामपि स पुनरङ्के विहरति,
यतस्ते तत्सनेहान्न जहति तमङ्कात् प्रियशिशुम्।।"[4]

प्रस्तुत श्लोक के अन्तर्गत कवि शैश्वावस्था में प्रत्यक्ष काम मनोवृत्ति के बारे में उल्लेख करता है कि यह प्रेम तो बालक का माता–पिता के प्रति स्वाभाविक एवं जन्मजात होता है।

'नाट्यनवग्रहम्'' में प्रो. मिश्र ने 'ईश्वरान्वेषणम्'[1] एकांकी के अन्तर्गत बालक ध्रुव के मन में उद्वेलित परमानन्द नारायण को देखने की जिज्ञासा अपनी माता सुनिति से प्रकट करता हुआ कहता है–

---

1. म.वि. कोल्हटकर कृत 'कथाकुसुमानि'
2. म.वि. कोल्हटकर कृत, कथाकुसुमानि
3. नारदस्मृति
4. बालचरितम्, डॉ. रामकिशोर मिश्र, पृ.सं.–15, सन 1981

ध्रुवः – अम्ब! अहं नारायणं तं दृष्टुमिच्छामि। क्व मिलिस्त्यसौ?

ध्रुवः – अहं नारायणमेव चिन्तयामि। कीदृशोभविष्यति सः।

अंततः माता सुनीति बालक ध्रुव की जिज्ञासा का समाधान करती हुई कहती है कि परमपिता नारायण का धाम तो स्वयं पिता की गोद में प्राप्त आनन्द ही है। माता ही बालक की सबसे बड़ी रक्षक है। 'कान्तारकथा' काव्य में नायक मोगली वन में निवास करने वाले सबसे बुद्धिमान भालू से सम्पूर्ण अरण्य संस्कृति का ज्ञान प्राप्त करने की जिज्ञासा प्रकट करता है। मोगली में मनुष्य जाति के साथ ही वन्य जाति की झलक दृष्टिगोचर होती है।

यथा– "पितामह! काऽस्ति कान्तारसंस्कृतिः? कीदृशोऽस्ति कान्तारन्यायः? केन प्रकारेण प्रत्यवायबहुलेऽस्मिन् कान्तारे सुखं जीवितं शक्यते? कथमत्र बन्धुत्वं सहिष्णुत्वं सख्यं वा स्थापयितुं शक्यते? सर्वेऽप्यत्र अन्येषां भक्षका एव दृश्यन्ते, न तावद्रक्षकाः। कस्मात?"[2]

इस प्रकार मोगली भल्लुक से अरण्यसंस्कृति के बारे में भिन्न–भिन्न प्रकार से अपनी जिज्ञासा प्रकट करता है। दरअसल, बाल–साहित्य का उद्देश्य बाल–पाठकों का मनोरंजन करना ही नहीं अपितु उन्हें आज के जीवन की सच्चाइयों से परिचित कराना है। आज के बालक ही कल के भारत का भविष्य निर्धारक होंगे, अतः उसी के अनुरूप बच्चों को शिक्षा देकर उनका चरित्र निर्माण करना होगा। अतः बाल–साहित्य के लेखक को बाल–मनोविज्ञान की पूरी जानकारी होनी चाहिए, तभी वह बाल मानस पटल पर उतरकर बालकों के लिए कथा, काव्य या बाल–उपन्यास लिख सकता है।

(vi) नीति परक शिक्षा

"यन्नवे भाजने लग्नः संस्कारो नान्यथा भवेत्।
कथाच्छलेन बालानां नीतिस्तदिह कथ्यते।।"[3]

श्रुतो हितोपदेशोऽयं पाटवं संस्कृतोक्तिषु।
वाचां सर्वत्र वैचित्र्यं नीति–विद्यां ददाति च।।[4]

वस्तुतः आधुनिक समाज में आनन्द एवं उल्लास के साथ जीवन–यापन करने के लिए नीतिशास्त्र का ज्ञान होना अत्यन्त आवश्यक है। इसीलिए सम्पूर्ण मानव समाज के लिए नीति आधारित व्यावहारिक ज्ञान अपेक्षित है। पंचतंत्र तथा हितोपदेश के समान ही आधुनिक बाल–साहित्य

---

1. नाट्यनवग्रहम्, प्रो. मिश्र, पृ.सं.–2, सन् 2007 ई.
2. कान्तारकथा, प्रो. मिश्र, पृ.सं.–30, सन 2009 ई.
3. हितोपदेश कथामुख भाग, नारायण पण्डित, श्लोक संख्या–8
4. हितोपदेश कथामुख भाग, नारायण पण्डित, श्लोक संख्या–2

भी बालकों को व्यवहार कुशल बनाने में अत्यन्त उपयोगी है। त्रिवेणी कवि प्रो. अभिराज राजेन्द्र मिश्र द्वारा बालकों को नीति एवं व्यवहार की शिक्षा देने के लिए पुनः नवीन कलेवर में पंचतंत्र को 'अभिनवपंचतन्त्रम्' (2009 ई.) के रूप में अभिव्यक्त करके नीतिसाहित्य को पुनः प्रकट किया है। इसी तरह पं. पद्मशास्त्री द्वारा बालकों को नीतिशास्त्र की शिक्षा देने के उद्देश्य से पंचतंत्र को प्रसाद गुण–युक्त रोचक शैली में कथा भाग को पद्यों में निबद्ध करते हुए 'पद्यपंचतन्त्रम्' (2012 ई.) के रूप में अभिव्यक्त किया है। डॉ. विश्वास का कथन है,–"पंचतन्त्रं बालानां नीतिबोधनार्थं प्रवृत्तम् इति ततः एव ज्ञायते।"[1] वस्तुतः बाल–साहित्य के पठन–पाठन से बालकों में व्यवहार–कुशलता आती है। इस अल्प–आयु में क्या उचित है, क्या अनुचित। यह सब बाल–साहित्य के अध्ययन से ही संभव है।

(vii) नारी चित्रण – भट्टमथुरानाथ शास्त्री की कथा 'अनादृता' को बाल–साहित्य की श्रेणी में रखा जा सकता है। कवि प्रस्तुत कथा में ललिता नामक अनाथ बालिका का वर्णन करते हुए समाज में होने वाले पुत्र–पुत्री के भेदभाव को चरितार्थ करता है। वस्तुतः कथा की पात्र ललिता के पिता की मृत्यु हो चुकी है। वह अभागीन एवं गरीबी के कारण अपने ही स्वजनों के बीच उपेक्षित एवं प्रताडित है। यथा–

"छिन्नात्तस्या ललाटाद्रक्तं प्रस्रवति स्म। बालिका हस्तावस्थितेव वस्त्रेण प्रस्रवद्रक्तं प्रोच्छन्ति निःसहं क्रन्दन्त्यासीत्।"[2]

इसी प्रकार 'मम पुत्री सौभाग्यवलक्ष्मी' बालकथा में पूजा नामक किसी दुःखी बालिका का वर्णन है। वस्तुतः पूजा स्वयं के प्रति होने वाले अपमान से दुःखी है। प्रस्तुत कथा में परिवार में पुत्र–पुत्री के मध्य होने वाले भेदभाव को चरितार्थ किया गया है– "अहं बालिका अस्मि खलु! सा बालिका नेच्छति। मम अनुजः बालकः खलु। तं बहु प्रीणति। पश्य! मम भोजनकरण्डकं–अस्मिन् मदीये करण्डके व्यंजनं न भवति। मधुरमपि न भवति। मम अनुजः प्राथमिकयां कक्षायां पठति नु...... तस्य भोजनकरण्डके व्यंजनं मधुरंच भवतः। तं पौनः पुन्येन प्रशंसति माता। तं चुम्बति। मां नालिङ्ति। सदा भर्त्सयति।"[3]

'मलालाचरितम्' बालकाव्य में प्रो. रवीन्द्र पण्डा स्त्री को हाशिए से उठाकर मुख्यधारा में लाने का प्रयास करता है।

---

1. संक्षेप पंचतन्त्रम् (प्रथमः भागः) कथामुख, डॉ. विश्वास, पृ.सं.–2
2. अनादृता बालकथा, भट्टमथुरानाथ शास्त्री, पृ.सं.–10
3. शिशुस्वान्तम्, डॉ. के वरलक्ष्मी, पृ.सं.–124, सन 2016 ई.

यथा– **"स्त्रीणां मनोदशां मनोदशां दृष्ट्वा तथा च निनिकबप्रथाम्**
कृष्णांगकृष्णांगवरणं चैव स भवति स्म कातरः।।"[1]

कवि वर्णन करता है कि नारी केवल एक नहीं बल्कि दो कुलों का उद्धार करती है। जैसाकि कवि वर्णन करता है–

"अस्माकं संस्कृते शास्त्रे तनयां दुहितेति च।
कथ्यते कारणं यस्मात् सा कुलद्वयतारिणी।।"[2]

कवि का मानना है कि शिक्षा सबके लिए आवश्यक है। जितना पुरुष शिक्षा का हकदार है उतना ही स्त्री भी। पाकिस्तान और अफगानिस्तान की स्त्रियों की दशा का वर्णन करते हुए कवि ने लिखा है कि वहाँ पर नारी आज भी न के बराबर है। अशिक्षा के कारण स्त्रियाँ आज भी पुरातनपंथी और रूढ़िवादी धर्मगुरुओं के समक्ष स्वयं का अधिकार नहीं मांग सकती है। तालिबानी आतंकियों के कारण वे अपने घरों में सदैव कैद रहती है–

बन्दिनीव गृहे स्थित्वा या पापयन्ति।
पुरुषाणां बलैर्बद्धा भवन्ति स्म प्रतिक्षणम्।।[3]

वस्तुतः मलाला युसुफजेई ने सदैव पर्दा प्रथा, रूढ़िवादिता और दकियानूसी विचारधारा का हमेशा विरोध किया।

(viii) **राष्ट्रीय प्रेम** –जैसाकि सनातन कवि रहसबिहारी द्विवेदी द्वारा राष्ट्रभक्ति, राष्ट्रस्वतन्त्रता को काव्य रचना का प्रयोजन अंगीकार किया है–

"नव्यकाव्यविधोन्मेषं व्यंग्योक्ति विकृतो तथा।
राष्ट्रभक्तिं युगौचित्यं पर्यायवरणचेतनाम्।।
राष्ट्रस्वातन्त्र्यं वीराणां चरितं चाराध्यमीश्वरम्।
समुद्दिश्यमधुना काव्यं कुर्वन्ति कवितल्लजा।।"

बालसाहित्यकार वर्तमान में नागरिकों के अन्तःकरण में राष्ट्रप्रेम, राष्ट्रवाद एवं राष्ट्र के प्रति सच्ची श्रद्धा जाग्रत करने हेतु देश हित से युक्त उत्मोत्तम बाल–साहित्य की रचना करने में संलग्न है। बालकों में देशप्रेम एवं देशसेवा का नैतिक भाव जाग्रत करने के प्रयोजन से कथाविधा में प्रो. जनार्दन हेगड़े द्वारा बालकथासप्तति (2013 ई.) का संधान किया गया है। जिसमें व्याकरण रहित बालसुलभ भाषा शैली में प्राचीन एवं अर्वाचीन महापुरुषों के जीवन–चरित्र को संदर्भित किया गया

---

1. 'मलालाचरितम्' बालकाव्य, प्रो. रवीन्द्र पण्डा, सन 2017 ई.
2. 'मलालाचरितम्' बालकाव्य, प्रो. रवीन्द्र पण्डा, सन 2017 ई.
3. 'मलालाचरितम्' बालकाव्य, प्रो. रवीन्द्र पण्डा, सन 2017 ई.

है। प्रो. अभिराज राजेन्द्र मिश्र द्वारा राष्ट्रसम्मान गीत के माध्यम से बालकों का स्वहित की अपेक्षा राष्ट्रहित को प्राथमिकता देने हेतु आह्वान किया है–

"सरस्वती श्रुतमहती राष्ट्रे
हृदि–हृदि महीयताम्।।
राष्ट्रहीतं सर्वोपरी भवतात्
राष्ट्रगौरवं स्फुरतु समन्तात्।।"[1]

इसी प्रकार 'अरिमर्दना वयम्' कविता के माध्यम से बालकों को महर्षि भगीरथ, राणासांगा, जैसे महापुरुषों के जीवन से साहस एवं शौर्य का उपदेश दिया गया है।

सारांशतया वर्तमान सन्दर्भ में बाल–साहित्य के योगदान प्रासंगिकता तथा उपादेयता के संबंध में प्रस्तुत सभी पक्षों और आयामों को मेरी अकिंचन मति के द्वारा सीमित शब्दों एवं परिधि में लिपिबद्ध करना उडुपेन सागरतरण सदृश दुष्कर कार्य है। अतः समस्त समीक्षकों से विनम्र निवेदन है कि वर्तमान सन्दर्भ में बालसाहित्य की उपादेयता के संबंध में मेरे विवेचन को स्थालीपुलाकन्याय के समान आंशिक ही समझा जाए, समग्र नहीं।

≈≈≈≈

1. कौमारम्, प्रो. मिश्र, पृ.सं.–107, सन 2008 ई.

उपसंहार

उपसंहार

पुराणमित्येव न साधु सर्वं न चापि काव्यं नवमित्यवद्यम्।
सन्तः परीक्ष्यान्यतरद्भजन्ते मूढः परप्रत्ययनेयबुद्धिः।।
(मालविकाग्निमित्रम्/1/2)

जैसाकि महाकवि कालिदास का कथन है कि सभी नए काव्य बुरे नही होते हैं। इसी तरह सभी प्राचीन काव्य भी पूर्णतया अच्छे नहीं हो सकते हैं। वस्तुतः विवेकशील मनुष्य तो दोनों की अच्छी तरह समीक्षा करने के बाद ही तय करते हैं कि कौनसा अधिक उपयोगी है और कौनसा कम उपयोगी है। वस्तुतः यही परिचर्चा मेरे शोध बिन्दू की समीक्षा का भी विषय रही है। संस्कृतसाहित्य में बाल–साहित्य अब तक मौलिक एवं रचनात्मक साहित्य का एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण, किंतु उपेक्षित क्षेत्र रहा है। संस्कृत के गौरवशाली अतीत में यद्यपि बालकों को उद्देश्य बना कर अनेक नीतिपरक, रोचक एवं ज्ञानप्रद साहित्य की रचना की गई है किंतु उनसे बाल–साहित्य को स्वतन्त्र एवं क्रमबद्ध अस्तित्व प्राप्त नहीं हुआ। पंचतन्त्र, हितोपदेश, कथासरित्सागर इत्यादि ग्रन्थों के परिशीलन से यद्यपि बालकों को नैतिक मूल्यों एवं नीति की शिक्षा तो प्राप्त हो जाती है किंतु इनसे बाल–साहित्य को एक स्वतन्त्र विधा के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं हो सकी।

20वीं शदी में आचार्य वासुदेव द्विवेदी, डॉ. केशवचन्द्र दाश, दिगम्बर महापात्र इत्यादि विद्वानों के बाल–काव्यों ने निश्चित ही बाल–साहित्य को स्वतन्त्र अस्तित्व प्रदान करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। अर्वाचीन काल में लिखित बाल–साहित्य की विभिन्न विधाओं (बालकाव्य, बालकथा, बाल–उपन्यास, बाल–लघुनाटक) के माध्यम से सामान्य बालक–बालिकाओं को सरल–सरस, सहज एवं व्याकरण रहित बालावबोध भाषा शैली में सामाजिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक एवं नैतिकमूल्यों की शिक्षा दी जा रही है। संस्कृत बाल–साहित्य बालकों को उनके परिवेश, सामाजिक–सांस्कृतिक परम्पराओं, संस्कारों, जीवन–मूल्यों, आचार–विचार और व्यवहार के प्रति सतत चेतन बनाने में अत्यधिक भूमिका निभाता है।

आज संस्कृत बाल–साहित्य की प्रकृति में भी अंतर आया है। अब साहित्यकार बालकों की अवस्थानुसार बाल–साहित्य का सर्जन कर रहा है। शैशवावस्था के बालकों के लिए सरल, सहज, रोचक एवं लय मिश्रित बालगीत बालकथा का निर्माण किया जा रहा है तो बाल्यावस्था एवं किशोरावस्था के लिए बालकों के लिए मनोरंजन, घटनाप्रधान, उपदेशात्मक एवं वैज्ञानिक विषय पर आधारित बाल–साहित्य का निर्माण किया गया है।

वस्तुतः बाल्यावस्था अत्यन्त कोमल होती है। बालकों के मस्तिष्क पर छोटी से छोटी घटना भी गहरा प्रभाव डालती है। बाल्यावस्था को मनुष्य की नींव कहा गया है। यदि नींव कमजोर होगी, तो इमारत ढह जायेगी। आज विश्व में जो हिंसा, तनाव अशान्ति, पर्यावरण–प्रदूषण आदि समस्याएँ पनप रहीं हैं, उन सब का मूल अच्छे साहित्य एवं संस्कारों का न होना ही है। संसार में संस्कृत बाल–साहित्य के निर्माण एवं प्रकाशन में श्री अरविन्द आश्रमस्थित संस्कृत विभाग का अतिशय योगदान है। आज संस्कृत बाल–साहित्य परिषद्, पुण्डुचेरी द्वारा सम्भाषण शिविरों के माध्यम से बालकों को संस्कृत भाषा के प्रति रुचि जाग्रत करने एवं उन में बाल–साहित्य लिखने की कला का विकास किया जा रहाहै। 'सम्भाषण सन्देश' जैसी सरल एवं मनोहारिणी मासिक पत्रिका के 'बालमोदिनी' विभाग के अन्तर्गत भी बालकों के उपकारार्थ उपयोगी बाल–साहित्य का प्रकाशन किया जा रहा है।

निष्कर्षतः कहना चाहूंगा कि, यह शोध प्रबन्ध संस्कृतबाल–साहित्य की रूप–रेखा निर्धारित करने में उपयोगी साबित होगा। साथ ही प्रस्तुत शोध प्रबन्ध के माध्यम से बाल मनोवृत्तियों के परिप्रकाशन के साथबालचरित्र के नैतिक जीवन मूल्यों का अवबोधन तथा व्यक्तित्व विकास का परिस्फुरण सिद्ध होगा, जिससे एक सुव्यवस्थित समाज व समुन्नत राष्ट्र के निर्माण में सहायक होने के परिणाम स्वरूप सामाजिक अवदान की दृष्टि से यह शोध प्रबन्ध उपादेय पूर्ण है। निश्चय ही यह शोध–प्रबन्ध शोधार्थियों एवं बाल–साहित्य के समीक्षकों के लिए पथप्रदर्शक का कार्य करेगा। संस्कृत बाल–साहित्य के परिशीलन से कहा जा सकता है कि इक्कीसवीं सदी संस्कृत बाल–साहित्य की होगी, इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं है।

≈≈≈≈

शोध –सारांश

शोध–सारांश

साहित्य समाज का दर्पण होता है। साहित्य प्रत्येक अवस्था के मानव को अपना सत्य प्रतिबिम्ब दिखाता है। साहित्य में प्रयुक्त प्रत्येक शब्दार्थ प्रतिक्षण रमणीयता एवं आह्लादकता उत्पन्न करने में समर्थ होता है। कवि अपनी नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभा से इस रमणीयता एवं सरसता को अनवरत सरल एवं सहज रूप में पाठकों और सामाजिकों के समक्ष अभिव्यक्त करता है। वस्तुतः कवि द्वारा काव्यरचना का प्रयोजन भी कान्तासम्मित तथा मित्रवत् रूप में सहृदय सामाजिकों को सहज एवं सरस रूप में मनोरंजन तथा उपयोगी उपदेश प्रदान करना है।

संस्कृत साहित्य में बाल साहित्य के दर्शन वैदिक काल से ही परिलक्षित होते है जहाँ बालकों को जन्म से ही विभिन्न संस्कारों के माध्यम से परिष्कृत एवं जीवनोपयोगी ज्ञान प्रदान किया गया है। किंतु संस्कृत बाल–साहित्य का क्रमबद्ध विकास तृतीय शताब्दी पर्यन्त पं. विष्णु शर्मा द्वारा प्रणीत 'पंचतन्त्र' कथा ग्रन्थ से माना जाता है। इसमें महिलारोप्य नगर के राजा सुदर्शन के अवयस्क मूर्ख पुत्रों को पशु–पक्षी कथाओं के माध्यम से मनोरजनात्मक तरीके से नीतिपरक एवं शिक्षापरक ज्ञान प्रदान किया गया है। पंचतन्त्र के समान ही हितोपदेश, दशकुमारचरितम्, शुकनासोपदेश, कथासरित्सागर, बेतालपंचविंशतिकथा आदि काव्यों में बालकों को सरल–सरस भाषा में जीवनोपयोगी उपदेश प्रदान किया गया है।

आधुनिक संस्कृत साहित्य में स्वतन्त्रता के पश्चात् संस्कृत बाल अनुरागिणों के लिए विद्वत् समाज द्वारा पृथक से बालसाहित्य सन्धान का नवोन्मेष प्रयास किया गया है। बालसाहित्य विधा आधुनिक संस्कृत साहित्य की एक नवीन विधा है। इस नवीन बाल–विधा में अर्वाचीन संस्कृत कवियों एवं लेखकों द्वारा बालकों की मनोसंवेदनाओं, बालक्रीडाओं, बालभावों का वर्णन सरलातिसरल संस्कृत पदों में भिन्न–भिन्न बालगीत, बालकथा, बाल उपन्यास एवं बाल–नाटकों के रूप में किया जा रहा है। बाल–संस्कृति, बाल–विचारों का उपस्थापन, बाल–चरित्र–चित्रण सन्धान एवं बाल–मनोगत भावों का सूक्ष्मातिसूक्ष्म चित्रण करना बाल–साहित्य का प्रमुख प्रयोजन है। वस्तुतः समय एवं परिस्थितियों ने बाल–साहित्य के कलेवर में अनन्त परिवर्तन एवं परिवर्द्धन किया है। प्रत्येक बालकाव्य बालक की मूल–प्रवृत्तियों–प्रेम, साहस, जिज्ञासा, भक्तिभाव को ध्यान में रखकर लिखा गया है।

मेरे द्वारा प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध "आधुनिक संस्कृत बाल–साहित्यः एक समीक्षात्मक अध्ययन" में संस्कृत बाल–साहित्य के प्राचीन स्वरूप के अवलोकन के साथ–साथ अर्वाचीन संस्कृत में पृथक्

विधा के रूप में आविस्कृत, बाल साहित्य परक ग्रन्थों, काव्यों इत्यादि का समीक्षात्मक अध्ययन किया गया है। प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध को भूमिका एवं आठ अध्यायों में विभाजित किया गया है।

प्रबन्ध की आयोजना निम्न प्रकार है–

भूमिका

प्रथम अध्याय : प्राचीन संस्कृत साहित्य में बालसाहित्य का स्वरूप

द्वितीय अध्याय : संस्कृत साहित्य में बाल–साहित्यपरक काव्य एवं काव्यकार (संक्षिप्त परिचय)

तृतीय अध्याय : आधुनिक संस्कृत बाल–साहित्यपरक विधा एवं ग्रन्थ परिचय

चतुर्थ अध्याय : आधुनिक संस्कृत बालसाहित्य की समीक्षा के आधार

पंचम अध्याय : आधुनिक संस्कृत बाल–साहित्यपरक काव्यों की समीक्षा

षष्ठ अध्याय : अनूदित संस्कृत बालसाहित्य की समीक्षा

सप्तम अध्याय : संस्कृत पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित बालसाहित्य की समीक्षा

अष्टम अध्याय : संस्कृत बालसाहित्य का संस्कृत साहित्य एवं समाज को योगदान

उपसंहार

प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध के भूमिका भाग को मंगलाचरण, विषय परिचय तथा विषय की उपादेयता एवं मौलिकता के रूप में वर्गीकृत किया गया है। भूमिका भाग में शोध–प्रबन्ध के शीर्षक को काव्यशास्त्रीय एवं कोशादि सन्दर्भों के आधार पर परिभाषित किया गया है। साथ ही आधुनिक काल में प्रणीत बाल काव्यों के आधार पर संस्कृत बाल साहित्य को स्वतन्त्र एवं पृथक् विधा के रूप में स्थापित करने का प्रयास किया गया है।

प्रथम अध्याय : प्राचीन संस्कृत साहित्य में बालसाहित्य का स्वरूप

प्रस्तुत अध्याय में बालसाहित्य के वैदिककालीन स्वरूप की समीक्षा की गई है। सायण महोदय ने ऋग्वेद के आठवे मण्डल में बालक के लिए 'अर्भकः' तथा 'कुमारकः' पदों का प्रयोग किया है। सायणाचार्य विश्वदेवता को शिशु एवं बालक के रूप में स्वीकार न करके एक तरुण के रूप में प्रतिपादित करते है। इसके साथ ही उपनिषदों में उपलब्ध बाल साहित्य का भी संक्षेप में वर्गीकरण किया गया है। बृहदारण्यक उपनिषद् में वर्णन है कि प्राण रूपी शिशु ही मनुष्य के सम्पूर्ण भविष्य को निर्धारित करता है– 'यो ह वै शिशु साधनं सप्रत्याधानं'। इसी तरह लौकिक संस्कृत में वर्णित रामायण, महाभारत, पुराण एवं स्मृतिग्रन्थों में भी प्रत्यक्ष बाल साहित्य का वर्णन किया गया है। मनुस्मृति में बालक को अज्ञ प्राणी के रूप में प्रतिपादित किया गया है– "अज्ञो भवति वै बालः"।

अमरकोश में बालक को 'मूर्ख' पद से सम्बोधित किया गया है– 'मूर्खेऽर्भकेऽपि बालः'। रामायण में श्रीराम के जीवन से बालकों को सहयोग, सदाचार, सच्चरित्रता, नैतिकता, शील–साहस इत्यादि नैतिक मूल्यों की शिक्षा दी गई है। हनुमान के शैश्वास्था वर्णन में महर्षि वाल्मीकि सुन्दर वर्णन करते है–

"बालार्काभिमुखो बालो बलार्क इव मूर्तिमान्"।

इसी तरह महाभारत में प्राप्त बाल साहित्य का भी प्रस्तुत अध्याय में वर्णन किया गया है। महाभारत में वेदव्यास जी द्वारा कौरव–पाण्डवों के बाललीला वर्णन में बाल–मनोविज्ञान का सुन्दर वर्णन किया है। यहाँ बाल मनोविज्ञान में वर्णित बाल–प्रवृत्तियों के अनुरूप ही कौरव–पाण्डवों की क्रीड़ा, केश–कर्षण, वृक्षारोपण, फल–तोड़ने, हिंदोले खाना इत्यादि बाल–प्रवृत्तियों का वर्णन किया गया है।

प्रस्तुत शोध में बाल साहित्य के प्राचीन स्वरूप का व्यवस्थित एवं क्रमबद्ध प्रारम्भ पं. विष्णु शर्मा के 'पंचतन्त्र' से माना गया है। पंचतन्त्र में अबोध एवं अल्पज्ञ बालकों को पशु–पक्षी कथाओं के माध्यम से नीति की शिक्षा प्रदान की गई है। पंचतन्त्र के अतिरिक्त कथासरित्सागर, हितोपदेश में भी विस्तृत रूप से बालकों के लिए उपदेशात्मक बाल–साहित्य उपलब्ध होता है। कथासरित्सागर के विषय में विन्टरनित्स ने 'भारतीय साहित्य का इतिहास' पुस्तक में उल्लेख किया है कि "कथासरित्सागर एक ऐसा समुद्र है, जिसमें कथाओं की सभी नदियों (बालकथा, लोककथा) का संगम होता है।" 12वीं शताब्दी में पं. नारायण भट्ट द्वारा प्रणीत 'हितोपदेश' कथाग्रन्थ की महत्ता प्रतिपादित करते हुए डॉ. भीमराज शर्मा ने लिखा है, कि "हितोपदेश में कथाओं के माध्यम से बालकों में उच्च–चरित्र के निर्माण की शिक्षा दी गई है। इसका अध्ययन करने वाले बालक निडर और संस्कारवान् बनते है।" वस्तुतः हितोपदेश के श्रवणमात्र से ही बालकों में पटुता, विचित्रता, संस्कार आदि तत्त्वों का समावेश हो जाता है। हितोपदेश के अतिरिक्त 'शुकसप्तति' एवं 'सिंहासनद्वात्रिंशिका' कथाग्रन्थ भी बालकों के मनोरंजन एवं शिक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से प्रणीत किए गए।

द्वितीय अध्याय – संस्कृत साहित्य में बाल–साहित्यपरक काव्य एवं काव्यकार (संक्षिप्त परिचय)

प्रस्तुत अध्याय में बाल साहित्य के प्राचीन स्वरूप के अनन्तर आधुनिक काल में नवीन विधा के रूप में स्वीकृत बाल साहित्य के प्राप्त काव्य एवं काव्यकारों का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया गया है। नीतिसाहित्य की परंपरा में विद्यमान पंचतन्त्र एवं हितोपदेश से आविर्भूत बाल साहित्य ने अर्वाचीन संस्कृत साहित्य में बालकों एवं संस्कृतानुरागियों के लिए नवीन क्रान्ति का संचार किया है। वस्तुतः प्राचीन संस्कृत साहित्य को केवल शास्त्र विशेषज्ञों के लिए ही सम्बोधित किया जाता था, किन्तु अर्वाचीन साहित्य में समय एवं सर्वहित को ध्यान में रखते हुए सामान्य बालकों के लिए

भी साहित्य सन्धान का प्रयत्न किया गया है। आज बाल–साहित्यकार बालकों के हितार्थ विभिन्न प्रकार के उपदेशात्मक एवं विषयपरक बाल–साहित्य का सर्जन कर रहा है।

अर्वाचीन संस्कृत बाल साहित्य का व्यवस्थित एवं क्रमबद्ध प्रारम्भ पं. वासुदेव दीक्षित एवं दिगम्बर महापात्र के बाल–काव्यों से माना जा सकता है। बाल साहित्य के प्रारम्भ को लेकर विद्वानों में मत मतान्तर है। पं. वासुदेव दीक्षित द्वारा बाल–मनोविज्ञान को ध्यान में रखकर 'बालमनोरमा' (1948 ई.) का प्रणयन किया है। दिगम्बर महापात्र द्वारा सरल–सरस गीतिच्छन्दों में 'रङ्गरुचिरम्' (1983 ई.) एवं 'ललितलवङ्गम्' बालकाव्यों का प्रणयन किया है। उत्कलवासी डॉ. केशवचन्द्रदाश द्वारा बालहितार्थ हृदयाह्लादक वाणी में 'महान्' (1991), एकदा (1991 ई.) तथा 'पताका' (1990 ई.) काव्यों की रचना कर संस्कृत साहित्य एवं समाज को उपकृत किया है। त्रिवेणी कवि अभिराजराजेन्द्रमिश्र ने बालकों को लोक नीति, लोक व्यवहार एवं विविध भावों को आत्मसात करते हुए 'कौमारम्' (शिशुकाव्य, 2008 ई.), अभिनवपंचतन्त्रम् (कथाग्रन्थ, 2009 ई.), कान्तारकथा (अनूदित कथा 2009 ई.) तथा 'नाट्यनवग्रहम्' (2007 ई.) इत्यादि बाल–काव्यों का प्रणयन किया है। इसी तहर डॉ. रामकिशोर मिश्र द्वारा बालकों में संस्कृत के प्रति रूचि जाग्रत करने हेतु 'बालतरङ्गिणी (2001 ई.), किशोरकथावलि (1987 ई.), बालनाट्यसौरभम् (1997 ई.), तथा बालचरितम् (1981) इत्यादि बाल–काव्यों का प्रणयन किया गया है। बालकों को सदाचार एवं नैतिकता प्रदान करने हेतु आचार्य पद्मशास्त्री द्वारा 'विश्वकथाशतकम्' (2005 ई.) का प्रणयन किया गया। डॉ. सम्पदानन्द मिश्र जी द्वारा बालकों में संस्कृत के प्रति दृढ़ अनुराग उत्पन्न करने, भाषा ज्ञान बढ़ाने एवं बालकों में साहित्य लेखन की क्षमता विकसित करने के उद्देश्य से ''संस्कृत बाल साहित्य परिषद'' का गठन किया गया है। डॉ. मिश्र द्वारा बाल–हितार्थ 'ललनागीतम्', बालगीतावलि (2016 ई.) तथा शनैः शनैः (2018 ई.) बाल–काव्यों का प्रणयन किया गया है। इसके साथ ही आज अनेक युवा साहित्यकार बालसाहित्य रचना में संलग्न है, जिनमें प्रमुख है– प्रो. जनार्दन हेगड़े, प्रो. सुकान्तकुमार सेनापति, डॉ. नारायण दाश, डॉ. बनमाली बिश्वाल, डॉ. कृष्णलाल, प्रो. गोपबन्धु मिश्र, डॉ. हर्षदेव माधव, डॉ. पूर्णचन्द्र उपाध्याय, ऋषिराज जानी, डॉ. संजय चौबे, डॉ. अरविन्द कुमार तिवारी, डॉ. राजकुमारी मिश्र, डॉ. विश्वास, ओमप्रकाश ठाकुर, डॉ. कौशल तिवारी, रवीन्द्र पण्डा आदि।

तृतीय अध्याय : आधुनिक संस्कृत बाल–साहित्यपरक विधा एवं ग्रन्थ परिचय

प्रस्तुत अध्याय में साहित्य शब्द को अलग–अलग सन्दर्भों में परिभाषित किया गया है। डॉ. सम्पदानन्द मिश्र ने बाल साहित्य को परिभाषित करते हुए उसके स्वरूप का उल्लेख किया है कि– "बालानां बोधाय, बालानां चरित्रनिर्माणे, आत्मशक्तीनां विकसने च तेषु स्वदेशप्रेम्णः जागरणाय सौन्दर्यं –बोधाय, तेभ्यः संस्कारप्रदानाय, समुचितनैतिकमूल्यबोधाय, बालकेषु संस्कृतप्रीतिं प्रदयितुं तेषां

भाषाज्ञानं वर्धयितुं, बालानां रुच्यनुसारेण तत् साहित्यं विनिर्मितम् तं साहित्यं 'बालसाहित्यम्' इति शब्देन परिभाष्यते।'

वस्तुतः अर्वाचीन युग में सन्धानित बाल साहित्य का मुख्य प्रयोजन बालाकों में नैतिक चरित्र, संस्कार–शील–राष्ट्रभक्ति, पर्यावरण चेतना जैसे नैतिक मूल्यों को प्रदान करना है। प्रस्तुत अध्याय को छः भागों में विभाजित किया गया है– (क) बालसाहित्य परक : खण्डकाव्य (ख) बालसाहित्य परक : कथा संग्रह (ग) बालसाहित्य परक : उपन्यास (घ) बालसाहित्य परक : अनूदित काव्य (ङ) बालसाहित्य परक : नाट्य संग्रह (च) बालसाहित्य परक : पत्र–पत्रिकाएँ।

आधुनिक संस्कृत बाल–साहित्य में प्राप्त सभी काव्य ग्रन्थ मुख्यतः कविता, गीत, शिशुगीत अथवा मुक्तक रूप में प्राप्त होते है। प्राचीन काव्य महाकाव्य अथवा खण्डकाव्य जैसा विस्तृत रूप यहाँ देखने को नहीं मिलता है। वस्तुतः अधिकांश मुक्तक भी पं. विश्वनाथ जी द्वारा वर्गीकृत युग्मक, कलापक, कुलक रूप में प्राप्त होते हैं। त्रिवेणी कवि अभिराज राजेन्द्र मिश्र प्रणीत 'कौमारम्' एवं डॉ. रामकिशोर मिश्र प्रणीत 'बालतरङ्गिणी' इत्यादि प्रधान बालगीत काव्य के उदाहरण है। इसी तरह बालकथा साहित्य के अन्तर्गत लघुकथा, परिकथा, वैज्ञानिक कथा अथवा 'कान्तारकथा' जैसे दीर्घ कथा काव्य परिलक्षित होते है। अभिराज राजेन्द्र मिश्र ने कथानिका का लक्षण प्रतिपादित करते हुए इसे लघु एवं दीर्घ नामक दो भेदों में वर्गीकृत किया है। प्रो. मिश्र ने कथा एवं आख्यायिका के मिश्रित रूप को बाल–उपन्यास शब्द से सम्बोधित किया है। अर्वाचीन संस्कृत बाल साहित्य में मौलिक बाल काव्यों के साथ ही भारतीय या वैदेशिक भाषाओं में रचित संस्कृत अनूदित बाल–काव्यों का भी प्रणयन किया गया है।

चतुर्थ अध्याय : आधुनिक संस्कृत बालसाहित्य की समीक्षा के आधार

प्रस्तुत अध्याय शोध प्रबन्ध का मूल है। वस्तुतः समीक्षक अथवा आलोचक के समक्ष यह दुविधा रहती है, कि वह किन तत्त्वों, लक्षणों, मूल्यों, आदर्शों एवं नियमों के आधार पर विद्यमान काव्यों की समीक्षा करे। साहित्य में आलोचक के लिए ऐसी समस्याओं के समाधान का उपाय सामान्यतया यह है कि वह परम्परागत अथवा आधुनिक काव्यशास्त्रीय या लाक्षणिक ग्रंथों के आधार पर समीक्षा करे। प्राचीन काव्य, महाकाव्य, नाटक, कथा, उपन्यास आदि प्राप्त ग्रन्थों की समीक्षा हेतु तो प्रारम्भ से ही अनेकानेक काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ प्राप्त हो जाते है किंतु वर्तमान युग में नवीन विधा के रूप में उद्भावित बाल–साहित्य की समीक्षा के लिए पृथक् से कोई प्रमाणित काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ अभी तक नहीं लिखा गया है। मेरे द्वारा भी यहां विद्यमान बाल–काव्यों की आलोचना हेतु प्राचीन एवं अर्वाचीन काव्यशास्त्री ग्रंथों को ही आधार बनाया है। मेरे इस शोध–समीक्षा कार्य में प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी कृत 'अभिनवकाव्यालंकारसूत्रम्' तथा प्रो. अभिराज राजेन्द्र मिश्र प्रणीत

'अभिराजयशोभूषणम्' काव्य ग्रन्थों का प्रमुखतया से सहयोग लिया गया है। इसके साथ ही डॉ. नारायणदाश का 'संस्कृतबालसाहित्यस्य लक्षणं स्वरूपभेदाश्च' डॉ. नोनीहाल गौतम का 'हितं मनोहारी च संस्कृतबालसाहित्यम्' तन्मय भट्टाचार्य कृत 'शिशुयुवादुरदैवविलासितम्', प्रमुख आलेख भी मेरे शोध–प्रबन्ध की समीक्षा में अत्यन्त उपयोगी साबित हुए है।

आधुनिक संस्कृत बाल साहित्य में उपलब्ध साहित्य का काव्य पक्ष एवं भाव पक्ष के आधार पर समीक्षा की जा सकती है। यद्यपि आधुनिक संस्कृत साहित्य में परिगणित बाल साहित्य को अभी तक काव्यशास्त्रों का विषय नहीं बनाया गया है किन्तु फिर भी आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी द्वारा बालसाहित्य के लक्षणों को प्रतिपादित किया गया है–

"शिशुं वा बालकं वापि समुद्दिश्य सुगुम्फितम्।
बालभावस्य सहजं सर्वथोद्बोधकारकम्।।
चमत्कारस्य सर्वस्वमुद्भुतश्च महारसः।
विचित्रं रमणीयं यत् तथा कौतुकवर्धनम्।।
संविधानस्य चातुर्यं कथायां बुद्धिवैभवम्।
सरवं सरलं छन्दः सहजं लयमिश्रितम्।।
आनन्दाद् यत् समुद्भुतं सर्वथानन्ददायकम्।
तदेतद् बाल–साहित्यं बालकेभ्यः उदीरितम्।।"

(डॉ. नारायण दाश कृत शोधपत्र ''संस्कृतबालसाहित्यस्य लक्षणं स्वरूपं भेदाश्य'', पृ.–61))

अर्थात बालसाहित्य कौतुकता आधायक, रमणीयता, मनोहारिता, चित्रात्मक, मनोरंजन प्रधान, शिक्षाप्रद, चमत्कार आधायक, अनुप्रास अलंकार युक्त, लय–मिश्रित छन्दों से युक्त, लोककल्याणकारी, अल्प पात्रों से युक्त, हृदयाह्लादक इत्यादि लक्षणों से युक्त होता है।

पंचम अध्याय : आधुनिक संस्कृत बाल–साहित्यपरक काव्यों की समीक्षा

प्रस्तुत अध्याय में काव्य एवं भाव पक्ष के आधार पर समीक्षा की गई है। काव्य पक्ष के तहत प्रत्येक काव्य में प्राप्त काव्य का शीर्षक, कथावस्तु प्रकार, पात्र चरित्र–चित्रण, संवाद–वाक्य विन्यास, भाषा शैली, काव्य रस, अलङ्कार, छन्द, गुण, रोचकता तथा काव्य के देशकाल एवं परिस्थितियों की समीक्षा की गई है। भाव पक्ष के अन्तर्गत जहाँ काव्य के सन्दर्भ में बाहरी स्वरूप का तो, बालकों के सन्दर्भ में अन्तःकरण में प्रार्दुभवित भाव स्वरूपों का विचार किया गया है। वस्तुतः कवि की भावुकता से काव्य इतना मधुर बन जाता है कि पढ़ने–सुनने वाले बालक भी कविता रूपी सागर में डूब जाता है। बाल–साहित्य में विद्यमान भाव पक्ष के अन्तर्गत कवि द्वारा वर्णित सामाजिक–बाल–मनौवैज्ञानिक, नैतिक, सांस्कृतिक, प्राकृतिक, मनोरंजक, इत्यादि पक्षों का शोध–प्रबन्ध के अन्तर्गत विवेचन किया

गया है। प्रस्तुत अध्याय में बालसाहित्य के अन्तर्गत परिगणित काव्यों में अभिराजराजेन्द्र मिश्र कृत–कौमारम्, नाट्यनवग्रहम्, कान्तारकथा, अभिनवपंचतन्त्रम्, आचार्य, दिगम्बर महापात्र प्रणीत, ललितलवङ्गम् एवं 'रङ्करुचिरम्' वासुदेवदीक्षित कृत, बालकवितावलिः, डॉ. रामकिशोर प्रणीत बालचरितम्, बाल–तरङ्गिणी, बालनाट्यसौरभम् किशोरकथावली इत्यादि काव्यों की कला एवं भाव पक्ष के आधार पर समीक्षा की गई है।

षष्ठ अध्याय : अनूदित संस्कृत बालसाहित्य की समीक्षा

प्रस्तुत अध्याय में संस्कृत बाल साहित्य में प्राप्त अनूदित कृतियों की समीक्षा की गई है। वस्तुतः आज संस्कृत बाल साहित्य का रचना क्षेत्र विस्तार को प्राप्त हो रहा है। अब मौलिक कृतियों के साथ ही अन्य भारतीय एवं वैदेशिक भाषाओं में लिखित बाल साहित्य का संस्कृत भाषा में अनुवाद कार्य किया जा रहा है। प्रस्तुत अध्याय को पांच–उपविभागों में वर्गीकृत किया गया है। जिसमें त्रिवेणी कवि अभिराज राजेन्द्र मिश्र कृत 'कान्तारकथा' (आंग्ल लेखक रुडयार्क किपलिंग की The Jungal Book Story का संस्कृतानुवाद), गोपबन्धु मिश्र कृत 'कनीयान् राजकुमार' फ्रांसिसी लेखक आन्त्वान द सेंत एक्जुपेरी कृत फ्रांसिसी पुस्तक विंड सेंड एण्ड स्टार का संस्कृतानुवाद', डॉ. ओमप्रकाश ठाकुर कृत ईसपकथानिकुंजम् (ईसप की कहानियाँ), पराम्बा श्री योगमाया प्रणीत 'मृत्युःचन्द्रमसः' (ओडिआ भाषा से संस्कृतानुवाद), इत्यादि प्रमुख अनूदित बाल–साहित्य का उदाहरण है।

सप्तम अध्याय : संस्कृत पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित बालसाहित्य की समीक्षा

किसी भी भाषा के विकास के लिए या उसके साहित्य के प्रचार–प्रसार के लिए पत्र–पत्रिकाओं की महती भूमिका है। उन्नीसवीं शदी का मध्ययुगानन्तर संस्कृत पत्रकारिता के इतिहास का प्रारम्भ होता है। संस्कृत में बाल–पत्र–पत्रिकाओं का प्रारम्भ संस्कृत भाषा के प्रचार–प्रसार से माना जाता है। संस्कृत के कुछ उत्साही युवा यथा–संस्कृत भारती के संस्थापक चमुकृष्णशास्त्री, लोकभाषा प्रचार समिति के संस्थापक डॉ. सदानन्द दीक्षित डॉ. विश्वास, जनार्दन हेगड़े, प्यारे लाल शर्मा इत्यादि विद्वानों द्वारा संस्कृत को बोलचाल की भाषा बनाने के लिए राष्ट्रव्यापी अभियान चलाया। बेङ्गलूरु में कार्यरत 'हिन्दू–सेवा–प्रतिष्ठानम्' और अधुनातन रूप में 'संस्कृत भारती' तथा 'लोकभाषा–प्रचार–समिति' आदि ने संस्कृत पत्रकारिता के अधुनातन स्वरूप को व्यवस्थित बनाकर बालकों के लिए विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं का प्रकाशन प्रारम्भ किया है। इन पत्रिकाओं में बाल–साहित्य आधारित पत्रिकाएँ निम्नलिखित है– सम्भाषण सन्देश (मासिक, बेङ्गलूरू), संस्कृत–बाल–संवादः (मासिक), संस्कृत–प्रतिभा (त्रैमासिकी), कथासरित् (षाण्मासिक) इत्यादि प्रमुख

पत्र–पत्रिकाएँ है। वस्तुतः इन पत्र–पत्रिकाओं के प्रत्येक अंक में बालकों के लिए पृथक से बालकविता, शिशु–कविता, बालकथा, लघुकथा, अनूदित कथा एवं विभिन्न रामायण महाभारत, पुराण तथा नीति कथाओं का धारावाहिनी रूप में प्रकाशन किया जाता रहा है।

अष्टम अध्याय : संस्कृत बालसाहित्य का संस्कृत साहित्य एवं समाज को योगदान

मेरे द्वारा प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध संस्कृत बाल साहित्य के क्षेत्र में अनेकानेक उद्देश्यों एवं समस्याओं के समाधान में उपयोगी साबित होगा। संस्कृत–साहित्य के इतिहासकारों द्वारा अभी तक अपने इतिहास ग्रन्थों में बाल–साहित्य को पृथक् से एक विधा के रूप में स्वीकार नहीं किया गया है, जो एक दुर्भाग्यपूर्ण है। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में संस्कृत बाल साहित्य का व्यवस्थित एवं क्रमबद्ध प्रारम्भ आचार्य वासुदेव दीक्षित के बाल–ग्रन्थों से माना जाता है, यद्यपि बङ्गाल में मदनमोहन तर्कालङ्कार, ईश्वरचन्दविद्यासागर, हरिश्चन्दकवि, रवीन्द्रनाथ ठाकुर इत्यादि द्वारा अनेक बाल–साहित्य आधारित काव्यों का प्रणयन किया गया है। इन बालकाव्यों में प्रमुख है– शिशुदर्पण (1857 ई.), शिशुकविता (1947), सचित्रबालकंरजन–रामायण कथा (1923) इत्यादि। इसके अतिरिक्त बाल साहित्य के परिशीलन से बालकों की बाल–मनोसंवेदनाओं का भी संतुलित एवं सकारात्मक परिणयन हो सकेगा। संस्कृत बाल साहित्य के पठन–पाठन से बालकों का नैतिक, आध्यात्मिक, सामाजिक–सांस्कृतिक एवं राजनैतिक विकास भी सम्भव है। अतः प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध के पश्चात विद्वानों एवं काव्यशास्त्रीयों द्वारा बाल साहित्य को पृथक् विधा स्वीकार करके इसके काव्यशास्त्रीय लक्षणों का प्रतिपादन करना सम्भव हो सकेगा।

उपसंहार

निष्कर्षतः प्रस्तुत शोध प्रबन्ध संस्कृत साहित्य एवं समाज के सकारात्मक एवं सन्तुलित विकास में 'सत्यं शिवं सुन्दरम्' की भावना को चरितार्थ करेगा। इस तरह प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से यह शोध–प्रबन्ध नवागन्तुक लेखकों एवं समीक्षकों के लिए उपयोगी साबित होगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

≈≈≈≈

सन्दर्भग्रन्थानुक्रमणिका

सन्दर्भग्रन्थानुक्रमणिका

बालसाहित्यपरक ग्रन्थ

(क) बालकाव्य

1. कपिः कूर्दते शाखायाम् : ऋषिराज जानी, खुश्बू प्रकाशन, अहमदाबाद, सन 2016
2. कौमारम : अभिराजराजेन्द्र मिश्र, वैजयन्त प्रकाशन, इलाहाबाद, सन 2008
3. चित्वा तृणं तृणम् : डॉ. संजय कुमार चौबे, प्रगतिशील प्रकाशन, नई दिल्ली, 2018
4. जीवनालोकः : करुणाकर दाश
5. डयते कथमाकाशे : डॉ. राजकुमार मिश्र, मान्यता प्रकाशन, नई दिल्ली, 2015 ई.
6. देवशिशु : प्रमोद कुमार नायक, लोकभाषा प्रचार समिति, उड़ीसा
7. निशिगन्धा : ऋषिराज जानी, ओरो प्रकाशन, श्री अरविन्द आश्रम संस्कृति परिषद्, पुण्डुचेरी
8. पिपीलिका विपणिं गच्छति : हर्षदेव माधव, राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली
9. बाजीराउत : डॉ. नारायण दाश
10. बालगीतम् : श्रीराम भि. वेलणकर, श्रीरामसुधा संस्कृत निधि मुम्बई, 1987 ई.
11. बालगीतम् : वीणा गोडबोले, श्रीरामसुधा संस्कृत निधि, मुम्बई, 2001 ई.
12. बालगीतम् : शशिकान्त शर्मा 'बालमित्र', नेशनल बुक ट्रस्ट ऑफ इण्डिया, नई दिल्ली, 1999 ई.
13. बालगीतम् अङ्गगीतम्, डॉ. कृष्णलाल, विभुवैभवम प्रकाशन, नई दिल्ली, 2000 ई.
14. बालकवितावलि (प्रथम–द्वितीय खण्ड) : आचार्य वासुदेव दीक्षित, प्रार्थना प्रकाशन, सार्वभौम संस्कृत् प्रचारसंस्थानम्, वाराणसी
15. बालचापल्यम् : भुवनेश्वर शर्मा, कायनम, उड़िसा, 2004 ई.
16. बालतरङ्गिणी : डॉ. रामकिशोर मिश्र, 377/14 पठ्ठीरामपुरम्, खेकड़ा (उ.प्र.) 2001 ई.
17. बालगीत–शतकम् : प्रो. सुभाष वेदालंकारः, अलंकार प्रकाशन, जयपुर, 2005 ई.
18. बालचरितम् : डॉ. रामकिशोर मिश्र, महामना मालवीय महाविद्यालय, खेकडा, बागपत (उ.प्र.), 1981
19. बालगीतालि : प्रो. हरिदत्त शर्मा, आंजनेय प्रकाशन, इलाहबाद 1991 ई.
20. बालगीतांजलि : इच्छाराम द्विवेदी, प्रणवरचनावलि प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003 ई.
21. बालगीतमालिका : मनोरमा, भारतीय संस्कृति संस्थान, लखनऊ, 1981 ई.
22. बालगुंजनम् : डॉ. अरविन्द कुमार तिवारी, एजुकेशनल बुक सर्विस, नई दिल्ली 2018
23. बालवाटिका : डॉ. ओमप्रकाश ठाकुर, सुरभि प्रकाशन, नई दिल्ली, 1993 ई.

24. बालवाटिका : बसवास, उत्तरप्रदेश संस्कृत संस्थान, लखनऊ, 2001 ई.
25. बालसाहित्यसरिता : प्रमिल्य पारिख, सुरभारति प्रकाशन, मुम्बई, 1982 ई.
26. बालसंस्कृतम् : आचार्य वासुदेव द्विवेदी, सार्वभौम संस्कृतप्रचारसंस्थान, वाराणसी
27. बालसुभाषितम् : आचार्य वासुदेव द्विवेदी, सार्वभौमसंस्कृतप्रचारसंस्थान, वाराणसी
28. बालविनोदमाला : आचार्य वासुदेव द्विवेदी, सावभौमसंस्कृतप्रचारसंस्थान, वाराणसी
29. मलालाचरितम् : प्रो. रवीन्द्र कुमार पण्डा, अर्वाचीन संस्कृत परिषद्, बड़ोदरा 2017 ई.
30. रङ्गरुचिरम् : पं. दिगम्बर महापात्र, उमेशचन्द्र महापुत्र प्रकाशन, वाराणसी, 1983 ई.
31. ललनागीतम् : डॉ. सम्पदानन्द मिश्र, संस्कृत भारती, बेङ्गलूरु, 2003 ई.
32. ललितलाघवम् : पं. दिगम्बर महापात्र, भुवनेश्वर, 2001 ई.
33. शनैः शनैः (बालगीतावलि) : डॉ. सम्पदानन्द मिश्र, ओरो प्रकाशन, श्री अरविन्द आक्षम पुण्डुचेरी, 2016 ई.
34. शिशुगीतिका : आचार्य गौरीशंकर ब्रह्म, भुवनेश्वर, उड़िसा, 1992 ई.
35. शिशुलीलालाघवम् : गणेश गंगाराम पेणडकर, मुम्बई, 1979 ई.
36. संस्कृतगीतमालिका : मनोरमा, भारतीय संस्कृति संस्थान, लखनऊ, 1981 ई.
37. संस्कृतदेशभक्तिगीतम् : प्रो. सुभाष वेदालंकार, अलंकार प्रकाशन, जयपुर, 1998 ई.
38. सचित्र–संस्कृत बालगीतानि : राजेन्द्र पाण्ड्या, बागपत विद्यापीठम् सोला, गुजरात, 2002 ई.

(ख) बालकथा ग्रन्थ

1. अजाशती : भास्कराचार्य, नागप्रकाशन, 11–ए, जवाहर नगर, नई दिल्ली
2. अनादृता : डॉ. भट्टमथुरानाथ शास्त्री
3. अभिनवपंचतन्त्रम् : अभिराजराजेन्द्र मिश्र, वैजयन्त प्रकाशन, इलाहबाद, 2008 ई.
4. ईसपकथाकुंजम् : नारायण बालकृष्ण गोडबोले, पाण्डुरंग जावाजी प्रकाशन, 1923 ई.
5. ईसपकथानिकुजम् : डॉ. ओमप्रकाश ठाकुर,
6. एकदा : डॉ. केशवचन्द्रदाश, लोकभाषा प्रचार समिति, पुरी ओड़िसा, 1991 ई.
7. कथाकौतुकम् : डॉ. केशवदेव, अमरग्रन्थ पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2012 ई.
8. कथातरङ्गिणी, दशरथजानी व सुरेशचन्द्र दवे, बिरहार, गुजरात संस्कृति परिषद्, अहमदाबाद, 1984 ई.
9. कथाकुसुममंजरी : एस. वेङ्कटरमण शास्त्री, श्रीविद्या प्रेस, कुम्भकोणम्, 1919 ई.
10. कथाकौमुदी : प्रो. प्रभूनाथ द्विवेदी, हंसा प्रकाशन, जयपुर, 2007
11. कथालहरी : एच.वि. नागराजराव, संस्कृत भारती, नव देहली, 2000–01

12. कथानकवल्ली : देवर्षि कलानाथ शास्त्री, हंसा प्रकाशन, जयपुर 2002 ई.
13. कथामुक्तावलि : पण्डिता क्षमाराव
14. किशोरकथावलि : डॉ. रामकिशोर मिश्र, 377/14, पट्टीरामपुरम्, खेकड़ा (उ.प्र.), 1987 ई.
15. चमत्कारिकःचलदूरभाषः ऋषिराज जानी, पार्श्व पब्लिकेशन, अहमदाबाद, 2013 ई.
16. बालकथा : डॉ. पूजा उपाध्याय, संस्कृत भारती, नई दिल्ली, 2013 ई.
17. बालकथामाला : वीणा गोडबोले, श्रीरामसुधा संस्कृतनिधि, मुम्बई, 2001 ई.
18. बालकथाकुंजम् : श्रीराम भी. वेलणकर, श्रीरामसुधा संस्कृतनिधि, मुम्बई, 1996
19. बालकथामाला : आचार्य वासुदेव द्विवेदी, सार्वभौम संस्कृतप्रचारसंस्थानम्, वाराणसी
20. बालनीतिकथा : वैद्य रामस्वरूप शास्त्री, बालसंस्कृति प्रकाशन, मुम्बई
21. बालकथासप्तति : जनार्दन हेगड़े, संस्कृत भारती, बेङ्गलूरु, 2013 ई.
22. बालकथास्रवन्ती : जनार्दन हेगड़े, संस्कृत भारती, बेङ्गलूरु, 2014 ई.
23. बुभुक्षित काक : डॉ. हर्षदेव माधव
24. महान् : डॉ. केशवचन्द्र दाश, लोकभाषा प्रचार समिति, शारदावलि, पुरी, 1991 ई.
25. मार्जालस्य मुखं दृष्टम् : डॉ. विश्वास, संस्कृत भारती, नव देहली, 2011 ई.
26. संक्षेपपंचतन्त्रम् : आचार्य पद्मशास्त्री, रचना प्रकाशन, जयपुर, 2005 ई.
27. संस्कृत कथाकल्लोलिनी : डॉ. रमाकान्त पाण्डेय, हंसा प्रकाशन, जयपुर, 2007 ई.
28. संस्कृतकथाशतकम् : आचार्य पद्मशास्त्री, रचना प्रकाशन, जयपुर, 2005 ई.
29. सुकान्तकथाविंशति : सुकान्तकुमार सेनापति व सं. डॉ. नारायण दाश, संस्कृतविभाग, रामकृष्णमिशन महाविद्यालय, नरेन्द्रपुर, कोलकत्ता, 2012 ई.
30. षड़यन्त्र विस्फोटनम् : डॉ. उर्वी

(ग) बालनाटक

1. अभिशप्तदशरथम् : डॉ. रामकिशोर मिश्र, नाट्यश्रुति, खेकड़ा (उ.प्र.) 1997 ई.
2. कचदेवयानीयम् : डॉ. रामकिशोर मिश्र, नाट्यश्रुति, खेकड़ा (उ.प्र.), 1997 ई.
3. चण्डप्रतिज्ञानम् : डॉ. रामकिशोर मिश्र, नाट्यश्रुति, खेकड़ा (उ.प्र.), 1997 ई.
4. ध्रुवम् : डॉ. रामकिशोर मिश्र, नाट्यश्रुति, खेकड़ा (उ.प्र.), 1997 ई.
5. नाट्यनवरत्नम् : अभिराजराजेन्द्र मिश्र, वैजयन्त प्रकाशन, इलाहाबाद, 2007 ई.
6. बालनाट्यसौरभम् : डॉ. रामकिशोर मिश्र, नाट्यश्रुति, खेकड़ा (उ.प्र.) 1997 ई.
7. बालनाटकम् : आचार्य वासुदेव द्विवेदी, सार्वभौमसंस्कृतप्रचारसंस्थानम्, वाराणसी
8. बालनाटकानि : डॉ. पूजालाल, श्री अरविन्द आश्रम, पुण्डुचेरी, 1983 ई.

9. बालनाट्यावलि : श्रीरामचन्द्र अम्बिकादत्त–शाण्डिल्य, राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली, 1998 ई.
10. बालकानाम् जवाहरः विघ्नहरिदेव, शारदा गौरव ग्रन्थमाला, पत्रकार नगर, पूणे
11. बालनाट्यवल्लरी : सौ. दुर्गा पारखी, संस्कृत भारती, गोवा, 2016 ई.
12. बालभारतम् : अगस्त्य पण्डित, के.एस. राममूर्ति, ओरियन्टल रिसर्च इन्स्टिट्यूट, तिरुपति, 1983 ई.
13. वृक्षरक्षणम् : प्रो. ताराशङ्कर पाण्डेय, राष्ट्रीय संस्कृत साहित्य केन्द्र, जयपुर, 2013 ई.
14. हंसरक्षणम् : प्रो. तााशङ्कर पाण्डेय, हंसा प्रकाशन, जयपुर, 2010 ई.

(घ) बाल–उपन्यास

1. कनीयान् राजकुमार : प्रो. गोपबन्धु मिश्र, संस्कृत भारती, गोवा, 2013 ई.
2. पताका : डॉ. केशवचन्द्र दाश, लोकभाषा प्रचार समिति, शारदावलि, पुरी, 1990 ई.
3. मृत्यु : चन्द्रमस : पराम्बा श्री योगमाया, संस्कृत भारती, नवदेहली, 2000 ई.

(ङ) अनूदित बाल–साहित्य

1. अमूल्यकथासंग्रहः एस.रामनाथ, शरत् मित्र, संस्कृत भारती, नव देहली, 2013 ई.
2. कान्तारकथा : अभिराजराजेन्द्र मिश्र, वैजयन्त प्रकाशन, इलाहाबाद, 2007 ई.
3. चौरचत्वारिंशत् कथा : गोविन्द कृष्ण, कर्नाटक प्रिंटिंग प्रेस, मोड़क, मुम्बई संस्कृत भारती, नव देहली, 2012 ई.
4. बोधकथा : डॉ. संजीव, संस्कृत भारती, नव देहली, 2012 ई.
5. महाभारत नीतिकथा : उद्यन हेगड़े, संस्कृत भारती, नव देहली, 2012 ई.
6. शिशुस्वान्तम् : डॉ. के. वरलक्ष्मी, संस्कृत भारती, गोवा, 2016 ई.
7. स्वच्छ काननस्य कथा मातामह्य कथिता : डॉ. बलदेवानन्द सागर, सूचना एवं प्रकाशन मंत्रालय, भारत सरकार, 2017 ई.

बालसाहित्यपरक संस्कृत पत्र–पत्रिकाएँ

1. अर्वाचीनसंस्कृतम् : डॉ. ज्ञानपाठक, श्रीलालबहादूर शास्त्री केन्द्रीय संस्कृत वि.वि., नई दिल्ली
2. कथासरित् (षाण्मासिकी) : डॉ. बनमाली बिश्वाल, कथा भारती 57, बसन्त विहार, झूसी, इलाहबाद–2011019
3. दृक् (षाण्मासिकी) : डॉ. शिवकुमार मिश्र, एम.आई.जी. आवास, विकास कॉलोनी, झूसी, इलाहाबाद–211019
4. पद्यबन्धा (षाण्मासिकी) : डॉ. बनमाली बिश्वाल व डॉ. धमेन्द्रकुमार सिंहदेव, वीणापाणि संस्कृत समिति, भोपाल (म.प्र.)

5. प्रतिभा (त्रैमासिकी) : अभिराजराजेन्द्र मिश्र, केन्द्रीय साहित्य अकादमी, विक्रय विभाग, नई दिल्ली–01
6. बालसंस्कृतम् (मासिकी) : सुधिर कुमार मिश्र, दिनेश कुमार मिश्र, उत्तरप्रदेश संस्कृत संस्थान, न्यू–हैदराबाद, लखनऊ–226007
7. भारतीय पत्रिका (मासिकी) : डॉ. प्यारे मोहन शर्मा, बी. 15 आरती भवन, न्यू–कॉलोनी, जयपुर
8. लोकभाषा सुश्री : सदानन्द दीक्षित, सरस्वती विहार, बरपदा, भद्रक, ओड़िसा–756113
9. संस्कृत चन्द्रिका (मासिकी) : डॉ. धर्मेन्द्र कुमार सिंहदेव, दिल्ली संस्कृत अकादमी, प्लॉट सं.–05, झण्डेवाल, करोल बाग, नई दिल्ली–110005
10. संस्कृत–मंजरी (त्रैमासिकी) : डॉ. धर्मेन्द्र कुमार सिंहदेव, दिल्ली संस्कृत अकादमी, नई दिल्ली–110005
11. संस्कृत चन्दामामा (मासिकी) : चक्रपाणी, नागिरेड्डी, अक्षरम्, बेङ्गलूरू, 1984 ई.
12. सम्भाषण सन्देश (मासिकी) : जनार्दन हेगड़े, 'अक्षरम्' गिरिनगरम्, बेङ्गलूरु,, 56085
13. संविद (त्रैमासिकी), प्रो. जयन्तकृष्ण एच. देव, प्रो. एस.ए. उपाध्याय, कुलपति के.एम. मुन्शी मार्ग, चौपाटी, मुम्बई

प्राचीन–अर्वाचीन संस्कृत साहित्यिक ग्रन्थ

1. अग्निपुराण (वेदव्यास) : डॉ. तारिणीश झा, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, 1998
2. अभिज्ञानशाकुन्तलम् (कालिदास) : डॉ. निरूपण विद्यालंकार, साहित्य भण्डार, मेरठ, 1995
3. ऋग्वेद संहिता : स.प. रामगोविन्द त्रिवेदी, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 2003
4. किरातार्जुनीयम् (भारवि) : स. एवं व्याख्याकार डॉ. कृष्ण कुमार, साहित्य भण्डार, मेरठ
5. कुमारसम्भवम् (कालिदास) : डॉ. रामचन्द्र वर्मा शास्त्री, मनोज पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 2006
6. तैत्तिरीयसंहिता : सं. दामोदर सातवलेकर, भारत मुद्राणालय, औंध, 1945
7. नारद पुराण : सं. हनुमान प्रसाद पोद्दार, गीता प्रेस, गोरखपुर, 1954
8. निरुक्तम् : सं. छज्जू राम शास्त्री, मेहरचन्द लछमन दास पब्लिकेशन्स, दिल्ली 1985
9. नीतिशतकम् (भतृहरि) : डॉ. गोपाल शर्मा, हंसा प्रकाशन, जयपुर
10. पंचतन्त्रम् (विष्णुशर्मा) : सम्पादक एवं व्याख्याकार–प्रो. बालकृष्ण शास्त्री, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी
11. पातंजल महाभाष्य : पतंजलि, निर्णय सागर प्रेस, बम्बई, 1937
12. ब्रह्म पुराण : हिन्दी व्याख्याकार तारिणीश झा, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, 1993
13. बालरामायण (राजशेखर) : जीवानन्द, विद्यासागर प्रकाशन, कलकत्ता, 1884

14. मनुस्मृति : आचार्य मनु मेधातिथि भाष्य–सं. गंगानाथ झा, कोलकत्ता, 1967
15. महाभारत (वेदव्यास) : सं. एवं व्याख्याकार रामनारायण दत्त शास्त्री, गीताप्रेस गोरखपुर, 1987 ई.
16. मालविकाग्निमित्र (कालिदास) : सं. एवं व्याख्याकार, डॉ. रमाशंकर पाण्डेय, चौखम्बा सुरभारतीय प्रकाशन, वाराणसी, 2014
17. मुद्राराक्षस (विशाखदत्त) : सं. डॉ. गंगासागरराय, चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, 2006
18. मेघदूत (कालिदास) : सं. एवं व्याख्याकार, आचार्य श्री शेषराजशर्मा रेग्मी, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 2013
19. रघुवंश (कालिदास) : सं. डॉ. कृष्णमणि त्रिपाठी, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2008
20. वाल्मीकि रामायण (बालकाण्ड) : सम्पादक–शिव शर्मा, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 1977
21. श्रीमद्भागवत्गीता (वेदव्यास) : सं. हनुमान प्रसाद पोद्दार, गीताप्रेस गोरखपुर, विक्रमसंवत् 2061
22. श्रीमद्भागवत् पुराण (वेदव्यास) : सं. हनुमान प्रसाद पोद्दार, गीताप्रेस गोरखपुर, 1997
23. हितोपदेश (नारायण पण्डित) : सम्पादक एवं व्याख्याकार, डॉ. भीमराज शास्त्री, हंसा प्रकाशन, जयपुर

काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ

1. अग्निपुराण : सं. डॉ. तारिणीश झा, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग 1998
2. अनुवाद विज्ञान : स्वरूप और समस्याएँ : डॉ. रामगोपाल सिंह
3. अभिनवकाव्यालंकारसूत्रम् : प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी
4. अभिराजयशोभूषणम् : अभिराज राजेन्द्र मिश्र, वैजयन्त प्रकाशन, इलाहाबाद, 2006
5. आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र : आनन्द कुमार श्रीवास्तव, ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली, 1990
6. काव्यादर्श (दण्डी) : सं. व व्याख्याकार जमुना पाठक, चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी, 2005
7. काव्यालंकार (भामह) : देवेन्द्रनाथ शर्मा, विद्या राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना, 1962
8. काव्यप्रकाश (मम्मट) : श्रीनिवास शास्त्री, साहित्य भण्डार, मेरठ 1992 चतुर्दश संस्करण
9. छन्दोमंजरी (गंगादास) : व्याख्याकार ब्रह्मानन्द त्रिपाठी, चौखम्बा सुरभारती, वाराणसी, 1883
10. दशरूपक (धनंजय) : व्याख्याकार भोलाशंकर व्यास, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 1955
11. ध्वन्यालोक (लोचन टीका सहित) : आचार्य आनन्दवर्धन मिश्र, निर्णयसागर प्रेस, बम्बई, 1991
12. नाट्यशास्त्र (भरतमुनि) : सं. एवं व्याख्याकार श्री बाबूलाल शुक्ल शास्त्री, चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, 2010
13. पाश्चात्य काव्यशास्त्र : देवेन्द्रनाथ शर्मा, मयूर पैपर वैक्स पब्लिकेशन्स इंदिरापुरम्, नई दिल्ली, 2016

14. भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यसिद्धान्त : गणपति चन्द्र गुप्त, लोकभारती प्रकाशन इलाहबाद, 2016
15. रस–गंगाधर : भट्टमथुरानाथ शास्त्री, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली 1983
16. वक्रोक्तिजीवितम् (कुन्तक) : सं. आचार्य विश्वेश्वर, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली, 1955
17. समीक्षाशास्त्र : कृष्णलाल हंस, काशी, 1954
18. समीक्षा के नए प्रतिमान : अशोक द्विवेदी, अनिल प्रकाशन, इलाहबाद 1992
19. संस्कृत साहित्य में नैतिक शिक्षा एवं राष्ट्रीय चेतना : डॉ. भीमराज शास्त्री, हंसा प्रकाशन, जयपुर
20. साहित्यदर्पण (पं. विश्वनाथ) : विश्वनाथ, भारतीय विद्या भवन, दिल्ली 1988
21. साहित्यदर्पण (पं. विश्वनाथ) : सम्पादक शालिग्राम शास्त्री, साहित्य भण्डार, मेरठ, 1992 चतुर्दश संस्करण

इतिहास ग्रन्थ – संस्कृत साहित्य

1. आधुनिक संस्कृत साहित्य : आचार्य दयानन्द भार्गव, राजग्रन्थागार, जोधपुर
2. आधुनिक संस्कृतसाहित्येतिहास : देवर्षि कलानाथ शास्त्री, जगदीश संस्कृत पुस्तकालय, जयपुर 2004
3. राजस्थानीयमभिनवसंस्कृतसाहित्यम् : डॉ. सुषमा सिंघवी, डॉ. गंगाधर भट्ट, राज. संस्कृत अकादमी, जयपुर 1990
4. संस्कृत साहित्य का इतिहास : वाचस्पति गैरोला, चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी, 2003
5. संस्कृत साहित्य का इतिहास : डॉ. बलदेव उपाध्याय एवं डॉ. गौरी शंकर उपाध्याय, टाइम टेबुल प्रेस वाराणसी, 1958
6. संस्कृत साहित्य का इतिहास (लौकिक खण्ड) : डॉ. प्रीतिप्रभा गोयल, राजस्थानी ग्रन्थ सभागार, जोधपुर, 2006
7. संस्कृत साहित्य का इतिहास : डॉ. ए.बी. कीथ, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 2002
8. संस्कृत साहित्य का इतिहास–20 वीं शताब्दी : प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी, राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली

कोशादि–ग्रन्थ

1. अमरकोश : (अमर सिंह, मणिप्रभाटीका सहित), संपा. हरिगोविन्द शास्त्री, चौखम्बा संस्कृत सीरीज ऑफिस, वाराणसी, संवत 2026
2. मानक–हिन्दी कोश : हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग 1965
3. संस्कृत हिन्दी कोश : वामन शिवराम आप्टे, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1966
4. संस्कृत हिन्दी अंग्रेजी शब्दकोश : डॉ. शिवप्रसाद, अशोक प्रकाशन, दिल्ली 2003

5. शब्द कल्पद्रुमः (भाग 1–5) : राजाराधाकान्तदेव बहादुर, चौखम्बा संस्कृत ग्रन्थमाला, वाराणसी, 1961
6. संस्कृत साहित्यकोश : डॉ. राजवंवश सहाय, चौखम्बा राष्ट्रभाषा ग्रन्थमाला, वाराणसी 1973

सहायक हिन्दी–आंग्ल ग्रन्थ

1. उपनिषदों की बाल–कहानियाँ : अश्विनी कपूर, दक्ष प्रकाशन, दिल्ली 2007
2. उपनिषदों की कथाएँ : सुदर्शन भाटिया, आरोग्य निधि प्रकाशन, यमुनाविहार, दिल्ली
3. प्राचीन बाल कहानियाँ : पं. रामकृष्ण शर्मा, गीताप्रेस, गोरखपुर
4. बाल विज्ञान के आधार : प्रीति वर्मा, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर
5. महाभारत की बोधक कथाएँ : डॉ. राजकुमारी त्रिखा
6. हिन्दी बाल–साहित्य–कुछ पड़ाव : रमेश दिविक्, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, 2015
7. Child Study: जी.एच.डिक्सन
8. Child Development : Harlock. E.V., मैकग्राहिल प्रकाशन 1942 ई.
9. A History of Indian Literature : Prof. M. Winterniz, Vol. II University of calcutta, 1956

वेबसाइट्स

1. Sahitya-akademi.gov.in
2. www.sanskritacademi. delhi.gov.in
3. https://sanskritbhasi.blogspot.com
4. https://sanskritabalasahityaparishad.org
5. shodhganga.inflibnet.ac.in

≈≈≈≈

प्रकाशित शोध–पत्र

क्र. सं.	शोध–पत्र का शीर्षक	प्रकाशन वर्ष	शोध–पत्रिका/पुस्तक का नाम	ISSN NO.	राष्ट्रीय/अन्तर्राष्ट्रीय
01.	आधुनिक संस्कृत बाल–साहित्य में नैतिक चिन्तन	2018	SODHA MIMAMSA	2348–4624	अन्तर्राष्ट्रीय
02.	विश्व संस्कृत साहित्य में बाल–साहित्य का योगदान	2020	वेदांजली	2349–364X	अन्तर्राष्ट्रीय

Approved by UGC
Journal No. 48923
Letter No. : NSL/ISSN/INF/2014/461

ISSN 2348-4624
IIJ Impact Factor No. : 2.695

Śodha Mīmāṁsā

An International Refereed Research Journal

Year-V No. XVII, Issues-V January-March, 2018

Editor in Chief
Dr. Rakesh Kumar Maurya

Associate Editor
Dr. Anish Kumar Verma
Dr. Devi Prabha

Published by :
Kusum Jankalyan Samiti
Deoria, U.P. (INDIA)

कृषिजन्य उद्योगों के उत्पादों का विश्लेषण नोखा प्रखण्ड (रोहतास जिला) के सन्दर्भ में 173–174
संजीव कुमार
गुप्तकालिन शिक्षा, साहित्य एवं विज्ञान 175–177
डॉ0 शाहबाज वारिस खाँ
भोजपुर जिला में शिक्षित बेराजगार महिलाओं की स्थिति का विश्लेषण 178–179
स्नेह कीर्ति
आस्रव के भेद, प्रभेद और उनकी विशेषता 180–181
डॉ0 मधु जैन
चौरी–चौरा काण्ड–एक दुर्घटना 182–183
डॉ0 ज्ञान प्रकाश मिश्र
भारतीय स्त्रियों की स्थिति वैदिक युग से लेकर वैज्ञानिक युग तक : एक विवेचना 184–185
डॉ0 अनुपमा रश्मि
आधुनिक संस्कृत बाल–साहित्य में नैतिक चिंतन 186–188
हेमराज सैनी
काव्यशास्त्रे शुक्रविदुरनीत्योः प्रभावः 189–191
राम गोपाल चौधरी
महिला में उच्च शिक्षा दर के विकास हेतु संभावित योजना 192–193
रविशंकर राम

◆◆◆

Śodha Mīmāṁsā - ISSN 2348-4624
Letter No. NSL/ISSN/INF/2014/461
Published by : Kusum Jankalyan Samiti, Deoria, U.P. (INDIA)
UGC Journal No. 48923

IIJ Impact Factor : 2.695
Year : V, No. XVII, Issues-V
January-March, 2018
Page No. : 186-188

आधुनिक संस्कृत बाल-साहित्य में नैतिक चिंतन

हेमराज सैनी*
*शोध छात्र (जे.आर.एफ.), संस्कृत विभाग, राज. महाविद्यालय, बून्दी

साहित्य में प्रयुक्त प्रत्येक शब्दार्थ प्रतिक्षण रमणीयता एवं आह्लादकता उत्पन्न करने में समर्थ होता है। कवि अपनी नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभा से इस रमणीयता एवं सरसता को अनवरत सरल एवं सहज रूप में पाठकों और सामाजिकों के समक्ष अभिव्यक्त करता हैं। वस्तुतः कवि द्वारा काव्यरचना का प्रयोजन भी कान्तासम्मित रूप में सहृदय सामाजिक को सहज एवं सरस रूप में मनोरञ्जक तथा नैतिक उपदेश करना है। इसी सन्दर्भ में सनातन कवि 'रहसबिहारी द्विवेदी जी'[1] ने काव्यनिर्माण के प्रयोजन उल्लेखित किए हैं–

"असन्तं मार्गमुत्सय्रिय सन्तं गमयितुं जनम्।
हृदाह्लादिकया वाचा प्रज्ञावान् काव्यम>ते।।
कविकीर्तिपुरस्कारस्वान्तसुखसमीहया।
प्राक्कथावस्तुसंस्कारं सता च चरिता नम्।।
नव्यकाव्यविधोन्मेशं व्य>योक्तिं विकृतोतथा।
राष्ट्रभक्तिं युगौचित्यं पर्यायवरणचेतनाम्।।
राष्ट्रस्वातन्त्र्य वीराणां चरितं चाराध्यमीश्वरम्।
समुद्दिश्याधुना काव्यं कुर्वन्ति कवितल्लजा:।।"

आधुनिक संस्कृत साहित्य में स्वतन्त्रता के पश्चात् संस्कृत बाल अनुरागिणों के लिए विद्वतृ समाज द्वारा पृथक से साहित्य सन्धान का नवोन्मेष प्रयास किया है, जिसमें 'बालसाहित्य' भी नवीन विधा के रूप में अर्वाचीन संस्कृत साहित्य में आविर्भूत हुई। इस नवीन बाल–विधा में अर्वाचीन संस्कृत कवियों द्वारा बालकों की बालमनोसंवेदनाओं बालक्रीडाओं बालभावों का वर्णन सरलातिसरल पदों में भिन्न–भिन्न रूप में स्वीकार किया गया। बाल–संस्कृति, बाल–विचारों का उपस्थापन, बाल चरित्र–चित्रण सन्धान एवं बाल–मनोगत भावों का सूक्ष्मातिसूक्ष्म चित्रण बालसाहित्य के प्रमुख भाव है।

वस्तुतः बालसाहित्य का मुख्य उद्देश्य सरल–सहज एवं व्याकरण रहित भाषा–शैली युक्त कविताओं, कथा, कथानिका, उपन्यास एवं चित्रात्मक सौन्दर्ययुक्त काव्यों के माध्यम बालकों का मनोरंजन एवं उनका नैतिक तथा आध्यात्मिक विकास करना है। संस्कृत बाल–साहित्य परिषद्, पुण्डुचेरी के अध्यक्ष सम्पदानन्द मिश्र जी ने बाल–साहित्य के उद्देश्य प्रतिपादित करने के साथ ही उसे परिभाषित किया है–

"बालानां बोधाय, बालानां चरित्रनिर्माणे, आत्मशक्तीनांविकसन च तेशु स्वदेश प्रेम्ण: जागरणे, सौन्दर्य बोधाय, तेभ्य: संस्कारप्रदाने समुचितनैतिकमूल्य बोधाय तेभ्य: संस्कारप्रदाने समुचितनैतिकमूल्य बोधाय, बालकेशु सामाजिक-सांस्कृतिक-आध्यात्मिक विकासाय, बालेशु संस्कृतप्रीतिं दढयितुं, तेशां भाषा ज्ञानं वर्धयितुं बालानांरुच्यानुसारेण यत् साहित्यं विनिर्मितम् तं साहित्यं 'बालसाहित्य' इति भाब्देन परिभाशयते। वस्तुत: बालसाहित्यान्तर्गते नवनवशब्दानां प्रयोगं, नवनवकाव्यशैलीनां, काव्यविधानां, नवनवविचाराणां समावेशं भवति।"[2]

यदि साहित्यकार बाल–साहित्य निर्माण के समय इन उपर्युक्त लक्षणों को अपने साहित्य में आत्मसात करें, तो उत्तमोत्तम बाल–साहित्य सन्धानित हो सकता है। यह सत्य हैं कि सजग लेखक, शिक्षक, महापुरुष आदि बालकों के लिए स्वस्थ परिवेश, स्वस्थ–शिक्षा और स्वस्थ साहित्य पर बल देते आ रहे हैं। अपने एक व्यक्तव्य में पं. जवाहर लाल नेहरू ने कहा था कि– "शुरु के वर्षों में बालकों में जो आदते पड़ जाती हैं और बच्चे जिस तरह सोचने लगते हैं उसका बच्चे के सम्पूर्ण जीवन पर प्रभाव पड़ता है। इसलिए मैं इस बात से पूरी तरह सहमत हूँ कि बच्चों के नैतिक विकास के लिए राष्ट्रिय नीति तय की जाए।"

अर्वाचीन संस्कृत बाल–साहित्य के अन्तर्गत काव्य निर्माण में संलग्न कवियों 'रसराज' अभिराजराजेन्द्र मिश्र, प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी, डॉ. केशवचन्द्रदास, डॉ. रामकिशोर मिश्र, प्रो. जनार्दन हेगड़े, ओ.पी. ठाकुर, प्रो. सम्पदानन्द मिश्र, स्व. पद्मशास्त्री, सुभाष तनेजा, सौ. दुर्गा पारखी, के. वरलक्ष्मी, ऋषिराज जानी एवं कुमार सेनापति तथा प्रो. बनमाली विश्वास प्रभृति विद्वान् गणनीय हैं। यह विद्वान संस्कृत बाल–साहित्य के द्वारा बालकों के मनोरंजन एवं उनके नैतिक–आध्यात्मिक–सामाजिक–सांस्कृतिक विकास में महती भूमिका निभा रहे हैं। इन विद्वानों द्वारा बालकों के हितार्थ मनोरंजन प्रधान, उपदेशात्मक, जीवनगाथात्मक एवं शिक्षा प्रदान बालसाहित्य का निर्माण किया जा रहा है। उपदेशात्मक बाल–साहित्य का मुख्य उद्देश्य बालकों को विभिन्न प्रकार के नैतिक मूल्यों–ईमानदारी, सत्य, धर्माचरण, परोपकार, त्याग, दया, समर्पण, एकनिष्ठता इत्यादि की शिक्षा प्रदान करना हैं।

बालसाहित्यकार सौ. दुर्गा पारखी ने 'असत्यं न वदेत'[3] बालएकांकी के माध्यम से बालकों को जीवन में सर्वदा सत्य के पथ पर अग्रसर होने का नैतिक उपदेश प्रदान किया गया है। इसी तरह 'ईर्ष्या न करणीया'[4] एकांकी के माध्यम से बालकों को प्रकृतिवत् आचरण करने का उपदेश दिया है यथा–

श्याम :

ईश्वरेण यत् दत्तं तत् प्रसादरूपेण स्वीकर्तव्यम्।
काक: कृष्णो बक: भवेत: भेदोऽयं हि निसर्गत:।
लिम्पनैर्घर्शणै: स्नानै: कथं काको बको भवेत्।।

वायस :

सत्यम् ईश्वेरच्छा बलीयसी। तत्र क: अपि परिवर्तनं कर्तुं न भाक्नोति इति मया न अवगतम्।
हे प्रभो, क्षमस्व माम्। (निर्गच्छति)।"

यहाँ कवि का कथन है कि मनुष्यों एवं सम्पूर्ण प्राणी जगत् में जो वर्ण विरूपता पायी जाती हैं उसमें किसी का अधिकार नहीं है अतः मनुष्य को परस्पर नस्ल इत्यादि भेदभाव त्यागकर सौहार्दपूर्ण रहना चाहिए।

वर्तमान समय में जिस प्रकार सम्पूर्ण परिवेश विभिन्न प्रकार के सामाजिक, नैतिक, सांस्कृतिक एवं प्राकृतिक प्रदूषण से काल–कवलित हो रहा है, उसी समय प्रसारण विभाग, नई दिल्ली द्वारा पशु–पक्षी पात्राधारित बालसाहित्य के द्वारा बालकों को स्वच्छता को लेकर जो नैतिक कर्त्तव्यबोधन का उपदेश दिया गया, वह सराहनीय कदम है। 'स्वच्छ काननस्य कथा–मातामही कथिता'[5] में मनोरंजक एवं संवादात्मक शैली में बालकों को अपने आस के सम्पूर्ण परिवेश को स्वच्छ रखने की शिक्षा दी है–

"स्वच्छेदेहे एव स्वच्छं मानसम्। स्वच्छतायै गृहे विद्यालये चेति स्थान–द्वयेऽपि शौचालयाः स्युः।"

वर्तमान युग में जिस प्रकार बालकों में विभिन्न प्रकार के दुर्गण–लोभ, मोह, मद, ईर्ष्या, असत्य भाषण, आत्माभिमान इत्यादि उत्पन्न हो रहे हैं। ऐसे समय प्रो. जर्नादन हेगड़े द्वारा सरल सरस, कान्तासम्मित नीति बोध शब्दों के प्रणयन द्वारा बालहितार्थ बालकथासप्तति: (बालपुरस्कार से सम्मानित काव्य, वही 2015 ई) लेखन का जो सफल कार्य किया है, वह बालकों के जीवन को संस्कारित एवं परिमार्जित करने में पूर्णतया सक्षम हैं। कवि 'सरलता'[6] इस लघुकथा के माध्यम से बालकों के समक्ष महामना मदनमोहन मालवीय के जीवन में उपलब्ध सादगी, सरलता, शील एवं सच्चरित्रता के गुणों को अभिव्यक्त करते हैं–

"तदा श्रेष्ठी अवदत्–बाल्ये कृचन पण्डितः माम् अध्यापितवान् सः सदा बोधयति स्म–धनिकत्वं प्राप्येत चेदपि जीवने सरलता न परित्यक्तव्या इति। तत् वचनम् अहं सदा पालयामि। आडम्बराय धनव्ययं न करोमि।"

वस्तुतः जिस प्रकार वर्तमान युग में बालकों में 'फैशन' अथवा दिखावा को लेकर जो आडम्बर प्रचलन में है वैसे समय इस तरह की नैतिक बालकथाऐं बालकों को पथिप्रदर्शित करने में अत्यन्त प्रासंगिक होगी, ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है।

'बालकथासप्ततिः' के अन्तर्गत कवि द्वारा 'गुरोः वचनस्य पालनम्' से बालकों में गुरु के प्रति श्रद्धा भाव, 'मुख्यवस्तुनः रक्षणम्'[8] कथा से बालकों में 'योगक्षेमं वहाम्यहम्', एवं 'शान्तिसङ्केतः कपोतः'[9] कथा से बालकों में शान्ति का भाव उत्पन्न होता है। इसी तरह 'धर्मस्य सारः'[10] कथा से धर्माचरण एवं 'कृष्णभक्तः रसखानः'[11] कथा के माध्यम से बालकों में सर्वधर्मसम्भाव एवं वसुधैवकुटुम्बकं की भावना जागृत होती है।

वस्तुतः बाल कथाएँ रोचक कथावस्तु के माध्यम से बालकों में नैतिक चरित्र एवं आध्यात्मिक विकास करने में अत्यन्त सहायक होती हैं। यह बालकों को कान्तासम्मित लोकव्यवहार की शिक्षा प्रदान करने में समर्थ होती है।

इसी तरह उत्कलवासी डॉ. केशवचन्द्रदास प्रणीत 'महान' (बालकथा, 1991 ई.) में संकलित एकादश बालकथाऐं बालकों में स्वराज्य प्राप्ति, सत्य, सत्सङ्गति इत्यादि नैतिक मूल्यों का संचार करती हैं। 'संघं शरणं गच्छामि'[12] बालकथा में संघटन की महत्ता प्रतिपादित की गई है–

"प्रत्येकं जनः स्वयमेकः संघः। तस्य निष्ठा संघस्य नीतिः। तस्य तिष्ठति। परिवर्तिनि संसारे सर्व परिवर्तनीयः। नीतिः च नवीकर्त्तव्या। व्यवहारोऽपि परिवर्त्तनीयः देशकाल पात्रानुसारेण। संघः सत्यस्य आधारः। सत्य प्रति प्रतिष्ठापनाय प्रतिगृहं च शान्तिप्रापणाय संघस्य स्थापना...।"

बालकों की मनः स्थिति एवं मनोभावों को ध्यान में रखकर नैतिक एवं सौन्दर्यात्मक बाल–साहित्य के निर्माण में संलग्न संस्कृत बालसाहित्य परिषद्, पुण्डुचेरी द्वारा प्रकाशित 'शनैः शनैः'[13] बाल–कविता के अन्तर्गत प्रकृतिस्थ पात्रों के माध्यम से बालकों को जीवन के कर्त्तव्यपथ पर अविरत आगे बढ़ने की शिक्षा दी है। कवि कहता है कि जिस प्रकार प्रकृति में विद्यमान बीज, सूर्य, जानवर इत्यादि निरन्तर कर्म पथ पर अग्रसर रहते हैं उसकी के समान मनुष्य को भी कर्म करते रहना चाहिए–

अतिलघुबीजात् रोहति वृक्षः। भवति विशालः शनैः शनैः।।
उदयति सूर्यः भवति प्रकाशः। विकसति पुष्पं शनैः शनैः।।
मुखमुद्धाटय पथि शम्बूकः। सर्पति पश्यत शनैः शनैः।।
कीटकोशात् चित्र पत>ः। प्रभवति बन्धो शनैः शनैः।।
क्रमादेकैकं ऋतवः सर्वे। पुनरायान्ति शनैः शनैः।।

प्रस्तुत 'बालगीतावलि' काव्य संग्रह में विद्यमान सम्पूर्ण बालगीत बालकों में सौन्दर्यभाव उत्पन्न करते हैं। इन बालगीतों की भाषा लय–गेय प्रधान है जिससे सुखपूर्वक बालकों को अवबोध हो जाता है।

किंतु संस्कृत साहित्य में व्यापक स्तर पर नैतिक बालसाहित्य होते हुए भी, यह परमावश्यक है कि साहित्यकार को बालसाहित्य निर्माण में संलग्न होने से पूर्व बालकों के सभी पक्षों से अवगत होना चाहिए, जैसाकि अमेरिकी लेखिका और बच्चों के लेखन के लिए प्रसिद्ध मेडलीन एल. एंगल (1918–2007 ई.)[14] का कथन है– "I belive that good questions are more important than answers and the best children's boos ask questions and make the readers ask questions. And every new question is going to disturb someone's Univers..........." अर्थात् अच्छे प्रश्न उत्तरों से अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। साहित्य में प्रश्न उठाना बहुत आसान नहीं होता, क्योंकि प्रश्न उठाया ही तब जाता है जब उसके उत्तर की ओर जाने की दिशा का ज्ञान हो।

अतः सम्पूर्ण परिस्थितियों, पक्षों का अवलोकन करने के पश्चात् ही बाल–साहित्य का नवीन सन्दर्भों में प्रयोग किया जाए। प्राचीन संस्कृत काव्यजगत् में 'रसराज' विरुद् से अलंकृत प्रसिद्ध बालकवि अभिराज मिश्र द्वारा निसर्ग शिक्षा[15] कविता के माध्यम से प्रकृतिवत् आचरण करने का नैतिक उपदेश दिया गया है, यथा–

'लोष्टलगुडघातं सोढ्वाऽपि कार्यः परोपकारः।
शिक्षयतेऽस्मान् तदिदं विपिने फलावनतसहाकरः।।
मर्यादा न परित्याज्या सागरस्तरंगैर्ब्रूते।
वात्यायां तिष्ठेदचंचलो गिरिरिति मतिं प्रसूते।।
सदगुणसंचयने प्रतिक्षणं समुद्यमः करणीयः।
मधुमक्षिकेत्युपदिशति नित्यं मधुकोषो रचनीयः।।'

कवि का कथन है कि जिस प्रकार निर्जिव, जड़, निर्मुख होने पर भी प्रकृति अपने विभिन्न प्रकार के परोपकार इत्यादि नैतिक कार्यों से सम्पूर्ण सृष्टि के कल्याण में रत रहती हैं उसी तरह बालकों को अथवा सम्पूर्ण मानवों को भी नैतिक कल्याण के मार्ग पर अग्रसर होना चाहिए।

वर्तमान में जिसप्रकार संधारणीय विकास को लेकर अनेक अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर विद्वानों के मध्य चर्चा का दौर चल रहा है उस समय प्रो. जनार्दन हेगड़े द्वारा 'न भुज्यते मही सम्पत्तिः वा'[16] का जो संधारणीय नैतिक उपदेश दिया है, वह अत्यन्त प्रासंगिक हैं–

"अन्ते संन्यासी अवदत्–त्वया महाम>चम् अपि अभिव्याप्तुं न शक्तम्। प्रभूतं भोक्तुमपि न शक्तम्। कर्तितां शाखां पुनः वृक्षे योजयितुमपि न शक्तम्। एवं स्थिति जगदेव जेतव्यम् इति मूर्खता किमर्थं तव? किं समग्रा भूमिः सम्पत्तिः वा त्वया भुज्यते? किं मृताः पुनः उज्जीवयितुं शक्याः? एवं स्थिते किमर्थम् एव? एतत्सर्वं परित्यज्य जनानां शान्तिं समृद्धिं सुखं च चिन्तय। तदेव राज्ञः आद्यं कर्त्तव्यम् इति।"

मैं व्यक्तिगत रूप से डॉ. राजेन्द्र मिश्र को धन्यवाद ज्ञापित करना चाहता हूँ कि उन्होंने पं. विष्णु शर्मा प्रणीत 'पंचतन्त्र' जैसे पशु–पक्षी कथानक आधारित प्राचीन बालसाहित्य को आधुनिक परिप्रेक्ष्य में अभिव्यक्त करके सम्पूर्ण साहित्य जगत् एवं बालजगत को कृत कृतार्थ किया।

कवि द्वारा 'अभिनवपंचतन्त्रम्' में समाज में निवासरत निम्नतम वर्ग के निर्धन बालकों को कथा का पात्र बनाकर समाज में विद्यमान विभिन्न प्रकार के भेदभाव आधारित दुर्गुणों को पाटकर सम्भाव स्थापित करने का नैतिक प्रयास किया है। यथा 'शाकविकेतृकथा'[17] में मिश्रजी द्वारा दो भिन्न–भिन्न वर्गों में जीवनयापन करने वाले धनिक युवराज एवं गरीब मदन में मैत्री करवाकर समाज की खाई को भरने का प्रयास किया है यथा–

'एवमासीत्तस्य चेतसि–सरल सम्यग्भणति स्म' यत्सौहृदं नापेक्षते कुलं जातिं गोत्रं वा। सौहृदं पश्यति केवलं सहृदयत्वम्। सौहृदं नाम द्वयोर्हृदययोः सद्भावस्थानं तुल्यसंवेदनम्। शाकविकेतृ गृहे समुपन्नोऽपि सर्वसौख्यं वञ्चितोऽप्ययं दारको यदि मम पुत्रस्य मित्रं तर्हि निश्प्रंच द्वयोरेव संस्कारसाम्यं, द्वयोरेव हृदयानुभूतिसाम्यं द्वयोरेव विचारसाम्य>च।'

मेरा यह दृढ़ विश्वास हैं कि जैसे संस्कारयुक्त बालक की हम कल्पना करते हैं या जिन अपेक्षाओं की पूर्ति हम बालक से करवाना चाहते हैं, उसके लिए हमें उसको सर्वगुण सम्पन्न नैतिक बाल–साहित्य की रचना करने की आवश्यकता है। अमेरिकी कवि और बाल–साहित्यकार चार्ल्सघिग्न (Charles Ghign, 1946) के शब्दों में– 'जब आप बच्चों के लिए लिखों तो बच्चों के लिए मत लिखों, अपने भीतर के बच्चे के द्वारा लिखों। अतः प्रत्येक बालसाहित्यकार को स्व मनः स्थिति एवं संवेदानों को जागृत करके ही साहित्य सृजन में संलग्न होना चाहिए।

अर्वाचीन संस्कृत बाल–साहित्य में पौराणिक आख्यानों को स्वीकार करते हुए विपुल मात्रा में नैतिक मूल्याधारित बालसाहित्य की सर्जना की गई है। लेकिन सभी का उल्लेख करना यहाँ सम्भव नहीं है। डॉ. रामकिशोर मिश्रा द्वारा 'बालनाट्यसौरभम्' (1994 ई) में 6 नाटकों का संग्रह किया है जिनमें पौराणिक पात्रों के माध्यम से बालकों को नैतिक उपदेश प्रदान किए हैं। 'अगुष्टदानम्'[18] नाटक में बालक एकलव्य की द्रोणाचार्य के प्रति सच्ची गुरु भक्ति अभिव्यक्त की गई है। इसी तरह 'सहसा विदधीत न क्रियां'[19] नाटक में कवि द्वारा बालकों को विवेकबुद्धि युक्त होकर ही विपत्तिकाल में कार्य करने की सलाह दी है। वस्तुतः आज के वैज्ञानिक युग में इनकी प्रासंगिता सर्वसम्मत हैं। डॉ. रामकिशोर मिश्रा बालकों को सरल, व्याकरण रहित भाषा शैली में नैतिक शिक्षण की आवश्यकता प्रतिपादित करता है–

'बालक एको द्वौ च बालकौ बालकाश्च बहुवचने सन्ति।
विष्णुं शिवौ ब्राह्मणो हस्तान् भक्ता भक्त्या विलोकयन्ति।
गुप्त्या खड्ाभ्यां धनुरस्त्रैः शत्रुभ्यः स्वात्मानं रक्ष।'[20]

इसी तरह वर्तमान में बालसाहित्य आधारित पत्र–पत्रिकाओं में बालकों के नैतिक चिंतन को लेकर अनेक प्रकार की बालकथाओं, बालनाटकों, निबंधों का प्रकाशन हो रहा है, जो सरल–सरस एवं मनोरञ्जक सुकुमाररीति में बालकों के नैतिक एवं आध्यात्मिक विकास में सहायक बन रही है। 'सम्भाषण सन्देशः' के बालमोदिनी शीर्षक के अन्तर्गत प्रकाशित 'जीवनं नाम किम'[21] बालकथा के अन्तर्गत प्रकृतिस्थ चराचर पात्रों के माध्यम से बालकों को सदाचार, शील का नैतिक उपदेश दिया गया है यथा–

"शुकस्य धर्मः सन्तोषेण स्थितिञ्च जीवनं नाम, हरिणस्य जीवनं नाम अन्नार्थं, जलार्थं च धावनम्। शशः जीवनं नाम संघर्षः। नदी जीवनं नाम प्रवहणम् समृद्धिकल्पनं, स्वच्छतापरिरक्षणं च जीवनम्। वृक्षस्य जीवनं परोपकार एव। एकं बीजं सत्त्वयुक्तता, विकासश्च जीवनम्। अतः मनुष्यस्य उत्तमं जीवनं नाम सदाचरणमेवजीवनम नाम।"

इसी प्रकार लोकसंस्कृतम् पत्रिका में प्रकाशित एवं प्रो. सरोज कौशल द्वार दृग पत्रिका में उल्लेखित 'राजिमती रथनेमिश्च'[22] कथा के माध्यम से बालकों को सहजता, संयम, विवेक, कर्त्तव्य, एकनिष्ठ प्रेमभाव की शिक्षा प्रदान की गई है।

आधुनिक परिप्रेक्ष्य में जिस प्रकार बालकों में स्वदेश प्रेम की भावना का ह्रास हो रहा है उस समय लेखिका दुर्गापारखी द्वारा रचित 'बालनाट्यवल्लरी' काव्य में उद्धृष्त 'बालवीरः'[23] नाटक अत्यन्त महत्त्व रखता है। प्रस्तुत नाटक में मराठा वीर नायक शिवाजी के साहसिक कार्यों, पराक्रम, धैर्य, विश्वास एवं देशप्रेम जैसे नैतिक कार्यों से बालकों को परिचित करवाया है।

यथा– "हां, लघुबालकं मत्वा मां मां वञ्चयितुम इच्छसि? न शनैः शनैः न पदभ्याम्। कथं कथम् अपि ग्रामो न प्रवेष्टव्यम्। त्वं मां न जानासि। जानासि किल? एषः अहं मराठावीरस्य तेजवी पुत्रः। पश्य, पश्य मम स्नायुबलम्। मम रोमरोमेषु शौर्यं, धैर्यं, पराक्रमः उच्छलति।"

अंततः मैं रविन्द्रनाथ टैगोर के उस वक्तव्य को उद्धृत करना चाहूँगा, जिसमें उन्होंने बालक को एक 'साथी' के रूप में स्वीकार किया है। उन्हीं के शब्दों में– "And the one thing the one work which come to my mind, was to teach children....... I fell that as I have a deep love for nature I had natually love for children also, and my object was to give freedom and joy to children of men."

सारांशतया संदर्भित बाल–साहित्य के सम्बन्ध में कहा जा सकता है कि बालसाहित्य में मौलिकता एवं नैतिकता अधिकांशतया विषय के ट्रीटमेंट पर निर्भर करती है। अतः आज के विपरित परिवेश में न केवल बालकों के बचपन को संरक्षित, पल्लवित एवं दिशा प्रदान करने की जरुरत है बल्कि साहित्यकार को अपने भीतर के शिशु को भी बचाये रखने की सख्त आवश्यकता है।

सन्दर्भ :

1. सनातनाशिर्वचनम् कालिदास संस्थान, काशी वर्ष 2003 ई.
2. संस्कृत बालसाहित्य परिषद, पुण्डुचेरी के अध्यक्ष प्रो. सम्पदानन्द मिश्र का वक्तव्य।
3. बालनाट्यवल्लरी, सौ. दुर्गापारखी, संस्कृत भारती, गोवा, पृ. 5
4. वही, पृ. 15
5. 'स्वच्छकाननस्य कथा मातामही कथिता' (खण्डप्रथमः), लखिका मधुपन्तः, अनुवादकः बलदेवानन्द–सागरः, प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली वर्ष 2017 ई.
6. बालकथासप्ततिः, सरलता, प्रो. जनार्दन हेगड़े, प्रकाशन संस्थान भारती, बेंगलुरु वर्ष 2013 ई., पृ. 2
7. वही, पृ. 2
8. वहीं, पृ. 5
9. वहीं, पृ. 11
10. वहीं, पृ. 21
11. वही, 30
12. महान (बालकथा ग्रन्थ), डॉ. केशवचन्द्र दाशः, वर्ष 1991, लोकभाषा प्रचार समिति, शारदावली, पुरी (उड़ीसा), पृ. 7
13. शनैः शनैः (बालगीतावलिः), प्रो. सम्पादनन्द मिश्र, पृ. 29 ओरो प्रकाशन, श्री अरविन्दो सोसायटी, पुण्डुचेरी।
14- Madeline L' Engle, Dare to Be creative! A Lecture Presented At The Library of congress,Novermber. 16, 1983, Tags : childrews books
15. कौमारम् (शिशुगीतसंग्रह) 'रसराज' अभिराजराजेन्द्र मिश्र, राष्ट्रीय संस्कृत संस्थानम्, नवदेहली 2008 ई., पृ. 76
16. बालकथास्रवन्ती, प्रो. जनार्दन हेगड़े, पृ. 1–2
17. अभिनवपंचतन्त्रम्, प्रो. राजेन्द्र मिश्र, वैजयन्त प्रकाशन, इलाहबाद, जनवरी 2009 ई., पृ. 24
18. बालनाट्यसौरभम्, 'अंगुष्ठ–दानम्' डॉ. रामकिशोर मिश्रा, वर्ष 1994 ई., पृ. 5–8
19. वहीं, पृ. 36–37
20. बालतरंगिणी, डॉ. रामकिशोर मिश्रा, पृ. 1–3
21. सम्भाषण सन्देशः सोप्टेम्बर 2015, पृ. 15
22. लोकसंस्कृतम् (प्रथमांक) वि.सं. 2058, पृ. 25
23. बालनाट्यवल्लरी (बालवीरः), सौ. दुर्गा पारखी, पृ. 44–45

♦♦♦

IIJ Impact Factor : **2.193** **ISSN-2349-364X**

वेदाञ्जली

अन्तर्राष्ट्रीय विद्वत्समीक्षित षाण्मासिकी शोध पत्रिका

(An International Peer Reviewed Refereed Research Journal)

वर्ष-७ अंक-१३ भाग-१

जनवरी-जून, २०२०

प्रधानसम्पादक

डॉ0 रामकेश्वर तिवारी

असिस्टेन्ट प्रोफेसर, श्री बैकुंठनाथ पवहारी संस्कृत महाविद्यालय

बैकुंठपुर, देवरिया

सह सम्पादक

श्री प्रसून मिश्र

प्रकाशक

वैदिक एजूकेशनल रिसर्च सोसाइटी

वाराणसी

◆ विश्व संस्कृत साहित्य में बाल–साहित्य का योगदान 74–77
हेमराज सैनी व डॉ0 पूर्णचन्द्र उपाध्याय

◆ आचार्य दण्डी का व्यक्तित्व 78–79
डॉ0 कृष्ण बिहारी पाठक

◆ मुगल साम्राज्य का पतन : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन 80–81
डॉ0 अनुज कुमार सिंह व डॉ0 राजीव कुमार

◆ चित्रा मुद्गल की रचनाओं मे नारी 82–84
सरस्वती कुमारी

◆ इतिहासकार जगदीश सिंह गहलोत की इतिहास दृष्टि 85–87
कृष्णा खींची

◆ नागार्जुन और हेगेल के द्वन्द्वन्याय का तुलनात्मक अध्ययन 88–90
डॉ0 चन्द्रमोहन पाण्डेय

◆ सविनय अवज्ञा आंदोलन और सेठ जमनालाल बजाज की सहभागिता 91–93
रामसिंह सामोता

◆ ज्यौतिषशास्त्रे भास्कराचार्यमतेन कालविचारः 94–97
तरूण कुमार झा

◆ मध्ययुगीन समाज मे स्त्रियों की स्थिति 98–101
डॉ0 काशीनाथ सिंह

◆ समाधि और मोक्ष की अवधारणा : घेरण्ड संहिता के विशेष सन्दर्भ में 102–104
डॉ0 उदय प्रताप सिंह

◆ आज के परिवेश में भारतीय दर्शन का महत्त्व 105–107
डॉ0 मिताली मीनू

◆ मनसबदारी व्यवस्था मुगल साम्राज्य के पतन के संदर्भ में 108–110
डॉ0 सावीत्री कुमारी

◆ नेपाल का भौगोलिक अध्ययन सार्क के संदर्भ में 111–112
कुमारी रोजी

◆ राजा तथा राज्य और कौटिल्य 113–115
डॉ0 रिंकी कुमारी

◆ भारत के राष्ट्रीय आंदोलन में राष्ट्रवादी विचारकों का योगदान 116–118
डॉ0 जितेन्द्र कुमार चौधरी

◆ पालकालीन कला एवं स्थापत्य 119–120
डॉ0 सोनी कुमारी

◆ सौन्दरनन्दकालीन सामाजिक स्वरूप का विवेचनात्मक अध्ययन 121–123
डॉ0 संगीता कुमारी

◆ भौगोलिक संदर्भ में जलप्रदूषण का कारण एवं निदान 124–125
डॉ0 सरोजानन्द झा

◆ बौद्ध संस्कृति के संरक्षक शासकों का योगदान 126–128
डॉ0 अरविंद कुमार सिंह

◆ आचारविषये नीलकण्ठ–गोपालन्यायपंचाननमतयोः सन्तुलनम् 129–133

विश्व संस्कृत साहित्य में बाल–साहित्य का योगदान

• **हेमराज सैनी व डॉ0 पूर्णचन्द्र उपाध्याय**

संस्कृत बाल–साहित्य परिषद, पुण्डुचेरी के अध्यक्ष सम्पदानन्द मिश्र जी ने 'बाल–साहित्य' को परिभाषित करते हुए लिखा है– बालानां बोधाय, बालानां चरित्रनिर्माणे, आत्मशक्तिनांविकसनं च तेषु स्वदेश प्रेम्णः जागरणं, सौन्दर्य बोधाय, तेभ्यः संस्कारप्रदानाय, समुचिततनैतिक मूल्यबोधाय, बालकेषु–सामाजिक–सांस्कृतिक–आध्यात्मिक विकासाय, बालकेषु संस्कृतप्रीतिं द्रढयितुं, तेषां **भाषाज्ञानं** वर्धयितुं बालानांरुच्यानुसारेण यत् साहित्यं विनिर्मितं तं साहित्यं 'बालसाहित्यम्' इति शब्देन परिभाषयते। वस्तुतः बालसाहित्यान्तर्गते नवनवशब्दानां प्रयोगं, नवनवकाव्यशैलीनां, काव्याविधानां, नवनवविचाराणां च समावेशं भवति।1

वस्तुतः स्वतन्त्रता के पश्चात् पं. वासुदेव दीक्षित के 'बालमनोरमा' एवं आचार्य दिगम्बर महापात्र जी विरचित रंगरुचिरम्' तथा 'ललितलवंगम्' साहित्य से आविर्भूत 'बाल–साहित्य' नामक नवीन विधा ने संस्कृत साहित्य को नवीन मार्ग पर अग्रेसित किया है। इस नवीन बाल विधा में अर्वाचीन संस्कृत कवियों द्वारा बालकों, शिशुओं तथा कुमारों की बाल–मनोसंवेदनाओं, बालक्रीडाओं, बालभावों का वर्णन सरलातिसरल, अल्पसमासयुक्त चूर्णक भौली में भिन्न–भिन्न रूप में स्वीकार किया गया। बाल–संस्कृति, बाल–विचारों का उपस्थापन बाल चरित्र–चित्रण सन्धान एवं बाल–मनोगत भावों का सूक्ष्मातिसूक्ष्म चित्रणयुक्त बालसाहित्य ने विश्व–संस्कृत साहित्य में नवीन कलापक्ष एवं भावपक्ष के प्रकटीकरण का कार्य किया है।

अर्वाचीन संस्कृत बाल–साहित्य ने मम्मट प्रतिपादित काव्य प्रयोजनों (यश, अर्थ, व्यवहार कुशलता, शिवेतरक्षतये, सद्य आनन्द, कान्तासम्मित उपदेश) को स्वीकार करने के साथ–साथ सनातन कवि रहसबिहारी द्विवेदी प्रतिपादित काव्य प्रयोजनों को भी अंगीकार किया है यथा–

'असन्तं मार्गमुत्सृज्य सन्तं गमयितुं जनम्।
ह्दाह्लादिकया वाचा प्रज्ञावान् काव्यमंगते।।
कविकीर्तिपुरस्कारस्वान्तसुखसमीहया।
प्राक्कथावस्तुसंस्कारं सतां च चरितांकनम्।
नव्यकाव्यविधोन्मेशं व्यंग्योक्ति विकृतो तथा।
राष्ट्रभक्तिं युगौचित्यं पर्यायवरणचेतनाम्।।
राष्ट्रस्वातन्त्र्य वीराणां चरितं चाराध्यमीश्वरम्।
समुद्दिश्याधुना काव्यं कुर्वन्ति कवितल्लजाः।।'

सामान्यतया बाल–साहित्यकार उपर्युक्त काव्य प्रयोजनों को अपने साहित्य में आत्मसात करता हुआ उत्तमोत्तम बाल–साहित्य सन्धान में संलग्न है। वर्तमान समय में जिस प्रकार सम्पूर्ण समाज में व्याप्त विभिन्न प्रकार के सामाजिक, नैतिक, सांस्कृतिक एवं प्राकृतिक प्रदूषण, विभिन्न प्रकार के दुर्गुणों(लोभ, मोह, मद, ईर्ष्या, असत्य भाषण, आत्माभिमान) के निवारण के लिए स्तरीय नैतिक मूल्याधारित बाल–साहित्य के सर्जन की आवश्यकता महसूस की जाती रही है। इसी प्रयोजन हेतु त्रिवेणी कवि प्रो. अभिराज राजेन्द्र मिश्र द्वारा सामान्य बालकों में आविर्भूत दुर्गुणों को दूर करने हेतु पं. विष्णु शर्मा प्रणीत पंचतन्त्र को नवीन कलेवर 'अभिनवपंचतन्त्रम्' के रूप में प्रस्तुत किया है।

'अभिनवपंचतन्त्रम्' के अन्तर्गत प्रो. मिश्र जी ने'कृतज्ञशल्लकीकथा'[2] के माध्यम से बालकों में भेदभाव, ईर्ष्या जैसे दुर्गुणों को त्यागकर मित्र भाव ग्रहण करने का उपदेश दिया गया है। वहीं 'उत्कोचकीटाधिकारिकथा'[3] के माध्यम से प्रो. मिश्र जी द्वारा बालकों को रिश्वत एवं स्वार्थलोलुपता त्यागने का नैतिक उपदेश प्रदान किया गया है। इसी तरह प्रो. जनार्दन हेगड़े द्वारा सरल–सरस, नीतिबोध शब्दों के द्वारा बालहितार्थ 'बालकथासप्ततिः' (बाल पुरस्कार से सम्मानित काव्य, 2015 ई.) के अन्तर्गत विभिन्न नैतिक मूल्याधारित लघु–लघु कथानिकाओं का संकलन किया है। यथा कवि 'अपरिग्रहशीलता' का उपदेश देते हुए महाकवि कल्हण का उद्धरण देते है– **"परिग्रहः नाम आत्मनि, भगवति, अस्मिन् समाजे च अविश्वासस्य प्रकटनम्। मम गृहस्य पोषणं भगवान् करिष्यति। अतः अन्येन दत्तं स्वीकर्तुं न इच्छामि अहम् इति दृढ़स्वरेण अवदत् कवि।"**[4]

इसी तरह 'सर्वश्रेष्ठा गुरुदक्षिणा'[5] के अन्तर्गत प्रो. जनार्दन हेगड़े बालकों को श्रेष्ठ गुरुदक्षिणा से अवगत करवाता हुआ कहता है कि अध्ययन काल के समय जो गुरु द्वारा अध्ययन करवाया जाता है यदि शिष्य उसी विधा द्वारा सम्पूर्ण समाज का कल्याण करे तो, वहीं सर्वश्रेष्ठ गुरुविधा है। इसी तरह सौ. दुर्गा पारखी, के. वरलक्ष्मी, डॉ. रामकिशोर मिश्र प्रभृति साहित्यकारों द्वारा प्रचूर मात्रा में नैतिक बाल–साहित्य सृजित कर विश्व संस्कृत साहित्य को समृद्ध किया है।

वस्तुतः बाल–साहित्य श्रवण परम्परा पर आधारित है। ये कथाश्रवणपरम्परा अतीव प्राचीन एवं मनोवैज्ञानिक है। बाल–साहित्य की अनेक विधाओं में कथा विधा मूल्यपरक सन्देश एवं मनोरंजन प्रदान करने में पूर्णतया सक्षम होती है। बाल–साहित्य संस्कृत बालानुरागियों में संस्कृत भाषा के प्रति रूचि एवं आकर्षण प्रदान करने में महत्त्वपूर्ण योगदान प्रदान करता है। सुकान्तकुमारसेनापति महोदय द्वारा विरचित 'सुकान्तकथाविंशतिः'[6] में लघु–लघु विषयों को ग्रहण करते हुए विंशति नैतिक बोध, बालहितार्थ कथाओं का संकलन है, जो बालकों का मनोरंजन प्रदान कराने के साथ–साथ भाषा ज्ञान भी करवाती है। यथा प्रत्येक कथा की समाप्ति पर शब्दार्थ, अभ्यास, लुप्त शब्दाधारितवाक्यों का अभ्यास कराया गया है।

• (शोध छात्र) संस्कृत विभाग राजकीय महाविद्यालय, बून्दी व (सह–आचार्य एवं विभागाध्यक्ष) संस्कृत विभाग राजकीय महाविद्यालय, बून्दी

वस्तुतः यह सत्य है कि बाल–साहित्य लेखन के लिए बच्चों के मनोविज्ञान और उनकी सामान्य मनोवृत्तियों को समझना अत्यन्त आवश्यक है। अर्वाचीन संस्कृत बाल–साहित्यकारों द्वारा शिशुओं, बालकों एवं किशोरों की संवेदनाओं एवं बालमनोवृत्तियों को आत्मसात करते हुए साहित्य सर्जन कर विश्व संस्कृत साहित्य को समृद्ध किया जा रहा है। जहाँ डॉ. केशवचन्द्रदाश द्वारा बालकों के लिए पृथक से महान (बालकथा, 1991 ई.) एवं एकदा (बालकथा 1991 ई.) का संकलन किया गया है। वस्तुतः बालकों के लिए सृजित साहित्य यथार्थपरक सोच–विचार एवं जिज्ञासा पर आधारित होता है। वह बारम्बार समस्यासमाधान हेतु प्रश्न करता है यथा–

वनेचरः भयेन अपृच्छत्।
– **को भवान्?**
धीरकण्ठेन सः अवदत्।
– **अहं वनदेवः।**
– **भवान् किमर्थं शब्दापयति?**
– **व्याघ्रो माम् आक्रान्तुमागच्छति।**
– **कथम्?**
– **स वदति– 'स एव महान्'।**[7]

इसी तरह शिशुकाव्य में शिशु बाल मनोविज्ञान के अनुरूप ध्वनियों का गुंजायमान, लय की चपलता, अल्प नाटकीयता, कल्पनाशीलता की प्रधानता होती है। यथा प्रो. अभिराज राजेन्द्र मिश्र प्रणीत 'कौमारम (शिशुगीतसंग्रह, 2008 ई.) में सरल–सरस, ललित, मधुर शैली में शिशुओं के लिए गीतों का प्रणयन किया गया है, यथा– 'शरीरांकपरिचयम्'[8] कविता में शिशुओं को शरीरों के अंगों एवं उनके कार्यों से अवगत करवाया गया है–

'कर्णाभ्यां वार्तां शृणोमि,
पश्यामि पुनर्नयनाभ्याम्।
नासिकया जिघ्रामि सौरभं,
कर्म करोमि कराभ्याम्।।

इसी प्रकार कवि किशोर काव्य के अन्तर्गत मानवीय संबंधों के नवीन समीकरण, समस्या से जूझते एवं उनका समाधान खोजते हुए साहित्य का वर्णन करता है। यथा–डॉ. केशवचन्द्रदाश प्रणीत 'पताका' (बालोपन्यास, 1990 ई.) में जितेन्द्र एवं सीमी नामक बालक–बालिकाओं का पारस्परिक संवाद है। जिसके अन्तर्गत स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर शोभायमान पताका को लेकर दृष्टिबाधिता सीमी जितेन्द्र से विभिन्न प्रकार के समस्याधारित प्रश्नों का उत्तर जानना चाहती है।

अतः संस्कृत बाल–साहित्य ने विश्व–संस्कृत साहित्य में मनोविज्ञान आधारित साहित्य लेखन का मार्गप्रशस्त किया है।

वर्तमान समय में साहित्य, समाज के प्रत्येक पक्ष एवं आयामों को चरितार्थ करने में अत्यन्त उपयोगी है। बालसाहित्यकारों द्वारा समाज के विविध पक्षों यथा–सामाजिक– सांस्कृतिक–प्राकृतिक पर्यावरण आदि में स्वलेखन का कार्य किया है। प्रकृति में विद्यमान सम्पूर्ण जड़–चेतनादि तत्त्व अपनी–अपनी भूमिका का निर्वाह करते हुए बालकों में कर्त्तव्य भावना जाग्रत करने में सहायक होते हैं। प्रो. मिश्र द्वारा रचित 'अभिराजगीता'[9] निसर्गभाव से जीवनयापन की शिक्षा प्रदान करती है–

"स्वगुणसौरभैर्वातावरणं मंगलमयं विधेयम्।
पुष्पमिदंशिक्षयते सर्वान जगतोऽखिलं पदेयम।।
फलभोरेर्नमिता तरुशाखा कथयति वारं बारम्।
प्राप्य समृद्धि भवतः विनम्रा इदमेवोन्नति सारम्।।"

मनुष्यों के जीवन का आरम्भ गर्भधारण काल से ही प्रारम्भ हो जाता है। माता–पिता के गुण उन सन्तानों में सम्यक रीति से उत्पन्न होते हैं। वस्तुतः बालक का व्यवहार वंशानुक्रम एवं वातावरण द्वारा निश्चित होता है। अभिराजराजेन्द्र मिश्र कृत **'कान्तारकथा'** का नायक 'मोगली' शारीरिक आकार–प्रकार से तो मनुष्य ही है किंतु मानसिक दृष्टि से एक वन्यजीव के रूप में दृष्टिगोचर होता है। उसके भारीरिक हावभाव भी वन्यजीवों के सदृश प्रकट होते हैं। मिश्र महोदय भारतीय दर्शन के पांचभौतिक सृष्टि निर्माण के समान दृष्टिविशयक वर्णन करने में सूक्ष्म दृष्टि रखते हैं यथा–वैकृतसर्गः अयं त्रिविधो भवति–स्थावरः तिरश्चीनः अर्वाक्स्त्रोतश्च। स्थावरे सर्गे वनस्पतयः औषधः लताः त्वक्सारा वीरुधो द्रुमाश्च समायान्ति। तिरश्चीने सर्गे सप्त द्विशफाः अष्ट एकशफाः त्रयोदा पंचनखा च जीवाः गण्यन्ते। अर्वाक्स्त्रोतासि सर्गे केवलं मनुष्य एव गण्यन्ते।[10]

इसी तरह 'कौमारम्' काव्य संग्रह में प्रो. मिश्र महोदय द्वारा लघु–लघु शिशुगीतों द्वारा प्रकृति के प्रत्येक पक्ष का सौन्दर्यात्मक वर्णन किया है यथा–**'सृष्टिपरिचयः'**[11] गीतखण्ड के अन्तर्गत ईश्वरीय सृष्टि में सूक्ष्मतम यूका लीक्षा से प्रारम्भ करते हुए मधुमक्खी, शलभ, चटका, काक, गृद्ध, जम्बुक, व्याघ्र, कुक्कुर, सिंह, महिष, क्रमेलक, व्हेल, हाथी, पर्वत, वृक्षादि सम्पूर्ण सृष्टि युक्त पदार्थों का लय–गीति–माधुरी युक्त शिशुगीतों द्वारा सुन्दर वर्णन उपलब्ध होता है यथा–

"किं युष्माभिर्दृष्टम्?
लिक्षातश्शैलं यावद् भो
यो विदधे संसारम्।
परमेश्वरं न तं जानीथाऽखण्डमण्डलाकारम्।।"

अतः बालसाहित्य की विविधविधाओं में वर्णित पर्यावरणतत्त्वों के माध्यम से बालकों को प्रकृति का विशुद्ध सरल, सूक्ष्म–मनोभाविक ज्ञान प्रदान करते हुए विश्व संस्कृत साहित्य के प्रकृतियुक्त साहित्य में अभूतपूर्वक वृद्धि की है।

वस्तुतः काव्य निरन्तर परिवर्तनशील है। उसमें निरन्तर नवीन काव्यविधाओं का उन्मेश होता रहता है। प्राचीन संस्कृत साहित्य में जहाँ गद्य, पद्य एवं रूपकादि काव्यविधाओं की प्रधानता थी, वहीं दूसरी और संस्कृत बाल–साहित्य ने विश्व संस्कृत वाङ्मय को कथा, लघुकथा, कथानिका, एकांकी, शिशु गीत, अनूदित काव्यविधाओं से समृद्ध किया है। कथासाहित्य के अन्तर्गत बालकथाओं द्वारा नीतिसाहित्य के पुनर्प्रकटीकरण का कार्य किया है। वर्तमान बालकथायें बालकों को मनोरंजन, शिक्षा प्रदान करने के साथ ही वि व एकता एवं विश्वकल्याण के उद्देश्य को भी आत्मसात करती है। इसी तरह त्रिवेणी कवि प्रो. मिश्र प्रणीत **नाट्यनवग्रहम् (शिशुजनोचित लघु एकांकी संकलन, 2007 ई.)** में उपस्थित सम्पूर्ण लघु–एकांकियाँ पुराणों तथ रामायण–महाभारत के ज्ञात–अज्ञात कथा–सूत्रों पर आधारित है। इन लघुरूपकों का आकार–प्रकार प्राचीन रूपकों की अपेक्षा अत्यन्त लघु है। इन लघुरूपकों की भाषा अत्यन्त सरल है संवाद भी शिशुजनोचित है। सभी एकांकियाँ सुखाभिनेयपूर्ण तथा शिक्षाप्रद है। प्रो. मिश्र जी एकांकी में अंगी रस की प्रधानता तो स्वीकार करते हैं किंतु रस का मुख्य प्रयोजन केवल बाल–मनोरंजन को ही मानते हैं–

"रसः कोऽपि भवेदंगी नाट्यवृत्तानुगुण्यतः।
लक्ष्यमेकं परं तस्य भवेद्रंगप्रसादनम्।।"[12]

अतः बालसाहित्य ने विश्व संस्कृत साहित्य को शास्त्रीय एवं पाण्डित्य शैली से निकालकर सरल–सरस जनोन्मुख शैली की और उन्मुख किया है।

संस्कृत बाल–साहित्यकारों द्वारा में भारवि, माघ एवं श्रीहर्ष की अलंकार युक्त वक्रतापूर्ण काव्यशैली के स्थान पर सम्भाषण शैली को आत्मसात किया है। यहाँ कवि बालमति के अनुरूप समासरहित, अलंकार रहित, लघु व्याख्या युक्त, लघु–लघु संवाद वाक्यों का प्रयोग करता है। यथा–

शकटः वदति कें कें छागों वदति में में,
ओतुर्वदति म्याऊँ म्याऊँ, बालः क्रन्दति क्याऊँ क्याऊँ।।[13]

अतः यहाँ काव्य में अनुरणनात्मक गेयात्मक, अनुप्रासयुक्त, शब्दानुकरणात्म पदों का प्रयोग बालगीति काव्यों का मुख्य गुण है।

आज संस्कृत बाल–साहित्य की अनेक रचनाएँ, कविताएँ विपुलतया अनेक विधाओं में अनुकृत, आविष्कृत, स्वीकृत हो रही है जो पत्र–पत्रिकाओं में अथवा ग्रन्थाकार में प्रकाशित हो रही है। संस्कृत पत्र–पत्रिकाओं की कड़ी में आज बाल–पत्रिकाओं का संपादन भी होने लगा है। यह पत्रिकाएें **बाल–मानस** पटल को ध्यान में रखते हुए उनके चारित्रिक विकास में अपना अमूल्य योगदान दे रही है। प्रमुख संस्कृत बाल–साहित्याधारित पत्र–पत्रिकाओं में संभाषण सन्देश, संस्कृत चन्दामामा, कथासरित्, पद्यबन्धा, प्रतिभा, भारती, लोकसंस्कृतम् एवं दृक पत्रिका आदि है। 'सम्भाषण सन्देशः' जो संस्कृतभारती, बेंगलुरु से प्रकाशित मासिक पत्रिका है। इसके प्रत्येक अंक में 'बालमोदिनी' शीर्षक के अन्तर्गत दो–तीन बालकथाओं का प्रकाशन होता है। इसी तरह कथासरित के प्रत्येक अंक में कथा, लघुकथा एवं बालकथाओं का सम्पादन किया जा रहा है। यह पत्र–पत्रिकाऐं जहाँ एक तरफ बालकों को सारगर्भित भाषा में चरित्रोत्थान की विषय सामग्री प्रदान करती है वहीं दूसरी और विश्व संस्कृत साहित्य में पत्र–पत्रिका नवीन विधा का समावेश भी करती है। इसके अतिरिक्त बालसाहित्यकारों द्वारा वर्तमान में अन्य भाषाओं में रचित बाल–साहित्य का संस्कृत में अनुवाद कर संस्कृत बालानुरागियों को नवीन साहित्य से अवगत करवाया गया है। संस्कृत बालसाहित्य में प्रथम अनूदित साहित्य में डॉ. के. वारलक्ष्मी विरचित 'पलायितश्चणकः' (गीतासुब्बाराव प्रणित तेलगू भाशा में) हैं। इसी तरह 'बालस्य चक्षुशा समीक्षामहे' इस लौकिक समस्या के समाधान हेतु सुबोध एवं सुगम भौली में तेलगू भाषा में विरचित 'गोरुमुद्दलु' का डॉ. के. वरलक्ष्मी ने **शिशुस्वान्तं** काव्य के नाम से संस्कृतानुवाद किया है। इसी प्रकार आंग्ल लेखक रुडयार्ड किपलिंग विरचित **'The Jungle Story'** का त्रिवेणी कवि प्रो. मिश्र जी द्वारा संस्कृत में 'कान्तारकथा' के रूप में आविर्भाव किया है। 'कान्तारकथा' में कवि द्वारा एक साथ मानवीय संस्कृति एवं अरण्य संस्कृति की मार्मिकता के पहलूओं से अवगत करवाया गया है। साथ ही मानवीय जगत द्वारा जंगली पशुओं पर किए जा रहे अत्याचारों से भी बालकों को अवगत करवाया है। अतः अनूदित बाल–साहित्य ने विश्व संस्कृत साहित्य में अन्तरानुशासनात्मक अध्ययन को बढ़ावा दिया गया है।

अर्वाचीन संस्कृत बाल–साहित्यकारों द्वारा राजदरबारों के राजकुमार नायकों के स्थान पर सामान्य बालकों को कथा, एकांकी एवं उपन्यासों का नायक स्वीकार किया गया है। सामान्य बालकों का नायक बनना, संस्कृत साहित्य को नवीन युग में प्रवेश करवाता है। क्योंकि अभी तक संस्कृत के सभी महाकाव्यों, नाटकों, कथा, उपन्यासों में देव, दानव, राजा, विप्र इत्यादि ही काव्यों के नायक स्वीकार किये जाते रहे थे। अतः सामान्य एवं निर्धन बालकों का नायक बनना संस्कृत साहित्य में चमत्कारी परिवर्तन का द्योतक है।

अभी तक काव्यशास्त्रियों भामह, भरत, मम्मट, विश्वनाथ एवं जगन्नाथ प्रभृति विद्वानों द्वारा काव्य में नव रस ही मुख्यतया स्वीकार किए गए हैं। कविराज विश्वनाथ जी द्वारा यद्यपि **'वात्सल्य'** रस को दसवें रस के रूप में स्वीकार किया था किंतु उनका सफलतम प्रयोग अर्वाचीन बालसाहित्य की विभिन्न विधाओं में अभिव्यक्त हुआ। 'वात्सल्य' रस का स्थायी भाव पुत्र–विषयक रति है। बालसाहित्य के पात्र बालक, शिशु एवं किशोर आलम्बन विभाव है। बालक की विभिन्न प्रकार की शारीरिक, मानसिक चेष्टाऐं उनका खेलना–कूदना, पढ़ना–लिखना 'वात्सल्य' रस का उद्दीपन विभाव है। बालसाहित्य में बालकों की प्रसन्नता, रोमांच, हर्ष, आवेग, अनुभाव एवं चिन्ता, विषाद, गर्व, संचारी भाव होते हैं। वस्तुतः वात्सल्य रस बालसाहित्य में बालकों को मनोरंजन एवं शिक्षाप्रदान करता है। अतः बालसाहित्य द्वारा संस्कृत साहित्य में 'वात्सल्य' रस का स्वतंत्र प्रयोग चरितार्थ होता है–

अभी तक संस्कृत–साहित्य में कथानक, चरित्र–चित्रण ही काव्य के प्रमुख विषय रहे है किंतु बालसाहित्य में जिज्ञासा, कुतुहलता, कल्पना तत्त्वों का अधिकतया सन्निवेश हुआ है। संस्कृत साहित्य में डॉ. केशवचन्द्र दाश बाल मनोविज्ञान के बड़े पारखी कहे जाते हैं। उनकी कथाओं एवं उपन्यासों में बालसंवाद जिस सहृदयता एवं सरसता के साथ प्रकट होते हैं वह आज के बाल–साहित्यकारों के लिए प्रेरणा का स्त्रोत हो सकते हैं। अपने उपन्यास पताका (सन 1990 ई.) में उन्होंने सीमी एवं अनिल पात्रों के वाक्य संवादों से कल्पना के तत्त्व को सहजतया उकेरने में सूक्ष्मातिसूक्ष्म दृष्टि का जो प्रयोग किया गया है, वह प्रशंसनीय है।

वस्तुतः आज बालकों में संस्कार समारोपित करने, सामाजिक–सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक विकास करने के साथ–साथ बालकों को वर्तमान वैज्ञानिक विषयों से भी परिचित करवाना आवश्यक है। ऋषिराज जानी, पराम्बाश्रीयोगमाया एवं गोपबन्धु मिश्र प्रभृति साहित्यकारों द्वारा वैज्ञानिक तत्त्व को अपने बाल–साहित्य में स्थान दिया है। ऋषिराज जानी द्वारा **'चमत्कारिकः चलदूरभाशः'**[14] काव्य में बालकों को जंगम दूरवाणी की उपयोगिकता एवं कुशलता से अवगत करवाते हुए उनमें जिज्ञासा एवं कौतुहल उत्पन्न करने का साहसिक कार्य किया है। इसी तरह **'कनीयान राजकुमारः'** काव्य में बालकों को खगोल विज्ञान की जानकारी प्रदान की गई है–

पृथिवी, बृहस्पतिः, मंगलः, शुक्रः इत्यादिनां येषां विशालानां ग्रह्मणां नामकरणम् अस्माभिः विहितम् अस्ति, तेषां इव शतशः इतरेषां ग्रहाणां स्थितिरस्ति इति। तेषु च केचन ग्रहाः तथाविधाः लघ्वाकारः सन्ति यत् तान् दूरवीक्षणयन्त्रेण द्रष्टुम् अपि कस्यचित् पार्श्वे तावान् समयो न भवति।[15]

अतः वैदिक साहित्य के अनन्तर वैज्ञानिक तत्त्व का संस्कृत साहित्य में सन्निवेश करने में बाल–साहित्य का प्रमुख योगदान है।

आज लघु–लघु बालकों के लिए बालबोध आधारित चित्रात्मक एवं सौंदर्यात्मक बाल–साहित्य द्वारा विश्व संस्कृत–साहित्य में नवीन आयाम प्रस्तुत किया गया है। आज बालमनोरूप कल्पनामयी चित्रात्मक एवं सौन्दर्यात्मक साहित्य द्वारा बालकों के ज्ञान में अभूतपूर्व वृद्धि की जा रही है। संस्कृत बाल–साहित्य, पुण्डुचेरी द्वारा 'बालगीतावलि' एवं 'सप्तवर्ण–चित्रपतंगः' चित्रात्मक साहित्य का सर्जन किया गया है। यहाँ बालकों की मनःस्थिति को ध्यान में रखते हुए नैतिकमूल्यबोध प्रदान साहित्य का निर्माण किया गया है। इसी तरह संस्कृत भारती द्वारा सचित्र महाभारत का चित्रात्मक प्रणयन किया गया है। जिसके माध्यम से बालकों को कान्तासम्मित चित्रात्मक शैली में सम्पूर्ण महाभारत का ज्ञान करवाया गया है।

सारांशतया मैं श्रीरामचन्द्र शास्त्री विरचित 'कवि–महत्त्व' सम्बन्धित पद्य को प्रस्तुत करना चाहता हूँ–

कविरेव युंग परिवर्त्तयति क्रान्तेः कृत्वाऽनुपमं गाानम्।
स हि राजानं रंकं प्रकरोति च राजानम्।।
स्वर्गे नरकेषु च पाताले भुवि भवति भविष्यतिचाभूद् यत
पुरतः स्थामिव ह्यनुमानेन ज्ञातुं शक्नोति कविः किल तत्।।

अन्ततः आज आवश्यकता है नूतनानूतन जन हितार्थ विषयों को स्वीकार करते हुए संस्कृत–साहित्य को क्षितीज के उस पार ले जाना।

संदर्भ –

1. संस्कृत बाल–साहित्य, पुण्डुचेरी के अध्यक्ष प्रो. सम्पदानन्द मिश्र का वक्तव्य।
2. मिश्रोऽभिराजराजेन्द्रः, अभिनवपंचतन्त्रम्, पृ. सं.–16–17
3. वही, पृ.सं. – 50–51
4. प्रो. जनार्दन हेगड़े, बालकथासप्ततिः, पृ.सं. 83–84
5. वही, पृ.सं. 87–88
6. कुमारसेनापतिः 'सुकान्तकथाविंशति : 2012 ई. (मूल्याधारितकथानां संकलनम्)
7. डॉ. केशवचन्द्र दाश एकदा (बालकथा, 1991 ई.) पृ.स.–30
8. मिश्रोऽभिराजराजेन्द्रः कौमारम् (शिशुगीतसंग्रह, 2008 ई.) पृ.सं.–16
9. मुनिकीर्तित्रयी, अभिराजगीता (नन्दनवनकल्पतरुप्रकाशनम्) पृ. 76–77
10. मिश्रोऽभिराजराजेन्द्र, कान्तारकथा (अनूदित बालसाहित्यम्) 2008 ई., पृ.सं.–32
11. मिश्रोऽभिराजराजेन्द्रः कौमारम्, 2008 ई., पृ.सं.–6–10
12. मिश्रोऽभिराजराजेन्द्र, अभिराजयशोभूशणम् निर्मितितत्त्वोन्मेष।
13. आचार्य श्री दिगम्बर महापात्र रंगरूचिरम्, 1983 ई., पृ.–34
14. ऋषिराज जानीः 'चमत्कारिकः चलदूरभाषः' 2013 ई.
15. गोपबन्धु मिश्रः, कनीयान् राजकुमारः, 2013 ई. पृ.–18

❖